प्रकाशक—
स्वामी भास्करेश्वरानन्द
अध्यक्ष, श्रीरामकृष्ण आश्रम
धन्तोली, नागपुर–१२

श्रीरामकृष्ण-शिवानन्द-स्मृतिग्रन्थमाला
पुष्प-संख्या २२

१६ मार्च १९७२
[व ७२ : प्र ४३]

मूल्य रु. १०.००

मुद्रक—
श्री. दि. भि. धाक्रस
नाग मुद्रणालय
नागपुर-२

अनुक्रमणिका



भगवान् श्रीरामकृष्ण

श्रीरामकृष्णवचनामृत

परिच्छेद १

दक्षिणेश्वर मे श्रीरामकृष्ण का जन्म-महोत्सव

(१)

नरेन्द्र आदि भक्तों के साथ कीर्तनानन्द में

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर मन्दिर मे उत्तर-पूर्व वाले लम्बे वरामदे मे गोपी-गोष्ठ तथा सुबल-मिलन-कीर्तन सुन रहे है। नरोत्तम कीर्तन कर रहे है। आज शुक्लाष्टमी है, रविवार २२ फरवरी १८८५ ई०। भक्तगण उनका जन्म-महोत्सव मना रहे है। गत सोमवार फाल्गुन शुक्ल द्वितीया के दिन उनकी जन्मतिथि थी। नरेन्द्र, राखाल, वाबूराम, भवनाथ, सुरेन्द्र, गिरीन्द्र, विनोद, हाजरा, रामलाल, राम, नृत्यगोपाल, मणि मल्लिक, गिरीश, सीती के महेन्द्र वैद्य आदि अनेक भक्तो का समागम हुआ है। प्रातः-काल आठ वजे का समय होगा। मास्टर ने आकर प्रणाम किया। श्रीरामकृष्ण ने पास वैठने का इशारा किया।

कीर्तन सुनते सुनते श्रीरामकृष्ण भावाविष्ट हो गये है। श्रीकृष्ण को गौएँ चराने के लिए आने मे विलम्व हो रहा है। कोई ग्वाला कह रहा है, 'यशोदा माई आने नही दे रही है।' वलराम जिद करके कह रहे है, 'मै सीग वजाकर कन्हैया को ले आऊँगा।' वलराम का प्रेम !

कीर्तनकार फिर गा रहे है। श्रीकृष्ण वंसरी वजा रहे है। गोपियाँ और गोप वालकगण वंसरी की ध्वनि सुन रहे है और

उनमे अनेकानेक भाव उठ रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण भक्तो के साथ बैठकर कीर्तन सुन रहे है। एका-एक नरेन्द्र की ओर उनकी दृष्टि पड़ी। नरेन्द्र पास ही बैठे थे। श्रीरामकृष्ण खड़े होकर समाधिमग्न हो गये। नरेन्द्र के घुटने को एक पैर से छूकर खड़े है।

श्रीरामकृष्ण प्रकृतिस्थ होकर फिर बैठे। नरेन्द्र सभा से उठकर चले गये। कीर्तन चल रहा है।

श्रीरामकृष्ण ने बाबूराम से धीरे धीरे कहा, 'कमरे मे खीर है, जाकर नरेन्द्र को दे दो।'

क्या श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र के भीतर साक्षात् नारायण का दर्शन कर रहे थे?

कीर्तन के बाद श्रीरामकृष्ण अपने कमरे मे आये है और नरेन्द्र को प्यार के साथ मिठाई खिला रहे है।

गिरीश का विश्वास है कि ईश्वर श्रीरामकृष्ण के रूप मे अवतीर्ण हुए है।

गिरीश-- (श्रीरामकृष्ण के प्रति)--आपके सभी काम श्रीकृष्ण की तरह है। श्रीकृष्ण जैसे यशोदा के पास तरह तरह के ढोंग करते थे।

श्रीरामकृष्ण-- हाँ, श्रीकृष्ण अवतार जो है। नरलीला मे उसी प्रकार होता है। इधर गोवर्धन पहाड को धारण किया था, और उधर नन्द के पास दिखा रहे है कि पीढा उठाने मे भी कष्ट हो रहा है।

गिरीश-- समझा। आपको अब समझ रहा हूँ।

श्रीरामकृष्ण छोटे तखत पर बैठे है। दिन के ११ बजे का समय होगा। राम आदि भक्तगण श्रीरामकृष्ण को नवीन वस्त्र

पहनायेंगे। श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं, "नही, नही।" एक अंग्रेजी पढ़े हुए व्यक्ति को दिखाकर कह रहे है, "वे क्या कहेंगे ?" भक्तों के बहुत जिद करने पर श्रीरामकृष्ण ने कहा, "तुम लोग कह रहे हो, अच्छा लाओ, पहन लेता हूँ।"

भक्तगण उसी कमरे मे श्रीरामकृष्ण के भोजन आदि की तैयारी कर रहे है। श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र को जरा गाने के लिए कह रहे हैं। नरेन्द्र गा रहे है।

सगीत– (भावार्थ)– "माँ, घने अन्धकार मे तेरा रूप चमकता है। इसीलिए योगी पहाड़ की गुफा मे निवास करता हुआ ध्यान लगाता है। अनन्त अन्धकार की गोदी मे, महानिर्वाण के हिल्लोल मे चिर शान्ति का परिमल लगातार बहता जा रहा है। महा-काल का रूप धारण कर, अन्धकार का वस्त्र पहन, माँ, समाधि-मन्दिर मे अकेली बैठी हुई तुम कौन हो ? तुम्हारे अभय चरण-कमलों मे प्रेम की विजली चमकती है, तुम्हारे चिन्मय मुखमण्डल पर हास्य शोभायमान है।"

नरेन्द्र ने जब गाया, 'माँ, समाधि-मन्दिर मे अकेली बैठी हुई तुम कौन हो ?'––उसी समय श्रीरामकृष्ण बाह्यज्ञान-शून्य होकर समाधिमग्न हो गये। बहुत देर बाद समाधि भंग होने पर भक्तों ने श्रीरामकृष्ण को भोजन के लिए आसन पर बैठाया। अभी भाव का आवेश है। भात खा रहे है, परन्तु दोनो हाथ से ! भवनाथ से कह रहे है, "तू खिला दे !" भाव का आवेश अभी है, इसीलिए स्वयं खा नहीं पा रहे है। भवनाथ उन्हे खिला रहे है।

श्रीरामकृष्ण ने बहुत कम भोजन किया। भोजन के बाद राम कह रहे है, "नृत्यगोपाल आप की जूठी थाली मे खायेगा।"

श्रीरामकृष्ण– मेरी जूठी थाली मे ?

राम– क्यो क्या हुआ ?

नृत्यगोपाल को भावमग्न देखकर श्रीरामकृष्ण ने एक दो कौर खिला दिये।

कोन्नगर के भक्तगण नाव पर सवार होकर आये है। उन्होंने कीर्तन करते करते श्रीरामकृष्ण के कमरे मे प्रवेश किया। कीर्तन के बाद जलपान करने के लिए वाहर गये। नरोत्तम कीर्तनकार श्रीरामकृष्ण के कमरे मे वैठे है। श्रीरामकृष्ण नरोत्तम आदि से कह रहे है, "इनका मानो नाव चलानेवाला गाना ! गाना ऐसा होना चाहिए कि सभी नाचने लगे। इस प्रकार का गाना गाना चाहिए।

संगीत– (भावार्थ)– "ओ रे ! गौर-प्रेम के हिलोर से सारा नदिया शहर झूम रहा है।"

(नरोत्तम के प्रति)– उसके साथ यह कहना होता है :

संगीत– (भावार्थ)– "ओ रे ! हरिनाम कहते ही जिनके आँसू झरते है, वे दोनो भाई आये है। ओ रे ! जो मार खाकर प्रेम देना चाहते है, वे दो भाई आये है। ओ रे, जो स्वय रोकर जगत् को रुलाते है, वे दो भाई आये है। ओ रे ! जो स्वय मतवाले बनकर दुनिया को मतवाली बनाते है, वे दो भाई आये है ! ओ रे ! जो चण्डाल तक को गोदी मे उठा लेते है, वे दो भाई आये है।।"

फिर यह भी गाना चाहिए—

सगीत– (भावार्थ)– "हे प्रभो, गौर निताई तुम दोनो भाई परम दयालु हो। हे नाथ, यही सुनकर मै आया हूँ, सुना है कि तुम चण्डाल तक को गोदी मे उठा लेते हो, और गोदी मे उठाकर उसे हरि-नाम करने को कहते हो।"

(२)

जन्मोत्सव में भक्तों के साथ वार्तालाप

अव भक्तगण प्रसाद पा रहे है। चिउड़ा मिठाई आदि अनेक प्रकार के प्रसाद पाकर वे तृप्त हुए। श्रीरामकृष्ण मास्टर से कह रहे है, "मुखर्जियो को नही कहा था। सुरेन्द्र से कहो, बाउलों (गवैयो) को खिला दे।"

श्री विपिन सरकार आये है। भक्तो ने कहा, "इनका नाम विपिन सरकार है।" श्रीरामकृष्ण उठकर वैठे और विनीत भाव से वोले, "इन्हे आसन दो और पान दो।" उनसे कह रहे है, "आपके साथ वात न कर सका, आज वड़ी भीड़ है।"

गिरीन्द्र को देखकर श्रीरामकृष्ण ने बाबूराम से कहा, "इन्हें एक आसन दो।" नृत्यगोपाल को जमीन पर बैठा देखकर श्रीरामकृष्ण ने कहा "उसे भी एक आसन दो।"

सीती के महेन्द्र वैद्य आये है। श्रीरामकृष्ण हंसते हुए राखाल को इशारा कर रहे है, "हाथ दिखा लो।"

रामलाल से कह रहे है, "गिरीश घोष के साथ प्रेम कर, तो थिएटर देख सकेगा।" (हंसी)

नरेन्द्र हाजरा महाशय से वरामदे मे बहुत देर तक बातचीत कर रहे थे। नरेन्द्र के पिता के देहान्त के वाद घर मे बड़ा ही कष्ट हुआ है। अव नरेन्द्र कमरे के भीतर आकर बैठे।

श्रीरामकृष्ण– (नरेन्द्र के प्रति)– तू क्या हाजरा के पास वैठा था? तू विदेशी है, और वह विरही! हाजरा को भी डेढ़ हजार रुपयो की आवश्यकता है। (हंसी)

"हाजरा कहता है, 'नरेन्द्र मे सोलह आना सतोगुण आ गया है, परन्तु रजोगुण की जरा लाली है। मेरा विशुद्ध सत्व, सत्रह

आना।' (सभी की हँसी)

"मैं जब कहता हूँ, 'तुम केवल विचार करते हो, इसीलिए शुष्क हो,' तो वह कहता है, 'सूर्य की सुधा पीता हूँ, इसीलिए शुष्क हूँ।'

"मैं जब शुद्धा भक्ति की बात कहता हूँ, जब कहता हूं कि शुद्धा भक्ति रुपया-पैसा, ऐश्वर्य कुछ भी नही चाहती, तो वह कहता है, 'उनकी कृपा की बाढ आने पर नदी तो भर जायेगी ही, फिर गढे-नाले तो अपने आप ही भर जायेगे। शुद्धा भक्ति भी होती है और षडैश्वर्य भी होते है। रुपये-पैसे भी होते है।'"

श्रीरामकृष्ण के कमरे मे जमीन पर नरेन्द्र आदि अनेक भक्त बैठे है, गिरीश भी आकर बैठे।

श्रीरामकृष्ण– (गिरीश के प्रति)– मै नरेन्द्र को आत्मा मानता हूँ। और मै उसका अनुगत हूँ।

गिरीश– क्या कोई ऐसा है जिसके आप अनुगत नही भी है?

श्रीरामकृष्ण– (हंसकर)– उसका है मर्द का भाव (पुरुषभाव) और मेरा औरत-भाव (प्रकृतिभाव)। नरेन्द्र का ऊँचा घर, अखण्ड का घर है।

गिरीश तम्बाकू पीने के लिए बाहर गये।

नरेन्द्र– (श्रीरामकृष्ण के प्रति)– गिरीश घोष के साथ वार्तालाप हुआ, बहुत बडे आदमी है। आपकी चर्चा हो रही थी।

श्रीरामकृष्ण– क्या चर्चा?

नरेन्द्र– आप लिखना-पढना नही जानते है, हम सब पण्डित है, यही सब बाते हो रही थी। (हँसी)

मणि मल्लिक–(श्रीरामकृष्ण के प्रति)– आप बिना पढे पण्डित है।

श्रीरामकृष्ण– (नरेन्द्र के प्रति)– सच कहता हूँ, मुझे इस बात का जरा भी दुःख नही होता कि मैने वेदान्त आदि शास्त्र नहीं पढे। मै जानता हूँ, वेदान्त का सार है 'ब्रह्म सत्य है, जगत् मिथ्या है'। फिर गीता का सार क्या है? गीता का दस बार उच्चारण करने पर जो होता है, अर्थात् त्यागी, त्यागी!

"शास्त्र का सार श्रीगुरु-मुख से जान लेना चाहिए। उसके बाद साधन-भजन। एक आदमी ने पत्र लिखा था। पत्र पढा भी न गया था कि खो गया। तब सब मिलकर ढूँढने लगे। जब पत्र मिला, पढ़कर देखा, लिखा था—'पाँच सेर सन्देश और एक धोती भेज दो।' पढकर पत्र को फेंक दिया और पाँच सेर सन्देश और एक धोती का प्रबन्ध करने लगा। इसी प्रकार शास्त्रों का सार जान लेने पर फिर पुस्तकें पढने की क्या आवश्यकता? अब साधन-भजन।"

अब गिरीश कमरे मे आये है।

श्रीरामकृष्ण– (गिरीश के प्रति)– हाँ जी, मेरी बात तुम लोग सब क्या कह रहे थे? मै खाता-पीता रहता हूँ।

गिरीश– आपकी बात और क्या कहूँगा? आप क्या साधु है?

श्रीरामकृष्ण– साधु-वाधु नही। सच ही तो मेरा साधु-बोध नही है।

गिरीश– मजाक मे भी आप से हार गया।

श्रीरामकृष्ण– मै लाल किनारी की धोती पहनकर जयगोपाल सेन के बगीचे मे गया था। केशव सेन वहाँ पर था। केशव ने लाल किनारी की धोती देखकर कहा, 'आज तो लाल किनारी की बडी बहार है!' मैने कहा, 'केशव का मन भुलाना होगा, इसीलिए बहार लेकर आया हूँ।'

अब फिर नरेन्द्र का संगीत होगा। श्रीरामकृष्ण ने मास्टर से तानपूरा उतार देने के लिए कहा। नरेन्द्र बहुत देर से तानपूरे को बाँध रहे है। श्रीरामकृष्ण तथा सभी लोग अधीर हो गये है।

विनोद कह रहे है, "आज बाँधना होगा, गाना किसी दूसरे दिन होगा!" (सभी हँसते है।)

श्रीरामकृष्ण हँस रहे है और कह रहे है "ऐसी इच्छा हो रही है कि तानापूरे को तोड डालूँ। क्या 'टग टंग'—फिर 'ताना नाना तेरे नुम्' होगा।"

भवनाथ—संगीत के प्रारम्भ मे ऐसी ही तगी मालूम होती है।

नरेन्द्र—(बाँधते-बाँधते)—न समझने से ही ऐसा होता है।

श्रीरामकृष्ण—(हँसते हुए)—देखो, हम सभी को उड़ा दिया!

नरेन्द्र गाना गा रहे है। श्रीरामकृष्ण छोटे तखत पर बैठे सुन रहे है। नृत्यगोपाल आदि भक्तगण जमीन पर बैठे सुन रहे है।

संगीत (भावार्थ)

(१) ओ माँ, हृदय मे अन्तर्यामिनी जाग रही है, रात-दिन मुझे गोदी मे ले बैठी है।

(२) गाना गाओ रे आनन्दमयी का नाम, ओ मेरे प्राणों को आराम देनेवाली एकतन्त्री।

(३) माँ, गहरे अन्धकार मे तेरा रूप चमकता है, इसीलिए योगी गुफा मे रहकर ध्यान करता रहता है।

श्रीरामकृष्ण भावविभोर होकर नीचे उतर आये है और नरेन्द्र के पास बैठे है। भावविभोर होकर बातचीत कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण—गाना गाऊँ? नही, नही। (नृत्यगोपाल के प्रति) तू क्या कहता है? उद्दीपन के लिए सुनना चाहिए। उसके बाद क्या आया और क्या गया!

"उसने आग लगा दी, सो तो अच्छा है। उसके बाद चुप। अच्छा, तो मै भी चुप हूँ, तू भी चुप रह।

"आनन्द-रस मे मग्न होने से वास्ता !

"गाना गाऊँ ? अच्छा, गाया भी जा सकता है। जल स्थिर रहने से भी जल है, और हिलने-डुलने पर भी जल है।"

नरेन्द्र को शिक्षा—ज्ञान-अज्ञान से परे रहो

नरेन्द्र पास बैठे है। उनके घर मे कष्ट है, इसीलिए वे सदा ही चिन्तित रहते है। वे मामूली तौर से कभी-कभी ब्राह्म समाज मे आते-जाते है। अभी भी सदा ज्ञान-विचार करते है, वेदान्त आदि ग्रन्थ पढने की बहुत ही इच्छा है। इस समय उनकी आयु २३ वर्ष की है। श्रीरामकृष्ण एकदृष्टि से नरेन्द्र को देख रहे है।

श्रीरामकृष्ण– (हँसकर नरेन्द्र के प्रति)–तू तो 'ख' (आकाश) की तरह है, परन्तु यदि टैक्स (अर्थात् घर की चिन्ता) न रहता ! (सभी की हँसी)

"कृष्णकिशोर कहा करता था, मै 'ख' हूँ। एक दिन उसके घर जाकर देखता हूँ तो वह चिन्तित होकर बैठा है। अधिक बात नही कर रहा है। मैंने पूछा, 'क्या हुआ जी, इस तरह क्यो बैठे हो ?' उसने कहा, 'टैक्सवाला आया था, कह गया, यदि रुपये न दोगे, तो घर का सब सामान नीलाम कर लेगे। इसीलिए मुझे चिन्ता हुई है।' मैने हँसते हँसते कहा, 'यह कैसी बात है जी, तुम तो 'ख' (आकाश) की तरह हो। जाने दो, सालों को सब सामान ले जाने दो, तुम्हारा क्या ?'

"इसीलिए तुझे कहता हूँ, तू तो 'ख' है—इतनी चिन्ता क्यों कर रहा है ? जानता है, श्रीकृष्ण ने अर्जुन से कहा, 'अष्टसिद्धि मे से एक सिद्धि के रहते कुछ शक्ति हो सकती है, परन्तु मुझे न

पाओगे।' सिद्धि द्वारा अच्छी शक्ति, वल, धन ये सव प्राप्त हो सकते है, परन्तु ईश्वर की प्राप्ति नही होती।

"एक और बात। ज्ञान-अज्ञान से परे रहो। कई कहते है, अमुक वडे ज्ञानी है, पर वास्तव मे ऐसा नही है। वशिष्ठ इतने बडे ज्ञानी थे परन्तु पुत्रशोक से वेचैन हुए थे। तव लक्ष्मण ने कहा, 'राम, यह क्या आश्चर्य है! ये भी इतने शोकार्त है!' राम बोले, 'भाई, जिसका ज्ञान है, उसका अज्ञान भी है; जिसको आलोक का बोध है, उसे अन्धकार का भी है, जिसे सुख का बोध है, उसे दु:ख का भी है, जिसे भले का वोध है, उसे वुरे का भी है। भाई, तुम दोनो से परे चले जाओ, सुख-दु.ख से परे जाओ, ज्ञान-अज्ञान से परे जाओ।' इसीलिए तुझे कहता हूँ, ज्ञान-अज्ञान से परे चला जा।"

(३)

गृहस्थ तथा दानधर्म। मनोयोग तथा कर्मयोग

श्रीरामकृष्ण फिर छोटे तखत पर आकर वैठे है। भक्तगण अभी जमीन पर बैठे है। सुरेन्द्र उनके पास वैठे है। श्रीरामकृष्ण उनकी ओर स्नेहपूर्ण दृष्टि से देख रहे है और वातचीत के सिल-सिले मे उन्हे अनेको उपदेश दे रहे है।

श्रीरामकृष्ण—(सुरेन्द्र के प्रति)—वीच वीच मे आते जाना। नागा कहा करता था, लोटा रोज रगड़ना चाहिए, नही तो मैला पड जायेगा। साधुसग सदैव ही आवश्यक है

"सन्यासी के लिए कामिनी-काचन का त्याग, तुम्हारे लिए वह नही। तुम लोग वीच-बीच मे निर्जन मे जाना और उन्हे व्याकुल होकर पुकारना। तुम लोग मन मे त्याग करना।

"भक्त, वीर हुए विना भगवान तथा ससार दोनो ओर ध्यान

नही रख सकता। जनक राजा साधन-भजन के वाद सिद्ध होकर ससार मे रहे थे। वे दो तलवारे घुमाते थे--ज्ञान और कर्म।"

यह कहकर श्रीरामकृष्ण गाना गा रहे है--'यह ससार आनन्द की कुटिया है'--आदि।

"तुम्हारे लिए चैतन्यदेव ने जो कहा था, जीवो पर दया, भक्तो की सेवा और नाम का संकीर्तन।

"तुम्हे क्यो कह रहा हूँ ? तुम एक व्यापारी की दूकान मे काम कर रहे हो। अनेक काम करने पड़ते है, इसलिए कह रहा हूँ।

"तुम आफिस मे झूठ बोलते हो, फिर भी तुम्हारी चीजे क्यो खाता हूँ ? तुम दान, ध्यान जो करते हो। तुम्हारी जो आमदनी है उससे अधिक दान करते हो। बारह हाथ ककडी का तेरह हाथ वीज !

"कजूस की चीज मै नही खाता हूँ। उनका धन इतने प्रकारो से नष्ट हो जाता है--मामला-मुकदमा मे, चोर-डकैतो से, डाक्टरों मे, फिर वदचलन लडके सब धन उड़ा देते है, यही सब है।

"तुम जो दान, ध्यान करते हो, वहुत अच्छा है। जिनके पास धन है उन्हें दान देना कर्तव्य है। कजूस का धन उड जाता है। दाता के धन की रक्षा होती है, सत्कर्म मे जाता है। कामारपुकुर मे किसान लोग नाला काटकर खेत मे जल लाते है। कभी कभी जल का इतना वेग होता है कि खेत का वॉध टूट जाता है और जल निकल जाता है, अनाज बरबाद हो जाता है, इसीलिए किसान लोग वॉध के वीच वीच मे सूराख वनाकर रखते है, इसे 'घोघी' कहते है। जल थोड़ा थोड़ा करके घोघी मे से होकर निकल जाता है, तव जल के वेग से वॉध नही टूटता और खेत पर की मिट्टी नरम हो जाती है। उससे खेत उर्वर वन

जाता है और बहुत अनाज पैदा होता है। जो दान, ध्यान करता है वह बहुत फल प्राप्त करता है, चतुर्वर्ग फल।"

भक्तगण सभी श्रीरामकृष्ण के श्रीमुख से दानधर्म की यह कथा एक मन से सुन रहे है।

सुरेन्द्र–मै अच्छा ध्यान नही कर पाता। बीच-बीच मे 'माँ माँ' कहता हूँ। और सोते समय 'माँ माँ' कहते कहते सो जाता हूँ।

श्रीरामकृष्ण–ऐसा होने से ही काफी है। स्मरण-मनन तो है न?

"मनोयोग और कर्मयोग। पूजा, तीर्थ, जीवसेवा आदि तथा गुरु के उपदेश के अनुसार कर्म करने का नाम है कर्मयोग। जनक आदि जो कर्म करते थे, उसका नाम भी कर्मयोग है। योगी लोग जो स्मरण-मनन करते है उसका नाम है मनोयोग।

"फिर काली-मन्दिर मे जाकर सोचता हूँ 'माँ, मन भी तो तुम हो!' इसीलिए शुद्ध मन, शुद्ध बुद्धि, शुद्ध आत्मा एक ही चीज है।"

सन्ध्या हो रही है। अनेक भक्त श्रीरामकृष्ण को प्रणाम कर घर लौट रहे है।

श्रीरामकृष्ण पश्चिम के बरामदे मे गये है। भवनाथ और मास्टर साथ है।

श्रीरामकृष्ण–(भवनाथ के प्रति)–तू इतनी देर मे क्यों आता है?

भवनाथ–(हँसकर)–जी, पन्द्रह दिनो के बाद दर्शन करता हूँ। उस दिन आपने स्वयं ही रास्ते मे दर्शन दिया। इसलिए फिर नही आया।

श्रीरामकृष्ण–यह कैसी बात है रे! केवल दर्शन से क्या होता है? स्पर्शन, वार्तालाप ये सब भी तो चाहिए।

(४)

गिरीश आदि भक्तों के साथ प्रेमानन्द मे

सायंकाल हुआ। धीरे धीरे मन्दिर मे आरती का शब्द सुनायी दे रहा है। आज फाल्गुन की शुक्ला अष्टमी तिथि; ६-७ दिनो के वाद पूर्णिमा के दिन होली महोत्सव होगा।

देवमन्दिर का चूड़ा, प्रांगण, बगीचा, वृक्षों के ऊपर के भाग चन्द्रकिरण में मनोहर रूप धारण किये हुए है। गंगाजी इस समय उत्तर की ओर बह रही है, चांदनी मे चमक रही है, मानो आनन्द से मन्दिर के किनारे से उत्तर की ओर प्रवाहित हो रही है। श्रीरामकृष्ण अपने कमरे मे छोटे तखत पर बैठकर चुपचाप जगन्माता का चिन्तन कर रहे है।

उत्सव के वाद अभी तक दो-एक भक्त रह गये है। नरेन्द्र पहले ही चले गये।

आरती समाप्त हुई। श्रीरामकृष्ण भावविभोर होकर दक्षिण-पूर्व के लम्बे वरामदे पर धीरे धीरे टहल रहे है। श्रीरामकृष्ण एकाएक मास्टर को सम्बोधित कर कह रहे है, "अहा, नरेन्द्र का क्या ही गाना है!"

मास्टर– जी, 'घने अन्धकार मे,' वह गाना ?

श्रीरामकृष्ण– हॉ, उस गाने का बहुत गम्भीर मतलव है। मेरे मन को मानो अभी तक खीचकर रखा है।

मास्टर– जी, हॉ !

श्रीरामकृष्ण– अन्धकार मे ध्यान, यह तन्त्र का मत है। उस समय सूर्य का आलोक कहॉ है ?

श्री गिरीश घोष आकर खड़े हुए। श्रीरामकृष्ण गाना गा रहे है।

सगीत (भावार्थ)– "ओ रे! क्या मेरी मॉ काली है? ओ

रे! कालरूपी दिगम्बरी हृत्पद्म को आलोकित करती है।"

श्रीरामकृष्ण मतवाले होकर खड़े खड़े गिरीश के शरीर पर हाथ रखकर गाना गा रहे है।

सगीत– (भावार्थ)– "गया, गगा, प्रभास, काशी, कांची आदि कौन चाहता है" — इत्यादि।

सगीत– (भावार्थ)– "इस बार मै ठीक समझ गया हूँ; अच्छे भाववाले से भाव सीखा है। माँ जिस देश मे रात्रि नहीं है, उस देश का एक आदमी पाया हूँ, क्या दिन और क्या शाम—मै कुछ भी नही जानता। नूपुर मे ताल मिलाकर उस ताल का एक गाना सीखा है; वह ताल 'ताधिम ताधिम' रव से वज रहा है। मेरी नीद खुल गयी है, क्या मै फिर सोता हूँ? योग-याग मे मै जाग रहा हूँ! माँ, योगनिद्रा तुझे देकर मैने नीद को सुला दिया है। प्रसाद कहता है, मैने भुक्ति और मुक्ति इन दोनो को सिर पर रखा है। काली ही ब्रह्म है इस मर्म को जानकर मैने धर्म और अधर्म दोनो को त्याग दिया है।"

गिरीश को देखते देखते मानो श्रीरामकृष्ण के भाव का उल्लास और भी वढ़ रहा है। वे खड़े खडे फिर गा रहे है—

संगीत– (भावार्थ)– "मैने अभय पद मे प्राणो को सौप दिया है"—आदि।

श्रीरामकृष्ण भाव मे मस्त होकर फिर गा रहे है— (भावार्थ) —"मै देह को ससाररूपी वाजार मे वेचकर श्रीदुर्गा नाम खरीद लाया हूँ।"

(गिरीश आदि भक्तो के प्रति)–

"'भाव से शरीर भर गया, ज्ञान नष्ट हो गया।'

"उस ज्ञान का अर्थ है वाहर का ज्ञान। तत्त्वज्ञान, ब्रह्मज्ञान

यही सब चाहिए।

"भक्ति ही सार है। सकाम भक्ति भी है और निष्काम भक्ति भी। शुद्धा भक्ति, अहेतुकी भक्ति—यह भी है। केशव सेन आदि अहेतुकी भक्ति नही जानते थे। कोई कामना नही, केवल ईश्वर के चरणकमलों मे भक्ति !

"एक और है—उर्जिता भक्ति। मानो भक्ति उमड़ रही है। भाव मे हंसता-नाचता-गाता है, जैसे चैतन्यदेव। राम ने लक्ष्मण से कहा, 'भाई, जहाॅ पर उर्जिता भक्ति हो, वही पर जानो, मैं स्वय विद्यमान हू।'"

श्रीरामकृष्ण क्या अपनी स्थिति का इशारा कर रहे है? क्या श्रीरामकृष्ण चैतन्यदेव की तरह अवतार है? जीव को भक्ति सिखाने के लिए अवतीर्ण हुए है?

गिरीश– आपकी कृपा होने से ही सब कुछ होता है। क्या था, क्या हुआ हूँ !

श्रीरामकृष्ण– हाॅ जी, तुम्हारा संस्कार था, इसीलिए हो रहा है। समय हुए बिना कुछ नही होता। जब रोग अच्छा होने को हुआ, तो वैद्य ने कहा, 'इस पत्ते को काली मिर्च के साथ पीसकर खाना।' उसके बाद रोग दूर हो गया। काली मिर्च के साथ दवा खाकर अच्छा हुआ या यो ही रोग ठीक हो गया, कौन कह सकता है?

"लक्ष्मण ने लव-कुश से कहा, 'तुम बच्चे हो, श्रीरामचन्द्र को नही जानते। उनके पदस्पर्श से अहिल्या पत्थर से मानवी बन गयी।' लव-कुश बोले, महाराज, हम सब जानते है; सब सुना है। पत्थर से जो मानवी बनी, यह मुनि का वचन था। गौतम मुनि ने कहा था कि 'त्रेतायुग मे श्रीरामचन्द्र उसी आश्रम के

पास से होकर जायेंगे, उनके चरणस्पर्श से तुम फिर मानवी बन जाओगी।' सो अब राम के गुण से बनी या मुनि के वचन से, कौन कह सकता है?

"सब ईश्वर की इच्छा से हो रहा है। यहाँ पर यदि तुम्हें चैतन्य प्राप्त हो, तो मुझे निमित्त मात्र जानना। चन्दा मामा सभी का मामा है। ईश्वर की इच्छा से सब कुछ हो रहा है।"

गिरीश– (हँसते हुए)– ईश्वर की इच्छा से न? मैं भी तो यही कह रहा हूँ। (सभी की हँसी)

श्रीरामकृष्ण– (गिरीश के प्रति)– सरल बनने पर ईश्वर का शीघ्र ही लाभ होता है। जानते हो कितनों को ज्ञान नहीं होता? एक— जिसका मन टेढा है, सरल नही है। दूसरा— जिसे छुआछूत का रोग है, और तीसरा— जो सशयात्मा है।

श्रीरामकृष्ण नृत्यगोपाल की भावावस्था की प्रशसा कर रहे हैं।

अभी तक तीन-चार भक्त उस दक्षिण-पूर्व वाले लम्बे बरामदे मे श्रीरामकृष्ण के पास खड़े है और सब कुछ सुन रहे हैं। श्रीरामकृष्ण परमहस की स्थिति का वर्णन कर रहे है। कह रहे है, "परमहस को सदा यही बोध होता है कि ईश्वर सत्य है, शेष सभी अनित्य। हस मे जल से दूध को अलग निकाल लेने की शक्ति है। उसकी जिह्वा मे एक प्रकार का खट्टा रस रहता है; दूध और जल यदि मिला हुआ रहे तो उस रस के द्वारा दूध अलग और जल अलग हो जाता है। परमहस के मुख मे भी खट्टा रस है, प्रेमाभक्ति। प्रेमाभक्ति रहने से ही नित्य-अनित्य का विवेक होता है, ईश्वर की अनुभूति होती है, ईश्वर का दर्शन होता है।"

परिच्छेद २

गिरीश के मकान पर

(१)

ज्ञान-भक्ति-समन्वय कथा

श्रीरामकृष्ण गिरीश घोष के वसुपाड़ावाले मकान मे भक्तों के साथ बैठकर ईश्वर सम्वन्धी वार्तालाप कर रहे है। दिन के तीन वजे का समय है, मास्टर ने आकर भूमिष्ठ हो प्रणाम किया। आज बुधवार है—शुक्ला एकादशी—२५ फरवरी १८८५ ई०। पिछले रविवार को दक्षिणेश्वर मन्दिर मे श्रीरामकृष्ण का जन्म-महोत्सव हो गया है। श्रीरामकृष्ण गिरीश के घर होकर स्टार थिएटर मे 'वृषकेतु' नाटक देखने जायेगे।

श्रीरामकृष्ण थोड़ी देर पहले ही पधारे है। कामकाज समाप्त करके आने मे मास्टर को थोड़ा विलम्व हुआ। उन्होने आकर ही देखा, श्रीरामकृष्ण उत्साह के साथ ब्रह्मज्ञान और भक्तितत्त्व के समन्वय की चर्चा कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण– (गिरीश आदि भक्तो के प्रति) –जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति—जीव की ये तीन स्थितियां होती है।

"जो लोग ज्ञान का विचार करते है वे तीनो स्थितियो को उड़ा देते है। वे कहते है कि ब्रह्म तीनो स्थितियो से परे है—स्थूल, सूक्ष्म, कारण तीनो शरीरो से परे है, सत्व, रज, तम—तीनो गुणो से परे है। सभी माया है, जैसे दर्पण मे परछाई पड़ती है, प्रतिविम्व कोई वस्तु नही है। ब्रह्म ही वस्तु है, वाकी सव अवस्तु।

"ब्रह्मज्ञानी और भी कहते है, देहात्म-वुद्धि रहने से ही दो

दिखते हैं। परछाई भी सत्य प्रतीत होती है। वह बुद्धि लुप्त होने पर 'सोऽहम्' 'मैं ही वह ब्रह्म हूँ' यह अनुभूति होती है।"

एक भक्त–तो फिर, क्या हम सब बुद्धि-विचार का मार्ग ग्रहण करें?

श्रीरामकृष्ण–विचार-पथ भी है—वेदान्तवादियों का पथ। और एक पथ है—भक्तिपथ। भक्त यदि ब्रह्मज्ञान के लिए व्याकुल होकर रोता है, तो वह उसे भी प्राप्त कर लेता है। ज्ञानयोग और भक्तियोग।

"दोनों पथों से ब्रह्मज्ञान हो सकता है; कोई कोई ब्रह्मज्ञान के बाद भी भक्ति लेकर रहते हैं—लोकशिक्षा के लिए, जैसे अवतार आदि।

"देहात्मबुद्धि, 'मैं'-बुद्धि आसानी से नहीं जाती। उनकी कृपा से समाधिस्थ होने पर जाती है—निर्विकल्प समाधि, जड़ समाधि।

"समाधि के बाद अवतार आदि का 'मैं' फिर लौट आता है—विद्या का 'मैं,' भक्त का 'मैं'। इस विद्या के 'मैं' से लोक-शिक्षा होती है। शंकराचार्य ने विद्या के 'मैं' को रखा था।

"चैतन्यदेव इसी 'मैं' द्वारा भक्ति का आस्वादन करते थे, भक्तिभक्त लेकर रहते थे, ईश्वर की बातें करते थे, नाम-संकीर्तन करते थे।

" 'मैं' तो सरलता से नहीं जाता, इसीलिए भक्त जाग्रत, स्वप्न आदि स्थितियों को उड़ा नहीं देते। सभी स्थितियों को मानते हैं, सत्व-रज-तम तीन गुण भी मानते हैं। भक्त देखता है, वे ही चौबीस तत्त्व बने हुए हैं। फिर देखो, साकार चिन्मय रूप में वे दर्शन देते हैं।

"भक्त विद्यामाया की शरण लेता है। साधुसग, तीर्थ, ज्ञान, भक्ति, वैराग्य—इन सब की शरण लेकर रहता है। वह कहता है, यदि 'मै' सरलता से चला न जाय, तो रहे साला 'दास' बनकर, 'भक्त' बनकर।

"भक्त का भी एकाकार ज्ञान होता है। वह देखता है, ईश्वर के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है। स्वप्न की तरह नही कहता, परन्तु कहता है, वे ही ये सब बने हुए है। मोम के बगीचे मे सभी कुछ मोम का है। परन्तु है अनेक रूप मे।

"परन्तु पक्की भक्ति होने पर इस प्रकार बोध होता है। अधिक पित्त जमने पर पीला रोग होता है। तब मनुष्य देखता है कि सभी पीले हैं। श्रीमती राधा ने श्यामसुन्दर का चिन्तन करते करते सभी श्याममय देखा और अपने को भी श्याम समझने लगी। सीसा यदि अधिक दिन तक पारे के तालाब में रहे तो वह भी पारा बन जाता है। 'कुमुड़' कीड़े को सोचते सोचते झींगुर निश्चल हो जाता है, हिलता नही, अन्त मे 'कुमुड़' कीड़ा ही बन जाता है। भक्त भी उनका चिन्तन करते करते अहंशून्य बन जाता है। फिर देखता है 'वह ही मै हूँ, मै ही वह हूँ।'

"झींगुर जब 'कुमुड़' कीड़ा बन जाता है, तब सब कुछ हो गया। तभी मुक्ति होती है।

"जब तक उन्होने मैं-पन को रखा, तब तक एक भाव का सहारा लेकर उन्हे पुकारना पडता है—शान्त, दास्य, वात्सल्य—ये सब।

"मै दासीभाव मे एक वर्ष तक था—ब्रह्ममयी की दासी। औरतो का कपड़ा, ओढना आदि यह सब करता था, फिर नथ भी पहनता था। औरतो के भाव मे रहने से काम पर विजय

प्राप्त होती है।

"उसी आद्याशक्ति की पूजा करनी होती है, उन्हे प्रसन्न करना होता है। वे ही औरतो का रूप धारण करके वर्तमान हैं, इसीलिए मेरा मातृभाव है।

"मातृभाव अति शुद्ध भाव है। तन्त्र मे वामाचार की बात भी है, परन्तु वह ठीक नही, उससे पतन होता है। भोग रखने से ही भय है।

"मातृभाव मानो निर्जला एकादशी है, किसी भोग की गन्ध नही है। दूसरी है फल-मूल खाकर एकादशी, और तीसरी, पूरी मिठाई खाकर एकादशी। मेरी निर्जला एकादशी है, मैंने मातृभाव से सोलह वर्ष की कुमारी की पूजा की थी। देखा, स्तन मातृस्तन है, योनि मातृयोनि है।

"यह मातृभाव—साधना की अन्तिम बात है। 'तुम माँ हो, मैं तुम्हारा बालक हूँ।' यही अन्तिम बात है।

"सन्यासी की निर्जला एकादशी है, यदि संन्यासी भोग रखता है, तभी भय है। कामिनी-कांचन भोग है। जैसे थूककर फिर उसी थूक को चाट लेना। रुपये-पैसे, मान-इज्जत, इन्द्रियसुख—ये सब भोग है। सन्यासी का स्त्रीभक्त के साथ बैठना या वार्तालाप करना भी ठीक नही है—अपनी भी हानि और दूसरो की भी हानि। दूसरे लोगो की शिक्षा नही होती। संन्यासी का शरीर-धारण लोक-शिक्षा के लिए है।

"औरतो के साथ बैठना या अधिक देर तक वार्तालाप करना —इसे भी रमण कहा है। रमण आठ प्रकार के है। कोई औरतो की बाते सुन रहा है, सुनते सुनते आनन्द हो रहा है,—यह एक प्रकार का रमण है। औरतो की बात कह रहा है

(कीर्तन में)---यह एक प्रकार का रमण है; औरतों के साथ एकान्त मे गुपचुप वातचीत कर रहा है---यह एक प्रकार का रमण है, औरतो की कोई चीज पास रख ली है, आनन्द हो रहा है---यह एक प्रकार है, स्पर्श करना भी एक प्रकार है, इसीलिए गुरुपत्नी यदि युवती हो तो पादस्पर्श नही करना चाहिए। सन्यासियो के ये सब नियम है।

"ससारियो की अलग वात है; दो-एक पुत्र होने पर भाई-वहन की तरह रहे। उनका अन्य सात प्रकार के रमण से उतना दोप नही है।

"गृहस्थ के ऋण है। देवऋण, पितृऋण, ऋषिऋण, फिर स्त्रीऋण भी है, एक दो वच्चे होना और सती हो तो उसका प्रतिपालन करना।

"संसारी लोग समझ नही सकते कि कौन अच्छी स्त्री है और कौन खराव स्त्री, कौन विद्याशक्ति और कौन अविद्याशक्ति; जो अच्छी स्त्री है--- विद्याशक्ति--- उसमे काम, क्रोध, आदि कम होता है, नीद कम होती है। जो विद्याशक्ति है उसमे स्नेह, दया, भक्ति, लज्जा आदि होते है। वह सभी की सेवा करती है, वात्सल्य भाव से; और पति की भगवान मे भक्ति बढाने का यत्न करती है। अधिक खर्च नही करती, कही पति को अधिक श्रम न करना पड़े, कहीं ईश्वर के चिन्तन मे विघ्न न हो।

"फिर मर्दानी स्त्रियो के भी लक्षण है। खराव लक्षण --- टेढी, दवी हुई आँखे, बिल्ली जैसी आँखे, हड्डियाँ उभरी हुई, गाय के वछडे जैसे गाल।"

गिरीश-- हमारे उद्धार का उपाय क्या है?

श्रीरामकृष्ण-- भक्ति ही सार है। फिर भक्ति का सत्व, भक्ति

का रज, भक्ति का तम भी है।

"भक्ति का सत्व है दीन-हीन भाव; भक्ति का तम मानो डाका पडने का भाव, मै उनका काम कर रहा हूं, मुझे फिर पाप कैसा? तुम मेरी अपनी माँ हो, दर्शन देना ही होगा।"

गिरीश– (हँसते हुए)– भक्ति का तम आप ही तो सिखाते है।

श्रीरामकृष्ण– (हँसते हुए)– परन्तु उनका दर्शन करने का लक्षण है, समाधि होती है। समाधि पाँच प्रकार की है। १. चींटी की गति, महावायु उठती है, चीटी की तरह। २. मछली की गति। ३. तिर्यक् गति। ४ पक्षी की गति— जिस प्रकार पक्षी एक शाखा से दूसरी शाखा पर जाता है। ५. कपि की तरह, बन्दर की गति, मानो महावायु कूदकर माथे पर उठ गयी और समाधि हो गयी।

"और भी दो प्रकार की समाधि है। एक— स्थित समाधि, एकदम बाह्यशून्य; बहुत देर तक, सम्भव है, कई दिनों तक रहे। और दूसरी— उन्मना समाधि, एकाएक मन को चारो ओर से ऊपर लाकर ईश्वर मे लगा देना।

(मास्टर के प्रति) "तुमने यह समझा है?"

मास्टर –जी हाँ।

गिरीश– क्या साधना द्वारा उन्हे प्राप्त किया जा सकता है?

श्रीरामकृष्ण– लोगो ने अनेक प्रकार से उन्हें प्राप्त किया है। किसी ने अनेक तपस्या, साधन-भजन करके प्राप्त किया है, साधनसिद्ध। कोई जन्म से सिद्ध है, जैसे नारद, शुकदेव आदि। इन्हे कहते है नित्यसिद्ध। दूसरे है एकाएक सिद्ध, जिन्होने एकाएक प्राप्त कर लिया है; पहले कोई आशा न थी। फिर कुछ उदाहरण ऐसे भी है कि लोगो ने ईश्वर की कृपा से स्वप्न

मे ही ईश्वर-प्राप्ति कर ली।

(२)

गिरीश का शान्तभाव; कलि मे शूद्र की भक्ति और मुक्ति

श्रीरामकृष्ण– और कुछ लोग है स्वप्नसिद्ध और कृपासिद्ध।

यह कहकर श्रीरामकृष्ण भाव मे विभोर होकर गाना गा रहे है।

सगीत– (भावार्थ)– "क्या श्यामारूपी धन को सभी लोग प्राप्त करते है ! अबोध मन नही समझता है, यह क्या बात है !" — इत्यादि।

श्रीरामकृष्ण थोडी देर भावाविष्ट है। गिरीश आदि भक्तगण सामने वैठे है। कुछ दिन पूर्व स्टार थिएटर मे गिरीश ने अनेक वाते वतायी थी; इस समय शान्त भाव है।

श्रीरामकृष्ण– (गिरीश के प्रति)– तुम्हारा यह भाव बहुत अच्छा है— शान्तभाव। माँ से इसीलिए कहा था, 'माँ, उसे शान्त कर दो, मुझे ऐसा-वैसा न कहे।'

गिरीश– (मास्टर के प्रति)– न जाने किसने मेरी जीभ को दवाकर पकड़ लिया है, मुझे बात करने नही दे रहा है।

श्रीरामकृष्ण अभी भी भावमग्न है, अन्तर्मुख। वाहर के व्यक्ति, वस्तु, धीरे-धीरे मानो सभी को भूलते जा रहे है। जरा स्वस्थ होकर मन को उतार रहे है। भक्तों को फिर देख रहे है। (मास्टर को देखकर) "ये सव वहाँ पर (दक्षिणेश्वर मे) जाते है,— जाते है तो जायँ, माँ सव कुछ जानती है। (पड़ोसी वालक के प्रति)—हाँ जी, तुम क्या समझते हो? मनुष्य का क्या कर्तव्य है ?"

सभी चुप है। क्या श्रीरामकृष्ण कह रहे है कि ईश्वर की प्राप्ति ही जीवन का उद्देश्य है ?

(नारायण के प्रति)—क्या तू पास होना नही चाहता ? अरे सुन, जो पाशमुक्त हो जाता है वह शिव बन जाता है और जो पाशबद्ध रहता है वह जीव है।

श्रीरामकृष्ण अभी भावमग्न है। पास ही ग्लास मे जल रखा था, उन्होने उसका पान किया। वे अपने आप कह रहे है, 'कहाँ, भाव मे तो मैने जल पी लिया!'

अभी सायकाल नही हुआ। श्रीरामकृष्ण गिरीश के भाई अतुल के साथ बातचीत कर रहे है। अतुल भक्तों के साथ सामने ही बैठे है। एक ब्राह्मण पड़ोसी भी बैठे है। अतुल हाईकोर्ट मे वकील है।

श्रीरामकृष्ण— (अतुल के प्रति)—आप लोगों से यही कहता हूँ, आप दोनो करे, ससार धर्म भी करे और जिससे भक्ति हो वह भी करे।

ब्राह्मण पडोसी—क्या ब्राह्मण न होने पर मनुष्य सिद्ध होता है?

श्रीरामकृष्ण—क्यो ? कलियुग मे शूद्र की भक्ति की कथाएँ है। शबरी, रैदास, गुहल चण्डाल,—ये सब है।

नारायण— (हँसते हुए)—ब्राह्मण शूद्र सब एक है।

ब्राह्मण—क्या एक जन्म मे होता है ?

श्रीरामकृष्ण—उनकी दया होने पर क्या नही होता! हजार वर्ष के अन्धकारपूर्ण कमरे मे बत्ती लाने पर क्या थोड़ा थोड़ा करके अन्धकार चला जाता है ? एकदम रोशनी हो जाती है।

(अतुल के प्रति)—"तीव्र वैराग्य चाहिए—जैसी नगी तलवार! ऐसा वैराग्य होने पर स्वजन काले साँप जैसे लगते है, घर कुआँ सा प्रतीत होता है।

"और अन्तर से व्याकुल होकर उन्हे पुकारना चाहिए। अन्तर

की पुकार वे अवश्य सुनेगे ।"

सव चुपचाप है। श्रीरामकृष्ण ने जो कुछ कहा, एकाग्र चित्त से मुनकर सभी उस पर चिन्तन कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण–(अतुल के प्रति)–क्यो, वैसी दृढता—व्याकुलता नही होती ?

अतुल– मन कहाँ ईश्वर मे रह पाता है ?

श्रीरामकृष्ण–अभ्यासयोग ! प्रति दिन उन्हे पुकारने का अभ्यास करना चाहिए। एक दिन मे नही होता। रोज पुकारते पुकारते व्याकुलता आ जाती है।

"रात-दिन केवल विपय-कर्म करने पर व्याकुलता कैसे आयेगी? यदु मल्लिक शुरू शुरू मे ईश्वर की वाते अच्छी तरह सुनता था, स्वय भी कहता था। आजकल अव उतना नही कहता। रात-दिन चापलूसो को लेकर बैठा रहता है, केवल विषय की बाते !"

सायकाल हुआ। कमरे मे बत्ती जलायी गयी है। श्रीरामकृष्ण देवताओ के नाम ले रहे है, गाना गा रहे है और प्रार्थना कर रहे है।

कह रहे है, 'हरि वोल' 'हरि बोल' 'हरि वोल'; फिर 'राम' 'राम' 'राम', फिर 'नित्यलीलामयी', 'ओ माँ ! उपाय बता दे, माँ !' 'शरणागत' 'शरणागत' 'शरणागत'।

गिरीश को व्यस्त देखकर श्रीरामकृष्ण थोडी देर चुप रहे। तेजचन्द्र से कह रहे है, 'तू जरा पास आकर वैठ।'

तेजचन्द्र पास वैठे। थोडी देर वाद मास्टर से कान मे कह रहे है, 'मुझे जाना है।'

श्रीरामकृष्ण– (मास्टर के प्रति)–क्या कह रहा है ?

मास्टर– घर जाना है— यही कह रहा है।

श्रीरामकृष्ण– उन्हे (वालभक्तो को) इतना क्यो चाहता हूँ? वे निर्मल पात्र है— विपयवुद्धि प्रविष्ट नही हुई है। विपयवुद्धि रहने पर उपदेशों को धारण नही कर सकते। नये वर्तन मे दूध रखा जा सकता है, दही के वर्तन मे दूध रखने से खराव हो जाता है।

"जिस वर्तन मे लहसुन घोला हो, उस वर्तन को चाहे हजार वार धो डालो, लहसुन की गन्ध नही जाती।"

(३)

श्रीरामकृष्ण स्टार थिएटर में— वृषकेतु नाटक; नरेन्द्र आदि के साथ

श्रीरामकृष्ण वृषकेतु नाटक देखेगे। वीडन स्ट्रीट पर जहाँ वाद मे मनोमोहन थिएटर हुआ, पहले वहाँ स्टार थिएटर था। श्रीरामकृष्ण थिएटर मे आकर वॉक्स मे दक्षिण की ओर मुँह करके वैठे। मास्टर आदि भक्तगण पास ही वैठे है।

श्रीरामकृष्ण– (मास्टर के प्रति)– नरेन्द्र आया है?

मास्टर– जी हाँ।

अभिनय हो रहा है। कर्ण और पद्मावती ने आरी को दोनो ओर से पकड़कर वृषकेतु का वलिदान किया। पद्मावती ने रोते रोते मास को पकाया। वृद्ध ब्राह्मण अतिथि आनन्द मनाते हुए कर्ण से कह रहे है, "अव आओ, हम एक साथ वैठकर पका हुआ मास खाये।" कर्ण कह रहे है, "यह मुझसे न होगा। पुत्र का मास खा न सकूँगा।"

एक भक्त ने सहानुभूति प्रकट करके धीरे से आर्तनाद किया। श्रीरामकृष्ण ने भी दु ख प्रकट किया।

खेल समाप्त होने पर श्रीरामकृष्ण रगमच के विश्रामगृह मे आकर उपस्थित हुए। गिरीश, नरेन्द्र आदि भक्तगण वैठे है। श्रीरामकृष्ण कमरे मे जाकर नरेन्द्र के पास खड़े हुए और वोले,

"मै आया हूँ।"

श्रीरामकृष्ण वैठे है। अभी वाद्यो का शव्द सुना जा रहा है।

श्रीरामकृष्ण– (भक्तो के प्रति)– यह वाजा सुनकर मुझे आनन्द हो रहा है। वहा पर (दक्षिणेश्वर मे) शहनाई वजती थी, मै भावमग्न हो जाता था। एक साधु मेरी स्थिति देखकर कहा करता था, 'ये सव ब्रह्मज्ञान के लक्षण है।'

वाद्य वन्द होने पर श्रीरामकृष्ण फिर वात कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण– (गिरीश के प्रति)– यह तुम्हारा थिएटर है या तुम लोगो का ?

गिरीश– जी, हम लोगो का।

श्रीरामकृष्ण– 'हम लोगो का' शव्द ही अच्छा है। 'मेरा' कहना ठीक नही.। कोई कोई कहता है 'मै खुद आया हूँ।' ये सव वातें हीनवुद्धि अहंकारी लोग कहते है।

नरेन्द्र– सभी कुछ थिएटर है।

श्रीरामकृष्ण– हाँ, हाँ, ठीक। परन्तु कही विद्या का खेल है, कही अविद्या का।

नरेन्द्र– सभी विद्या के खेल है।

श्रीरामकृष्ण– हाँ, हाँ, परन्तु यह तो ब्रह्मज्ञान से होता है। भक्ति और भक्त के लिए दोनो ही है, विद्यामाया और अविद्या-माया। तू जरा गाना गा।

नरेन्द्र गाना गा रहे है—

सगीत– (भावार्थ)– "चिदानन्द समुद्र के जल मे प्रेमानन्द की लहरे है। अहा! महाभाव मे रासलीला की क्या ही माधुरी है! नाना प्रकार के विलास, आनन्द-प्रसग, कितनी ही नयी नयी भाव-तरंगे नये नये रूप धारणकर डूव रही है, उठ रही है और

तरह तरह के खेल कर रही है। महायोग मे सभी एकाकार बन गये। देश-काल की पृथक्ता तथा भेदाभेद मिट गये और मेरी आशा पूर्ण हुई। मेरी सभी आकाक्षाएँ मिट गयी। अब हे मन, आनन्द मे मस्त होकर, दोनो हाथ उठाकर 'हरि हरि' बोल।"

नरेन्द्र जब गा रहे है, 'महायोग मे सब एकाकार हो गये',— तो श्रीरामकृष्ण कह रहे है, 'यह ब्रह्मज्ञान से होता है। तू जो कह रहा था,—सभी विद्या है।'

नरेन्द्र जब गा रहे है, "हे मन! आनन्द मे मस्त होकर दोनो हाथ उठाकर 'हरि हरि' बोल"— तो श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र से कह रहे है, 'इसे दो बार कह।'

सगीत समाप्त होने पर भक्तो के साथ वार्तालाप हो रहा है।

गिरीश— देवेन्द्र बाबू नही आये है। वे अभिमान करके कहते है, 'हमारे अन्दर तो कुछ सार नही है, हम आकर क्या करेगे!'

श्रीरामकृष्ण—(विस्मित होकर)—कहाँ, पहले तो वे वैसी बातें नही करते थे?

श्रीरामकृष्ण जलपान कर रहे है, नरेन्द्र को भी कुछ खाने को दिया।

यतीन देव— (श्रीरामकृष्ण के प्रति)— आप 'नरेन्द्र खाओ' 'नरेन्द्र खाओ' कह रहे है, और हम लोग क्या कही से बहकर आये है!

यतीन को श्रीरामकृष्ण बहुत चाहते है। वे दक्षिणेश्वर मे जाकर बीच-बीच मे दर्शन करते है। कभी-कभी रात भी वही बिताते है। वह शोभाबाजार के राजाओ के घर का (राधाकान्त देव के घर का) लड़का है।

श्रीरामकृष्ण— (नरेन्द्र के प्रति हँसते हुए)— देख, यतीन तेरी

ही बात कर रहा है।

श्रीरामकृष्ण ने हँसते हँसते यतीन की ठुड्डी पकड़कर प्यार करते हुए कहा, "वहाँ जाना, जाकर खाना।" अर्थात् 'दक्षिणेश्वर मे जाना।' श्रीरामकृष्ण फिर 'विवाहविभ्राट' नाटक का अभिनय देखेंगे। बॉक्स मे जाकर बैठे। नौकरानी की बात सुनकर हँसने लगे।

थोड़ी देर सुनकर उनका मन दूसरी ओर गया। मास्टर के साथ धीरे-धीरे बात कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण–(मास्टर के प्रति)–अच्छा, गिरीश जो कह रहा है (अर्थात् अवतार) क्या वह सत्य है ?

मास्टर–जी, ठीक बात है। नही तो सभी के मन मे क्यो लग रही है ?

श्रीरामकृष्ण–देखो, अब एक स्थिति आ रही है, पहले की स्थिति उलट गयी है। अब धातु की चीजे छू नही सकता हूँ।

मास्टर विस्मित होकर सुन रहे है।

श्रीरामकृष्ण–यह जो नवीन स्थिति है, इसका एक बहुत ही गुप्त रहस्य है।

श्रीरामकृष्ण धातु छू नही सक रहे है। सम्भव है, अवतार माया के ऐश्वर्य का कुछ भी भोग नही करते, क्या इसीलिए श्रीरामकृष्ण ये सब बातें कह रहे है ?

श्रीरामकृष्ण–(मास्टर के प्रति)–अच्छा, मेरी स्थिति कुछ बदल रही है, देखते हो ?

मास्टर–जी, कहाँ ?

श्रीरामकृष्ण–कर्म मे ?

मास्टर–अब कर्म बढ़ रहा है—अनेक लोग जान रहे है।

श्रीरामकृष्ण– देख रहे हो ! पहले जो कुछ कहता था, अव सफल हो रहा है।

श्रीरामकृष्ण थोड़ी देर चुप रहकर एकाएक कह रहे है– "अच्छा, पल्टू का अच्छा ध्यान क्यो नही होता ?"

अव श्रीरामकृष्ण के दक्षिणेश्वर जाने की व्यवस्था हो रही है।

श्रीरामकृष्ण ने किसी भक्त के पास गिरीश के सम्बन्ध में कहा था, "पीसे हुए लहसुन की बाटी को हजार बार धोओ, पर लहसुन की गन्ध क्या सम्पूर्ण रूप से जाती है ?" गिरीश ने भी इसीलिए मन ही मन प्रेम-कोप किया है। जाते समय गिरीश श्रीरामकृष्ण से कुछ कह रहे हैं।

गिरीश– (श्रीरामकृष्ण के प्रति) – लहसुन की गन्ध क्या जायेगी ?

श्रीरामकृष्ण– जायेगी।

गिरीश– तो आप कह रहे है— जायेगी ?

श्रीरामकृष्ण– कटोरी मे अगर लहसुन की गन्ध आ रही हो तो उसे आँच पर रख देने से गन्ध चली जाती है और वर्तन शुद्ध हो जाता है।

"जो कहता है 'मेरा नही होगा,' उसका नही होता। मुक्ति का अभिमान करनेवाला मुक्त ही हो जाता है और वद्ध-अभिमानी वद्ध ही रह जाता है। जो जोर से कहता है 'मै मुक्त हूँ,' वह मुक्त ही हो जाता है ! पर जो दिनरात कहता है, 'मै वद्ध हूँ' वह वद्ध ही हो जाता है।"

परिच्छेद ३

श्रीरामकृष्ण तथा भक्तियोग

(१)

दक्षिणेश्वर में भक्तों के संग मे

श्रीरामकृष्ण कमरे में छोटे तखत पर समाधिमग्न बैठ हुए है। सव भक्त जमीन पर बैठे हुए टकटकी लगाये उन्हे देख रहे है। महिमाचरण, रामदत्त, मनमोहन, नवाई चैतन्य, मास्टर आदि कितने ही लोग बैठे हुए है। आज होली है, महाप्रभु श्रीचैतन्यदेव का जन्मदिन है। रविवार, १ मार्च १८८५।

भक्तगण एकटक देख रहे है। श्रीरामकृष्ण की समाधि छूटी। इस समय भी भाव पूर्ण मात्रा मे है। श्रीरामकृष्ण महिमाचरण से कह रहे है— "वावू हरिभक्ति की कोई कथा —"

महिमाचरण— आराधितो यदि हरिस्तपसा ततः किम्। नाराधितो यदि हरिस्तपसा ततः किम्॥ अन्तर्बहिर्यदि हरिस्तपसा तत. किम्। नान्तर्वहिर्यदि हरिस्तपसा ततः किम्॥ विरम विरम ब्रह्मन् कि तपस्यासु वत्स। व्रज व्रज द्विज शीघ्रं शंकरं ज्ञान-सिन्धुम्॥ लभ लभ हरिभक्ति वैष्णवोक्तां सुपक्वाम्। भवनिगड-निवन्धच्छेदनी कर्तरी च॥

"नारद-पंचरात्र मे है कि नारद जब तपस्या कर रहे थे, यह दैववाणी उसी समय हुई थी।"

श्रीरामकृष्ण— जीवकोटि और ईश्वरकोटि, दो है। जीवकोटि की भक्ति वैधी भक्ति है— इतने उपचार से पूजा की जायेगी, इतना जप और इतना पुरश्चरण किया जायेगा— इस वैधी भक्ति के वाद है ज्ञान। इसके वाद है लय। इस लय के वाद फिर

जीव नही लौटता।

"ईश्वरकोटि की और बात है— जैसे अनुलोम और विलोम। 'नेति-नेति' करके वह छत पर पहुँचकर जब देखता है, तो छत जिन चीजो की बनी हुई है— चूना, सुरखी और ईंटों की— सीढी भी उन्ही चीजो की बनी हुई है, तब वह चाहे तो छत मे रह जाय, चाहे चढना-उतरना जारी रखे। वह दोनो ही कर सकता है।

"शुकदेव समाधिस्थ थे। निर्विकल्प समाधि— जड समाधि हो गयी थी। भगवान ने नारद को भेजा, परीक्षित को भागवत सुनाना था। उधर शुकदेव जड की तरह बाह्य चेतना से रहित बैठे हुए थे। तब नारद वीणा बजाते हुए श्रीभगवान के रूप का चार श्लोको मे वर्णन गाने लगे। जब वे पहला श्लोक गा रहे थे, तब शुकदेव को रोमाच हुआ। क्रमश: आँसू बहने लगे। भीतर — हृदय मे —चिन्मयस्वरूप के दर्शन करने लगे। जड़ समाधि के पश्चात् फिर रूप के दर्शन भी हुए। शुकदेव ईश्वरकोटि के थे।

"हनुमान ने साकार और निराकार, दोनो के दर्शन कर लेने के पश्चात् श्रीराम की मूर्ति पर अपनी निष्ठा रखी थी। श्रीराम की वह मूर्ति सच्चिदानन्द की मूर्ति है।

"प्रह्लाद कभी तो 'सोऽहम्' देखते थे और कभी दासभाव मे रहते थे। भक्ति न ले तो क्या लेकर रहें? इसीलिए सेव्य और सेवक का भाव लेना पड़ता है,— तुम प्रभु हो, मै दास— यह भाव, हरि-रसास्वादन के लिए। रस-रसिको का यह भाव है— हे ईश्वर, तुम रस हो, मै रसिक हूँ।

"भक्ति के 'मै' मे, विद्या के 'मै' तथा बालक के 'मै' मे

दोष नही। शंकराचार्य ने विद्या का 'मै' रखा था—लोकशिक्षा के लिए। बालक के 'मै' मे दृढता नहीं है। बालक गुणातीत है—वह किसी गुण के वश नही। अभी अभी वह गुस्सा हो गया। थोडी देर मे कही कुछ नही। देखते ही देखते उसने खेलने के लिए घरौदा बनाया, फिर तुरन्त ही उसे भूल भी गया। अभी तो खेलनेवाले साथियो को वह प्यार कर रहा है, फिर कुछ दिनों के लिए अगर उन्हे न देखा तो सब भूल भी गया। बालक सत्व, रज और तम किसी गुण के वश नही है।

"तुम भगवान हो, मै भक्त हूँ, यह भक्तो का भाव है,—यह 'मै' भक्ति का 'मै' है। लोग भक्ति का 'मै' क्यों रखते है? इसका कुछ अर्थ है। 'मै' मिटने का तो है ही नही, तो 'मै' दास बना हुआ पड़ा रहे—'भक्त का मै' होकर।

"लाख विचार करो, पर 'मै' नही जाता। 'मै' कुम्भ का स्वरूप है, और ब्रह्म है समुद्र, चारो ओर जल राशि। कुम्भ के भीतर भी जल है, बाहर भी जल। जब तक कुम्भ है, 'मै' और 'तुम' है, तब तक तुम भगवान हो, मै भक्त हूँ, तुम प्रभु हो, मै दास हूँ; यह भी है। विचार चाहे लाख करो, परन्तु इसे छोड़ने की शक्ति नही। कुम्भ अगर न रहे, तो और बात है।"

(२)

नरेन्द्र के प्रति संन्यास का उपदेश

नरेन्द्र आये और उन्होने प्रणाम करके आसन ग्रहण किया। श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र से बातचीत कर रहे है। बातचीत करते हुए जमीन पर आकर बैठे। जमीन पर चटाई बिछी हुई है। इतने मे कमरा भी आदमियो से भर गया। भक्तगण भी है और बाहर आदमी भी आये हुए है।

श्रीरामकृष्ण– (नरेन्द्र से)– तेरी तबियत अच्छी है न? सुना है, तू गिरीश घोष के यहाँ प्राय. जाया करता है?

नरेन्द्र– जी हाँ, कभी कभी जाया करता हूँ।

इधर कुछ महीनो से श्रीरामकृष्ण के पास गिरीश आया-जाया करते है। श्रीरामकृष्ण कहते है, गिरीश का विश्वास इतना जवरदस्त है कि पकड मे नही आता। उन्हे जैसा विश्वास है, वैसा ही अनुराग भी है। घर मे सदा ही श्रीरामकृष्ण की चिन्ता मे मस्त रहा करते है। नरेन्द्र प्राय: उनके वहाँ जाते है। हरिपद, देवेन्द्र तथा और भी कई भक्त प्राय उनके यहाँ जाया करते है। गिरीश उनके साथ श्रीरामकृष्ण की चर्चा किया करते है। गिरीश संसारी है; इधर श्रीरामकृष्ण देखते है, नरेन्द्र संसार मे न रहेगे,—वे कामिनी-कांचन त्यागी होगे, अतएव नरेन्द्र से कह रहे है—

"तू गिरीश घोष के यहाँ क्या बहुत जाया करता है?

"परन्तु लहसुन के कटोरे को चाहे जितना धोओ, कुछ न कुछ बू तो रहेगी ही। लडके शुद्ध आधार है, कामिनी और कांचन का स्पर्श अभी उन्होने नही किया, बहुत दिनो तक कामिनी और कांचन का उपभोग करने पर लहसुन की तरह बू आने लगती है।

"जैसे कौए का काटा हुआ आम। देवता पर चढ ही नही सकता, अपने खाने मे भी सन्देह है। जैसे नयी हण्डी और दही जमायी हण्डी—दही जमायी हण्डी मे दूध रखते हुए डर लगता है। अक्सर दूध खराव हो जाता है।

"गिरीश जैसे गृहस्थ एक दूसरी श्रेणी के है। वे योग भी चाहते है और भोग भी। जैसा भाव रावण का था—नाग-कन्याओं और देवकन्याओ को हथियाना चाहता था, उधर राम की प्राप्ति

की भी आशा रखता था ।

"असुर सव अनेक प्रकार के भोग भी करते है और नारायण के पाने की भी इच्छा रखते है ।"

नरेन्द्र– गिरीश घोष ने पहले का सग छोड़ दिया है ।

श्रीरामकृष्ण– बूढा बैल बधिया बनाया गया है। मैने वर्दवान मे देखा था, एक वधिया एक गाय के पीछे लगा हुआ था। देखकर मैने पूछा, यह कैसा ?—यह तो बधिया है। तब गाड़ीवान ने कहा—'महाराज, बड़ा हो जाने पर यह बधिया किया गया था। इसीलिए पहले के सस्कार नही गये ।'

"एक जगह अनेक सन्यासी बैठे हुए थे। उधर से एक औरत निकली। सब के सब ईश्वर-चिन्तन कर रहे थे। उनमे से एक ने जरा नजर तिरछी करके उसे देख लिया। तीन लड़के हो जाने के बाद उसने सन्यास लिया था ।

"एक कटोरे मे अगर लहसुन पीसकर घोल दिया जाय, तो क्या लहसुन की बू जाती है ? इमली के पेड़ मे क्या कभी आम फलते है ? यह हो सकता है कि अगर विभूति का बल किसी को हुआ, तो वह इमली मे भी आम लगा देता है, परन्तु क्या विभूति सभी के पास रहती है ?

"ससारी आदमियो को अवसर कहाँ ? एक ने एक भागवत-पाठी पण्डित चाहा था। उसके मित्र ने कहा—'एक वड़ा अच्छा भागवती पण्डित है, परन्तु कुछ अड़चन है। वह यह कि उसे खुद अपने घर की खेती का काम सँभालना पड़ता है, उसके चार हल चलते है और आठ बैल हैं। सदा उसे अपने काम की देख-रेख करनी पडती है। इसलिए अवकाश नही है।' जिसे पण्डित की जरूरत थी, उसने कहा, 'मुझे इस तरह के भागवती पण्डित की

जरूरत नही है, जिसे अवकाश ही न हो। हल और बैल वाले भागवती पण्डित की तलाश मै नही करता, मै तो ऐसा पण्डित चाहता हूँ जो मुझे भागवत सुना सके।'

"एक राजा प्रतिदिन भागवत सुनता था, पाठ समाप्त करके पण्डितजी रोज कहते थे, महाराज, आप समझे? राजा भी रोज कहता, पहले तुम खुद समझो। पण्डित घर जाकर रोज सोचता था, 'राजा ऐसी बात क्यो कहता है कि पहले तुम खुद समझो?' वह पण्डित भजन-पूजन भी करता था, क्रमश उसे होश हुआ। तब उसने देखा, ईश्वर का पादपद्म ही सार वस्तु है और सब मिथ्या। ससार से विरक्त होकर वह निकल गया। एक आदमी को उसने राजा के पास इतना कहने के लिए भेज दिया कि 'राजा, अब वह समझ गया है।'

"परन्तु क्या मै इन्हे घृणा करता हूँ? नही, मै उन्हे ब्रह्मज्ञान की दृष्टि से देखता हूँ। वे ही सब कुछ हुए है--- सब नारायण है। सब योनियो को मातृयोनि मानता हूँ, तब वेश्या और सती लक्ष्मी मे कोई भेद नही दीख पडता।

"क्या कहूँ, देखता हूँ, सब के सब मटर की दाल के ग्राहक है। कामिनी और काचन नही छोडना चाहते। आदमी स्त्रियों के रूप पर मुग्ध हो जाते है, रुपये और ऐश्वर्य का लालच करते है, परन्तु यह नही जानते कि ईश्वर के रूप का दर्शन करने पर ब्रह्मपद भी तुच्छ हो जाता है।

"रावण से किसी ने कहा था, तुम इतने रूप बदलकर तो सीता के पास जाते हो, परन्तु श्रीरामचन्द्र का रूप क्यों नही धारण करते? रावण ने कहा, 'राम का रूप हृदय मे एक बार भी देख लेने पर रम्भा और तिलोत्तमा चिता की खाक जान

पड़ती है। ब्रह्मपद भी तुच्छ हो जाता है—पराई स्त्री की तो बात ही दूर रही।'

"सब के सब मटर की दाल के ग्राहक है। शुद्ध आधार के हुए विना ईश्वर पर शुद्धा भक्ति नही होती—एक लक्ष्य नही रहता, कितनी ही ओर मन दौड़ता फिरता है।

(मनोमोहन से) "तुम गुस्सा करो और चाहे जो करो, राखाल से मैंने कहा, तू अगर ईश्वर के लिए गंगा में डूबकर मर जाय, तो यह बात मै सुन लूँगा, परन्तु तू किसी की गुलामी करता है, ऐसी वात न सुनूँ। नेपाल से एक लड़की आयी थी। इसराज वजाकर उसने वहुत अच्छा गाया। भजन गाती थी। किसी ने पूछा, क्या तुम्हारा विवाह हो गया है? उसने कहा, 'अव और किसकी दासी वनूँ—एक ईश्वर की दासी हूँ।'

"कामिनी और कांचन के भीतर रहकर कैसे कोई सिद्ध हो? वहाँ अनासक्त होना वहुत ही मुश्किल है। एक ओर बीबी का गुलाम, दूसरी ओर रुपये का गुलाम, तीसरी ओर मालिक का गुलाम—उसकी नौकरी वजानी पड़ती है।

"एक फकीर जगल मे कुटी वनाकर रहता था। तव अकवर शाह दिल्ली के वादशाह थे। फकीर के पास वहुत से आदमी आया-जाया करते थे। अतिथि-सत्कार की उसे वड़ी इच्छा हुई। एक दिन उसने सोचा, विना रुपये-पैसे के अतिथि-सत्कार कैसे हो सकता है? इसलिए एक वार अकवर शाह के दरवार मे चलूँ। साधु-फकीर के लिए सव जगह द्वार खुला रहता है। जव फकीर वहाँ पहुँचा, तव अकवर शाह नमाज पढ रहे थे। फकीर मसजिद मे उसी जगह पर जाकर बैठ गया। उसने सुना कि नमाज पूरी करके अकवर शाह खुदा से कह रहे थे, 'ऐ खुदा, मुझे तू दौलत-

मन्द कर, खुश रख'--तथा और भी इसी तरह की कितनी ही इच्छाएँ पूरी करने के लिए खुदा से दुआएँ माँगते थे। उसी समय फकीर ने वहाँ से उठ जाना चाहा। अकबर शाह ने बैठने के लिए इशारा किया। नमाज पूरी करके बादशाह ने आकर पूछा, 'आप बैठे थे, फिर चले कैसे?' फकीर ने कहा, 'यह शाहंशाह के सुनने लायक बात नही है, मै जाता हूं।' बादशाह के जिद करने पर फकीर ने कहा, 'मेरे यहाँ बहुत से आदमी आया करते है, इसीलिए मै कुछ रुपये माँगने आया था।' अकबर ने पूछा, 'तो आप चले क्यो जा रहे है?' फकीर ने कहा, 'मैने देखा, तुम भी दौलत के कगाल हो, और सोचा कि यह भी फकीर ही है, फकीर से क्या माँगूं? माँगना ही है तो खुदा से ही माँगूँगा।'"

नरेन्द्र– गिरीश घोष इस समय बस ऐसी ही चिन्ताएं करते है।

श्रीरामकृष्ण की सत्त्वगुण की अवस्था

श्रीरामकृष्ण– यह तो बहुत ही अच्छा है, परन्तु इतनी गालियाँ क्यो दिया करता है? मेरी वह अवस्था नही है। जब बिजली गिरती है, तब मोटी चीजे उतनी नही हिलती, परन्तु झरोखे की झझरियाँ हिल जाती है। मेरी वह अवस्था नही है, सतोगुण की अवस्था मे शोर-गुल नही सहा जाता। हृदय इसीलिए चला गया, माँ ने उसे नही रखा। पिछले दिनो मे बडी बढा-चढी करने लगा था। मुझे गालियाँ देता था, हल्ला मचाता था।

"गिरीश घोष जो कुछ कहता है, वह तेरे साथ कही कुछ मिला भी?"

नरेन्द्र– मैने कुछ कहा नही, वे ही कहा करते है, उन्हे अवतार पर विश्वास है। मैने कुछ कहा नही।

श्रीरामकृष्ण– परन्तु खूब विश्वास है, देखा है न?

भक्तगण एकदृष्टि से देख रहे है। श्रीरामकृष्ण नीचे ही चटाई पर बैठे है। पास मास्टर है, सामने नरेन्द्र, चारों ओर भक्त मण्डली।

श्रीरामकृष्ण कुछ देर चुप रहकर एकदृष्टि से नरेन्द्र को देख रहे है।

कुछ देर वाद नरेन्द्र से कहा, 'भैया, कामिनी और कॉचन के विना छूटे कुछ न होगा।' कहते ही कहते श्रीरामकृष्ण भावमग्न हो गये। दृष्टि करुणा से मिली हुई सस्नेह हो रही है। साथ ही भाव मे मस्त होकर गाने लगे।

(भावार्थ) "बात करते हुए भी मुझे भय होता है, और कुछ नही वोलता तो भी भय होता है। मेरे हृदय मे यह सन्देह है कि कही तुम्हारे जैसे धन को मै खो न वैठूँ। हम जानते है, तेरा मन जैसा है, तुझे हम वैसा ही मन्त्र देगे, फिर तो तेरा मन तेरे पास है ही। हम लोग जिस मन्त्र के वल से विपत्तियो से त्राण पाते है, उसी मन्त्र से दूसरो को भी उत्तीर्ण कर देते है।"

श्रीरामकृष्ण को जैसे भय हो रहा हो कि नरेन्द्र किसी दूसरे का हो गया। नरेन्द्र ऑखो में ऑसू भरे हुए देख रहे है।

वाहर के एक भक्त श्रीरामकृष्ण के दर्शन के लिए आये हुए थे। वे भी पास बैठे हुए सव कुछ देख-सुन रहे थे।

भक्त– महाराज, कामिनी और कांचन का अगर त्याग ही करना है तो गृहस्थ फिर कहाँ जाय ?

श्रीरामकृष्ण– तुम गृहस्थी करो न! हम लोगो के बीच में एक ऐसी ही बात हो गयी।

महिमाचरण चुपचाप बैठे हुए है।

श्रीरामकृष्ण– (महिमा से)– वढ जाओ, और भी आगे बढ़

जाओ। चन्दन की लकडी मिलेगी; और भी आगे वढ जाओ, चांदी की खान मिलेगी; और भी आगे वढ जाओ, सोने की खान पाओगे, और भी आगे वढो तो हीरे और मणि मिलेगे; वढे जाओ।

महिमा– पर जी खीचता रहता है, आगे बढने देता ही नही।

श्रीरामकृष्ण– (हँसकर)– क्यो, लगाम काट दो। उनके नाम के प्रभाव से काट डालो। उनके नाम के प्रभाव से कालपाश भी छिन्न हो जाता है।

पिता के निधन के वाद से ससार में नरेन्द्र को बड़ा कष्ट हो रहा है। उन पर कई आफतें गुजर चुकी। बीच-बीच मे श्रीराम-कृष्ण नरेन्द्र को देख रहे है। श्रीरामकृष्ण कहते है, "तू चिकित्सक तो नही वना ?—

"शतमारी भवेद्वैद्य सहस्रमारी चिकित्सक:।" (सव हंसते है।)

श्रीरामकृष्ण का शायद यह अर्थ है कि नरेन्द्र इतनी ही उम्र मे वहुत कुछ देख चुका—सुख और दु ख के साथ उसका वहुत परिचय हो चुका।

नरेन्द्र जरा मुस्कराकर रह गये।

(३)

गृहस्थो के प्रति अभयदान

नवाई वैतन्य गा रहे है। भक्तगण वैठे हुए है। श्रीरामकृष्ण छोटे तखत पर वैठे हुए है। एकाएक उठे। कमरे के वाहर गये। भक्त सव वैठे ही रहे। गाना हो रहा है। मास्टर श्रीरामकृष्ण के साथ-साथ गये। श्रीरामकृष्ण पक्के आगन से होकर कालीमन्दिर की ओर जा रहे है। पहले श्रीराधाकान्त के मन्दिर मे गये। भूमिष्ठ होकर प्रणाम किया। उन्हे प्रणाम करते हुए देख मास्टर

ने भी प्रणाम किया। श्रीरामकृष्ण के सामनेवाली थाली मे अबीर रखा हुआ था। आज होली है, श्रीरामकृष्ण भूले नही। थाली से अबीर लेकर श्रीराधाकान्तजी पर चढाया। फिर उन्हे प्रणाम किया।

अब कालीमन्दिर जा रहे है। पहले सातो सीढियों पर चढकर चबूतरे पर खड़े हुए, माता को प्रणाम किया, फिर मन्दिर मे गये। माता पर अबीर चढाया। प्रणाम करके कालीमन्दिर से लौट रहे है। कालीमन्दिर के चबूतरे पर मूर्ति के सामने खड़े होकर मास्टर से उन्होने कहा, 'बाबूराम को तुम क्यो नहीं ले आये?'

श्रीरामकृष्ण फिर आगन से कमरे की ओर जा रहे है। साथ मे मास्टर है और अबीर की दूसरी थाली हाथ मे लिये हुए आ रहे है। कमरे मे आकर श्रीरामकृष्ण ने सब चित्रो पर अबीर चढ़ाया—दो-एक चित्रो को छोडकर,—उनमे एक उनका अपना चित्र था और दूसरी ईशु की तस्वीर। अब आप बरामदे मे आये। कमरे मे प्रवेश करते ही जो बरामदे का भाग है, वही नरेन्द्र बैठे हुए है। किसी-किसी भक्त के साथ उनकी बातचीत हो रही है। श्रीरामकृष्ण ने नरेन्द्र पर अबीर छोड़ा। कमरे मे आप लौट रहे थे, उसी समय मास्टर भी जा रहे थे, आपने मास्टर पर भी अबीर छोड़ा।

कमरे मे जितने भक्त थे, सब पर आपने अबीर डाला। सब के सब प्रणाम करने लगे।

दिन का पिछला पहर हो चला। भक्तगण इधर-उधर घूमने लगे। श्रीरामकृष्ण मास्टर से धीरे-धीरे बातचीत करने लगे। पास कोई नही है। बालक-भक्तो की बात कह रहे है। कह रहे है, "अच्छा, सब तो कहते है कि ध्यान खूब होता है, परन्तु पल्टू

का ध्यान क्यो नही होता ?

"नरेन्द्र के लिए तुम्हारे मन मे क्या विचार उठता है ? वड़ा सरल है, परन्तु उस पर ससार की वडी वडी आफते गुजर चुकी है, इसीलिए कुछ दवा हुआ है। यह भाव रहेगा भी नही।"

श्रीरामकृष्ण रह रहकर वरामदे मे चले जाते है। नरेन्द्र एक वेदान्तवादी से विचार कर रहे है।

क्रमश. भक्तगण फिर इकट्ठे हो रहे है। महिमाचरण से अव पाठ करने के लिए कहा गया। वे महा-निर्वाण तन्त्र के तृतीय उल्लास मे लिखी हुई ब्रह्म की स्तुतियाँ कह रहे है--

"हृदयकमलमध्ये निर्विशेष निरीह
हरिहरविधिवेद्य योगिभिर्ध्यानगम्यम् ।
जननमरणभीतिभ्रंशि सच्चित्स्वरूप
सकलभुवनबीजं ब्रह्मचैतन्यमीडे ॥"

और भी दो एक स्तुतियाँ कहकर महिमाचरण श्रीशकराचार्य की स्तुति कर रहे है। उसमे ससार-कूप और ससार-गहनता की वात है। महिमाचरण स्वय संसारी और भक्त है।

"हे चन्द्रचूड़ मदनान्तक शूलपाणे
स्थाणो गिरीश गिरिजेश महेश शंभो ।
भूतेश भीतिभयसूदन मामनाथ
संसार-दु ख-गहनाज्जगदीश रक्ष ॥
हे पार्वती-हृदयवल्लभ चन्द्रमौले
भूताधिप प्रमथनाथ गिरीशजाप ।
हे वामदेव भव रुद्र पिनाकपाणे,
ससार-दु ख-गहनाज्जगदीश रक्ष ॥"

श्रीरामकृष्ण--(महिमा से)--ससार कूप है, ससार गहन है,

यह सब क्यो कहते हो ? पहले पहल इस तरह कहा जाता है। उन्हे पकड़ने पर फिर क्या भय है ? तब यह ससार मौज की कुटिया हो जाता है। मै खाता-पीता हूँ और आनन्द करता हूँ।

"भय क्या है ? उन्हे पकड़ो। कॉटो का जगल है, तो क्या हुआ ? जूते पहनकर उसे पार कर जाओ। भय क्या है ? जो पाला छू लेता है, क्या वह भी कभी चोर हो सकता है ?

"राजा जनक दो तलवारे चलाते थे। एक ज्ञान की और दूसरी कर्म की। पक्के खिलाड़ी को किसी का डर नही रहता।"

इसी तरह की ईश्वरी बाते हो रही है। श्रीरामकृष्ण अपनी छोटी चारपाई पर बैठे हुए है। चारपाई की बगल मे मास्टर बैठे है।

श्रीरामकृष्ण–(मास्टर से)–उसने जो कुछ कहा है, उसी ने उसे खीच रखा है।

श्रीरामकृष्ण महिमाचरण की बाते कह रहे है। नवाई चैतन्य तथा अन्य भक्त फिर गाने लगे। अब श्रीरामकृष्ण उनमे मिल गये और भावमग्न होकर संकीर्तन की मण्डली मे नृत्य करने लगे।

कीर्तन हो जाने पर श्रीरामकृष्ण ने कहा, "यही इतना काम हुआ और सब मिथ्या था। प्रेम और भक्ति, यही वस्तु है और सब अवस्तु।"

(४)

गुह्य कथा

दिन का पिछला पहर हो गया। श्रीरामकृष्ण पंचवटी गये हुए है। मास्टर से विनोद की बाते पूछते है। विनोद मास्टर के स्कूल मे पढते है। ईश्वर का चिन्तन करते हुए कभी-कभी विनोद को भावावेश हो जाता है। इसीलिए श्रीरामकृष्ण उन्हे प्यार करते है।

अब श्रीरामकृष्ण मास्टर से बातचीत करते हुए कमरे की ओर

लौट रहे है। बकुलतल्ले के घाट के पास आकर उन्होने कहा, "अच्छा, यह जो कोई कोई (मुझे) अवतार कहते है, इस पर तुम्हारा क्या विचार है ?"

बातचीत करते हुए श्रीरामकृष्ण अपने कमरे मे आ गये। चट्टी उतारकर उसी छोटे तखत पर बैठ गये। तखत के पूर्व की ओर एक पाँवपोश रखा हुआ है। मास्टर उसी पर बैठे हुए बातचीत कर रहे है। श्रीरामकृष्ण ने वही बात फिर पूछी। दूसरे भक्त कुछ दूर बैठे हुए है। ये सब बाते उनकी समझ में नही आयी।

श्रीरामकृष्ण—तुम क्या कहते हो ?

मास्टर—जी, मुझे भी यही जान पड़ता है, जैसे चैतन्यदेव थे।

श्रीरामकृष्ण—पूर्ण या अश या कला ?—तौल कर कहो।

मास्टर—जी, तौल मेरी समझ मे नही आती। इतना कह सकता हूं, भगवान की शक्ति अवतीर्ण हुई है। वे तो आप मे है ही।

श्रीरामकृष्ण—हाँ, चैतन्यदेव ने शक्ति के लिए प्रार्थना की थी।

श्रीरामकृष्ण कुछ देर चुप रहे। फिर कहा—'परन्तु वे षड्भुज थे।'

मास्टर सोच रहे है, चैतन्यदेव को षड्भुज रूप मे उनके भक्तों ने देखा था जरूर, परन्तु श्रीरामकृष्ण ने किस उद्देश्य से इसकी चर्चा की ?

भक्तगण पास ही कमरे मे बैठे हुए है। नरेन्द्र विचार कर रहे है। राम (दत्त) बीमारी से उठकर ही आये है, वे भी नरेन्द्र के साथ घोर तर्क कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण—(मास्टर से)—मुझे ये सब विचार अच्छे नहीं लगते। (राम से) बन्द करो—एक तो तुम बीमार थे। अच्छा,

धीरे-धीरे। (मास्टर से) मुझे यह सब अच्छा नहीं लगता। मैं रोता था और कहता था, 'माँ, एक कहता है— ऐसा नहीं, ऐसा है; दूसरा कुछ और बतलाता है। सत्य क्या है, तू मुझे बतला दे।'

परिच्छेद ४

भक्तों के प्रति उपदेश

(१)

राखाल, भवनाथ, नरेन्द्र, वावूराम

श्रीरामकृष्ण भक्तो के साथ आनन्दपूर्वक वैठे हुए है। वावूराम, छोटे नरेन्द्र, पल्टू, हरिपद, मोहिनीमोहन आदि भक्त जमीन पर बैठे हुए है। एक ब्राह्मण युवक दो-तीन दिन से श्रीरामकृष्ण के पास है, वे भी बैठे हुए है। आज शनिवार है, ७ मार्च १८८५, दिन के तीन बजे का समय होगा। चैत की कृष्णा सप्तमी है।

श्रीमाताजी* भी आजकल नौवतखाने में रहती है—श्रीरामकृष्ण की सेवा के लिए। मोहिनीमोहन के साथ उनकी स्त्री, नवीन वावू की माँ, गाड़ी पर आयी हुई है। औरते नौवतखाने मे श्रीरामकृष्ण के दर्शन कर वही पर रह गयी। भक्तो के जरा हट जाने पर श्रीरामकृष्ण को आकर प्रणाम करेगी। श्रीरामकृष्ण छोटे तखत पर बैठे हुए भक्त वालको को देख रहे है और आनन्द मे मग्न हो रहे है।

राखाल इस समय दक्षिणेश्वर मे नही रहते। कई महीने वलराम के साथ वृन्दावन मे थे, वहाँ से लौटकर इस समय घर पर रहते है।

श्रीरामकृष्ण– (सहास्य)– राखाल इस समय पेन्शन ले रहा है। वृन्दावन से लौटकर घर पर रहता है। घर मे उसकी स्त्री है। परन्तु उसने कहा है, 'हजार रुपया तनख्वाह देने पर भी नौकरी न करूँगा।'

"यहाँ लेटा हुआ कहता था, तुम्हें भी देखकर जी को प्रसन्नता नही होती; उसकी ऐसी एक अवस्था हुई थी।

---

* श्रीसारदादेवी—श्रीरामकृष्णदेव की लीलासहधर्मिणी।

"भवनाथ ने विवाह किया है; परन्तु रात भर स्त्री के साथ धर्म की ही चर्चा करता है। दोनो ईश्वरी प्रसंग लेकर रहते है। मैंने कहा, 'अपनी स्त्री से कुछ आमोद-प्रमोद भी किया कर,' तव गुस्से मे आकर उसने कहा था, 'हम लोग भी आमोद-प्रमोद लेकर रहेंगे?'

(भक्तों से) "परन्तु नरेन्द्र के लिए मुझे जितनी व्याकुलता हुई थी, उतनी उसके (छोटे नरेन्द्र के) लिए नही हुई।

(हरिपद से) "क्या तू गिरीश घोष के यहाँ जाया करता है?"

हरिपद– हमारे घर के पास ही उनका घर है। प्रायः जाया करता हूँ।

श्रीरामकृष्ण–क्या नरेन्द्र भी जाता है?

हरिपद– हाँ, कभी कभी तो देखता हूँ।

श्रीरामकृष्ण– गिरीश जो कुछ (मेरे अवतारत्व के सम्बन्ध मे) कहता है, उस पर उसकी क्या राय है?

हरिपद– नरेन्द्र तर्क मे हार गये है।

श्रीरामकृष्ण– नही, उसने (नरेन्द्र ने) कहा, 'गिरीश घोष को जव इतना विश्वास है, तो उस पर मै कुछ क्यों कहूँ?'

जज अनुकूल मुखोपाध्याय के जामाता के भाई आये हुए है।

श्रीरामकृष्ण–तुम नरेन्द्र को जानते हो?

जामाता के भाई– जी हाँ, नरेन्द्र बुद्धिमान लडका है।

श्रीरामकृष्ण– (भक्तों से)– ये अच्छे आदमी है, जब इन्ही ने नरेन्द्र की तारीफ की। उस दिन नरेन्द्र आया था। त्रैलोक्य के साथ उस दिन उसने गाया भी, परन्तु उस दिन गाना अलोना लग रहा था।

श्रीरामकृष्ण वावूराम की ओर देखकर बातचीत कर रहे है।

मास्टर जिस स्कूल मे पढ़ाते है, वावूराम उसी स्कूल की प्रवेशिका कक्षा मे पढते है।

श्रीरामकृष्ण– (वावूराम से)– तेरी पुस्तके कहाँ है? तू लिखे-पढेगा या नही? (मास्टर से) वह दोनो ओर सँभालना चाहता है।

"वड़ा कठिन मार्ग है। उन्हे जरा सा समझ लेने से क्या होगा? वशिष्ठ कितने वडे थे, उन्हे भी पुत्रो के लिए शोक हुआ था। लक्ष्मण ने उन्हे शोक करते हुए देख आश्चर्य मे आकर राम से पूछा। राम ने कहा, 'भाई, इसमे आश्चर्य क्या है? जिसे ज्ञान है, उसे अज्ञान भी है। भाई, तुम ज्ञान और अज्ञान दोनो को पार कर जाओ।' पैर मे काँटा लगता है, तो एक और काँटा खोज लाना पड़ता है। उसी काँटे से पहला काँटा निकाला जाता है, फिर दोनो ही काँटे फेंक दिये जाते है। इसीलिए अज्ञानरूपी काँटे को निकालने के लिए ज्ञानरूपी काँटा सग्रह करना पड़ता है; फिर ज्ञान और अज्ञान के पार जाया जाता है।"

वावूराम– (हँसकर)– मै यही चाहता हूँ।

श्रीरामकृष्ण– (सहास्य)–अरे, दोनो ओर रक्षा करने से क्या वह वात होती है? उसे अगर तू चाहता है, तो चला आ निकलकर!

वावूराम– (हँसकर)– आप ले आइये।

श्रीरामकृष्ण– (मास्टर के प्रति) –राखाल रहता था, वह वात और थी–– उसमे उसके वाप की भी स्वीकृति थी। पर इन लडको के रहने पर तो गड़वड़ होगा।

(वावूराम से) "तू कमजोर है। तुझमे हिम्मत कम है। देख तो, छोटा नरेन्द्र कैसे कहता है, मै जव आऊँगा, तव एकदम चला

आऊँगा ।"

अब श्रीरामकृष्ण भक्त-बालको के बीच मे चटाई पर आकर बैठे। मास्टर उनके पास बैठे हुए है ।

श्रीरामकृष्ण– (मास्टर से)– मै कामिनी-काञ्चन-त्यागी खोज रहा हूँ । सोचता हूँ, यह काम शायद रह जायेगा । सब के सब कोई न कोई अड़गा लगा देते है ।

"एक भूत अपना साथी खोज रहा था । शनि या मगलवार को अपघात-मृत्यु होने पर मनुष्य भूत होता है। इसलिए वह भूत जब कभी देखता कि कोई छत पर से गिरकर बेसुध हो गया है, तब वहाँ वह यह सोचकर दौड़ा हुआ जाता कि इसकी अपघात-मृत्यु हुई, अब यह भूत होकर मेरा साथी होगा; परन्तु उसका ऐसा दुर्भाग्य कि सब के सब बच जाते थे ! उसे कोई साथी नही मिलता था । इसी तरह देखो न, राखाल भी 'बीबी-बीबी' कर रहा है, कहता है, मेरी बीबी का क्या होगा । नरेन्द्र की छाती पर मैंने हाथ रखा तो वह बेहोश हो गया और चिल्लाया, 'अजी, यह तुम क्या कर रहे हो ? मेरे बाप-माँ जो है !'

"मुझे उन्होने इस अवस्था मे क्यो रखा है ? चैतन्यदेव ने संन्यास धारण किया, इसलिए कि सब लोग प्रणाम करेंगे; जो लोग एक बार प्रणाम करेंगे, उनका उद्धार हो जायेगा ।"

श्रीरामकृष्ण के लिए मोहिनीमोहन बाँस की टोकरी मे सन्देश लाये है ।

श्रीरामकृष्ण– ये सन्देश कौन लाया है ?

बाबूराम ने मोहिनीमोहन की ओर उँगली उठाकर इशारा किया ।

श्रीरामकृष्ण ने प्रणव का उच्चारण करके सन्देशो को छुआ और उसमे से थोड़ा सा ग्रहण करके प्रसाद कर दिया। फिर भक्तो को थोडा थोडा बाँटने लगे। छोटे नरेन्द्र को, और भी दो एक भक्त-बालकों को खुद खिला रहे है।

श्रीरामकृष्ण– (मास्टर से)– इसका एक अर्थ है। शुद्धात्माओ के भीतर नारायण का प्रकाश अधिक है। कामारपुकुर मे जब मैं जाता था, तब वहाँ किसी किसी लडके को खुद खिला देता था। चीने शाँखारी कहता था, 'ये हमे क्यों नही खिलाते ?' मैं किस तरह खिलाता ? वे दुराचारी जो थे। भला उन्हे कौन खिलायेगा ?

(२)

सन्ध्योपासना तथा गंगास्नान

शुद्धात्मा भक्तो को प्राप्त कर श्रीरामकृष्ण आनन्द मे मग्न हो रहे है। अपने छोटे तखत पर बैठे हुए कीर्तन गानेवाली के नाज-नखरे दिखा दिखाकर उन्हे हँसा रहे है। कीर्तन गानेवाली सजधजकर अपने साथियो के साथ गा रही है। वह हाथ मे रगीन रूमाल लिए हुए खड़ी है, बीच बीच मे खाँसने का ढोग कर रही है और नथ उठाकर थूक रही है। गाते समय अगर किसी विशिष्ट मनुष्य का आना होता है, तो वह गाते हुए ही उसकी अभ्यर्थना के लिए, 'आइये-बैठिये' आदि शब्दो का प्रयोग करती है। फिर कभी कभी हाथ का कपड़ा हटाकर बाजू और अनन्त (गहने) दिखाती है।

उनका यह अभिनय देखकर भक्तगण ठहाका मारकर हंस रहे है। पल्टू तो हँसते हँसते लोटपोट हो रहे है। श्रीरामकृष्ण पल्टू की ओर देखकर मास्टर से कह रहे है, "बच्चा है न, इसीलिए लोटपोट हुआ जा रहा है। (पल्टू से, हँसकर) ये सब बाते अपने

वाप से न कहना। तो फिर जो कुछ लगन (मेरे पास आने के लिए) है, वह न रह जायेगी। एक तो ऐसे ही वे लोग इंग्लिशमैन है !

(भक्तो से) "बहुतेरे तो सन्ध्योपासना करते हुए ही दुनिया भर की बाते करते है, परन्तु बातचीत करने की मनाही है, इसलिए ओठ दवाये हुए ही इशारा करते है। यह ले आओ---वह ले आओ--- ऊँ--- हूँ--- हूँ--- यही सब किया करते है।

(सब हँसते हैं)

"और कोई कोई ऐसे है कि माला जपते हुए ही मछलीवाली से मछली का मोल-तोल करते है। जप करते हुए कभी ऊँगली से इशारा करके बतला देते है कि वह मछली निकाल। जितना हिसाब है, सब उसी समय होता है। (सब हँसते है)

"स्त्रियाँ गंगा नहाने के लिए आती है, तो उस समय ईश्वर की चिन्ता करना तो दूर रहा, उसी समय दुनिया भर की बाते करने लग जाती है। पूछती है, 'तुम्हारे लडके का विवाह हुआ, तुमने कौन-कौन से गहने दिये ?' 'अमुक को कठिन बीमारी है।' 'अमुक आदमी अपनी ससुराल से आया नहीं', 'अमुक आदमी लडकी देखने गया था, वह खूब देगा और खर्च भी खूब करेगा,' 'हमारा हरीश मुझसे इतना हिला हुआ है कि मुझे छोड़कर एक क्षण भी नही रह सकता', 'माँ, मै इतने दिनो तक इसलिए नही आ सकी कि अमुक की लडकी के 'देखुआ' आये थे---अव की बार विवाह पक्का होनेवाला था, इसलिए मुझे फुरसत नही मिली।'

"देखो न, कहाँ तो गँगा नहाने के लिए आयी है, और कहाँ दुनिया भर की बातें !"

श्रीरामकृष्ण छोटे नरेन्द्र को एकदृष्टि से देख रहे है। देखते

ही देखते समाधिमग्न हो गये। भक्तगण निर्निमेष नयनों से वह समाधिचित्र देख रहे हैं। इतना हँसी-मजाक हो रहा था, सब बन्द हो गया, जैसे कमरे में एक भी आदमी न हो। श्रीरामकृष्ण का शरीर निःस्पन्द है, दृष्टि स्थिर है। हाथ जोड़कर चित्रवत् बैठे हुए हैं।

कुछ देर बाद समाधि छूटी। श्रीरामकृष्ण की वायु स्थिर हो गयी। अब उन्होंने एक लम्बी साँस छोड़ी। क्रमशः मन बाह्य संसार में आ रहा है। भक्तों की ओर वे देख रहे हैं।

अब भी भावमग्न हैं। अब भक्तों को सम्बोधित करके, किसे क्या होगा, किसकी कैसी अवस्था है, संक्षेप में कह रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण–(छोटे नरेन्द्र से)–तुझे देखने के लिए मैं व्याकुल हो रहा था। तेरी बन जायेगी। कभी कभी आया कर। अच्छा, तू क्या चाहता है–– ज्ञान या भक्ति ?

छोटे नरेन्द्र– केवल भक्ति।

श्रीरामकृष्ण– बिना जाने तू किसकी भक्ति करेगा ? (मास्टर को दिखाकर, सहास्य) इन्हें अगर तू जाने ही नहीं, तो इनकी भक्ति कैसे कर सकेगा ? (मास्टर से) परन्तु शुद्धात्मा ने जब कहा है कि केवल भक्ति चाहिए तो इसका अर्थ भी अवश्य है। आप ही आप भक्ति का आना संस्कार के बिना नहीं होता ? यह प्रेमाभक्ति का लक्षण है। ज्ञान-भक्ति है विचार के बाद होनेवाली भक्ति।

(छोटे नरेन्द्र से) "देखूँ तेरी देह, कुर्ता उतार तो जरा, छाती खूब चौड़ी है–– तो काम सिद्ध है। कभी कभी आना।"

श्रीरामकृष्ण अब भी भावस्थ हैं। दूसरे भक्तों में हरएक को सम्बोधित करके स्नेहपूर्वक कह रहे हैं।

(पल्टू से) "तेरी भी मनोकामना सिद्ध होगी; परन्तु कुछ समय लगेगा।

(वावूराम से) "तुझे इसलिए नही खीचता हूँ कि अन्त मे कही गुलगपाड़ा न मच जाय। (मोहिनीमोहन से) और तुम्हारे वारे मे सव कुछ ठीक ही है। केवल थोड़ी कसर बाकी है। जव वह भी पूर्ण हो जायेगी तव कुछ शेष न रह जायेगा। न कर्तव्य, न कर्म, और न खुद संसार ही। क्यों, सभी कुछ से छुटकारा पा जाना अच्छा है।"

यह कहकर उनकी ओर सस्नेह एक निगाह से देख रहे है, जैसे उनके अन्तरतम प्रदेश के सव भाव देख रहे हों। कुछ देर वाद श्रीरामकृष्ण ने फिर कहा, "भागवत पण्डित को एक पाश देकर ईश्वर रख देते है,—नही तो भागवत फिर कौन सुनाये! रख देते है लोकशिक्षा के लिए, माता ने इसीलिए संसार में रखा है।"

अव ब्राह्मण युवक से कह रहे है—

श्रीरामकृष्ण– (युवक से)– तुम ज्ञान की चर्चा छोड़ो,—भक्ति लो—भक्ति ही सार है। आज क्या तुम्हे तीन दिन हो गये?

ब्राह्मण युवक– (हाथ जोडकर)– जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण– विश्वास करो— उन पर निर्भरता लाओ—तो तुम्हे कुछ भी न करना होगा—माँ काली सब कुछ कर लेगी।

"सदर दरवाजे तक ही ज्ञान की पहुँच है। भक्ति घर के भीतर भी जाती है।

"शुद्धात्मा निर्लिप्त होते है। उनमे (ईश्वर मे) विद्या और अविद्या दोनों है परन्तु वे निर्लिप्त है। वायु मे कभी सुगन्ध मिलती है, कभी दुर्गन्ध, परन्तु वायु निर्लिप्त है। व्यासदेव यमुना पार

कर रहे थे। वहाँ गोपियाँ भी थी। वे भी पार जाना चाहती थीं,——दही, दूध और मक्खन बेचने के लिए। वहां नाव न थी, सब सोचने लगी, कैसे पार जायँ। इसी समय व्यासदेव ने कहा, मुझे बड़ी भूख लगी है। तब गोपियाँ उन्हे दही, दूध, मक्खन, रबड़ी, सब खिलाने लगी। व्यासदेव लगभग सब साफ कर गये।

"फिर व्यासदेव ने यमुना से कहा——'यमुने, अगर मैंने कुछ भी नही खाया, तो तुम्हारा जल दो भागों मे बंट जाय, बीच से राह हो जाय और हम लोग निकल जायं।' ऐसा ही हुआ। यमुना के दो भाग हो गये, उस पार जाने की राह बीच से बन गयी। उसी रास्ते से गोपियो के साथ व्यासदेव पार हो गये।

"मैंने नही खाया, इसका अर्थ यह है कि मैं वही शुद्धात्मा हूं, शुद्धात्मा निर्लिप्त है, प्रकृति के परे है। उसे न भूख है, न प्यास; न जन्म है, न मृत्यु, वह अजर, अमर और सुमेरुवत् है।

"जिसे यह ब्रह्मज्ञान हुआ हो, वह जीवन्मुक्त है। वह ठीक समझता है कि आत्मा अलग है और देह अलग। ईश्वर के दर्शन करने पर फिर देहात्मबुद्धि नही रह जाती। दोनो अलग अलग है। जैसे नारियल का पानी सूख जाने पर भीतर का गोला और ऊपर का खोपड़ा अलग अलग हो जाते है। आत्मा भी उसी गोले की तरह मानो देह के भीतर खडखडाती हो। उसी तरह विषय-बुद्धिरूपी पानी के सूख जाने पर आत्मज्ञान होता है। तब आत्मा एक अलग चीज जान पडती है और देह एक अलग चीज। कच्ची सुपारी, कच्चे बादाम के भीतर का गूदा——ये छिलके से अलग नही किये जा सकते।

"परन्तु जब पक्की अवस्था होती है, तब सुपारी और बादाम छिलके से अलग हो जाते है। पक्की अवस्था मे रस सूख जाता

है। ब्रह्मज्ञान के होने पर विषय-रस सूख जाता है।

"परन्तु वह ज्ञान होना बडा कठिन है। कहने से ही किसी को ब्रह्मज्ञान नही हो जाता। कोई ज्ञान होने का ढोंग करता है। (हँसकर) एक आदमी बहुत झूठ बोलता था। इधर यह भी कहता था कि मुझे ब्रह्मज्ञान हो गया है। किसी दूसरे के तिरस्कार करने पर उसने कहा, 'क्यो जी, ससार तो स्वप्नवत् है ही, अतएव सब अगर मिथ्या हो गया तो सच बात ही कहाँ से सही होगी ? झूठ भी झूठ है और सच भी झूठ ही है !'" (सब हँसते है)

(३)

अवतारलीला तथा योगमाया आद्या-शक्ति

श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ जमीन पर चटाई पर बैठे हुए है। भक्तो से कह रहे है, मेरे पैरों मे जरा हाथ तो फेर दो। भक्तगण उनके पैर दाब रहे है (मास्टर से हँसकर) "इसके (पैर दाबने के) बहुत से अर्थ है।"

फिर अपने हृदय पर हाथ रखकर कह रहे है, इसके (अपने को) भीतर अगर कुछ है तो (सेवा करने पर) अज्ञान, अविद्या सब दूर हो जायेंगे।

एकाएक श्रीरामकृष्ण गम्भीर हो गये, जैसे कोई गूढ विषय कहने वाले हो।

श्रीरामकृष्ण– (मास्टर से)– यहाँ दूसरा कोई आदमी नही है। उस दिन यहाँ हरीश था–– मैने देखा–– गिलाफ को (देह* को) छोड़कर सच्चिदानन्द बाहर हो आया, निकलकर उसने कहा, 'हरएक युग मे मै ही अवतार कहलाता हूँ।' तब मैंने

* श्रीरामकृष्ण की देह।

सोचा, यह मेरी ही कोई कल्पना होगी। फिर चुपचाप देखने लगा।—तव मैने देखा, वह स्वय कह रहा है, 'शक्ति की आराधना चैतन्य को भी करनी पडी थी।'

सव भक्त आश्चर्यचकित होकर सुन रहे है। कोई कोई सोच रहे है, क्या सच्चिदानन्द भगवान श्रीरामकृष्ण का रूप धारण कर हमारे पास बैठे है? भगवान क्या फिर अवतीर्ण हुए है? श्रीरामकृष्ण ने मास्टर से कहा, "मैने देखा, इस समय पूर्ण आविर्भाव है, परन्तु ऐश्वर्य सत्त्व गुण का है।

(मास्टर से) "अभी अभी मै माॅ से कह रहा था, माँ, अव मुझसे वका नही जाता और कह रहा था, एक वार छू देने पर ही जैसे आदमी को चैतन्य हो। योगमाया की महिमा भी ऐसी है कि वह गोरखधन्धे मे डाल देती है। वृन्दावन की लीला के समय योगमाया ने वैसा ही किया। और उसी के वल से सुवोल ने श्रीकृष्ण से श्रीमती को मिला दिया था। जो आद्याशक्ति है, उस योगमाया मे एक आकर्षण शक्ति है। मैने उसी शक्ति का आरोप किया था।

"अच्छा जो लोग आते है, उन्हे कुछ होता है?"

मास्टर—जी हाॅ, होता क्यो नही?

श्रीरामकृष्ण—तुम्हे मालूम कैसे हुआ?

मास्टर—(सहास्य)—सव कहते है, उनके पास जो जाते है, वे लौटते नही।

श्रीरामकृष्ण—(सहास्य)—एक वड़ा मेढक मटियाले साॅप के पाले पडा था। साँप न उसे निगल सकता था, न छोड़ सकता था। मेढक भी आफत मे पड़ा, लगातार टे टे कर रहा था और साॅप की भी जान आफत मे थी। परन्तु वह मेढक अगर गोखुरा

साँप के पाले पड़ता तो दो ही एक पुकार मे उसे ठण्डा हो जाना पडता ! (सब हँसते हैं।)

(किशोर भक्तों से) "तुम लोग त्रैलोक्य की पुस्तक— भक्ति-चैतन्यचन्द्रिका— पढना। उससे एक किताब माँग लेना। उसमे चैतन्य की वड़ी अच्छी बाते लिखी है।"

एक भक्त– क्या वे देगे ?

श्रीरामकृष्ण– (सहास्य)– क्यों, खेत मे अगर बहुत सी ककड़ियाँ हुई हो, तो मालिक दो तीन मुफ्त ही दे सकता है। (सब हंसते हैं।) मुफ्त देगा क्यो नही,— तू कहता क्या है ?

(पल्टू से) "यहाँ एक वार आना।"

पल्टू– हो सका तो आऊँगा।

श्रीरामकृष्ण– मै कलकत्ते मे जहाँ जाऊँ, वहाँ तू जायेगा या नही ?

पल्टू– जाऊँगा; कोशिश करूँगा।

श्रीरामकृष्ण– यह पटवारी वुद्धि है।

पल्टू– 'कोशिश करूँगा', यह अगर न कहूँ तो बात झूठ हो सकती है।

श्रीरामकृष्ण– (मास्टर से)– इनकी वातो को मे झूठ मे शामिल नही करता, क्योकि वे स्वाधीन नही है।

(हरिपद से) "महेन्द्र मुखर्जी क्यो नही आता ?"

हरिपद– मै ठीक ठीक नही कह सकता।

मास्टर– (सहास्य)– वे ज्ञानयोग कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण– नही, उस दिन प्रह्लाद-चरित्र दिखाने के लिए उसने गाडी भेजने के लिए कहा था, परन्तु फिर भेज नही सका, शायद इसीलिए आता भी नही।

मास्टर– एक दिन महिम चक्रवर्ती से मुलाकात हुई थी, वातचीत भी हुई थी। जान पडता है, वे (महेन्द्र) उनके पास आया-जाया करते है।

श्रीरामकृष्ण– क्यो, महिम तो भक्ति की वाते भी करता है। वह तो कहता भी है खूब— 'नाराधितो यदि हरिस्तपसा ततः किम् ।'

मास्टर– (हँसकर)–आप कहलाते है, इसीलिए वह कहता है।

श्रीयुत गिरीश घोप श्रीरामकृष्ण के पास पहले पहल आने-जाने लगे है। आजकल वे सदा श्रीरामकृष्ण की ही बातो मे रहते है।

हरि– गिरीश घोप आजकल कितनी ही तरह के दर्शन करते है। यहाँ से लौटने पर सर्वदा ईश्वरी भाव मे रहते है।

श्रीरामकृष्ण– यह हो सकता है, गगा के पास जाओ तो कितनी ही तरह की चीजे दीख पड़ती है— नाव, जहाज— कितनी चीजे।

हरि– गिरीश घोस कहते है, 'अव सिर्फ कर्म लेकर रहूँगा, सुबह को घडी देखकर दवात-कलम लेकर बैठूँगा और दिन भर वही काम (पुस्तके लिखना) किया करूँगा।' इस तरह कहते हैं, पर कर नही सकते। हम लोग जाते है तो बस यही की वातें किया करते है। आपने नरेन्द्र को भेजने के लिए कहा था, गिरीश बाबू ने कहा, नरेन्द्र को किराये की गाड़ी कर दूँगा।

पाँच वजे है, छोटे नरेन्द्र घर जा रहे है। श्रीरामकृष्ण उत्तर-पूर्व वाले लम्बे बरामदे मे खडे हुए एकान्त मे उन्हे अनेक प्रकार के उपदेश दे रहे है। कुछ देर वाद प्रणाम कर वे विदा हुए; और भी कितने ही भक्तो ने विदाई ली।

श्रीरामकृष्ण छोटे तखत पर बैठे हुए मोहिनीमोहन से वातचीत कर रहे है। लड़के के गुजर जाने पर उनकी स्त्री एक तरह से

पागलसी हो गयी है। कभी रोती है, कभी हँसती है। श्रीरामकृष्ण के पास आकर वहुत कुछ शान्त हो जाती है।

श्रीरामकृष्ण–तुम्हारी स्त्री इस समय कैसी है ?

मोहिनी०–यहाँ आने ही से शान्त हो जाती है, वहाँ तो कभी-कभी वडा उत्पात मचाती है, अभी उस दिन मरने पर तुली हुई थी।

श्रीरामकृष्ण सुनकर कुछ देर सोचते रहे। मोहिनीमोहन ने विनयपूर्वक कहा, 'आप दो-एक बाते वता दीजिये।'

श्रीरामकृष्ण– भोजन न पकवाना। इससे सिर और भी गरम हो जाता है, और साथ-साथ आदमी रखे रहना।

(४)

श्रीरामकृष्ण की अद्भुत संन्यासावस्था

शाम हो गयी, श्रीठाकुर-मन्दिर मे आरती के लिए तैयारी हो रही है। श्रीरामकृष्ण के कमरे मे दिया जला दिया गया और धूनी भी दी जा चुकी। श्रीरामकृष्ण छोटे तखत पर बैठे हुए जगन्माता को प्रणाम कर मधुर स्वर से उनका नाम ले रहे है। कमरे मे और कोई नही है, सिर्फ मास्टर बैठे हुए है।

श्रीरामकृष्ण उठे। मास्टर भी खड़े हो गये। श्रीरामकृष्ण ने कमरे के पश्चिम और उत्तर के दरवाजो को दिखाकर उन्हे वन्द कर देने के लिए कहा। मास्टर दरवाजे बन्द कर बरामदे में श्रीरामकृष्ण के पास आकर खड़े हुए।

श्रीरामकृष्ण ने कहा, 'अव मै कालीमन्दिर जाऊँगा।' यह कहकर मास्टर का हाथ पकड़ उनके सहारे कालीमन्दिर के सामने मन्दिर के चबूतरे पर जाकर वैठे। वैठने के पहले कह रहे है, "तुम उसे वुला तो लो।" मास्टर ने वाबूराम को बुला दिया।

श्रीरामकृष्ण काली के दर्शन कर उस बड़े आँगन से होकर अपने कमरे की ओर लौट रहे है। मुख से 'माँ! माँ! राजेश्वरी!' कहते जा रहे है।

कमरे मे आकर अपने छोटे तखत पर बैठ गये।

श्रीरामकृष्ण की एक विचित्र अवस्था है। किसी धातु की वस्तु को छू नही सकते। उन्होने कहा था, 'माँ अब ऐश्वर्य की बाते शायद मन से बिलकुल हटा रही है।' अब वे केले के पत्ते मे भोजन करते है। मिट्टी के बर्तन मे पानी पीते है। गडुआ नहीं छू सकते। इसीलिए भक्तो से मिट्टी का बर्तन ले आने के लिए कहा था। गडुए या थाली मे हाथ लगाने से हाथ मे झुनझुनी-सी चढ जाती है, दर्द होने लगता है,—जैसे सिंगी मछली का काँटा चुभ गया हो।

प्रसन्न कुछ बर्तन ले आये है, परन्तु वे बहुत छोटे है। श्रीरामकृष्ण हँसकर कह रहे है, "ये बर्तन बहुत छोटे है। लड़का बड़ा अच्छा है। मेरे कहने पर मेरे सामने नगा होकर खडा हो गया! कैसा लडकपन है!"

बेलघर के तारक एक मित्र के साथ आये। श्रीरामकृष्ण छोटे तखत पर बैठे हुए है, कमरे मे दिया जल रहा है। मास्टर तथा दो एक और भक्त बैठे हुए है।

तारक ने विवाह किया है। उनके माँ-बाप उन्हे श्रीरामकृष्ण के पास आने नही देते। कलकत्ते के बहूबाजार के पास उनके घरवाले किराये के मकान मे रहते है, तारक भी वही रहा करते है। तारक को श्रीरामकृष्ण चाहते भी बहुत है। उनके साथ का लडका जरा तमोगुणी जान पडता है। धर्म-विषय और श्रीराम-कृष्ण के सम्बन्ध मे उसका कुछ व्यग भाव-सा है। तारक की

उम्र लगभग वीस साल की होगी। तारक ने भूमिष्ठ हो श्रीराम-कृष्ण को प्रणाम किया।

श्रीरामकृष्ण– (तारक के मित्र से) –जरा मन्दिर देख लो न।

मित्र– यह सब देखा हुआ है।

श्रीरामकृष्ण– अच्छा, तारक यहाँ आता है। क्या यह बुरा है?

मित्र– यह तो आप ही जाने।

श्रीरामकृष्ण– ये (मास्टर) हेडमास्टर है।

मित्र– ओः।

श्रीरामकृष्ण तारक से कुशल-प्रश्न पूछ रहे है और उनसे वहुत सी वातें कर रहे है। अनेक प्रकार की बातें करके तारक ने विदा होना चाहा। श्रीरामकृष्ण उन्हे अनेक विषयो मे सावधान कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण– (तारक से)– साधो! सावधान रहो। कामिनी और कांचन से सावधान रहो। स्त्री की माया मे एक बार भी डूव गये तो वाहर आने की सम्भावना नही है। विशालाक्षी नदी का भँवर है, जो एक बार भी फँसा वह फिर नही निकल सकता। और यहाँ कभी-कभी आना।

तारक– घरवाले नही आने देते।

एक भक्त– अगर किसी की माँ कहे कि तू दक्षिणेश्वर न जाया कर, और कसम खाये कि जो तू वहाँ जाय, तो तू मेरा खून पिये, तो?—

श्रीरामकृष्ण– जो ऐसी वात कहे, वह माँ नही है,—वह अविद्या की मूर्ति है। उस माँ की वात अगर न मानी जाय तो कोई दोष नही। वह माँ ईश्वर-प्राप्ति के मार्ग मे विघ्न डालती है। ईश्वर के लिए गुरुजनो की वात का उल्लघन किया जाय

तो इसमे कोई दोष नही होता। भरत ने राम के लिए कैकेयी की वात नही मानी।

"गोपियो ने श्रीकृष्ण-दर्शन के लिए पति की मनाई नही सुनी। प्रह्लाद ने ईश्वर के लिए वाप की वात पर ध्यान नही दिया। वलि ने ईश्वर की प्रीति के लिए अपने गुरु शुक्राचार्य की वात नही सुनी। विभीषण ने राम को पाने के लिए अपने वड़े भाई रावण की वातो पर ध्यान नही दिया।

"परन्तु 'ईश्वर के मार्ग पर जाना' इस वात को छोड और सव वाते मानो।"

'देखूँ तो तेरा हाथ,' यह कहकर श्रीरामकृष्ण तारक के हाथ का वजन परख रहे है। कुछ देर वाद कह रहे है, "कुछ (वाधा) है, परन्तु वह न रह जायेगी। उनसे जरा प्रार्थना करना, और यहाँ कभी-कभी आना—वह दूर हो जायेगी। क्या कलकत्ते के वहूवाजार मे तूने मकान किराये से लिया है ?"

तारक– जी, मैने नही लिया, उन लोगो ने लिया है।

श्रीरामकृष्ण– (हँसकर)– उन लोगो ने लिया है या तूने ? वाघ के डर से न ? (श्रीरामकृष्ण कामिनी को वाघ कह रहे है।)

तारक प्रणाम करके विदा हुए। श्रीरामकृष्ण छोटे तखत पर लेटे हुए है,—तारक के लिए सोच रहे हो। एकाएक मास्टर से कहने लगे, 'इन लोगों के लिए मै इतना व्याकुल क्यो होता हूँ ?'

मास्टर चुपचाप वैठे हुए है, जैसे उत्तर सोच रहे हो।

श्रीरामकृष्ण फिर पूछ रहे है, और कहते है, 'कहो जी।'

इधर मोहिनीमोहन की स्त्री श्रीरामकृष्ण के कमरे मे आकर उन्हे प्रणाम करके एक ओर वैठी हुई है। श्रीरामकृष्ण तारक के साथी की वात मास्टर से कह रहे है।

श्रीरामकृष्ण– तारक क्यो उसे अपने साथ ले आया ?

मास्टर– रास्ते मे साथ के विचार से ले आया होगा। दूर तक चलना पड़ता है।

इस बात के बीच मे श्रीरामकृष्ण एकाएक मोहिनीमोहन की स्त्री से कहने लगे, "अपघात-मृत्यु के होने पर स्त्री प्रेतनी होती है। सावधान रहना ! मन को समझाना। इतना देख-सुनकर भी अन्त मे क्या यह चाहती हो ?"

मोहनीमोहन अब बिदा होने लगे। श्रीरामकृष्ण को भूमिष्ठ होकर प्रणाम कर रहे हैं। उनकी स्त्री ने भी प्रणाम किया। श्रीरामकृष्ण अपने कमरे के उत्तर तरफवाले दरवाजे के पास आकर खड़े हुए। मोहिनीमोहन की पत्नी कपड़े से सिर ढाँककर श्रीरामकृष्ण से कुछ कह रही है।

श्रीरामकृष्ण– यहाँ रहोगी ?

पत्नी– कुछ दिन यहाँ आकर रहूँगी, नौबतखाने मे माँ है; उनके पास।

श्रीरामकृष्ण– अच्छा तो है, परन्तु तुम मरने की बात जो कहती हो, इसी से भय होता है और गंगाजी भी पास ही है।

परिच्छेद ५

बलराम वसु के घर में

(१)

श्रीरामकृष्ण तथा त्याग की पराकाष्ठा

आज फाल्गुन की कृष्णा दशमी है, बुधवार, ११ मार्च, १८८५। आज दस बजे के लगभग दक्षिणेश्वर से आकर बलराम वसु के यहाँ श्रीरामकृष्ण ने जगन्नाथजी का प्रसाद ग्रहण किया। उनके साथ लाटू आदि भक्त भी हैं।

बलराम के यहाँ श्रीरामकृष्ण अक्सर आते हैं। कलकत्ते में वही एक तरह से उनका प्रधान केन्द्र है। आज बलराम का घर श्रीरामकृष्ण का प्रधान कार्य-क्षेत्र हो रहा है। उस समय मधुर नृत्य और कोमल कण्ठ से ईश्वर-प्रेम की उस सरल वाणी को सुनकर कितने ही भक्त आकर्षित हो रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर के कालीमन्दिर में बैठे हुए रोते हैं, अपने अन्तरंगों को देखने के लिए व्याकुल हो जाते हैं, कहते हैं—'माँ, उसे बड़ी भक्ति है, उसे तुम खींच लो; माँ उसे यहाँ ले आओ, अगर वह न आ सके तो माँ, मुझे ही वहाँ ले चलो, मैं उसे देख लूँ।' इसीलिए श्रीरामकृष्ण बलराम के यहाँ दौड़ आते हैं। लोगों से कहा करते हैं, बलराम के यहाँ श्रीजगन्नाथजी की सेवा होती है, उसका अन्न बड़ा शुद्ध है। जब आते हैं तब बलराम से न्योता देने के लिए कहते हैं, कहते हैं—'जाओ, नरेन्द्र को, भवनाथ को, राखाल को न्योता दे आओ, इन्हें खिलाने से नारायण को खिलाना होता है। ये ऐसे-वैसे नहीं हैं, ये ईश्वरांश से पैदा हुए हैं। इन्हें खिलाने पर तुम्हारा बहुत कल्याण होगा।'

बलराम के ही यहाँ गिरीश घोष के साथ पहले पहल बैठकर बातचीत हुई थी। यही रथ के समय कीर्तनानन्द हुआ करता है। यही कितने ही बार प्रेम का दरबार लगा और आनन्द की हाट जमी।

मास्टर पास ही के विद्यालय मे पढाते है। उन्होने सुना है, आज दस बजे श्रीरामकृष्ण बलराम के यहाँ आयेगे। बीच मे पढाई से अवकाश मिलने पर दोपहर के समय वे वहाँ गये। श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया। श्रीरामकृष्ण भोजन के बाद बैठकखाने मे जरा विश्राम कर रहे है। बीच बीच मे थैली से मसाला निकालकर खा रहे है। कुछ कम उम्रवाले लड़के उन्हे चारो ओर से घेरे हुए है।

श्रीरामकृष्ण– (सस्नेह)– तुम यहाँ आये, स्कूल नही है ?

मास्टर–स्कूल से आ रहा हूँ। इस समय वहाँ विशेष काम नहीं है।

एक भक्त– नही महाराज, स्कूल से भाग आये है। (सब हँसते है)

श्रीरामकृष्ण कुछ चिन्तित-से हो रहे है। फिर मास्टर को पास बैठाकर अनेक प्रकार की बाते करने लगे। कहा,––"मेरा गमछा जरा निचोड़ तो दो और कुर्ता धूप मे डाल दो। पैर झनझना रहा है। क्या उस पर जरा हाथ फेर दे सकोगे ?" मास्टर सेवा करना नही जानते, इसीलिए श्रीरामकृष्ण उन्हे सेवा करना सिखा रहे है। मास्टर हकपकाकर एक एक करके वे सब काम कर रहे है। फिर वे पैरों पर हाथ फेरने लगे। श्रीरामकृष्ण उन्हे उपदेश दे रहे है।

श्रीरामकृष्ण–(मास्टर से)– क्यो जी, कुछ दिनों से लगातार मुझे ऐसा क्यो हो रहा है ? धातु के किसी बरतन को मै छू नही

सकता। एक बार कटोरे मे हाथ लगाया तो ऐसा हो गया जैसे सिंगी मछली ने हाथ मे काँटा मार दिया हो। हाथ मे झुनझुनी-सी चढ गयी और दर्द होने लगा। गडुए को बिना छुए तो काम चल ही नही सकता, इस ख्याल से मैने सोचा, जरा गमछे से ढककर तो देखूँ, उठा सकता हूँ या नही। यह सोचकर ज्योंही उसे छुआ कि हाथ मे झुनझुनी चढ़ गयी और बहुत दर्द होने लगा। अन्त मे माता से प्रार्थना की, 'मॉ, अब ऐसा काम न करूँगा, अब की बार मॉ, क्षमा करो।'

(मास्टर से) "क्यो जी, छोटा नरेन्द्र आया-जाया करता है, घरवाले क्या कुछ कहेगे ? बिलकुल शुद्ध है, अभी स्त्री-सग कभी नही किया।"

मास्टर–और उच्च आधार है।

श्रीरामकृष्ण–हॉ, और कहता है, ईश्वरी बाते एक बार सुन लेने से मुझे याद रहती है। कहता है, बचपन मे मैं रोया करता था, ईश्वर दर्शन नही दे रहे है इसलिए।

मास्टर के साथ छोटे नरेन्द्र के सम्बन्ध मे बहुत सी बाते हुई। इस समय भक्तो मे से किसी ने कहा, 'मास्टर महाशय, क्या आप स्कूल नही आयेगे ?'

श्रीरामकृष्ण–क्या बजा है ?

भक्त–एक बजने को दस मिनट है।

श्रीरामकृष्ण–(मास्टर से)–तुम जाओ, तुम्हे देर हो रही है। एक तो काम छोड़कर आये हो। (लाटू से) राखाल कहॉ है ?

लाटू–घर चला गया है।

श्रीरामकृष्ण–मुझसे मुलाकात बिना किये ही ?

(२)

अवतारवाद तथा श्रीरामकृष्ण

स्कूल की छुट्टी हो जाने पर मास्टर ने आकर देखा, श्रीरामकृष्ण बलराम के बैठकखाने मे भक्तो के साथ बैठे हुए है। मुख पर हास्य की रेखा है और वही हास्य भक्तों के मुख पर भी प्रतिबिम्बित हो रहा है। मास्टर को लौटकर आते हुए देख, उनके प्रणाम करने के पश्चात्, श्रीरामकृष्ण ने उन्हे अपने पास बैठने का इशारा किया। श्रीयुत गिरीश घोष, सुरेश मित्र, बलराम, लाटू, चुन्नीलाल आदि भक्त उपस्थित है।

श्रीरामकृष्ण– (गिरीश से)– तुम एक बार नरेन्द्र के साथ विचार करके देखना कि वह क्या कहता है।

गिरीश– (हंसकर)– नरेन्द्र कहता है, ईश्वर अनन्त है। जो कुछ हम लोग देखते या सुनते है— वस्तु या व्यक्ति— सब उनके अश है। इतना भी कहने का हमे अधिकार नही है। Infinity (अनन्तता) जिसका स्वरूप है, उसका फिर अंश कैसे हो सकता है ? अंश नही होता।

श्रीरामकृष्ण– ईश्वर अनन्त हो अथवा कितने ही बड़े हो, वे अगर चाहे तो उनके भीतर का सार पदार्थ आदमी के भीतर से प्रकट हो सकता है, और होता भी है। वे अवतार लेते है, यह उपमा के द्वारा नही समझाया जा सकता। इसका अनुभव होना चाहिए। इसे प्रत्यक्ष करना चाहिए। उपमा के द्वारा कुछ आभास मात्र मिलता है। गौ का सींग अगर कोई छू ले, तो गौ को ही छूना हुआ, पैर या पूंछ के छूने पर भी छूना ही है; परन्तु हमारे लिए गौ के भीतर का सार भाग दूध है। वह दूध उसके स्तनो से निकलता है। उसी तरह प्रेम और भक्ति की शिक्षा देने के लिए

ईश्वर मनुष्य की देह धारण करके समय समय पर आते है।

गिरीश– नरेन्द्र कहता है, उनकी सम्पूर्ण धारणा क्या कभी हो सकती है ? वे अनन्त है।

श्रीरामकृष्ण– (गिरीश से)– ईश्वर की सव धारणा कर भी कौन सकता है ? न उनका कोई वडा अंश, न कोई छोटा अश सम्पूर्ण धारणा मे लाया जा सकता है, और सम्पूर्ण धारणा करने की जरूरत ही क्या है ? उन्हे प्रत्यक्ष कर लेने ही से काम वन गया। उनके अवतार को देखने ही से उन्हे देखना हो गया। अगर कोई गगाजी के पास जाकर गगाजल का स्पर्श करता है तो वह कहता है, मै गंगाजी के दर्शन कर आया। उसे हरिद्वार से गगासागर तक की गगा का स्पर्श नही करना पड़ता। (सव हँसते है)

" तुम्हारे पैर अगर मै छू लूँ, तो तुम्हे ही छूना हुआ। (हास्य)

" अगर समुद्र के पास जाकर कुछ पानी छू लो तो समुद्र का ही स्पर्श करना होता है। अग्नितत्त्व सव जगह है, परन्तु लकड़ी मे अधिक है।"

गिरीश– (हँसते हुए)– जहाँ मुझे आग मिलेगी, मुझे उसी जगह से जरूरत है।

श्रीरामकृष्ण– (हँसते हुए)– अग्नितत्त्व लकड़ी मे अधिक है। अगर तुम ईश्वर की खोज करते हो तो आदमी मे खोजो। आदमी मे उनका प्रकाश अधिक होता है। जिस आदमी मे ऊर्जिता भक्ति देखोगे— देखोगे उसमे प्रेम और भक्ति, दोनो उमड़ रहे है— ईश्वर के लिए वह पागल हो रहा है— उनके प्रेम मे मस्त घूमता है— उस मनुष्य मे, निश्चयपूर्वक समझो कि वे अवतीर्ण हो चुके है।

(मास्टर को देखकर) "वे तो है ही, परन्तु कही उनकी शक्ति का प्रकाश अधिक है, कही कम। अवतारों मे उनकी शक्ति का प्रकाश अधिक है। वही शक्ति कभी कभी पूर्ण भाव से रहती है। अवतार शक्ति का ही होता है।"

गिरीश –नरेन्द्र कहता है, वे अवाङमनसगोचरम् है।

श्रीरामकृष्ण– नही, इस मन से गोचर तो नही है, परन्तु वे शुद्ध मन के गोचर अवश्य है। इस वुद्धि के गोचर नही, परन्तु शुद्ध वुद्धि के गोचर है। कामिनी और कांचन पर से आसक्ति गयी नही कि शुद्ध मन और शुद्ध वुद्धि की उत्पत्ति हुई। तव शुद्ध मन और शुद्ध वुद्धि दोनो एक कहलाते है। वे उस शुद्ध मन से दीख पडते है। क्या ऋषि और मुनियो ने उनके दर्शन नही किये? उन लोगों ने चैतन्य के द्वारा चैतन्य का साक्षात्कार किया था।

गिरीश– (हँसकर)– नरेन्द्र तर्क मे मुझसे परास्त हो गया है।

श्रीरामकृष्ण– नही, उसने मुझसे कहा है, गिरीश घोष आदमी को अवतार कहकर जव इतना विश्वास करता है, तो इस पर मैं और क्या कहता? इस तरह के विश्वास पर कुछ कहना भी न चाहिए।

गिरीश– (सहास्य) –महाराज! हम लोग तो अनर्गल वातें कर रहे है, और मास्टर चुपचाप वैठे हुए हैं— जरा भी जवान नही हिलाते। महाराज! ये क्या सोचते है?

श्रीरामकृष्ण– (हंसते हुए)– अधिक वकवाद करनेवाला, अधिक चुप्पी साधनेवाला, कान मे तुलसी खोसनेवाला आदमी, वड़ा लम्वा घूँघट काढनेवाली स्त्री, काईवाले तालाव का पानी, इनकी गणना अनर्थकारियों में है। (सव हंसते है) (हंसकर) परन्तु ये ऐसे नही है, ये गम्भीर प्रकृति के है। (सव हंसते है)

श्रीरामकृष्ण ने जिन्हें अनर्थकारियो में गिनाया, उनके लिए वहाँ उन्होंने एक पद कहा था।

गिरीश– महाराज! वह पद आपने कैसे कहा?

श्रीरामकृष्ण– इन आदमियो से सचेत रहना चाहिए। पहले तो वह है जो अधिक बकता हो— अनाप-शनाप, फिर चुपचाप बैठा रहनेवाला—जिसके मन की थाह मिलती ही नही—गोताखोर भी मिट्टी न छू पाये, फिर कान मे तुलसी के दल खोसनेवाला, कान मे इसलिए तुलसी खोस लेता है कि लोग समझे, यह वड़ा भक्त है। लम्बा घूँघट काढनेवाली औरत, लम्बा घूँघट देखकर आदमी सोचते है कि यह वड़ी सती है, परन्तु बात ऐसी नही है, और काईवाले तालाव के पानी मे नहाने से ही सन्निपात हो जाता है।

चुन्नीलाल– इनके (मास्टर के) नाम पर एक वात फैली है। छोटा नरेन्द्र, बाबूराम, इनके विद्यार्थी है। नारायण, पल्टू, पूर्ण, तेजचन्द्र— ये भी इनके विद्यार्थी है। बात फैली है कि ये उन्हे यहाँ ले आते है और इस तरह उनका लिखना-पढना मिट्टी मे मिल रहा है! इन पर लोग दोपारोपण कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण– उनकी वात पर विश्वास कौन करेगा?

इस तरह बाते हो रही थी, इतने मे नारायण आये और उन्होंने श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया। नारायण का रग गोरा, उम्र १७–१८ साल की है, स्कूल मे पढते है, श्रीरामकृष्ण इन्हे बहुत प्यार करते है। इन्हे देखने और खिलाने को वे सदा ही व्याकुल रहा करते है। इनके लिए दक्षिणेश्वर मे बैठे हुए रोते भी है। नारायण को वे साक्षात् नारायण देखते है।

गिरीश– (नारायण को देखकर)– किसने तुम्हे खबर दी?

देखते है, मास्टर ने सब को साफ कर दिया ! (सब हंसते है)

श्रीरामकृष्ण– (हँसते हुए)– बैठो ! चुपचाप बैठो ! इन्हें (मास्टर को) लोग दोष दे रहे है।

फिर नरेन्द्र की बात चली।

एक भक्त– अब उतना क्यो नही आते ?

श्रीरामकृष्ण– अन्न की चिन्ता भी बड़ी बिकट होती है, बड़ों बड़ो की अक्ल उस समय काम नही देती।

बलराम– शिव गुहा के घराने के अन्नदा गुहा के पास नरेन्द्र का आना-जाना खूब है।

श्रीरामकृष्ण– हाँ, एक ऑफिसवाले के यहाँ नरेन्द्र, अन्नदा, ये लोग जाया करने है। वहाँ सब मिलकर ब्राह्म समाज करते है।

एक भक्त– उनका (ऑफिसवाले का) नाम तारापद था।

बलराम–(हँसते हुए)– कुछ ब्राह्मण कहते है, अन्नदा गुहा बड़ा अहंकारी है।

श्रीरामकृष्ण– ब्राह्मणों की इन सब बातो पर ध्यान ही नही देना चाहिए। उनका हाल तो जानते ही हो, जो नही देता वह बदमाश हो जाता है और जो देता है वह अच्छा। (सब हॅसते है) अन्नदा को मैं जानता हूँ, वह अच्छा आदमी है।

(३)

भक्तों के साथ भजनानन्द में

श्रीरामकृष्ण की गाना सुनने की इच्छा है। बलराम के बैठकखाने के कमरे मे आदमी भरे है। सब के सब उनकी ओर ताक रहे है, उनकी वाणी सुनने के लिए।

श्रीरामकृष्ण की इच्छा-पूर्ति के लिए तारापद गाने लगे–

" केशव कुरु करुणा दीने कुज-काननचारी ।
माधव मनमोहन मोहनमुरलीधारी ॥
व्रजकिशोर कालीयहर कातर-भयभजन,
नयनबॉका बॉका शिखिपाखा, राधिका हृदिरजन ।
गोवर्धनधारण, वनकुसुमभूषण, दामोदर कसदर्पहारी, श्याम
रासरसविहारी ॥"

श्रीरामकृष्ण– (गिरीश से)–अहा, बड़ा अच्छा गाना है ! सब गानों की रचना तुम्ही ने की है ?

भक्त–जी हॉ, 'चैतन्यलीला' के सब गाने इन्ही के बनाये हुए हैं।

श्रीरामकृष्ण– (गिरीश से)– यह गाना उतरा भी खूब है।

(गानेवाले के प्रति) "निताई का गाना आता है ?"

फिर गाना होने लगा, नित्यानन्द ने गाया था– (भावार्थ)–

"किशोरी का प्रेम अगर तुझे लेना है तो चला आ, ..प्रेम का ज्वार बहा जा रहा है । अरे, वह प्रेम शत धाराओ मे बह रहा है, जो जितना चाहता है, उसे उतना ही मिलता है । प्रेम की किशोरी, स्वय इच्छा करके प्रेम वितरण कर रही है । राधा के प्रेम मे तुम भी 'जय कृष्ण जय कृष्ण' कहो । उस प्रेम से प्राण मस्त हो जाते है, उसकी तरंगो पर प्राण नाचने लगते है । राधा के प्रेम से 'जय कृष्ण जय कृष्ण' कहता हुआ तू चला आ ।"

फिर गौराग का गाना होने लगा,–

"किसके भाव मे आकर गौराग के वेश में तुमने प्राणो को शीतल कर दिया ? प्रेम के सागर मे तूफान आ गया है, अब कुल की मर्यादा न रह जायेगी । व्रज मे गोपाल का वेश धारण कर तुमने गौएँ चरायी थी, बसी बजाकर गोपियो का मन मुग्ध कर लिया था, गोवर्धन धारण कर वृन्दावन की रक्षा की थी, गोपियों

के मान करने पर तुम उनके पैरो पडे थे--- आँसुओ से तुम्हारा चन्द्रानन प्लावित हो गया था।"

सब मास्टर से गाने के लिए अनुरोध कर रहे है। मास्टर स्वभाव के कुछ लजीले है, वे धीमे शब्दो मे माफी माँगने लगे।

गिरीश-- (श्रीरामकृष्ण से हँसकर)-- महाराज, मास्टर किसी तरह नही गा रहे है।

श्रीरामकृष्ण-- (विरक्ति के स्वर मे)-- वह स्कूल मे भले ही दाँत दिखाये, मुँह खोले, पर गाने मे ही उसे दुनिया भर की लज्जा सवार हो जाती है।

मास्टर चुपचाप बैठे रहे।

श्रीयुत सुरेश मित्र कुछ दूर बैठे थे। श्रीरामकृष्ण उन्हे सस्नेह देखकर श्रीयुत गिरीश की ओर इशारा करके हँसते हुए कह रहे है--

"तुम्ही नही, ये (गिरीश) तुमसे भी बढे-चढे है।"

सुरेश-- (हँसते हुए)-- जी हाँ, मेरे वडे भाई है।

(सब हँसते है)

गिरीश-- (श्रीरामकृष्ण से)-- अच्छा महाराज, बचपन मे मैने न कुछ पढा न लिखा, फिर भी लोग मुझे विद्वान् कहते है।

श्रीरामकृष्ण-- महिम चक्रवर्ती ने शास्त्रावलोकन खूब किया है--- आधार भी उच्च है। (मास्टर से) क्यो जी ?

मास्टर-- जी हाँ।

गिरीश-- क्या ? विद्या ? यह बहुत देख चुका हूँ, अब इसके चकमे मे नही आता।

श्रीरामकृष्ण-- (हँसते हुए)-- यहाँ का भाव क्या है, जानते हो ? पुस्तक और शास्त्र ये सब केवल ईश्वर के पास पहुँचने का मार्ग ही वताते है। मार्ग--- उपाय--- के समझ लेने पर फिर पुस्तको और

शास्त्रों की क्या जरूरत है ? तब स्वय अपना काम करना चाहिए।

"एक आदमी को एक चिट्ठी मिली। उसको उसके किसी आत्मीय ने कुछ चीजे भेजने के लिए लिखा था। जब चीजो के खरीदने का समय आया, तव चिट्ठी की तलाश करने पर भी वह नही मिल रही थी। मकानमालिक ने बड़ी उत्सुकता के साथ खोजना शुरू किया। बड़ी देर तक कई आदमियो ने मिलकर खोजा। अन्त मे वह चिट्ठी मिल गयी, तब उसे खूव आनन्द हुआ। मालिक ने वडी उत्सुकता के साथ चिट्ठी अपने हाथ में ले ली, और उसमे जो कुछ लिखा हुआ था, पढने लगा, लिखा था— पाँच सेर सन्देश भेजियेगा, एक धोती, तथा कुछ अन्य चीजे— न जाने क्या क्या। तब फिर चिट्ठी की कोई जरूरत न रही, चिट्ठी फेककर सन्देश, कपडे तथा और और चीजों की व्यवस्था करने को वह चल दिया। चिट्ठी की जरूरत तो तभी तक थी, जव तक सन्देश, कपड़े आदि के विषय मे ज्ञान नहीं हुआ था। इसके बाद प्राप्ति की चेष्टा हुई।

"शास्त्रो मे तो उनके पाने के उपायो की ही वाते मिलेगी। परन्तु खबरे लेकर काम करना चाहिए। तभी तो वस्तुलाभ होगा।

"केवल पाण्डित्य से क्या होगा ? बहुत से श्लोक और बहुत से शास्त्र पण्डितो के समझे हुए हो सकते है, परन्तु संसार पर जिसकी आसक्ति है, मन ही मन कामिनी और काचन पर जिसका प्यार है, शास्त्रो पर उसकी धारणा नहीं हुई— उसका पढना व्यर्थ है, पचाग मे लिखा है कि इस साल वर्षा खूब होगी, परन्तु पंचांग को दावने पर एक बूँद भी पानी नही निकलता, भला एक बूँद भी तो गिरता, परन्तु उतना भी नही गिरता !"

(सब हँसते है)

गिरीश– (सहास्य)– महाराज, पंचांग को दाबने पर एक बँद भी पानी नही गिरता ? (सब हँसते है)

श्रीरामकृष्ण– (सहास्य)– पण्डित खूब लम्वी लम्बी बातें तो करते है, परन्तु उनकी नजर कहाॅ है ?— कामिनी और कांचन पर— देह-सुख, और रुपयो पर।

"गीध वहुत ऊँचे उड़ता है, परन्तु उसकी नजर मरघट पर ही रहती है। (हास्य) वह बस मुर्दे की लाश ही खोजता रहता है— कहाॅ है मरघट और कहाॅ है मरा हुआ बैल !

(गिरीश से) "नरेन्द्र वहुत अच्छा है, गाने-बजाने मे, पढने-लिखने मे— सब वातों मे पक्का है, इधर जितेन्द्रिय भी है, विवेक और वैराग्य भी है, सत्यवादी भी है। उसमे वहुत से गुण है।

(मास्टर से) "क्यों जी ! कैसा है, अच्छा है न खूव ?"

मास्टर– जी हाॅ, वहुत अच्छा है।

श्रीरामकृष्ण– (मास्टर से अकेले मे)– देखो, उसमे (गिरीश मे) अनुराग खूब है, और विश्वास भी है।

मास्टर आश्चर्य मे आकर एकदृष्टि से गिरीश को देख रहे है। गिरीश कुछ ही दिनो से श्रीरामकृष्ण के पास आने लगे है, परन्तु मास्टर ने देखा, श्रीरामकृष्ण से मानो उनका वहुत दिनो का परिचय हो— जैसे वे कोई परम आत्मीय हो— जैसे एक ही सूत मे पिरोये हुए मणियो मे से एक हो।

नारायण ने कहा, "महाराज, क्या गाना न होगा ?"

श्रीरामकृष्ण मधुर कण्ठ से माता का नाम और गुणगान करने लगे।

"आदरणीय श्यामा माॅ को यत्नपूर्वक हृदय मे रखना। ऐ मन, तू देख और मै देखूँ, कोई और जैसे न देखने पावे। कामादि

को धोखा देकर, ऐ मन, आ, एकान्त मे उनके दर्शन करे। रसना को हम लोग साथ रखेगे, ताकि वह 'माँ माँ' कहकर पुकारती रहे। जितने कुरुचि कुमन्त्री है उन्हे पास भी न फटकने देना। ज्ञान के नेत्रो को पहरेदार वनाना और उन्हे सतर्क रहने के लिए होशियार कर देना।"

श्रीरामकृष्ण त्रितापपीडित ससारियो का भाव अपने पर आरोपित कर माता से अभिमानपूर्वक कह रहे है—

"माँ, आनन्दमयी होकर तुम मुझे निरानन्द न करना। तुम्हारे दोनो चरणो को छोड मेरा मन और कुछ भी नही जानता। माँ, मुझे यम बदमाश कहता है, मै उसे क्या जवाब दूँ, तुम्ही वता दो। मेरे मन की यह इच्छा थी कि 'भवानी' कहकर मै भव से पार हो जाऊँ। तुम मुझे इस अछोर सागर मे डुबो दोगी, यह विचार स्वप्न मे भी मुझे न था। मै दिन-रात तुम्हारा दुर्गा-नाम लिया करता हूँ, फिर भी मेरे इन असख्य दु:खो का विनाश न हो पाया। ऐ हरसुन्दरी, अब की वार अगर मै मरा, तो समझ लेना कि तुम्हारा यह दुर्गा-नाम फिर कोई न लेगा।"

फिर वे नित्यानन्दमयी के ब्रह्मानन्द के स्वरूप का कीर्तन करने लगे—

"तुम शिव के साथ सदा ही आनन्द मे मग्न हो रही हो। कितने ही रंग दिखा रही हो। माँ, सुधा पान करके लड़खडाती हुई भी तुम गिर नही पड़ती।"

भक्तगण निस्तब्ध भाव से गाना सुन रहे है। वे टकटकी लगाये श्रीरामकृष्ण की इस आत्मविस्मृत प्रमत्त अवस्था का अवलोकन कर रहे है।

गाना समाप्त हो गया। श्रीरामकृष्ण कह रहे है— "आज मेरा

गाना अच्छा नही हुआ। जुकाम हो गया है।"

(४)

श्रीरामकृष्ण की प्रार्थना

सन्ध्या हो आयी है। समुद्र के वक्ष.स्थल पर,—जहाँ अनन्त की नील छाया पड रही है, घने जगलों मे, आसमान को छूनेवाले पर्वतो की चोटियों पर, हवा से काँपती हुई नदी के तट पर, दिगन्त के छोर तक फैले हुए प्रान्तर मे साधारण मानव का सहज ही भावान्तर हो जाता है। यह सूर्य जो संसार को आलोकित कर रहा था, कहाँ गया ? वालक सोच रहा है— तथा सोच रहे है बालक-स्वभाव महापुरुष। सन्ध्या हो गयी। कैसा आश्चर्य है ! किसने ऐसा किया ? चिड़ियाँ डालियो पर बैठी हुई चहक रही है, मनुष्यों मे जिन्हे चैतन्य हो गया है, वे भी उस आदिकवि—कारण के कारण पुरुपोत्तम— का नाम ले रहे है।

वातचीत करते हुए सन्ध्या हो गयी। भक्तों मे, जो जिस आसन पर बैठा था, वह उसी पर बैठा रहा। श्रीरामकृष्ण मधुर नाम ले रहे है। सव लोग उत्सुकता से दत्तचित्त हो सुन रहे है। इस तरह का मधुर नाम उन लोगों ने कभी नही सुना, मानो सुधावृष्टि हो रही है। इस तरह प्रेम से भरे हुए वालक का 'माँ-माँ' कहकर पुकारना उन लोगो ने कभी नही सुना। आकाश, पर्वत, महासागर, वन, इन सव को देखने की अव क्या जरूरत है ? गौ के सीग, पैर और शरीर के दूसरे अंगो को देखने की अव क्या जरूरत है ? श्रीराम-कृष्ण ने गौ के जिन स्तनों की वात कही है, इस कमरे मे हम वही तो नही देख रहे है ? सव के अशान्त मन को कैसे शान्ति मिली ? निरानन्द का संसार आनन्द की धारा मे कैसे प्लावित हो गया ? भक्तों को आनन्दमग्न और शान्तिपूर्ण क्यों देख रहा

हूँ ? ये प्रेमिक संन्यासी क्या सुन्दर रूपधारी अनन्त ईश्वर है ? दूध के पिपासुओ को क्या यही दूध मिल सकेगा ? अवतार हों या कोई भी हो, मन तो इन्ही के श्रीचरणो मे बिक गया, अव और कही जाने की शक्ति नही रही। इन्ही को अपने जीवन का ध्रुवतारा बना लिया है। देखूँ तो सही, इनके हृदय-सरोवर मे वे आदिपुरुष किस तरह प्रतिबिम्बित हो रहे है।

भक्तो मे से कोई कोई इस तरह का चिन्तन कर रहे है और श्रीरामकृष्ण के श्रीमुख से निकले हुए हरि का नाम और देवी का नाम सुन-सुनकर कृतार्थ हो रहे है। नामगुण-कीर्तन के पश्चात् श्रीरामकृष्ण प्रार्थना करने लगे, मानो साक्षात् भगवान प्रेम का शरीर धारण कर जीवो को शिक्षा दे रहे है कि कैसे प्रार्थना करनी चाहिए। कहा—"माँ, मै तुम्हारी शरण मे हूँ— शरणागत हूँ। माँ, मै देह-सुख नही चाहता, अणिमादि अष्ट सिद्धियाँ नहीं चाहता, केवल यह कहता हूँ कि तुम्हारे पादपद्मो मे शुद्धा भक्ति हो— निष्काम, अमला, अहेतुकी भक्ति। और माँ, जैसे तुम्हारी भुवनमोहिनी माया मे मुग्ध न होऊँ— जैसे तुम्हारी माया के ससार के कामिनी-काचन पर कभी प्यार न हो। माँ, तुम्हारे सिवा मेरा और कोई नही है। मै भजनहीन हूँ, साधनाहीन हूँ, ज्ञानहीन हूँ, भक्तिहीन हूँ, कृपा करके अपने श्रीपादपद्मो मे मुझे भक्ति दो।"

मणि सोच रहे है— 'तीनो काल मे जो उनका नाम ले रहे है— जिनके श्रीमुख से निकली हुई नामगगा तैलधारा की भाँति निरवच्छिन्ना है, फिर उनके लिए सन्ध्या-वन्दना का क्या प्रयोजन ?' मणि ने बाद मे समझा कि लोकशिक्षा के लिए ही श्रीरामकृष्ण ने मानव शरीर धारण किया है— "हरि ने स्वय ही आकर

योगी के वेश मे नाम का संकीर्तन किया।"

गिरीश ने श्रीरामकृष्ण को न्योता दिया। उसी रात को जाना है।

श्रीरामकृष्ण–रात न होगी ?

गिरीश–नही, आप जब चाहें, आइयेगा। मुझे आज थिएटर जाना होगा, उन लोगो मे लडाई हो रही है, उसका निपटारा करना है।

(५)

श्रीरामकृष्ण का अद्भुत भावावेश

गिरीश का न्योता है, रात ही को जाना होगा। इस समय रात के नौ वजे है। श्रीरामकृष्ण को खिलाने के लिए बलराम भी भोजन का प्रवन्ध करा रहे थे। कही बलराम को दु:ख न हो, इसलिए श्रीरामकृष्ण ने गिरीश के यहाँ जाते समय बलराम से कहा, "बलराम, तुम भी भोजन भिजवा देना।"

दुमंजले से नीचे उतरते हुए श्रीरामकृष्ण भगवद्भावना मे मस्त हो रहे है, जैसे मतवाला। साथ मे नारायण है और मास्टर। पीछे राम, चुन्नी आदि कितने ही है। एक भक्त पूछ रहे है, 'साथ कौन जायेगा ?' श्रीरामकृष्ण ने कहा, 'किसी एक के जाने ही से काम हो जायेगा।' उतरते हुए ही विभोर हो रहे है। नारायण हाथ पकड़ने के लिए वढे कि कहीं गिर न जायँ। श्रीरामकृष्ण को इससे विरक्ति-सी हुई। कुछ देर वाद नारायण से उन्होने स्नेहपूर्ण स्वर मे कहा, "हाथ पकड़ने पर लोग मतवाला समझेंगे, मै खुद चला जाऊँगा।"

वोसपाड़े का तिराहा पार कर रहे है—कुछ ही दूर पर गिरीश का घर है। इतने शीघ्र क्यों जा रहे है ? भक्त सव पीछे रह जाते है। हृदय मे एक अद्भुत दिव्यभाव का आवेश हो रहा है।

वेदो मे जिन्हे वाणी और मन से परे कहा है, उन्ही की चिन्ता करते हुए श्रीरामकृष्ण पागल की तरह लड़खड़ाते हुए चले जा रहे है। अभी कुछ ही समय हुआ होगा, उन्होने वलराम के यहाँ कहा था, वे वाणी और मन से परे नही है, वे शुद्ध वुद्धि और शुद्ध आत्मा के गोचर है, शायद वे उस परम पुरुष का साक्षात्कार कर रहे है। क्या यही देख रहे है— 'जो कुछ है सो तू ही है?'

नरेन्द्र आ रहे है। श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र के लिए पागल रहते है। नरेन्द्र सामने आये, परन्तु श्रीरामकृष्ण कुछ वोल न सके। लोग इसी को 'भाव' कहते है, क्या श्रीगौराग को भी ऐसा ही होता था?

कौन इस भावावस्था को समझेगा? गिरीश के घर मे जानेवाली गली के सामने श्रीरामकृष्ण आये। भक्त सब साथ है। अब आप नरेन्द्र से बोले—

"क्यो भैया, अच्छे हो न? मै इस समय कुछ बोल नही सका।"

श्रीरामकृष्ण के अक्षर-अक्षर मे करुणा भरी हुई है। तब भी वे गिरीश के दरवाजे पर नही पहुँचे थे।

श्रीरामकृष्ण एकाएक खडे हो गये। नरेन्द्र की ओर देखकर बोले, "एक बात है, एक तो यह (देह) है और एक वह (ससार)।"

जीव और ससार। वे ही जाने कि भाव मे वे यह सब क्या देख रहे थे। अवाक् होकर उन्होंने क्या देखा? दो ही एक बात वे कह सके थे—जैसे वेदवाक्य या देववाणी। अथवा जैसे कोई समुद्र के तट पर खडा हुआ अनन्त तरगमालाओ से उठते हुए अनाहत नाद की दो ही एक ध्वनि सुनता है, उसी तरह उस अनन्त ज्ञानराशि से निकले हुए दो ही एक शब्द श्रीरामकृष्ण के पास

खड़े हुए भक्तो ने सुने ।

(६)

नित्यगोपाल से वार्तालाप

गिरीश दरवाजे पर से श्रीरामकृष्ण को ले जाने के लिए आये है। भक्तों के साथ श्रीरामकृष्ण के बिलकुल निकट आ जाने पर गिरीश दण्ड की तरह श्रीरामकृष्ण के पैरो पर गिर पड़े। आज्ञा पाकर उठे, श्रीरामकृष्ण की पदधूलि ली और उन्हे अपने साथ दुमँजले के बैठकखाने मे ले जाकर बैठाया। भक्तो ने भी आसन ग्रहण किया। उन्ही के पास बैठकर उनका वचनामृत पान करने की इच्छा है।

आसन ग्रहण करते हुए श्रीरामकृष्ण ने देखा, एक सवादपत्र पड़ा हुआ था। संवादपत्र मे विषयी मनुष्यो की बाते रहती है— दूसरो की चर्चा, दूसरो की निन्दा, यही सब रहता है, अतएव श्रीरामकृष्ण की दृष्टि मे वह अपवित्र है, उन्होने उसे हटा देने के लिए इशारा किया। कागज के हटाने के बाद उन्होने आसन ग्रहण किया।

नित्यगोपाल ने प्रणाम किया।

श्रीरामकृष्ण– (नित्यगोपाल से)– वहाँ ?—

नित्यगोपाल– जी हाँ, दक्षिणेश्वर मै नही जा सका, शरीर अस्वस्थ था, दर्द है।

श्रीरामकृष्ण– कैसा है तू ?

नित्यगोपाल– अच्छा नही रहता।

श्रीरामकृष्ण– मन को कुछ निम्न स्तर पर लाना।

नित्यगोपाल– आदमी अच्छे नही लगते। कितनी ही बाते लोग कहा करते है— कभी कभी मुझे भय होता है। कभी कभी साहस

भी खूब होता है।

श्रीरामकृष्ण– होगा क्यो नही ? तेरे साथ रहता कौन है ?

नित्यगोपाल– तारक* हमारे साथ रहता है। उसे भी कभी कभी जी नही चाहता।

श्रीरामकृष्ण– नागा कहता था, उसके मठ मे एक सिद्ध था, वह आसमान की ओर नजर उठाये हुए चला जाता था। परन्तु उसका एक साथी चला जाने से उसे बड़ा दुःख हुआ, वह अधीर हो गया।

कहते ही कहते श्रीरामकृष्ण का भाव-परिवर्तन हो गया। किसी एक भाव मे वे निर्वाक् हो गये। कुछ देर बाद कह रहे है, "तू आया है ? मै भी आया हूं।" यह बात कौन समझेगा ? क्या यही देवभाषा है ?

(७)

अवतार के सम्बन्ध में विचार

कितने ही भक्त आये हुए है। श्रीरामकृष्ण के पास बैठे हुए है। नरेन्द्र, गिरीश, राम, हरिपद, चुन्नी, बलराम, मास्टर— कितने ही है।

नरेन्द्र नही मानते कि मनुष्य की देह मे कभी अवतार हो सकता है। इधर गिरीश को ज्वलन्त विश्वास है कि प्रत्येक युग मे ईश्वर का अवतार होता है,— वे मनुष्य की देह धारण करके ससार मे आते है। श्रीरामकृष्ण की बड़ी इच्छा है कि इस सम्बन्ध मे दोनो विचार करे। श्रीरामकृष्ण गिरीश से कह रहे है, "तुम दोनो जरा अंग्रेजी मे विचार करो, मै सुनूंगा।"

विचार आरम्भ हुआ। अंग्रेजी मे न होकर बंगला मे ही होने

---

* श्री तारकानाथ घोषाल— स्वामी शिवानन्दजी।

लगा—वीच-बीच मे अंग्रेजी के दो-एक शब्द निकल जाते थे। नरेन्द्र ने कहा "ईश्वर अनन्त है, उनकी धारणा करना क्या हम लोगों की शक्ति का काम है? वे सब के भीतर है, केवल किसी एक के ही भीतर वे आये है, ऐसी बात नही।"

श्रीरामकृष्ण– (सस्नेह)– इसका जो मत है, वही मेरा भी है। वे सब जगह है; परन्तु इतनी बात है कि शक्ति की विशेषता है। कही तो अविद्याशक्ति का प्रकाश है, कहीं विद्याशक्ति का। किसी आधार मे शक्ति अधिक है, किसी में कम, इसलिए सब आदमी समान नहीं है।

राम– इस तरह के वृथा तर्क से क्या फायदा है?

श्रीरामकृष्ण– नही, नही, इसका एक खास अर्थ है।

गिरीश– तुम्हे कैसे मालूम हुआ कि वे देह धारण करके नही आते?

नरेन्द्र– वे अवाङ्मनसगोचरम् है।

श्रीरामकृष्ण– नही, वे शुद्ध-बुद्धि-गोचर है। शुद्ध वुद्धि और शुद्ध आत्मा, ये एक ही वस्तु हैं। ऋषियो ने शुद्ध बुद्धि के द्वारा शुद्ध आत्मा का साक्षात्कार किया था।

गिरीश– (नरेन्द्र से)– मनुष्य मे उनका अवतार न हो तो समझाये फिर कौन? मनुष्य को ज्ञान-भक्ति देने के लिए वे देह धारण करते है। नही तो शिक्षा कौन देगा?

नरेन्द्र–क्यो? वे अन्तर मे रहकर समझायेगे।

श्रीरामकृष्ण– (सस्नेह)– हॉ, हॉ, अन्तर्यामी के रूप से वे समझायेगे।

फिर घोर तर्क ठन गया। Infinity (अनन्त) के अंश किस तरह होंगे, हैमिल्टन क्या कहते है—हर्बर्ट स्पेन्सर क्या कहते है,

टिन्डल, हक्सले, क्या कह गये है, ये सब बाते होने लगी।

श्रीरामकृष्ण– (मास्टर से)– देखो, यह सब मुझे अच्छा नही लगता।—मै सब वही देख रहा हूँ, विचार अब इस पर क्या करूँ? देख रहा हूँ—वे ही सब है, सब कुछ वे ही हुए है। यह भी है, और वह भी। एक अवस्था मे अखण्ड मे मन और बुद्धि खो जाती है, नरेन्द्र को देखकर मेरा मन अखण्ड मे लीन हो जाता है। (गिरीश से) इसके बारे मे तुम्हारी क्या राय है?

गिरीश– (हँसते हुए)– आप यह मुझसे क्यो पूछते है? इतने ही को छोड मानो और सब कुछ मै जानता हूँ! (सब हँसने लगे)

श्रीरामकृष्ण– दो श्रेणी बिना उतरे मुख से बोला नही जाता।

"वेदान्त—शकर ने जो कुछ समझाया है, वह भी है और रामानुज का विशिष्टाद्वैतवाद भी है।"

नरेन्द्र– विशिष्टाद्वैतवाद क्या है?

श्रीरामकृष्ण– (नरेन्द्र से)–विशिष्टाद्वैतवाद रामानुज का मत है। अर्थात् जीवजगत्-विशिष्ट ब्रह्म। सब मिलकर एक।

"जैसे एक बेल। एक ने उसके खोपड़े को अलग, बीजो को अलग और गूदे को अलग कर लिया था। फिर यह समझने की जरूरत हुई कि बेल वजन मे कितना था। तब सिर्फ गूदा तौलने पर बेल का वजन कैसे पूरा उतर सकता था? क्योकि पूरा वजन समझना है तो खोपडा, बीज और गूदा तीनो ही एक साथ लेने होगे। खोपडे और बीजो को निकालकर गूदे को ही लोग असल चीज समझते है। फिर विचार करके देखो—जिस वस्तु का गूदा है, उसी का खोपड़ा भी है और उसी के बीज भी। पहले नेति नेति करके जाना पडता है, जीव नेति, जगत् नेति इस तरह का विचार करना चाहिए, ब्रह्म ही वस्तु है और सब अवस्तु, फिर

यह अनुभव होता है—जिसका गूदा है, खोपड़ा और बीज भी उसके है; जिसे ब्रह्म कहते हो, उसी से जीव और जगत् भी हुए है। जिसकी नित्यता है, लीला भी उसी की है। इसीलिए रामानुज कहते थे, जीवजगत्-विशिष्ट ब्रह्म। इसे ही विशिष्टाद्वैतवाद कहते है।"

(८)

ईश्वरदर्शन; अवतार प्रत्यक्षसिद्ध

श्रीरामकृष्ण–(मास्टर से)–मै यह प्रत्यक्ष देख रहा हूँ, विचार अब और क्या करना है? मैं देख रहा हूँ, वे ही सब कुछ हुए हैं—वे ही जीव और जगत् हुए है।

"परन्तु चैतन्य के हुए बिना चैतन्य को कोई जान नही सकता। विचार तो तभी तक है जब तक उन्हे कोई पा नही लेता। केवल जवानी जमाखर्च से काम न होगा, मै देख रहा हूँ, वे ही सब कुछ हुए है। उनकी कृपा से चैतन्य लाभ करना चाहिए। चैतन्य लाभ करने पर समाधि होती है, कभी कभी देह भी भूल जाती है, कामिनी और कांचन पर आसक्ति नही रह जाती,—ईश्वरी बातो के सिवा और कुछ नही सुहाता, विषय की बाते सुनकर कप्ट होता है।

"चैतन्य प्राप्त करके ही मनुष्य चैतन्य को जान सकता है।"

श्रीरामकृष्ण मास्टर से कह रहे है—

"मैने देखा है, विचार करने पर एक तरह का ज्ञान होता है, और ध्यान करने पर लोग एक दूसरी तरह उन्हे समझते है। और वे जब खुद दिखा देते है तब वे एक और है।

"वे जब खुद दिखलाते है कि अवतार इस प्रकार होता है, वे जब अपनी मनुष्यलीला समझा देते है, तब विचार करने की जरूरत

नही रह जाती; किसी के समझाने की आवश्यकता नही रहती। "किस तरह — जानते हो? — जैसे अँधेरे कमरे के भीतर दियासलाई घिसने से एकाएक उजाला हो जाता है। उसी तरह एकाएक वे अगर उजाला दे दे तो सब सन्देह अपने आप मिट जाते है। इस तरह विचार करके उन्हे कौन जान सकता है?"

श्रीरामकृष्ण ने नरेन्द्र को पास बुलाकर बैठाया और कुछ प्रश्न करते हुए बडे ही प्यार से बातचीत आरम्भ की।

नरेन्द्र– (श्रीरामकृष्ण से)– तीन-चार दिन तो मैने काली का ध्यान किया, परन्तु कहाँ मुझे तो कही कुछ नही हुआ।

श्रीरामकृष्ण– धीरे-धीरे होगा। काली और कोई नही, जो ब्रह्म है वही काली भी है। काली आद्याशक्ति है। जब वे निष्क्रिय रहती है, तब उन्हे ब्रह्म कहते है और जब वे सृष्टि, स्थिति और प्रलय करती है, तब उन्हे शक्ति कहते है, काली कहते है। जिन्हें तुम ब्रह्म कह रहे हो, उन्हे ही मै काली कहता हूँ।

"ब्रह्म और काली अभेद है। जैसे अग्नि और उसकी दाहिका शक्ति। अग्नि को सोचते ही उसकी दाहिका शक्ति की चिन्ता की जाती है। काली के मानने पर ब्रह्म को मानना पडता है और ब्रह्म को मानने पर काली को।

"ब्रह्म और शक्ति अभेद है, मै उन्हे ही शक्ति—काली कहता हूँ।"

अब रात हो रही है। गिरीश हरिपद से कह रहे है, "भाई, एक गाड़ी अगर ला दो तो बड़ा उपकार मानूँ—थिएटर जाना है।"

श्रीरामकृष्ण– (हँसकर)– देखना, कही भूल न जाना।

(सब हँसते है)

हरिपद– (हँसकर)– मै लाने के लिए जा रहा हूँ, तो ले क्यो

नही आऊँगा ?

गिरीश– आपको छोड़कर भी थिएटर जाना पड़ रहा है।

श्रीरामकृष्ण– नही, दोनो तरफ की रक्षा करनी चाहिए। राजा जनक दोनो बचाकर– संसार तथा ईश्वर–दूध का कटोरा खाली किया करते थे। (सब हँसते है)

गिरीश– सोचता हूँ, थिएटर को उन लड़को के हाथ मे छोड दूँ।

श्रीरामकृष्ण– नहीं नही, यह अच्छा है। बहुतो का इससे उपकार हो रहा है।

नरेन्द्र –(धीमे स्वर मे)–यह (गिरीश) अभी तो ईश्वर और अवतार की बात कर रहे थे, अब इन्हे थिएटर घसीट रहा है।

(९)

ईश्वरदर्शन तथा विचार-मार्ग

श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र को अपने पास बैठाकर एकदृष्टि से उन्हे देख रहे है। एकाएक वे उनके पास और सरककर बैठे। नरेन्द्र अवतार नही मानते तो इससे क्या ? श्रीरामकृष्ण का प्यार मानो और उमड पड़ा। नरेन्द्र की देह पर हाथ फेरते हुए कह रहे है, "'(राधे) तुमने मान किया तो क्या हुआ, हम लोग भी तुम्हारे मान मे तुम्हारे साथ ही है।'

(नरेन्द्र से) "जब तक विचार है, तब तक वे नही मिले। तुम लोग विचार कर रहे थे, मुझे अच्छा नही लग रहा था।

"जहाँ न्योता रहता है, वहाँ शब्द तभी तक सुन पड़ता है जब तक लोग भोजन करने के लिए बैठते नही। तरकारी और पूड़ियाँ आयी नही कि बारह आने गुलगपाड़ा घट जाता है। (सब हँसते है) दूसरी चीजे ज्यो ज्यो आती है, त्यों त्यो आवाज

घटती जाती है। दही आया कि बस सपासप आवाज रह गयी। फिर भोजन हो जाने पर निद्रा।

"जितना ही ईश्वर की ओर बढ़ोगे, विचार उतना ही घटता जायेगा। उन्हे पा लेने पर फिर शब्द या विचार नही रह जाते। तब रह जाती है निद्रा—समाधि।"

यह कहकर नरेन्द्र की देह पर हाथ फेरते हुए स्नेह कर रहे है और 'हरिः ॐ, हरिः ॐ, हरि ॐ' कह रहे है।

वैसा क्यो कह तथा कर रहे है? क्या श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र के अन्दर नारायण का साक्षात् दर्शन कर रहे है? क्या यही मनुष्य मे ईश्वर-दर्शन है? बड़ी आश्चर्य की बात है! देखते ही देखते श्रीरामकृष्ण का बाह्यज्ञान विलीन होने लगा। बहिर्जगत् का होश बिलकुल जाता रहा। शायद यही अर्धबाह्य दशा है जो चैतन्यदेव को हुई थी। अब भी नरेन्द्र के पैर पर श्रीरामकृष्ण का हाथ पड़ा हुआ है मानो किसी बहाने से नारायण का पैर दबा रहे हो—फिर देह पर हाथ फेर रहे है। परमात्मा जाने, इस तरह श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र को नारायण मानकर उनकी सेवा कर रहे थे या उनमे शक्ति का सचार कर रहे थे।

देखते ही देखते और भी भावान्तर होने लगा। नरेन्द्र के आगे हाथ जोडकर कह रहे है, "एक गाना गा तो मै अच्छा हो जाऊँगा,—उठूँगा कैसे! —गौराग के प्रेम मे पूरे मतवाले (ऐ निताई)—"

कुछ देर के लिए वे फिर चित्रवत् हो निर्वाक् रह गये। भावावेश मे मस्त होकर फिर कहने लगे—"सम्हाल कर, राधे—यमुना मे गिर जाओगी— कृष्ण-प्रेमोन्मादिनी!"

भावविभोर हो फिर कह रहे है—"सखी! वंह वन कितनी

दूर है जहाँ मेरे श्यामसुन्दर है ? (श्रीकृष्ण के अग से सुगन्ध निकल रही है) अब मै चल नही सकती ।"

इस समय ससार भूल गया है,— किसी की याद नही है,— नरेन्द्र सामने है, परन्तु उनकी भी याद नही है,—कहाँ वे बैठे है, इसका कुछ भी ज्ञान नही है ! इस समय प्राण मानो ईश्वर मे लीन हो गया है—"मद्‌गतान्तरात्मा !"

"गौरांग के प्रेम मे मस्त !" यह कहते हुए हुंकार देकर श्रीरामकृष्ण एकाएक उठकर खड़े हो गये । फिर बैठकर कहने लगे—"वह एक उजाला आ रहा है, मै देख रहा हूं,— परन्तु किस तरफ से आ रहा है, अभी तक कुछ समझ मे नही आता ।"

अब नरेन्द्र गाने लगे—"दर्शन देकर तुमने मेरे सब दुःख दूर कर दिये । मेरे प्राणो को मुग्ध कर दिया । सप्तलोक तुम्हे पाकर शोक भूल जाता है—फिर हम जैसे दीनहीन की बात ही क्या है !"

गाना सुनते हुए श्रीरामकृष्ण का बाहरी ससार का ज्ञान छूटता जा रहा है । फिर आँखे बन्द हो गयीं, देह निःस्पन्द हो गयी,— श्रीरामकृष्ण समाधिमग्न हो गये ।

समाधि छूटने पर कह रहे है—"मुझे कौन ले जायेगा ?" बालक जैसे साथी के बिना चारो ओर अँधेरा देखता है, यह वही भाव है ।

रात अधिक हो गयी है । फागुन की कृष्णा दशमी है । रात अँधेरी है । श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर-कालीमन्दिर जायेगे । गाड़ी पर बैठे ।

भक्त सब गाड़ी के पास खडे हुए है । श्रीरामकृष्ण को वे बड़ी सावधानी से गाड़ी पर चढ़ा रहे है । इस समय भी श्रीरामकृष्ण भावोन्मत्त हो रहे है ।

गाड़ी चली गयी । भक्तगण अपने अपने घर जा रहें है ।

परिच्छेद ६

कलकत्ते मे श्रीरामकृष्ण

(१)

बलराम के घर में भक्तों के साथ

दिन के तीन बज चुके है। चैत का महीना, धूप कड़ाके की पड़ रही है। श्रीरामकृष्ण दो-एक भक्तो के साथ बलराम के बैठकखाने मे बैठे हुए मास्टर से वार्तालाप कर रहे है।

आज ६ अप्रैल, १८८५, कृष्णा सप्तमी है। श्रीरामकृष्ण कलकत्ते मे भक्तो के यहाँ आये हुए है। वहाँ वे अपने सांगोपागो को देखेगे और नीमू गोस्वामी की गली मे देवेन्द्र के यहाँ जायेगे।

श्रीरामकृष्ण ईश्वर के प्रेम मे दिनरात मतवाले रहते है। सदा ही भावावेश या समाधि होती रहती है। वाहरी ससार मे मन बिलकुल नही है। केवल अन्तरग भक्त जव तक स्वयं को पहचान न सके, तब तक उनके लिए श्रीरामकृष्ण को व्याकुल ही समझिये,—जैसे माता-पिता अक्षम बालक के लिए रहते है और उसे आदमी बनाने के लिए सदैव ही चिन्तित रहा करते है, या जैसे चिड़िया अपने बच्चो का पालनपोषण करने के लिए व्याकुल रहती है।

श्रीरामकृष्ण—(मास्टर से)—मैने कह दिया था कि तीन बजे आऊँगा, इसीलिए आना पडा। परन्तु धूप बडी तेज है।

मास्टर—जी हाँ, आपको तो बड़ा कष्ट हुआ होगा।

भक्तगण श्रीरामकृष्ण को पखा झल रहे है।

श्रीरामकृष्ण—छोटे नरेन्द्र और बाबूराम के लिए मै आया। पूर्ण को तुम क्यो नही लेते आये ?

मास्टर—सभा मे वह नही आना चाहता। उसे भय होता है,

आप पाँच आदमियो के बीच तारीफ करते है, कही उसके घरवालों को न मालूम हो जाय।

श्रीरामकृष्ण– हाँ, यह तो ठीक है; अगर मैं कह भी डालता तो अब न कहूँगा। अच्छा, पूर्ण को तुम धर्म की शिक्षा दे रहे हो, यह वड़ा अच्छा है।

मास्टर– विद्यासागर की पुस्तक मे भी यही वात है कि ईश्वर को हृदय और मन से प्यार करो। इसकी शिक्षा देने से लड़को के अभिभावक अगर नाराज हो तो किया क्या जाय ?

श्रीरामकृष्ण– इनकी पुस्तको मे बाते तो वहुत है, परन्तु जिन लोगो ने पुस्तके लिखी है, वे खुद धारणा नही कर सके। साधु-संग करने पर धारणा होती है। यथार्थ त्यागी साधु अगर उपदेश देता है तो लोगो पर उसका असर अधिक पड़ता है। केवल पण्डितों की लिखी पुस्तके पढ़कर या उनके उपदेश सुनकर उतनी धारणा नही होती। जिसके पास ही गुड़ के घड़े रखे हों, वह अगर रोगी को उपदेश दे कि गुड़ न खाना तो रोगी उसकी वात उतनी नही मानता। अच्छा, पूर्ण की अवस्था कैसी देख रहे हो ? क्या उसे भावावेश होता है ?

मास्टर– भाव की अवस्था बाहर से तो मुझे विशेप नही दीख पडती। एक दिन आपकी वह बात मैंने उससे कही थी।

श्रीरामकृष्ण– कौनसी वात ?

मास्टर– आपने कहा था—छोटा आधार भावावेश को सम्हाल नही सकता, आधार अगर बड़ा हुआ तो उसके भीतर तो भाव खूव होता है, परन्तु वाहर उसके लक्षण प्रकट नही होने पाते। जैसा आपने कहा था,— वड़े तालाव मे हाथी के उतर जाने पर कुछ भी समझ मे नही आता, परन्तु वह अगर किसी गड़ही मे

उत्तर जाय तो उथल-पुथल मचा देता है, पानी की हिलोरे तट पर पछाड खा-खाकर गिरने लगती है।

श्रीरामकृष्ण– बाहर उसका भावावेश नही दिखेगा, उसका स्वभाव कुछ दूसरा ही है, और और लक्षण तो सब अच्छे है न ?

मास्टर– ऑखे खूब उज्ज्वल तथा विशाल है।

श्रीरामकृष्ण– केवल ऑखो के उज्ज्वल होने ही से नही हो जाता। ईश्वरभाववाली ऑखे और होती है। अच्छा तुमने उससे क्या पूछा था ?—– उसके (श्रीरामकृष्ण से साक्षात् होने के) बाद उसे कैसा लगा ?

मास्टर –जी हॉ, बाते हुई थी। वह चार-पॉच दिन से कह रहा है, ईश्वर की चिन्ता करने पर, उनका नाम लेने पर, ऑखो मे ऑसू आ जाते है, —–रोमाच हो जाता है।

श्रीरामकृष्ण—–तो फिर और क्या चाहिए ?

श्रीरामकृष्ण और मास्टर चुप है। कुछ देर बाद मास्टर बोले—– 'वह खडा है—–'

श्रीरामकृष्ण– कौन ?

मास्टर– पूर्ण। जान पड़ता है, अपने घर के दरवाजे के पास खड़ा है, हममे से कोई जाय तो वह दौड़कर हम लोगो को प्रणाम कर ले।

श्रीरामकृष्ण– आहा ! –

श्रीरामकृष्ण तकिये के सहारे विश्राम कर रहे है। मास्टर के साथ एक बारह साल का लडका आया हुआ है। मास्टर के स्कूल मे पढता है, नाम है क्षीरोद। मास्टर कहते है, यह बड़ा अच्छा लड़का है, ईश्वर के नाम से इसे बडा आनन्द होता है।

श्रीरामकृष्ण– (सहास्य)– ऑखे तो हिरण जैसी है।

लडके ने श्रीरामकृष्ण के पैरो पर हाथ रखकर भूमिष्ठ हो प्रणाम किया और बडे भक्ति-भाव से श्रीरामकृष्ण की पद-सेवा करने लगा। श्रीरामकृष्ण भक्तो के सम्वन्ध मे वार्तालाप करने लगे।

श्रीरामकृष्ण– (मास्टर से)– राखाल घर मे है। उसका भी शरीर अच्छा नही है, उसके फोड़ा हुआ है। मैंने सुना है, उसे एक लडका होगा।

पल्टू और विनोद सामने बैठे हुए है।

श्रीरामकृष्ण– (पल्टू से, सहास्य) –तूने अपने वाप से क्या कहा ? (मास्टर से) सुना, इसने यहाँ आने की बात पर अपने वाप को जवाव दे दिया। (पल्टू से) क्यों रे, क्या कहा ?

पल्टू –मैंने कहा, हाँ, मै उनके पास जाया करता हूँ, तो यह कौनसा वुरा काम है ? (श्रीरामकृष्ण और मास्टर हँसे।) अगर जरूरत होगी तो और भी इसी तरह की सुनाऊँगा।

श्रीरामकृष्ण– (सहास्य, मास्टर से)– नही, क्यो जी, इतनी भी कही वढा-चढी होती है ?

मास्टर– जी नही, इतनी वढा-चढी अच्छी नही।

(श्रीरामकृष्ण हँसते है)

श्रीरामकृष्ण– (विनोद से)– तू कैसा है ? वहाँ, दक्षिणेश्वर, तू नहीं गया ?

विनोद– जी, जा रहा था, फिर डर के मारे नही गया। शरीर भी कुछ अस्वस्थ है।

श्रीरामकृष्ण– वहाँ चल तो सही, वहाँ की हवा अच्छी है, चगा हो जायेगा।

छोटे नरेन्द्र आये। श्रीरामकृष्ण मुँह धोने के लिए जा रहे थे। छोटे नरेन्द्र अँगौछा लेकर श्रीरामकृष्ण को पानी देने के लिए

गये। साथ मे मास्टर भी है। छोटे नरेन्द्र पश्चिमवाले वरामदे के उत्तर कोने मे श्रीरामकृष्ण के हाथपैर धो रहे हैं, पास ही मास्टर भी खड़े है।

श्रीरामकृष्ण– वडी कडी धूप है।

मास्टर– जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण– तुम किस तरह वहाँ रहते हो ! ऊपरवाले कमरे मे गरमी नही होती ?

मास्टर– जी हाँ, वड़ी गरमी होती है।

श्रीरामकृष्ण– एक तो तुम्हारी स्त्री को मस्तिष्क की वीमारी है— उसे ठण्डे में रखा करो।

मास्टर– जी हाँ, उसे नीचे के कमरे मे सोने के लिए कह दिया है।

श्रीरामकृष्ण वैठकखाने मे फिर आकर वैठे। मास्टर से पूछ रहे है—'तुम इस रविवार को क्यो नही गये ?'

मास्टर– जी, घर मे भी तो कोई नही है। तिस पर (स्त्री को) मस्तिष्क की बीमारी है। देखनेवाला कोई नही था।

श्रीरामकृष्ण गाडी पर नीमू गोस्वामी की गली से होकर देवेन्द्र के यहाँ जा रहे है। साथ मे छोटे नरेन्द्र, मास्टर और भी दो एक भक्त है। श्रीरामकृष्ण पूर्ण की वात कर रहे है। पूर्ण के लिए वे व्याकुल है।

श्रीरामकृष्ण– (मास्टर से)– वहुत वड़ा आधार है। नही तो अपने लिए जप कैसे करा लेता ! उसे तो ये सब वाते मालूम है ही नहीं।

मास्टर और भक्तगण आश्चर्यभाव से सुन रहे है, श्रीरामकृष्ण ने पूर्ण के लिए वीजमन्त्र का जप किया।

श्रीरामकृष्ण– आज उसे ले आते, लाये क्यो नही ?

छोटे नरेन्द्र को हंसते हुए देखकर श्रीरामकृष्ण भी हंस रहे है और भक्तगण भी हंस रहे हैं। श्रीरामकृष्ण आनन्दपूर्वक छोटे नरेन्द्र की ओर संकेत करके मास्टर से कह रहे है—देखो-देखो, किस तरह हंस रहा है, जैसे कुछ भी नही जानता, परन्तु उसके मन के भीतर जमीन, जोरू, रुपया कुछ नही है। तीनों में से एक भी उसके मन मे नही है। मन से कामिनी और कांचन के बिलकुल गये बिना कभी ईश्वरलाभ नही होता।

श्रीरामकृष्ण देवेन्द्र के यहाँ जा रहे है। दक्षिणेश्वर में देवेन्द्र से एक दिन आप कह रह थे, 'इच्छा होती है एक दिन तुम्हारे यहाँ जाऊं।' देवेन्द्र ने कहा था, 'मै आपसे यही कहने के लिए आया था, इसी रविवार को जाना होगा।' श्रीरामकृष्ण ने कहा, 'परन्तु तुम्हारी आमदनी कम है, अधिक आदमियों को न्योता न देना, और गाड़ी का किराया भी बहुत अधिक है।' देवेन्द्र ने कहा था, 'आमदनी कम है तो क्या हुआ ? ऋणं कृत्वा घृतं पिबेत् (ऋण करके भी घी पीना चाहिए)।' श्रीरामकृष्ण यह सुनकर हंसने लगे। हंसी रुकती ही न थी।

कुछ देर वाद घर पहुँचकर श्रीरामकृष्ण ने कहा—'देवेन्द्र, मेरे लिए भोजन वहुत थोड़ा वनवाना—मेरा स्वास्थ्य ठीक नही है।'

(२)

कामिनीकांचन-त्याग तथा ब्रह्मानन्द

श्रीरामकृष्ण देवेन्द्र के वैठकखाने मे भक्तमण्डली मे वैठे हुए है। वैठकख़ाना एकमंजले पर है। सन्ध्या हो गयी। कमरे मे दिया जल रहा है। छोटे नरेन्द्र, राम, मास्टर, गिरीश, देवेन्द्र, अक्षय,

उपेन्द्र इत्यादि वहुत से भक्त पास वैठे हुए है। श्रीरामकृष्ण एक वालक-भक्त को देखकर आनन्द मे मग्न हो रहे हैं। उसी के सम्वन्ध मे भक्तो से कह रहे है—

"इसमे जमीन, रुपया, स्त्री तीनो मे से एक भी नही है जिससे यह इस संसार मे वँध जाय। इन तीनो मे से एक पर भी मन को रखने से परमात्मा पर मन नही जाता, मन का योग नही होता। इसने कुछ देखा भी था! (भक्त से) क्यो रे, वता तो, क्या देखा था तूने?"

भक्त– (हँसकर)– मैने देखा, विष्ठा के कुछ ढेर पड हुए है। कोई कोई उसके ऊपर वैठे हुए है, कोई उससे कुछ दूर पर।

श्रीरामकृष्ण– ससारी मनुष्यो की यही दशा है, जो ईश्वर को भूले हुए है, इसीलिए इसके मन से सव छूटा जा रहा है। कामिनी और कांचन से मन अगर हट जाय तो फिर चिन्ता ही क्या है?

"उ! कितने आश्चर्य की वात है! मेरा तो यह भाव वहुत कुछ जप और ध्यान करने पर दूर हुआ था। एकदम इतनी जल्दी इसका यह भाव दूर कैसे हो गया! काम का नाश हो जाना क्या कुछ साधारण वात है! छः महीने के वाद मेरी छाती मे कुछ ऐसा होने लगा था कि पेड के नीचे पड़ा हुआ मै रो-रोकर माँ से कहने लगा था—'माँ, अगर कुछ वुरा हुआ तो मै गले मे छुरी मार लूंगा।'

(भक्तो से) "कामिनी और काचन ये दोनो अगर मन से दूर हो गये फिर वाकी ही क्या रहा? तव तो वस ब्रह्मानन्द ही है।"

शशी उस समय पहले ही पहल श्रीरामकृष्ण के पास आने-जाने

लगे थे। वे उस समय विद्यासागर कालेज मे बी. ए के प्रथम वर्ष मे थे। श्रीरामकृष्ण अब उनकी बात कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण– (भक्तों से)– वह जो लड़का आया करता है, कुछ दिन के लिए, देखता हूँ, रुपये की ओर उसका मन कभी कभी चला जाया करेगा; परन्तु कुछ लोगो का मन, देखता हूँ, उधर बिलकुल नही जायेगा। कुछ लड़के विवाह करेंगे ही नही।

भक्तगण चुपचाप सुन रहे है।

श्रीरामकृष्ण– (भक्तो से)– मन से कामिनी और कांचन के गये बिना अवतार को पहचानना मुश्किल है। किसी बैंगनवाले से हीरे का मोल पूछा था। उसने कहा, 'मै इसके बदले मे नौ सेर बैंगन दे सकूँगा। इससे अधिक एक भी नही।'

(सब हँसते है, छोटे नरेन्द्र जोर से हँसते है।)

श्रीरामकृष्ण ने देखा, छोटे नरेन्द्र बात का मर्म बहुत जल्द समझ गये।

श्रीरामकृष्ण– इसकी बुद्धि कितनी सूक्ष्म है! नागा इसी तरह बहुत जल्द समझ जाता था––गीता, भागवत मे जहाँ जो कुछ है, वह समझ लेता था।

"बचपन से ही कामिनी और काचन का त्याग, यह बड़े आश्चर्य की बात है! परन्तु ऐसा बहुत कम आदमियों मे होता है। नही तो पत्थर का मारा आम, जैसे न ठाकुरजी की सेवा मे आता है, न कोई मनुष्य ही खाने की हिम्मत करता है।

"पहले निर्विचार पाप करके फिर बुढ़ापे मे ईश्वर का नाम लेना, यह बुराई की अपेक्षा अच्छा है।

"अमुक मल्लिक की माँ बहुत बड़े घर की लड़की है। वेश्याओं की बात पर उसने पूछा, उनका क्या किसी तरह उद्धार न होगा?

स्वय पहले उसने बहुत तरह के काम किये थे— इसीलिए उसने पूछा। मैने कहा, 'हाँ, होगा अगर आन्तरिक प्रेरणा से व्याकुल होकर वे रोवे और कहें, ऐसा काम अव मैं न करूँगी। केवल हरिनाम करने से क्या? हृदय से व्याकुल होकर रोना चाहिए।'"

(३)

कीर्तनानन्द में श्रीरामकृष्ण

अव ढोल करताल लेकर कीर्तनिया संकीर्तन कर रहा है—

"मैने यह क्या देखा! केशव भारती की कुटी मे, एक अपूर्व ज्योति— श्रीगौरांग की मूर्ति मैने देखी! उनके दोनो नेत्रों से शत शत धाराओ मे प्रेम वह रहा है"— इत्यादि।

श्रीरामकृष्ण को गाना सुनते सुनते भावावेश हो रहा है। कीर्तनिया श्रीकृष्ण के विरह की मारी गोपियो का वर्णन कर रहा है। व्रज की गोपियाँ माधवी कुंजो मे श्रीकृष्ण को खोज रही हैं।

"री माधवी! मेरे माधव को निकाल दे! मेरे माधव को मुझे देकर, विना दामो ही तू मुझे खरीद ले। जल जिस तरह मछलियो का जीवन है, उही तरह माधव भी मेरे जीवन है।"— इत्यादि

श्रीरामकृष्ण वीच वीच मे जोड रहे है— "मथुरा कितनी दूर है— जहाँ मेरा प्राणवल्लभ है?"

श्रीरामकृष्ण समाधिमग्न है, देह निश्चल हो रही है। वडी देर से स्थिर है।

कुछ देर वाद उनकी प्राकृत अवस्था हुई। परन्तु भावावेश अव भी है। इसी अवस्था मे भक्तो की वात कह रहे है। वीच-वीच मे माता से वातचीत भी कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण– (भावस्थ)– माँ, उसे अपनी ओर खीच लो, मै

अब अधिक उसकी चिन्ता नही कर सकता। (मास्टर से) मेरा मन तुम्हारे सम्बन्धी की ओर कुछ खिचा हुआ है।

(गिरीश के प्रति) "तुम गाली-गलौज बहुत करते हो, खैर, यह सब निकल जाना ही अच्छा है। किसी को अधिक बकवाद करने का रोग भी होता है। जितना ही बाहर निकल जाय, उतना ही अच्छा है।

"उपाधि-नाश के समय मे ही शब्द होता है। काठ जलाते समय चटाचट शब्द होता है। सब जल जाने पर फिर शब्द नहीं होता।

"तुम दिन पर दिन शुद्ध होओगे। दिन-दिन तुम्हारी उन्नति होगी। लोगों को देखकर आश्चर्य होगा। मै अधिक न आ सकूँगा, पर इससे क्या, तुम्हारी ऐसे ही वन जायेगी।"

श्रीरामकृष्ण का भाव और भी गहरा होने लगा। फिर माता के साथ वातचीत कर रहे है, "माँ, जो खुद अच्छा है, उसे अच्छा करना कौनसी वडी बात है? माँ, मरे को मारकर क्या होगा? जो पैर जमाये खड़ा है, उसे अगर मार सको तो तुम्हारी महिमा है।"

श्रीरामकृष्ण कुछ स्थिर होकर कुछ ऊँचे स्वर मे कह रहे है, "मै दक्षिणेश्वर से आ रहा हूँ, माँ, मै अब जाता हूँ।" मानो एक छोटा लड़का दूर से माता की आवाज सुनकर जवाव दे रहा है। श्रीरामकृष्ण की देह फिर निःस्पन्द हो गयी, समाधिमग्न होकर वैठे हुए है। भक्तगण अनिमेष लोचनो से चुपचाप देख रहे है।

श्रीरामकृष्ण भावावेश मे फिर कह रहे है—'मै अब पूड़ी न खाऊँगा।' पड़ोस के दो-एक गोस्वामी आये थे, वे चले गये।

(४)

भक्तो के संग में

श्रीरामकृष्ण भक्तो के साथ आनन्दपूर्वक वार्तालाप कर रहे है। चैत का महीना, गरमी जोरो की पड़ रही है। देवेन्द्र कुल्फी-बरफ वनवाकर श्रीरामकृष्ण और भक्तों को दे रहे है। भक्तों को कुल्फी खाकर प्रसन्नता हो रही है। मणि धीरे धीरे कह रहे है— 'Encore! Encore!' (अर्थात् कुल्फी और दो)। सव लोग हँस रहे है। कुल्फी देखकर श्रीरामकृष्ण को विलकुल वच्चे की तरह आनन्द हो रहा है।

श्रीरामकृष्ण– कीर्तन तो वड़ा अच्छा हुआ। गोपियो की दशा का वर्णन अच्छा किया,— 'री माधवी! मेरे माधव को दे।' यह गोपियो के प्रेमोन्माद की अवस्था है। कितना आश्चर्य है! कृष्ण के लिए सव पागल हो रही थी!

एक भक्त एक दूसरे की ओर इशारा करके कह रहे है, 'इनका सखीभाव है— गोपीभाव।' राम ने कहा, 'इनके भीतर दोनो भाव है। मधुरभाव भी है और ज्ञान का कठोर भाव भी है।'

श्रीरामकृष्ण– क्यो जी ?

श्रीरामकृष्ण अव सुरेन्द्र की वातचीत करने लगे।

राम– मैने खवर भेजी थी, परन्तु नही आया, न जाने क्यो ?

श्रीरामकृष्ण– काम से लौटने पर थक जाता है।

एक भक्त– रामवावू आपकी वात लिख रहे है।

श्रीरामकृष्ण– (सहास्य) –क्या लिखा है ?

भक्त– 'परमहस की भक्ति' विपय पर उन्होने लिखा है।

श्रीरामकृष्ण– तो फिर क्या, राम की खूव प्रसिद्धि होगी।

गिरीश– (सहास्य)– इसलिए कि वह आपका चेला है ?

श्रीरामकृष्ण– मेरे चेला-वेला कोई नही, मै तो राम का दासानुदास हूँ।

पड़ोस के कोई कोई आये थे, परन्तु उन्हे देखकर श्रीरामकृष्ण को प्रसन्नता नही हुई। श्रीरामकृष्ण ने एक वार कहा, यह कैसा मुहल्ला है? यहाँ देखता हूँ, कोई नही है।

देवेन्द्र अब श्रीरामकृष्ण को कमरे के अन्दर लिये जा रहे हैं। वहाँ श्रीरामकृष्ण के जलपान का वन्दोबस्त किया गया है। श्रीरामकृष्ण भीतर गये।

श्रीरामकृष्ण प्रसन्नतापूर्वक घर के भीतर से वापस आये और वैठकखाने मे फिर बैठे। भक्तगण पास बैठे हुए है। उपेन्द्र और अक्षय श्रीरामकृष्ण की दोनों ओर बैठे हुए उनकी चरणसेवा कर रहे है। श्रीरामकृष्ण देवेन्द्र के यहाँ की औरतों की बातें कह रहे है––

"औरतें बड़ी अच्छी है, देहात की है न? बड़ी भक्ति है।"

फिर वे अपने आप मे मस्त होकर गाने लगे। कई गाने उन्होने गाये।

(१) आदमी जब तक सहज (सीधा) नही हो जाता तब तक सहज को वह प्राप्त भी नही कर सकता।

(२) दरवेश! तू खड़ा रह, मै तेरे स्वरूप को जरा देख लूँ।

(३) एक ऐसे भाव का फकीर आया है जो हिन्दुओं का देवता और मुसलमानो का पीर है।

गिरीश प्रणाम करके विदा हो गये। श्रीरामकृष्ण ने भी गिरीश को नमस्कार किया।

देवेन्द्र आदि भक्तों ने श्रीरामकृष्ण को गाड़ी पर चढा दिया।

देवेन्द्र ने बैठकखाने के दक्षिण ओर आंगन मे आकर देखा, उनके मुहल्ले का एक आदमी उस समय भी सो रहा था। उन्होने

उसे जगाया। आँखे मलते हुए उठकर उसने पूछा—'क्या श्रीरामकृष्णदेव आये?' सब लोग ठहाका मारकर हँसने लगे। यह आदमी श्रीरामकृष्ण को देखने के लिए उनसे पहले आया था। गरमी लगने के कारण, आंगन मे तख्त पर चटाई विछाकर आराम से सो गया था।

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर जा रहे है। गाड़ी पर मास्टर से आनन्दपूर्वक कह रहे है, "मैने खूब कुल्फी खायी। तुम जब दक्षिणेश्वर आना तो चार-पाँच कुल्फियाँ लेते आना।" श्रीरामकृष्ण मास्टर से फिर कह रहे है, "इस समय इन्ही कुछ बालकों की ओर मन खिचता है,—छोटे नरेन्द्र, पूर्ण और तुम्हारे सम्बन्धी की ओर।"

मास्टर– द्विज की ओर ?

श्रीरामकृष्ण– नही, द्विज तो है ही, उससे बड़ा जो है उसकी ओर।

मास्टर– अच्छा,—

श्रीरामकृष्ण आनन्द से गाड़ी पर जा रहे है।

परिच्छेद ७

श्रीरामकृष्ण का महाभाव

(१)

नित्य-लीलायोग

श्रीरामकृष्ण कलकत्ते मे भक्तो के साथ बलराम के बैठकखाने मे बैठे हुए है। गिरीश, मास्टर और वलराम है, धीरे-धीरे छोटे नरेन्द्र, पल्टू, द्विज, पूर्ण, महेन्द्र मुखर्जी, आदि कितने ही भक्त आये। ब्राह्मसमाज के त्रैलोक्य सान्याल और जयगोपाल सेन भी आये है। स्त्री-भक्तो मे भी वहुत सी स्त्रियॉ आयी हुई है। वे चिक की आड मे बैठी हुई श्रीरामकृष्ण के दर्शन कर रही है। मोहिनीमोहन की स्त्री भी आयी हुई है—लड़के के गुजर जाने पर इनकी पागल जैसी अवस्था हो गयी है। वे तथा उनकी तरह शोकसन्तप्त और भी कितनी ही स्त्रियॉ आयी हुई है,—उन्हें विश्वास है कि श्रीरामकृष्ण के पास अवश्य ही शान्ति मिलेगी।

१२ अप्रैल १८८५। दिन के तीन बजे होंगे।

मास्टर ने आकर देखा, श्रीरामकृष्ण भक्तो के साथ बैठे हुए अपनी साधना और आध्यात्मिक अवस्था की बाते कह रहे है। मास्टर ने आकर श्रीरामकृष्ण को भूमिष्ठ हो प्रणाम किया और उनकी आज्ञा पा उनके पास बैठ गये।

श्रीरामकृष्ण– (भक्तो से)– उस समय— साधना के समय ध्यान करता हुआ मै देखता था, एक आदमी हाथ मे त्रिशूल लिये हुए मेरे पास बैठा रहता था। मुझे डराता था, अगर मै ईश्वर के चरणकमलों मे मन लगाऊँ तो वह वही त्रिशूल भोंक देगा। मन अगर ठीक न रहा तो छाती में घाव हो जाने का डर था।

"कभी माँ ऐसी अवस्था कर देती थी कि नित्य से उतरकर मन लीला मे आ जाता था और कभी लीला से नित्य पर चढ जाता था।

"जब मन लीला मे उतर आता था, तब कभी-कभी दिनरात मै सीताराम की चिन्ता किया करता था। और सदा मुझे सीताराम के रूप भी दीख पड़ते थे,––रामलाला (अष्ट धातुओ से बनी हुई राम की एक छोटी सी मूर्ति) को लिये सदा मै घूमता था, कभी उसे नहलाता था, कभी खिलाता था। मै कभी-कभी राधाकृष्ण के भाव मे रहता था। उन रूपो के सदा दर्शन भी होते थे। कभी फिर गौराग के भाव मे रहता था। यह दो भावो का मेल था––पुरुष और प्रकृति के भावो का। इस अवस्था मे सदा ही गौराग के दर्शन होते थे। फिर यह अवस्था बदल गयी। तब लीला को छोड़कर मन नित्य मे चढ़ गया। सहजन के पत्ते और तुलसी के दल, सब एक जान पडने लगे। फिर ईश्वरी रूप देखना अच्छा नही लगा। मैने कहा, 'तुमसे तो विच्छेद हो जाता है।' तब मैने उनसे अपना मन निकाल लिया। कमरे मे देवी-देवताओ की जितनी तस्वीरे थी, सब हटा दी। केवल उस अखण्ड सच्चिदानन्द–– उस आदिपुरुष की चिन्ता करने लगा। स्वयं दासीभाव से रहने लगा––पुरुष की दासी !

"मैने सब तरह की साधनाएँ की है। साधना तीन तरह की है––सात्त्विक, राजसिक और तामसिक। सात्त्विक साधना मे उन्हे व्याकुल होकर पुकारा जाता है अथवा केवल उनका नाम मात्र लिया जाता है। कोई दूसरी फलाकांक्षा नही रहती। राजसिक साधना मे अनेक तरह की क्रियाएँ करनी पडती है,––इतने बार

पुरश्चरण करना होगा, इतने तीर्थ करने होगे, पचतप करना होगा, षोड़शोपचारों से पूजा करनी होगी, यह सब। तामसिक साधना तमोगुण का आश्रय लेकर की जाती है। जय काली! क्या तू दर्शन न देगी?—यह देख गले मे छुरी मार लूँगा, अगर तू दर्शन न देगी। इस साधना मे शुद्धाचार नही है, जैसे तन्त्रोक्त साधना।

"उस अवस्था मे—साधनावस्था मे—बड़े विचित्र-विचित्र दर्शन होते थे। आत्मा का रमण मैने प्रत्यक्ष किया। मेरी ही तरह का एक आदमी मेरी देह मे समा गया, और षट्पद्मो के हरएक पद्म मे वह रमण करने लगा। छहों पद्म मुँदे हुए थे, उसके रमण के साथ ही हरएक पद्म खुलकर ऊर्ध्वमुख हो जाने लगा। इस तरह मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपुर, अनाहत, विशुद्ध और आज्ञा सब पद्म खिल गये। और मैने प्रत्यक्ष देखा, उनके मुख जो नीचे थे, ऊपर हो गये।

"साधना के समय ध्यान करता हुआ मै अपने पर दीपशिखा के भाव का आरोप करता था,—जब हवा नही रहती है तब वह बिलकुल नही हिलती,—इसी भाव का आरोप करता था।

"ध्यान के गम्भीर होने पर बाहरी ज्ञान का नाश हो जाता है। एक व्याध पक्षी मारने के लिए निशाना साध रहा था। उसके पास ही से वर-बराती, गाड़ी-घोड़े, बाजे-कहार, बडी देर तक जाते रहे, परन्तु उसे कुछ भी होश न था। वह नही समझ सका कि पास से बरात कब निकल गयी।

"एक आदमी अकेला एक तालाब के किनारे मछली मारने के लिए बैठा था। बड़ी देर के बाद बंसी का 'शोला' (Float) हिला, कभी-कभी वह पानी मे कुछ डूब भी जाता था तब उसने बंसी को झपाटे के साथ खीचने की कोशिश की। इसी समय किसी राहगीर

ने आकर उससे पूछा, 'महाशय, अमुक वनर्जी का घर कहाँ है, क्या आप वतला सकेगे ?' उत्तर कुछ भी न मिला। यह आदमी उस समय बसी खीचने की ताक मे था। पथिक ने वार वार उच्च स्वर से कहा, 'महाशय, अमुक वनर्जी का घर क्या आप बतला सकेंगे ?' उधर उस आदमी को होश था ही नही, उसका हाथ कॉप रहा था, वस शोले पर उसकी निगाह थी। तव पथिक नाराज हो वहाँ से चला गया। वह जब बडी दूर चला गया, तब इधर शोला बिलकुल डूव गया और उस आदमी ने झट बसी खीचकर मछली को जमीन पर ला गिराया। तव अँगौछे से मुँह पोछकर पथिक को ऊँची आवाज लगाकर उसने बुलाया—'एजी, सुनो— सुनो।' पथिक लौटना नही चाहता था, कई बार के पुकारने पर वह आया। आते ही उसने कहा, 'क्यो महाशय, अब क्यो आप बुलाते है ?' तव उसने पूछा— 'तुम मुझसे क्या कह रहे थे ?' पथिक ने कहा, 'उस समय इतनी बार पूछा और अब पूछते हो क्या कहा था ?' उसने कहा, 'उस समय शोला डूब रहा था, इसलिए मैने कुछ सुना ही नही।'

"ध्यान मे इस तरह की एकाग्रता होती है, उस समय और कुछ भी नही दीख पड़ता, न कुछ सुन पडता है। कोई छू भी ले तो समझ मे नही आता। देह पर से सॉप चला जाता है और कुछ पता नही चल पाता। जो ध्यान करता है, न वह समझ सकता है और न सॉप।

"ध्यान के गहरे होने पर इन्द्रियो के कुल काम वन्द हो जाते है। मन बहिर्मुख नही रहता, जैसे घर का वाहरी दरवाजा बन्द हो जाय। इन्द्रियो के विषय पॉच है— रूप, रस, गन्ध, स्पर्श, शब्द,— ये बाहर पडे रहते है।

"ध्यान के समय पहले पहल इन्द्रियो के सव विषय सामने आते है--ध्यान के गम्भीर होने पर वे फिर नही आते-- सव वाहर पड़े रहते है। ध्यान करते समय, मुझे कितने ही प्रकार के दर्शन होते थे। मैंने प्रत्यक्ष देखा, सामने रुपये की ढेरी थी। शाल था, एक थाली मे सन्देश थे और दो औरते थी, उनकी नाक मे नथ थी। तव मैंने मन से पूछा-- 'मन तू क्या चाहता है? क्या तू कुछ भोग करना चाहता है?' मन ने कहा, 'नही, मै कुछ भी नही चाहता, ईश्वर के पादपद्मो को छोड मै और कुछ नही चाहता।' स्त्रियो का भीतर-वाहर, सव मुझे दीख पड़ने लगा,-- जैसे शीशे की आलमारियो की कुल चीजे वाहर से दीख पड़ती है। उनके भीतर मैंने देखा-- मल, मूत्र, विष्ठा, कफ, लार, आते, यही सब।"

श्रीयुत गिरीश कभी-कभी कहते थे, 'श्रीरामकृष्ण का नाम लेकर बीमारी अच्छी किया करूँगा।'

श्रीरामकृष्ण-(गिरीश आदि भक्तो से)-जो हीन बुद्धि के है, वे ही सिद्धियाँ चाहते है,-- वीमारी अच्छी करना, मुकद्मा जिताना, पानी के ऊपर से पैदल चले जाना, यह सब। जो शुद्ध भक्त है, वे ईश्वर के पादपद्मो को छोडकर और कुछ नही चाहते। हृदय ने एक दिन कहा, 'मामा, माँ से कुछ शक्ति की प्रार्थना करो -- कुछ सिद्धि माँगो।' मेरा वालक का स्वभाव,-- कालीमन्दिर मे जप करते समय माँ से मैंने कहा, 'माँ, हृदय कुछ शक्ति और सिद्धि माँगने के लिए कहता है।' उसी समय माँ ने दिखलाया,--एक वूढी वेश्या, उम्र चालीस की होगी, सामने से आकर मेरी ओर पीछा करके पाखाना फिरने लगी। माँ ने दिखलाया, विभूति इसी बूढी वेश्या की विष्ठा है। तव मै हृदय के पास जाकर उसे

डॉटने लगा। कहा, 'तूने क्यो मुझे ऐसी वात सिखलायी ? तेरे लिए ही तो मुझे ऐसा हुआ।'

"जिनमे कुछ विभूतियॉ रहती है उन्हे ही प्रतिष्ठा, सम्मान, यह सब मिलता है। वहुतो की इच्छा होती है, मै गुरुआई करूँ,—पॉच आदमी मुझे माने,—शिष्य सेवा करे,— लोग कहेगे, गुरुचरण के भाई का समय आजकल निहायत अच्छा है,— कितने ही लोग जाते है,—चेले-चपाटे भी वहुत से हो गये है,— घर मे चीजो का ढेर लग रहा है— कितनी चीजे लोग ला लाकर दे रहे है,— वह चाहे, तो उसमे ऐसी शक्ति आ जाती है कि कितने ही आदमियो को खिला दे।

"गुरुआई और वेश्यापन दोनो एक है—खाक रुपया-पैसा, लोक-सम्मान, शरीर की सेवा,— इन सव के लिए अपने को वेचना !— जिस शरीर, मन और आत्मा के द्वारा ईश्वर की प्राप्ति होती है, उसी शरीर, मन और आत्मा को जरा सी वस्तु के लिए इस तरह कर रखना अच्छा नही। एक ने कहा था, सावी का यह वडा अच्छा समय चल रहा है— इस समय उसकी पॉचो ऊँगलियॉ घी मे है,— एक कमरा उसने किराये से लिया है,— गोबर,— कण्डे— चारपाई, ये सब अव उसके है, चार वासन भी हो गये है, विस्तरा, चटाई, तकिया, सब कुछ है,— कितने ही आदमी उसके वश मे है,— आते-जाते रहते है। अर्थात् सावी अव वेश्या हो गयी है, इसीलिए उसके सुख की इति नही होती। पहले वह किसी भले आदमी के यहॉ दासी थी; अव वेश्या हो गयी है ! जरा सी वस्तु के लिए अपना सर्वनाश कर डाला।

ब्रह्मज्ञान तथा अभेद-बुद्धि

"साधना के समय ध्यान करते-करते मै और भी बहुत कुछ

देखता था। बेल के पेड़ के नीचे ध्यान कर रहा था, पाप-पुरुष आकर कितने ही तरह के लोभ दिखाने लगा। लड़ाकू गोरे का रूप धारण करके आया था! रुपया, मान, रमण-सुख, बहुत कुछ उसने देना चाहा। मै माँ को पुकारने लगा। बड़ी गुप्त बात है। माँ ने दर्शन दिये, तब मैंने कहा, 'माँ, इसे काट डालो।' माता का वह रूप, भुवनमोहन रूप याद आ रहा है। वह कृष्णमयी * का रूप लेकर मेरे पास आयी थी।—परन्तु उसकी दृष्टि के नर्तन के साथ ही मानो सचार हिल रहा है।"

श्रीरामकृष्ण चुप हो रहे। कुछ देर बाद फिर कह रहे है—"और भी बहुत कुछ है, न जाने कौन मुँह दबा लेता है, कहने नही देता।

"सहजन के पत्ते और तुलसी दल एक जान पड़ते थे। भेद-बुद्धि उसने दूर कर दी थी। वट के नीचे मै ध्यान कर रहा था, उसने दिखलाया, एक दाढीवाला मुसलमान† तश्तरी मे भात लेकर सामने आया। तश्तरी से म्लेच्छो को खिलाकर मुझे भी कुछ दे गया। माँ ने दिखलाया—एक के सिवा दो नही है। सच्चिदानन्द ही अनेक रूपो से विचर रहे है। जीव, जगत्, सब वे ही हुए है। अन्न भी वे ही हुए है।

(गिरीश, मास्टर आदि से) "मेरा बालक-स्वभाव है। हृदय ने कहा, 'मामा, माँ से कुछ शक्ति के लिए कहो,'—बस मैं भी माँ से कहने के लिए चल दिया। ऐसी अवस्था मे उसने रखा है कि जो व्यक्ति पास रहेगा, उसकी बात माननी पड़ती है। छोटा बच्चा जैसे कोई पास न रहने से सब कुछ अन्धकार ही देखता

---

* बलराम बसु की बालिका कन्या।

† मुहम्मद पैगम्बर।

है, मुझे भी वैसा ही होता था। हृदय जब पास न रहता था, तब जान पड़ता था कि अब जान निकलने ही को है। यह देखो, वही भाव आ रहा है। बाते कहते ही कहते मन उद्दीप्त हो रहा है।"

यह कहते ही कहते श्रीरामकृष्ण को भावावेश होने लगा। देश और काल का ज्ञान मिटा जा रहा है। बडी मुश्किल से भाव-संवरण की चेष्टा कर रहे है। भावावेश मे कह रहे है— "अब भी तुम लोगो को देख रहा हूं,— परन्तु यह भासित होता है कि मानो सदा ही तुम लोग इस तरह बैठे हुए हो,— कब आये हो, कहाँ से आये, यह कुछ याद नही।"

श्रीरामकृष्ण कुछ देर स्थिर रहे। कुछ प्रकृतिस्थ होकर कह रहे है, 'पानी पीऊँगा।' समाधि-भग के पश्चात् मन को उतारने के लिए यह बात प्राय· कहा करते है। गिरीश अभी नये आये है, वे नही जानते, इसलिए पानी ले आने के लिए चले। श्रीराम-कृष्ण मना कर रहे है, कहा, 'नही जी, अभी पानी न पी सकूँगा।'

श्रीरामकृष्ण और भक्तगण कुछ देर तक चुप है। अब श्रीराम-कृष्ण मास्टर से बोले— "क्यो जी, मैने क्या अपराध किया जो ये सब गुप्त बाते कह दी।"

मास्टर क्या कहते ? वे चुप है, तब श्रीरामकृष्ण स्वय बोले— "नही, अपराध क्यो होगा ? मैने तुममे श्रद्धा उत्पन्न होने के लिए कहा है।" कुछ देर बाद जैसे बडी प्रार्थना के साथ कह रहे है— 'उनके (पूर्ण आदि के) साथ क्या भेट करा दोगे ?'

मास्टर—(संकुचित होकर)— जी, इसी समय खबर भेजता हूँ।

श्रीरामकृष्ण—(आग्रह से)— वही छोर मिल रहा है।

इसका यह अर्थ है— पूर्ण श्रीरामकृष्ण का सब से पीछे का भक्त है— अन्तिम छोर है, उसके बाद फिर कोई नही।

(२)

श्रीरामकृष्ण का महाभाव

गिरीश और मास्टर आदि के पास श्रीरामकृष्ण अपने महाभाव की अवस्था का वर्णन कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण– (भक्तो से)– उस अवस्था के बाद आनन्द भी जितना है उसके पहले कष्ट भी उतना ही है। महाभाव ईश्वर का भाव है। वह इस शरीर और मन को डाँवाडोल कर देता है, जैसे एक वड़ा हाथी कुटिया मे समा गया हो। कुटिया डाँवाडोल हो जाती है— कभी वह नष्ट भी हो जाती है।

"ईश्वर के लिए जो विरहाग्नि होती है, वह वहुत साधारण नही होती। इस अवस्था के होने पर रूप सनातन जिस पेड़ के नीचे वैठे रहते थे, कहते है, उस पेड़ की पत्तियाँ भी झुलस जाया करती थी। इस अवस्था मे मै तीन दिन तक अचेत पड़ा रहा था। हिलडुल भी नही सकता था, एक ही जगह पर पड़ा रहता था। जव होश आया तव ब्राह्मणी (श्रीरामकृष्ण की आचार्या) मुझे पकड़कर नहलाने के लिए ले गयी; परन्तु हाथ से देह छूने की हिम्मत न थी— देह मोटी चादर से ढँकी रहती थी। उसी चादर पर से मुझे पकड़कर ब्राह्मणी ले गयी थी। देह मे जो मिट्टी लगी हुई थी, वह जल गयी थी।

"जव वह अवस्था आती थी तव मेरुमज्जा के भीतर से जैसे कोई हल चला देता था। 'अब जी गया, अब जी गया' यही रट लगी रहती थी। परन्तु उसके वाद फिर वडा आनन्द होता था।"

भक्तमण्डली आश्चर्यचकित होकर ये बाते सुन रही है।

श्रीरामकृष्ण–(गिरीश से)– तुम्हारे लिए इतने की जरूरत नही। मेरा भाव केवल उदाहरण के लिए है। तुम लोग अनेक

बाते लेकर रहते हो, मै सिर्फ एक को ही लेकर। मुझे ईश्वर को छोड और कुछ अच्छा लगता नही। उनकी इच्छा। (सहास्य) एक डाल वाला पेड़ भी है और पाँच डालियो का पेड़ भी है।
(सब हँसते है)

"मेरी अवस्था उदाहरण के लिए है। तुम लोग संसार-धर्म का पालन करो, अनासक्त होकर। कीच लग जायेगी, परन्तु उसे 'पाँकाल' मछली की तरह झाड डाला करो। कलक के सागर मे तैरो, फिर भी देह मे कलक न छू जायेगा।"

गिरीश– आपका भी तो विवाह हो गया है। (हास्य)

श्रीरामकृष्ण–(सहास्य)–सस्कार के लिए विवाह करना पड़ता है। परन्तु मै सासारिक जीवन कैसे व्यतीत कर सकता? ईश्वर-दर्शन के लिए मेरी व्याकुलता इतनी तीव्र थी कि जब जब मेरे गले मे जनेऊ डाल दिया जाता था, वह आप ही गिर जाता था।—मै सँभाल नही सकता था। एक मत मे है—शुकदेव का विवाह सस्कार के लिए हुआ था। एक कन्या भी शायद हुई थी। (सब हँसते है)

"कामिनी और काचन ही संसार है—ईश्वर को भुला देता है।"

गिरीश– कामिनी और काचन छोडे, तब न?

श्रीरामकृष्ण– उनसे व्याकुल होकर प्रार्थना करो, विवेक के लिए प्रार्थना करो। ईश्वर ही सत्य है और सब अनित्य। इसी को विवेक कहते है। छन्ने से पानी छान लेना चाहिए, इस तरह उसका मैल एक तरफ पड़ा रहता है, अच्छा जल एक तरफ आ जाता है। तुम लोग उन्हे जानकर ससार करना। यही विद्या का ससार कहलाता है।

"देखो न, स्त्रियो मे कितनी मोहिनी शक्ति है—तिस पर

अविद्या-रूपिणी स्त्रियाँ पुरुषो को मानो एक बेवकूफ पदार्थ बना देती है। जब देखता हूँ, स्त्री-पुरुष एक साथ बैठे हुए है तब सोचता हूँ. अहा ! ये बिलकुल ही गये ! (मास्टर की ओर देखकर) हारू इतना अच्छा लडका है, परन्तु वह प्रेतनी के हाथो पडा है ! लाख कहो— 'अरे मेरे हारू, तुम कहाँ गये— हारू तुम कहाँ गये !' कहाँ है हारू ! लोगों ने देखा चलकर, हारू वट के नीचे चुपचाप बैठा हुआ है, न वह रूप है, न वह तेज, न वह आनन्द ! वट की प्रेतनी हारू पर सवार है !

"बीबी अगर कहे, जरा चले तो जाओ, बस आप उठकर खड़े हो गये, अगर कहा— बैठो, तो कहने भर की देर होती है, आप बैठ गये !

"एक उम्मीदवार बड़े बाबू के पास जाते-जाते हैरान हो गया। काम किसी तरह न मिला। बाबू आफिस के बडे बाबू थे। वे कहते थे, 'अभी जगह खाली नही है, मिलते रहना।' इस तरह बहुत समय कट गया। उम्मीदवार हताश हो गया। वह अपने एक मित्र से अपना दुःख रो रहा था। मित्र ने कहा, 'तू भी अक्ल का दुश्मन ही है !— अरे उसके पास क्यो दौड-धूप कर रहा है? गुलाबजान के पास जा, उससे सिफारिश करा, तो काम हो जायेगा।' गुलाबजान बडे बाबू की रखेली है। उम्मीदवार उससे मिला, कहा— 'माँ, तुम्हारे बिना किये न होगा— मै बड़ी विपत्ति मे पड गया हूँ। ब्राह्मण का बच्चा हूँ, कहाँ मारा मारा फिरूँ ? माँ, बहुत दिनो से कामकाज कुछ नही मिला, लडके-बच्चे भूखो मर रहे है, तुम्हारे एक बार के कहने ही से मेरा मनोरथ सिद्ध हो जायगा।' गुलाबजान ने उस ब्राह्मण से पूछा, 'बेटा, किससे कहना होगा ?' उम्मीदवार ने कहा, 'बडे बाबू से

जरा आप कह दें तो मुझे जरूर काम मिल जाय।' गुलावजान ने कहा, 'मैं आज ही बडे वावू से कहकर सव ठीक करा दूंगी।' दूसरे दिन सुवह को उम्मीदवार के पास एक आदमी जाकर हाजिर हुआ। उसने कहा, 'आप आज ही से वड़े वावू के आफिस जाया कीजिये।' बडे बावू ने साहव से कहा, 'ये वडे ही योग्य है, इन्हें काम पर मंने रख लिया है, आफिस का काम ये वड़ी तत्परता के साथ कर सकेंगे।'

"इसी कामिनी और काचन पर सव लोग लट्टू है। परन्तु मुझे यह बिलकुल नही सुहाता। सच कहता हूँ, राम दुहाई, ईश्वर को छोड मै और कुछ नही जानता।"

(३)

सत्य वोलना कलियुग की तपस्या है

एक भक्त– महाराज, सुना है कि एक नया सम्प्रदाय 'नव हुल्लोल' शुरू हुआ है। ललित चटर्जी उसका एक सदस्य हैं।

श्रीरामकृष्ण– इस ससार मे भिन्न मत और मार्ग है, परन्तु ये सव उसी एक ईश्वर तक पहुँचने के अलग अलग रास्ते है, पर आश्चर्य यह है कि हरएक मनुष्य यही सोचता है कि केवल उसी का मत ठीक है, सिर्फ उसी की घडी ठीक समय वताती है।

गिरीश– (मास्टर से)– तुम जानते हो, इसके वारे मे पोप का क्या कहना है ?

"जिस प्रकार हरएक मनुष्य यह समझता है कि उसी की घड़ी ठीक चलती है वैसे ही उसकी धारणा अपने धर्म के वारे मे भी होती है यद्यपि मार्ग अलग अलग होते है।" *

* It is with our judgements as with our watches,
None goes just alike, yet each believes his own.—Pope.

श्रीरामकृष्ण– (मास्टर से)– इसका क्या अर्थ है ?

मास्टर– हरएक व्यक्ति सोचता है कि उसी की घड़ी ठीक समय बताती है, परन्तु यथार्थ बात यह है कि भिन्न-भिन्न घड़ियाँ एक ही समय नही बतलाती ।

श्रीरामकृष्ण– परन्तु घड़ियाँ चाहे जितनी गलत क्यो न हों, सूरज कभी गलती नही करता है। मनुष्य को अपनी घड़ी सूरज से मिला लेनी चाहिए।

एक भक्त– महाराज, अमुक व्यक्ति झूठ बोलता है।

श्रीरामकृष्ण– सत्य बोलना कलियुग की तपस्या है, इस जीवन मे अन्य साधनाओ का अभ्यास करना कठिन है, परन्तु सत्य पर दृढ रहने से मनुष्य ईश्वर को प्राप्त कर लेता है। गोस्वामी तुलसीदासजीने कहा भी है– 'सत्य कथा, ईश्वराधीनता तथा पर-स्त्री को मातृरूप से देखना ये महान् गुण है। अगर इनसे हरि न मिले तो तुलसी को झूठा समझो ।'

"केशव सेन ने अपने पिता का कर्जा अपने ऊपर ले लिया। कोई और होता तो साफ इन्कार कर जाता। मै जोडासाँको मे देवेन्द्र के समाज मे गया और वहाँ देखा कि केशव मच पर बैठा ध्यान कर रहा है। उस समय वह तरुण अवस्था का था। उसे देखकर मैने मथुर बाबू से कहा, 'यहाँ और जितने लोग ध्यान-धारणा कर रहे है उन सब मे इसी तरुण युवक का 'शोला' पानी के नीचे बैठ गया है। मछली मानो कटिया मे मुँह लगाने लगी है।'

"एक आदमी था– उसका नाम मै नही बताऊँगा। वह दस हजार रुपयो के लिए अदालत मे झूठ बोल गया। मुकदमा जीतने के लिए उसने काली माँ के पास मुझसे एक भेट चढवाई। मुझसे

वोला, 'पिताजी, कृपा करके यह भेट माँ को चढ़ा दीजियेगा।' वालक के समान विश्वास करके मैने वह भेट चढा दी।"

भक्त– तो सचमुच वह वडा अच्छा आदमी रहा होगा ?

श्रीरामकृष्ण– नही, वात ऐसी थी, उसकी मुझमे इतनी श्रद्धा थी कि वह जानता था, यदि मै माता के पास भेट चढाऊँगा तो माँ उसकी प्रार्थना अवश्य स्वीकार कर लेगी।

ललित वावू का सकेत करते हुए श्रीरामकृष्ण ने कहा, "क्यों अहंकार पर विजय प्राप्त कर लेना सरल वात है ? ऐसे लोग वहुत कम है, जो अहकार से रहित हो। हाँ! वलराम ऐसा है। (एक भक्त की ओर इशारा करके) और देखो, यह दूसरा है। इसके स्थान पर कोई और होता तो घमण्ड के मारे फूल जाता। वाल मे कघी करके माँग निकालता तथा अनेक प्रकार के तमोगुण उसमे प्रकट हो जाते। अपनी विद्वत्ता पर उसे घमण्ड हो जाता। उस मोटे ब्राह्मण मे (प्राणकृष्ण की ओर सकेत करके) अव भी अहभाव का कुछ लेश है। (मास्टर से) महिम चक्रवर्ती ने वहुत से ग्रन्थ पढे है न ?"

मास्टर– हॉ महाराज, उसने वहुत कुछ पढा है।

श्रीरामकृष्ण– (मुस्कराकर)– मेरी इच्छा है कि उसकी और गिरीश की भेट हो जाती। तव हम लोग उनके वादविवाद का थोडा मजा देखते।

गिरीश– (मुसकराते हुए)– क्या वह ऐसा नही कहता कि साधना के द्वारा सभी लोग भगवान् श्रीकृष्ण के सदृश हो सकते है ?

श्रीरामकृष्ण– नही, विलकुल वैसी वात नही, मगर हॉ, कुछ कुछ वैसी ही।

भक्त– महाराज, क्या सव श्रीकृष्ण के सदृश हो सकते है ?

श्रीरामकृष्ण– ईश्वर का अवतार अथवा जिसमे अवतार के कुछ चिह्न होते है उसे ईश्वर-कोटि कहते है। साधारण मनुष्य को जीव या जीव-कोटि कहते हैं। साधना के बल पर जीव-कोटि ईश्वरानुभव कर सकता है, परन्तु समाधि के वाद वह इस जगत् मे फिर नही लौटता।

"ईश्वर-कोटि मानो एक राजा के लड़के के सदृश होता है। उसके पास मानो सात-मजिला महल के प्रत्येक कमरे की चाबी रहती है, वह सातों मजिलो पर चढ सकता है और इच्छानुसार नीचे उतर भी सकता है। जीव-कोटि एक मामूली अफसर के समान होता है। वह उस महल के कुछ ही कमरो मे प्रवेश कर सकता है; उतना ही उसका क्षेत्र है।

"जनक ज्ञानी थे। उन्होने ज्ञान की उपलब्धि साधना द्वारा की। परन्तु शुकदेव तो ज्ञान की मूर्ति ही थे।"

गिरीश–ओह, ऐसी वात है महाराज ?

श्रीरामकृष्ण– शुकदेव ने साधना के द्वारा ज्ञान प्राप्त नही किया।

"शुकदेव के समान नारद को भी ब्रह्मज्ञान था, परन्तु वे लोगो के शिक्षणार्थ अपने मे भक्ति को भी बनाये रखे। प्रह्लाद की कभी कभी यह धारणा होती थी, 'मै ही ईश्वर हूँ—सोऽहम्।' कभी अपने को ईश्वर का दास समझते थे और कभी उसका वालक। हनुमान की भी यही दशा थी।

"ऐसी उच्च अवस्था की चेष्टा सव लोग चाहे भले ही करें, परन्तु उसे सव प्राप्त नही कर सकते। कुछ बाँस पोले होते है और कुछ अधिक ठोस।"

(४)

कामिनी-कांचन तथा तीव्र वैराग्य

एक भक्त– आपके ये सब भाव तो उदाहरण के लिए है, तो हम लोगो को क्या करना होगा ?

श्रीरामकृष्ण– ईश्वर-प्राप्ति के लिए तीव्र वैराग्य चाहिए। ईश्वर के मार्ग का जिसे विरोधी समझो, उसे उसी समय छोड़ दो। पीछे देगे, यह सोचकर उसे रखना उचित नही। कामिनी और कांचन ईश्वर के मार्ग के विरोधी है, उनसे मन को हटा लेना चाहिए।

"धीमे तिताले पर चलते रहने से न बनेगा। एक आदमी गमछा कन्धे पर रखे नहाने जा रहा था। उसकी स्त्री बोली, 'तुम किसी काम के नही हो, उम्र वढ रही है, अव भी यह सब तुम न छोड़ सके। मुझे छोड़कर तुम एक दिन भी नही रह सकते; परन्तु अमुक को देखो, वह कितना त्यागी है।'

'पति– क्यो उसने क्या किया ?

'स्त्री– उसकी सोलह स्त्रियाँ है, वह एक एक करके सब को छोड रहा है। तुम कभी त्याग न कर सकोगे।

'पति– एक-एक करके त्याग ! अरी पगली, वह त्याग हरगिज न कर सकेगा। जो त्याग करता है वह क्या कभी जरा-जरा-सा त्याग करता है ?

'स्त्री– (हँसकर)– फिर भी वह तुमसे अच्छा है।

'पति– अरी, तू नही समझी। वह क्या त्याग करेगा ? त्याग मै करूँगा, यह देख मै चला।'

"तीव्र वैराग्य यह है। ज्योंही विवेक आया कि उसी समय उसने त्याग किया। गमछा कन्धे पर डाले हुए ही वह चला गया।

संसार का काम ठीक कर जाने के लिए भी नहीं आया। घर की ओर एक वार मुडकर उसने देखा भी नही।

"जो त्याग करेगा, उसमे मन का बल खूब होना चाहिए। डाका मारने का भाव, डाका डालने के पहले डाकू जिस तरह किया करते है—मारो, लूटो, काटो।

"तुम लोग और क्या करोगे? उनकी भक्ति तथा कुछ प्रेम प्राप्त कर दिन पार करते रहना। कृष्ण के चले जाने पर यशोदा पागल की भाँति श्रीमती के पास गयी। उन्हें दु:खित देखकर श्रीमती ने आद्याशक्ति के रूप से उन्हे दर्शन दिया। कहा, 'माँ मुझसे वर की प्रार्थना करो।' यशोदा ने कहा, 'अव और क्या वर लूँ! यह कहो कि मन, वाणी और कर्म से श्रीकृष्ण की सेवा कर सकूँ। इन आँखो से उसके भक्तो के दर्शन हो, जहाँ जहाँ उसने लीला की है, ये पैर वहाँ वहाँ जा सके, ये हाथ उसकी और उसके भक्तो की सेवा करे, सब इन्द्रियाँ उसी के काम मे लगी रहे।'"

यह कहते कहते श्रीरामकृष्ण को भावावेश हो रहा है। एकाएक आप ही आप कह रहे है—'सहारमूर्ति काली या नित्यकाली!'

वड़े कष्ट से श्रीरामकृष्ण ने भाव का वेग रोका। उन्होने कुछ पानी पिया। यशोदा की बात फिर कहने जा रहे है कि महेन्द्र मुखर्जी आ पहुँचे। ये तथा उनके छोटे भाई श्रीयुत प्रिय मुखर्जी अभी थोड़े ही दिनो से श्रीरामकृष्ण के पास आने-जाने लगे है। महेन्द्र की आटे की चक्की है तथा अन्य व्यवसाय भी है। इनके भाई इजीनियर का काम करते थे। इनका काम कर्मचारी सँभालते है, इन्हे यथेष्ट अवकाश है। महेन्द्र की उम्र छत्तीस-सैतीस की होगी और इनके भाई की उम्र चौतीस-पैतीस की। ये केदेटी

मौजे मे रहते है। कलकत्ते के बाग-बाजार मे भी इनका एक मकान है। वही सब लोग रहते है। इनके साथ एक नवयुवक आया-जाया करते है, भक्त है, नाम हरि है। हरि का विवाह तो हो चुका है, परन्तु श्रीरामकृष्ण पर ये बड़ी भक्ति रखते है। महेन्द्र बहुत दिनों से दक्षिणेश्वर नही गये। हरि भी नहीं गये,—आज आये है। महेन्द्र ने भूमिष्ठ होकर श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया। हरि ने भी प्रणाम किया।

श्रीरामकृष्ण– क्यो जी, इतने दिनो तक दक्षिणेश्वर क्यो नही आये ?

महेन्द्र –जी, मै केदेटी गया था, कलकत्ते मे नही था।

श्रीरामकृष्ण– क्यो जी, न तो तुम्हारे लडके-बच्चे है, न किसी की नौकरी करते हो, फिर भी तुम्हे अवकाश नही रहता!

भक्त सब चुप है। महेन्द्र का चेहरा उतर गया।

श्रीरामकृष्ण– (महेन्द्र से) –तुमसे मै इसलिए कहता हूँ कि तुम सरल और उदार हो— ईश्वर पर तुम्हारी भक्ति है।

महेन्द्र– जी, आप तो मेरे भले के लिए ही कह रहे है।

श्रीरामकृष्ण– (सहास्य)– और यहाँ आकर कुछ पूजा भी नही चढ़ानी पड़ती। यदु की माँ ने इस पर कहा— 'दूसरे साधु बस लाओ-लाओ किया करते है। बाबा, तुममे यह बात नही है।' विषयी आदमियो का जी ही निकल आता है अगर उन्हे गाँठ का पैसा खर्च करना पड़े। एक जगह नाटक हो रहा था। एक आदमी को बैठकर सुनने की बड़ी इच्छा थी। उसने झाँककर देखा, तो उसे मालूम हुआ कि यदि कोई बैठकर देखना चाहता है, तो उससे टिकट के दाम लिये जाते है, फिर क्या था—वहाँ से चलता बना। एक दूसरी जगह नाटक हो रहा था, वह वहाँ गया।

पूछने पर मालूम हुआ, वहाँ टिकट नही लगता। वहाँ बडी भीड थी। वह दोनो हाथो से भीड हटाकर बीच महफिल मे पहुँचा। वहाँ अच्छी तरह जमकर मूँछो पर ताव दे-देकर सुनने लगा। (सब हँसते है)

"और तुम्हारे लडके-बच्चे भी नही है कि कहे, मन दूसरी ओर चला जायेगा। एक डिप्टी है, आठ सौ तनख्वाह पाता है। केशव सेन के यहाँ नाटक देखने गया था। मै भी गया था। मेरे साथ राखाल तथा और भी कई आदमी गये थे। मै जहाँ नाटक देखने के लिए बैठा था, वही मेरी बगल मे वे लोग भी बैठे हुए थे। उस समय राखाल उठकर जरा कही बाहर गया। डिप्टी साहब वही आकर डट गये और राखाल की जगह पर उसने अपने छोटे बच्चे को बैठा दिया। मैने कहा, 'यहाँ मत बैठाइये।' मेरी ऐसी अवस्था थी कि जो कोई जैसा कहता था, मुझे वैसा करना पडता था। इसीलिए मैने राखाल को वहाँ बैठाया था। जब तक नाटक हुआ, डिप्टी बराबर अपने बच्चे से बातचीत करता रहा। उसने एक बार भी नाटक नही देखा, और मैने सुना है वह बीबी का गुलाम है, उसके इशारे पर उठता-बैठता है, और एक नक-बैठे बन्दर की शक्ल के बच्चे के लिए उसने नाटक नही देखा। (महेन्द्र से) तुम ध्यान-धारणा करते हो न ?"

महेन्द्र– जी, कुछ करता हूँ।

श्रीरामकृष्ण– कभी कभी आया करो।

महेन्द्र– (सहास्य)– जी, कहाँ कैसी गिरह पडी हुई है, आप जानते ही है। जरा देखियेगा।

श्रीरामकृष्ण– (हँसकर)– पहले आया तो करो।–– तब तो दाब-दूबकर देखूँगा, कहाँ गिरह है–– कहाँ क्या है। तुम आते

क्यो नही ?

महेन्द्र– महाराज, आजकल काम से फुरसत नही मिलती। तिस पर कभी कभी केदेटी के मकान का इन्तजाम करना पड़ता है।

श्रीरामकृष्ण–(महेन्द्र से, भक्तो की ओर इशारे से बतलाकर)– "क्या इनके घर-द्वार नही है ? या कामकाज नही है ? ये किस तरह आया करते है ?

(हरि से) "तू क्यो नही आता ? तेरी बीबी आयी है न ?"

हरि– जी नही।

श्रीरामकृष्ण– तो तू क्यो भूल गया ?

हरि– जी, मै बीमार हो गया था।

श्रीरामकृष्ण– (भक्तो से)– हाँ, दुबला तो हो गया है। इसे भक्ति तो कम है नही, भक्ति की दौड का हाल फिर क्या पूछना !— उत्पाती भक्ति है। (हँस रहे है।)

श्रीरामकृष्ण एक भक्त की स्त्री को 'हाबी की माँ' कहकर पुकारते थे। 'हाबी की माँ' के भाई आये हुए है, कालेज मे पढते है, उम्र कोई बीस साल की होगी। ये क्रिकेट खेलने के लिए जायेगे, इसलिए उठे, उनके साथ उनके छोटे भाई भी उठे, ये भी श्रीरामकृष्ण के भक्त है। कुछ देर बाद द्विज के लौट आने पर श्रीरामकृष्ण ने पूछा— 'तू नही गया ?'

किसी भक्त ने कहा, 'ये गाना सुनेगे इसीलिए चले आये है।' आज ब्राह्म भक्त श्री त्रैलोक्य का गाना होगा। पल्टू भी आ गये। श्रीरामकृष्ण कहते है— 'कौन— अरे ! पल्टू ?'

एक और नवयुवक भक्त आये। इनका नाम पूर्ण है। श्रीरामकृष्ण के कई बार बुलवाने से तो ये आये है। घरवाले इन्हे आने ही नही देते थे। मास्टर जिस स्कूल मे पढाते है, ये वही पाँचवी कक्षा

मे पढते है। इन्होंने श्रीरामकृष्ण को भूमिष्ठ हो प्रणाम किया। श्रीरामकृष्ण उन्हे अपने पास बैठाकर धीरे धीरे वातचीत कर रहे है। मास्टर पास बैठे हुए है। दूसरे भक्त दूसरे ही विचार मे डूवे है। गिरीश एक ओर वैठे हुए केशव-चरित पढ रहे है।

श्रीरामकृष्ण– (पूर्ण से)– यहाँ आया करो।

गिरीश– (मास्टर से)– यह कौन है ?

मास्टर– (विरक्ति से)– लड़का है और कौन है ?

गिरीश– लड़का है यह तो देख ही रहा हूँ।

मास्टर डरे कि कही चार आदमी जान गये और लडके के घर तक खवर फैली तो उसके लिए यह अच्छा न होगा, और इससे मास्टर पर भी दोषारोपण होता है। इसीलिए बच्चे के साथ श्रीरामकृष्ण धीरे धीरे वातचीत कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण– जो कुछ मैने बतलाया था, सव करते जाना।

वच्चा– जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण– स्वप्न मे कुछ देखते हो ?— अग्नि-शिखा, जलती हुई मशाल, सुहागिन स्त्री, स्मशान ?— यह सव देखना वहुत अच्छा है।

वच्चा– आपको देखा है, आप बैठे हुए कुछ कह रहे थे।

श्रीरामकृष्ण– क्या ?— उपदेश ?— अछा क्या सुना, एक कहो तो जरा।

वच्चा– याद नही है।

श्रीरामकृष्ण– नही याद है तो नही सही, यह वहुत अच्छा है। तुम्हारी उन्नति होगी। मुझ पर आकर्षण है न ?

कुछ देर वाद श्रीरामकृष्ण कह रहे है— 'क्या वहाँ नही जाओगे ?' (अर्थात् दक्षिणेश्वर मे)। वच्चा कह रहा है, 'मै यह

नही कह सकता ।'

श्रीरामकृष्ण– क्यो ? वहाँ तुम्हारा कोई आत्मीय है न ?

बच्चा– जी हाँ, परन्तु वहाँ जाने की सुविधा नही है ।

गिरीश केशव-चरित पढ रहे है । ब्राह्म समाज के श्रीयुत त्रैलोक्य ने यह पुस्तक लिखी है । इसमे लिखा है, पहले श्रीराम-कृष्णदेव ससार से विरक्त थे, परन्तु केशव से मिलने के बाद उन्होने अपना मत बदल दिया है । अब श्रीरामकृष्णदेव कहते है कि संसार मे भी धर्म होता है । इसे पढकर किसी किसी भक्त ने श्रीरामकृष्ण से यह बात कही है । भक्तो की इच्छा है कि त्रैलोक्य के साथ इस विषय पर बातचीत हो । श्रीरामकृष्ण को पुस्तक पढकर यह बात सुनायी गयी थी ।

गिरीश के हाथ मे पुस्तक देखकर श्रीरामकृष्ण गिरीश, मास्टर, राम तथा दूसरे भक्तो से कह रहे है—"वे लोग वही लेकर हैं, इसीलिए संसार-ससार रट रहे हैं। कामिनी और कांचन के भीतर है न ! उन्हें पा लेने पर ऐसी बात नही निकलती। ईश्वर का आनन्द मिल जाता है, तब संसार तो काकविष्ठावत् जान पड़ता है। मैं पहले सब से किनाराकशी कर गया था ।—विषयी लोगो का साथ तो छोड़ा, बीच मे भक्तो का सग भी छोड़ दिया था। देखा, सब पटापट कूच कर जाते है (मर जाते है) और यह सुनकर मेरा कलेजा दहलता था—इस समय कुछ कुछ तो आद-मियों मे रहता भी हूं ।"

(५)

सकीर्तन के आनन्द में

गिरीश घर चले गये। फिर आयेगे ।

श्रीयुत जयगोपाल सेन के साथ त्रैलोक्य आ गये। उन्होने

श्रीरामकृष्ण को प्रणाम करके आसन ग्रहण किया। श्रीरामकृष्ण उनसे कुशलप्रश्न कर रहे है। छोटे नरेन्द्र ने आकर भूमिष्ठ हो प्रणाम किया। श्रीरामकृष्ण ने कहा, 'क्यो रे, तू शनिवार को तो फिर नही आया ?' अब त्रैलोक्य का गाना होगा।

श्रीरामकृष्ण– अहा ! उस दिन तुमने आनन्दमयी माता का गाना गाया, कितना सुन्दर गाना था !—और सब आदमियो के गाने अलोने लगते है ! उस दिन नरेन्द्र का गाना भी अच्छा नही लगा। जरा वही गाना गाओ !

त्रैलोक्य गा रहे है—'जय शचीनन्दन !'

श्रीरामकृष्ण मुँह धोने के लिए जा रहे है। स्त्रियाँ चिक के पास व्याकुल भाव से वैठी हुई थी। उनके पास श्रीरामकृष्ण दर्शन देने के लिए जायेगे। त्रैलोक्य का गाना हो रहा है।

श्रीरामकृष्ण कमरे मे लौटकर त्रैलोक्य से कह रहे है— 'जरा आनन्दमयी का गाना गाओ तो।' त्रैलोक्य गा रहे है—

"माता, मनुष्य-सन्तानों पर तुम्हारी कितनी प्रीति है ! जब इसकी याद आती है, तव आँखो से प्रेम की धारा वह चलती है। मैं जन्म से ही तुम्हारे श्रीचरणो मे अपराधी हूँ, फिर भी तुम मेरे मुख की ओर प्रेमपूर्ण नेत्रो से देखकर मधुर स्वर से पुकार रही हो। जव यह वात याद आती है, तव दोनो नेत्रो से प्रेम की धारा वह चलती है। तुम्हारे प्रेम का भार अव मुझसे ढोया नही जाता। जी विकल होकर रो उठता है, तुम्हारे स्नेह को देखकर हृदय विदीर्ण हो जाता है। माँ, तुम्हारे श्रीचरणो मे मैं शरणागत हूँ।"

गाना सुनते ही छोटे नरेन्द्र गम्भीर ध्यान मे मग्न हो रहे है,—शरीर काष्ठवत् जान पड़ता है। श्रीरामकृष्ण मास्टर से

कह रहे है, 'देखो देखो, कितना गम्भीर ध्यान है। वाहरी ससार का ज्ञान बिलकुल नही है।'

गाना समाप्त हो गया। श्रीरामकृष्ण ने त्रैलोक्य से 'दे माँ पागल करे' गाने के लिए कहा। राम ने कहा, 'कुछ हरिनाम होना चाहिए।' त्रैलोक्य गा रहे है, 'मन एक वार हरि कहो।'

मास्टर धीरे धीरे कह रहे है—" 'निताई-गौर तुम दोनो भाई भाई' यह गाना सुनने की श्रीरामकृष्ण की भी इच्छा है।" त्रैलोक्य के साथ भक्तगण भी मिलकर गा रहे है। श्रीरामकृष्ण भी साथ गाने लगे। यह गाना समाप्त होने पर दूसरा गाना शुरू किया गया।—"हरिनाम लेते हुए जिनकी आँखो से आँसू वह चलते है, वे दोनों भाई आये है। जो मार सहकर भी प्रेमदान देने के लिए तैयार रहते है, वे दोनो भाई आये है।"

इसके बाद श्रीरामकृष्ण ने स्वय गाना गाया—"श्रीगौरांग के प्रेम-प्रवाह से नदिया मे उथल-पुथल मची हुई है।"

श्रीरामकृष्ण ने फिर गाया—"हरिनाम लेता हुआ यह कौन जा रहा है? ऐ माधाई, तू जरा देख तो आ।"

गाना हो जाने पर छोटे नरेन्द्र बिदा हुए।

श्रीरामकृष्ण—तू अपने माँ-बाप पर खूब भक्ति किया कर। परन्तु वे अगर ईश्वर के मार्ग मे रोड़े अटकावे, तो उनकी वाते न मानना। खूब दृढता रखना—वह बाप नही साला है, अगर ईश्वर के मार्ग मे विघ्न खडा करता है।

छोटे नरेन्द्र—न जाने क्यो, मुझे भय नही होता।

गिरीश घर से लौट आये। श्रीरामकृष्ण त्रैलोक्य से परिचय करा रहे है। कह रहे है—'तुम लोग कुछ वार्तालाप करो।' दोनो मे कुछ बातचीत हो जाने पर, त्रैलोक्य से कह रहे है, "जरा

वही गाना एक वार और— 'जय शचीनन्दन ।' "

त्रैलोक्य गाने लगे।

(भावार्थ) "हे शचीनन्दन, गुणाकर गौराग, तुम पारस-पत्थर हो। भाव-रस के सागर हो। तुम्हारी मूर्ति कितनी सुन्दर है! और कनक की आभामयी मनोहर आँखे! मृणाल-निन्दित, आजानु-लम्बित, प्रेम-प्रसारित तुम्हारे कर-युगल भी कितने सुकुमार है। प्रेम-रस से भरा, छलकता हुआ रुचिर वदन-कमल, सुन्दर केश, चारु गण्डस्थल भी कितने सुन्दर हैं!— तुम्हारे ईश्वरप्रेम की विकल अवस्था से सर्वांग कितना आकर्षक हो रहा है! तुम महाभाव-मण्डित हो, हरि-रस-रंजित हो रहे हो, आनन्द से तुम्हारा सर्वांग पुलकित हो रहा है। प्रमत्त मातंग की तरह, ऐ हेमकान्ति, तुम्हारे अंग आवेश-विभोर हो रहे है— अनुराग से भरे हुए है। तुम हरिगुण-गायक हो, अलोक-सामान्य हो, भक्ति-सिन्धु के श्रीचैतन्य हो। अहा! 'भाई' कहकर चाण्डाल को भी तुम प्रेमपूर्वक हृदय से लगा लेते हो, दोनो वाहुओं को उठाकर हरि-नाम-कीर्तन करते हुए तुम्हारी आँखो से अविरल आँसुओ की धारा वह चलती है। 'मेरे जीवन-धन वे कहाँ है,' कहकर जव तुम रोदन करते हो, उस समय महा स्वेद होता है— कम्पन होता है, हुकार के साथ गर्जना होती है। पुलकित और रोमांचित होकर तुम्हारा सुन्दर शरीर धूलि-लुण्ठित हो जाता है। ऐ हरि-लीलारस-निकेतन! ऐ भक्ति-रस प्रस्रवण! दीन-जन-वान्धव ऐ, वंग-गौरव! प्रेम-शशिधर ऐ श्री चैतन्य! तुम धन्य हो— तुम धन्य हो!"

'मेरे जीवन-धन वे कहाँ है, कहकर तुम रोदन करते हो,' यह सुनकर श्रीरामकृष्ण भावावेश मे आकर खड़े हो गये,— विलकुल

वाह्य ज्ञान जाता रहा ।

जव कुछ प्राकृत दशा हुई तव वे त्रैलोक्य से विनयपूर्वक कहने लगे— "एक वार वह गाना भी— 'क्या देखा मैंने केशव भारती के कुटीर मे ।' " त्रैलोक्य ने वह गाना भी गाया ।

गाना समाप्त हो गया । सन्ध्या हो आयी । श्रीरामकृष्ण अव भी भक्तों के साथ बैठे हुए है ।

श्रीरामकृष्ण— (राम से)—बाजा नही है । अगर अच्छा वाजा रहा तो गाना खूब जमता है । (हँसकर) बलराम का वन्दोवस्त क्या है, जानते हो ?—ब्राह्मण की गौ !—जो खाय तो कम, पर दूध दे सेरो ! (सब हँसते है) बलराम का भाव है— आप लोग खूब गाइये-बजाइये ! (सब हँसते है)

(६)

श्रीरामकृष्ण तथा विद्या का संसार

सन्ध्या हो गयी है । बलराम के बैठकखाने और बरामदे मे चिराग जल गये । श्रीरामकृष्ण जगन्माता को प्रणाम करके उँगलियों पर बीजमन्त्र का जप कर मधुर स्वर से नाम ले रहे है । भक्तगण चारो ओर बैठे है । वे मधुर नाम सुन रहे है । गिरीश, मास्टर, बलराम, त्रैलोक्य तथा अन्य दूसरे वहुत से भक्त अव भी बैठे है । 'केशव-चरित' ग्रन्थ मे ससार के लिए श्रीरामकृष्ण के मतपरिवर्तन की जो वात लिखी है, त्रैलोक्य के सामने वह प्रसग उठाने के लिए भक्तो ने निश्चय किया । गिरीश ने श्रीगणेश किया ।

वे त्रैलोक्य से कह रहे है— "आपने जो यह लिखा है कि ससार के सम्बन्ध मे इनका (श्रीरामकृष्ण का) मत वदल गया है, वास्तव मे वात वैसी नही, इनका मत परिवर्तित नही हुआ है ।"

श्रीरामकृष्ण– (त्रैलोक्य और दूसरे भक्तों से)– इधर का आनन्द मिलने पर फिर संसार नही सुहाता। ईश्वर का आनन्द मिल गया तो संसार अलोना जान पड़ता है। शाल के मिलने पर फिर वनात अच्छी नही लगती।

त्रैलोक्य– जो लोग सासारिक है, मैने उनकी वात लिखी है। जो लोग त्यागी है, मै उनकी बात नही कहता।

श्रीरामकृष्ण– ये सब तुम लोगो की कैसी वाते है ? जो लोग 'ससार मे धर्म' की रट लगाते है, वे लोग एक वार अगर ईश्वर का आनन्द पा जायॅ, तो उन्हे कुछ भी नही सुहाता। कामो के लिए जो दृढता होती है, वह भी घट जाती है। क्रमश. आनन्द जितना वढता जाता है, उतना ही वे काम करने से थक जाते है,–– केवल उस आनन्द की ही खोज मे रहते है। कहॉ ईश्वरानन्द और कहॉ विषयानन्द और रमणानन्द ! एक वाद ईश्वर के आनन्द का स्वाद पा जाने पर फिर मनुप्य उसी आनन्द की खोज के लिए तुल जाता है,—– संसार रहे, चाहे जाय।

"प्यास के मारे चातक की छाती फटी जाती है, सातो सागर, सारी नदियॉ तथा कुल तालाव पानी से भरे रहते है, फिर भी वह उनका जल नही पीता। स्वाति की बूॅदो के लिए चोच फैलाये रहता है। स्वाति की बूँदों को छोड उसके लिए और सब पानी धूल है।

"कहते है, दोनो ओर वचाकर चलेगे। दुअन्नी भर शराव पीकर आदमी दोनो तरफ की रक्षा चाहे कर ले, परन्तु कसकर शराव पी ले तो कैसे रक्षा हो सकेगी ?

"ईश्वर का आनन्द पा जाने पर फिर और अच्छा नही लगता। तव कामिनी और कांचन की वात हृदय मे चोट कर

जाती है। (श्रीरामकृष्ण कीर्तन के स्वर मे कह रहे है)—'दूसरे आदमियो की और और बाते तो अब अच्छी ही नही लगती।' जब ईश्वर के लिए मनुष्य पागल होता है तब रुपया-पैसा कुछ अच्छा नही लगता।"

त्रैलोक्य—ससार मे रहना है तो धन का भी तो सचय चाहिए। दान-ध्यान आदि संसार मे लगे ही रहते है।

श्रीरामकृष्ण—क्या! पहले धन का संचय करके फिर ईश्वर! और दान-ध्यान-दया भी कितनी! अपनी लड़की के विवाह में तो हजारो रुपयो का खर्च—और पड़ोसी भूखो मरता है, उसे मुट्ठी भर अन्न देते कलेजा चिर जाता है! ससारी मनुष्य दान भी बडे हिसाब से करते है। लोग खाने को नही पाते—तो क्या हुआ, साले मरे या बचें,—मै और मेरे घरवाले बस अच्छे रहे, बस हो गया! सब जीवो पर दया, उनका जबानी जमा-खर्च है।

त्रैलोक्य—ससार मे अच्छे आदमी भी तो है,—पुण्डरीक विद्यानिधि चैतन्यदेव के शिष्य थे। ये ससार मे ही तो थे।

श्रीरामकृष्ण—उसके गले तक शराब आ गयी थी। अगर थोड़ी-सी और पी ली होती तो फिर ससार मे नही रह सकता था।

त्रैलोक्य चुप हो गये। मास्टर गिरीश से अकेले मे कह रहे है—'तो इन्होने जो कुछ लिखा है, वह ठीक नही है।'

गिरीश—तो आपने जो कुछ लिखा है, इस सम्बन्ध मे वह ठीक नही है। क्यो?

त्रैलोक्य—नही क्यो? क्या ये यह नहीं मानते कि ससार मे धर्म होता है?

श्रीरामकृष्ण—होता है, परन्तु ज्ञानलाभ से पश्चात् ससार मे रहना चाहिए,—ईश्वर को प्राप्त करके तब रहना चाहिए। तब

'कलक' के समुद्र मे तैरते रहने पर भी कलक देह मे नही छू जाता। फिर वह कीच के भीतर रहनेवाली मछली की तरह रह सकता है। ईश्वरलाभ के वाद जो ससार है, वह विद्या का ससार है। उसमे कामिनी और काचन का स्थान नहीं है। है केवल भक्ति, भक्त और भगवान। मेरे भी स्त्री है,— घर मे लोटा-थाली भी है,— घुरू और लच्छू को भोजन भी दे दिया जाता है, और फिर जब 'हाबी की माँ' और ये लोग आते है, तब इन लोगो के लिए भी सोचता हूँ।

(७)

श्रीरामकृष्ण तथा अवतार-तत्त्व

एक भक्त– (त्रैलोक्य से)– आपकी पुस्तक मे मैंने देखा, आप अवतार नही मानते। यह चैतन्यदेव के प्रसग मे पाया।

त्रैलोक्य– उन्होने स्वय प्रतिवाद किया है। पुरी मे जब अद्वैत और उनके दूसरे भक्त उन्हे ही भगवान कहकर गाने लगे, तव गाना सुनकर चैतन्यदेव ने अपने घर के दरवाजे बन्द कर लिये थे। ईश्वर के ऐश्वर्य की इति नही है। ये जैसा कहते है, भक्त भगवान का बैठकखाना है, और वात भी यही जॅचती है। वैठक-खाना खूब सजाया हुआ है, तो क्या उसके अतिरिक्त उनके और कोई ऐश्वर्य नही है ?

गिरीश– ये कहते है, प्रेम ही ईश्वर का साराश है। जिस आदमी के भीतर से प्रेम का आविर्भाव होता है, हमे उसी की जरूरत है। ये कहते है, गौ का दूध उसके स्तनो से आता है। अतएव हमे स्तनो की जरूरत है। गौ के दूसरे अगो की आवश्य-कता नही,— उसके पैरो या सीगो की जरूरत नही।

त्रैलोक्य– उनका प्रेम-दुग्ध अनन्त मार्गो से होकर निकलता

है।— उनमे अनन्त शक्ति है।

गिरीश— उस प्रेम के सामने और दूसरी कौनसी शक्ति ठहर सकती है?

त्रैलोक्य— परन्तु फिर भी यदि उस सर्वशक्तिशाली ईश्वर की इच्छा हो तो सब कुछ हो सकता है। सब कुछ उनके हाथ मे है।

गिरीश— और सब शक्तियाँ तो उनकी हैं,— परन्तु अविद्या-शक्ति?

त्रैलोक्य— अविद्या भी कोई वस्तु है! वह तो अभावमात्र है। जैसे अँधेरे मे उजाले का अभाव। इसमे कोई शक नही कि हम प्रेम को बहुत बड़ा मानते है। पर साथ ही वह ईश्वर के लिए केवल एक बूँद के समान है, यद्यपि हमारे लिए समुद्रतुल्य। पर यदि तुम यह कहो कि ईश्वर के सम्बन्ध मे प्रेम अन्तिम शब्द है, तब तो तुम ईश्वर को सीमित कर देते हो।

श्रीरामकृष्ण— (त्रैलोक्य तथा दूसरे भक्तो से)— हाँ, हाँ, यह ठीक है; परन्तु थोड़ीसी शराब के पीने पर जब हमे काफी नशा हो जाता है, तो शराबवाले की दूकान मे कितनी शराब है, इसके जानने की हमे क्या जरूरत? अनन्त शक्ति की खबर से हमे क्या काम?

गिरीश— (त्रैलोक्य से)—आप अवतार मानते है?

त्रैलोक्य— भक्त मे ही भगवान अवतीर्ण होते है, अनन्त शक्ति का आविर्भाव नही होता,— न हो सकता है। ऐसा किसी भी मनुष्य मे नही हो सकता।

गिरीश— यदि अपने बच्चो को 'ब्रह्मगोपाल' कहकर पूजा की जा सकती है, तो क्या महापुरुष को ईश्वर कहकर पूजा नही की जा सकती?

श्रीरामकृष्ण–(त्रैलोक्य से)–अनन्त को लेकर क्यो माथापच्ची कर रहे हो ? तुम्हें छूने के लिए क्या तुम्हारे कुल शरीर को छूना होगा ? अगर गगास्नान करना है तो क्या हरिद्वार से गगासागर तक गगा को छू जाना चाहिए ? 'मै' मरा कि जंजाल दूर हुआ। जब तक 'मै' है, तभी तक भेद-बुद्धि रहती है। 'मै' के जाने पर क्या रहता है यह कोई नही कह सकता,—मुँह से यह बात नही कही जा सकती। जो कुछ है, बस वही है। तब, कुछ प्रकाश यहाँ हुआ है और बचा-खुचा वहाँ,— यह कुछ मुँह से नहीं कहा जाता। सच्चिदानन्द सागर है। उसके भीतर 'मैं' घट है। जब तक घट है तब तक पानी के दो भाग हो रहे है। एक भाग घट के भीतर है, एक बाहर। घट फूट जाने पर एक ही पानी है ! यह भी नही कहा जा सकता— कहे कौन ?

विचार हो जाने पर श्रीरामकृष्ण त्रैलोक्य के साथ मधुर शब्दों मे वार्तालाप कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण– तुम तो आनन्द मे हो ?

त्रैलोक्य– कहाँ ? यहाँ से उठा नही कि फिर ज्यों का त्यो। इस समय अच्छी ईश्वर की उद्दीपना हो रही है।

श्रीरामकृष्ण–जूते पहने रहो तो काँटो के बन मे कोई भय नहीं रहता। 'ईश्वर ही सत्य है और सब अनित्य', इस बोध के रहने पर कामिनी और कांचन का फिर कोई भय नही रह जाता।

त्रैलोक्य को जलपान कराने के लिए बलराम उन्हे दूसरे कमरे मे ले गये। श्रीरामकृष्ण त्रैलोक्य और उनके मत के लोगों की अवस्था भक्तो से कह रहे है। रात के नौ बजे होंगे।

श्रीरामकृष्ण–(गिरीश, मणि और दूसरे भक्तों से)–ये कैसे है, जानते हो ? कुए के एक मेढक ने यह नही देखा कि पृथ्वी

कितनी बड़ी है; वह बस कुआँ पहचानता है। इसीलिए वह यह विश्वास करता ही नही कि पृथ्वी भी कोई चीज है। ईश्वर के आनन्द का पता नही मिला, इसीलिए ससार-ससार रट रहा है।

(गिरीश से) "उनके साथ क्यो बकते हो? वे दोनो मे है। ईश्वर के आनन्द का स्वाद जब तक नही मिलता, तब तक उसकी बाते समझ मे नही आती। पाँच साल के लड़के को क्या कोई रमणसुख समझा सकता है? विषयी लोग जो ईश्वर-ईश्वर रटते है, वह सुनी हुई बात है। जैसे घर की बड़ी दीदी और चाची को आपस मे लड़ाई करते हुए देखकर बच्चे उनसे सीखते है— 'मेरे लिए भगवान है'—'तुझे भगवान की कसम है।'

"खैर, उनका दोष कुछ नही है। क्या सब लोग कभी उस अखण्ड सच्चिदानन्द को प्राप्त कर सकते है? श्रीरामचन्द्र को सिर्फ बारह ऋषियो ने समझा था, सब उन्हे नही समझ सके। अवतार को कोई साधारण मनुष्य सोचते है— कोई साधु समझते है,— दो ही चार आदमी उन्हे अवतार जान सकते है।

"जिसके पास जितनी पूंजी है, उतना ही दाम वह एक चीज के लिए खर्च करता है। एक बाबू ने अपने नौकर से कहा, 'यह हीरा तू बाजार मे ले जा, लौटकर मुझे बतलाना कि कौन कितनी कीमत देता है। पहले बैगनवाले के पास जाना।' नौकर पहले बैगनवाले के पास गया। बैगनवाले ने उसे उलट-पुलटकर देखा और कहा, 'भाई, इसके बदले नौ सेर बैगन मै दे सकता हूँ।' नौकर ने कहा, 'भाई, जरा बढो, भला दस सेर तो दो।' उसने कहा, 'मै बाजार-दर से ज्यादा कह चुका। इतने मे पट जाय तो दे दो।' तब नौकर ने हँसते हुए हीरा लौटाकर बाबू से कहा, 'बैगनवाला नौ सेर से एक भी बैगन अधिक नही देना चाहता।

उसने कहा, मैं बाजार-दर से ज्यादा कह चुका।'

"बाबू ने हँसकर कहा, 'अच्छा अब की बार कपडेवाले के पास ले जा। बेंगनवाला तो बैंगनो मे पड़ा रहता है, वह और कहाँ तक समझेगा। कपडेवाले की पूँजी कुछ अधिक है, देखे जरा---वह क्या कहता है।' नौकर कपड़ेवाले के पास गया और कहा, 'क्यो जी, यह चीज लोगे? क्या दोगे?' कपडेवाले ने कहा, 'हाँ, चीज तो अच्छी है, इससे स्त्रियों का कोई जेवर बन जायेगा। भाई, मं नौ सौ रुपया दे सकता हूँ।' नौकर ने कहा, 'भाई, कुछ और बढो, तो छोड भी दे। अच्छा, हजार तो पूरा कर दो।' कपड़ेवाले ने कहा, 'अब कुछ न कहो, मैंने बाजार-दर से ज्यादा कह दिया है। नौ सौ रुपये से अधिक एक भी रुपया मै न दूँगा।' नौकर लौटकर मालिक के पास हँसते हुए पहुँचा और कहा; 'कपड़ेवाला कहता है—नौ सौ से एक कौडी भी ज्यादा न दूँगा। उसने यह भी कहा कि मैंने बाजार-दर से कीमत ज्यादा कह दी।' तब उसके मालिक ने हँसते हुए कहा, 'अब जौहरी के पास जाओ, देखे, वह क्या कहता है।' नौकर जौहरी के पास गया। जौहरी ने जरा देखकर ही एकदम कहा---'एक लाख दूँगा।'

"संसार मे इन लोगो का धर्म-धर्म चिल्लाना उसी तरह है, जैसे किसी मकान के सब दरवाजे तो बन्द हो और छत के छेद से जरा-सी रोशनी आ रही हो। सिर पर छत के रहने पर क्या कोई सूर्य को देख सकता है? जरासा उजाला आया भी तो क्या हुआ? कामिनी-कांचन छत है। छत को गिराये विना उस दशा मे सूर्य को देखना मुश्किल है। ससारी आदमी मानो घरो मे कैद है।

"अवतार आदि ईश्वर-कोटि है। वे खुली जगहो मे घूम रहे

है। वे कभी ससार मे नही बंधते,—पकड मे नही आते। उनका 'मै' संसारियो का-सा भद्दा 'मै' नही है। ससारियो का अहंकार—ससारियो का 'मै' उसी तरह है, जैसे चारो ओर से चारदीवार और ऊपर छत हो। बाहर की कोई वस्तु नजर नही आती। अवतार-पुरुषो का 'मै' वारीक 'मै' है। इस 'मै' के भीतर से सदा ही ईश्वर दिखलायी देते है। जैसे एक आदमी चारदीवार के एक किनारे पर खड़ा हुआ है, और दीवार के दोनो ओर खुला हुआ खूव लम्वा-चौडा मैदान पडा हुआ है, उस चारदीवार मे एक जगह एक छेद है, जिससे दोनो ओर स्पष्ट दीख पड़ता है। छेद अगर कुछ वडा हुआ तो इधर-उधर आना-जाना भी हो सकता है। अवतार-पुरुपो का 'मै' वही छेदवाली चारदीवार है। चारदीवार के इधर रहने पर भी वही लम्वा मैदान दिखलायी देता है—इसका अर्थ यह है कि शरीर धारण करने पर भी वे सदा योग मे रहते है। फिर अगर इच्छा हुई तो वड़े छेद के उधर जाकर समाधिमग्न भी हो जाते है और छेद वड़ा रहा तो आना-जाना जारी भी रख सकते है। समाधिमग्न होने पर भी उतरकर आ सकते है।"

भक्तमण्डली विस्मय और वड़ी लगन के साथ चुपचाप अवतार-तत्त्व सुन रही है।

परिच्छेद ८

बलराम तथा गिरीश के मकान में

(१)

भक्तों के संग में

शुक्रवार, वैशाख शुक्ल दशमी, २४ अप्रैल, १८८५। श्रीरामकृष्ण आज कलकत्ता आये हुए है। मास्टर ने दिन के एक बजे के लगभग बलराम के बैठकखाने मे जाकर देखा, श्रीरामकृष्ण निद्रा मे है। दो-एक भक्त पास ही विश्राम कर रहे है।

मास्टर एक पंखा लेकर धीरे धीरे हवा करने लगे, श्रीरामकृष्ण की नींद छूटी। ढीली-देह वे उठकर बैठ गये। मास्टर ने भूमिष्ठ हो उन्हे प्रणाम किया और उनकी पदधूलि ली।

श्रीरामकृष्ण–(मास्टर से, सस्नेह)–अच्छे हो? न जाने क्यो, मेरे गले की गिलटी फूल गयी है, पिछली रात से दर्द होता है। क्यो जी, यह कैसे अच्छी हो? (चिन्तित होकर) आम की खट्टी तरकारी वनी थी, और भी कई चीजे वनी थी, थोड़ी-थोड़ीसी सब चीजे मैने खायी। (मास्टर से) तुम्हारी स्त्री कैसी है? उस दिन उसे देखा था, बहुत कमजोर है। कोई ठण्डी चीज थोडी-थोडी-सी दिया करो।

मास्टर–जी, कच्चा नारियल दिया करूँ?

श्रीरामकृष्ण–हॉ, मिश्री का शरवत पिलाना अच्छा है।

मास्टर–मै रविवार से घर चला गया।

श्रीरामकृष्ण–अच्छा किया। घर मे रहने पर तुम्हे सुविधा है, वाप भी है, तुम्हे ससार का काम अधिक न देखना होगा।

वातचीत करते हुए श्रीरामकृष्ण का मुँह सूखने लगा। तव वे

बालक की तरह मास्टर से पूछने लगे— 'मेरा मुँह सूख रहा है, क्या सभी का मुँह सूख रहा है ?'

मास्टर– योगीन्द्र बाबू, क्या आपका भी मुँह सूख रहा है ?

योगीन्द्र– नही, इन्हे गरमी लगी होगी ।

एँड़ेदा के योगीन्द्र श्रीरामकृष्ण के एक अन्तरग त्यागी भक्त है। श्रीरामकृष्ण शिथिल भाव से बैठे हुए है। भक्तों मे कोई कोई हँस रहे है ।

श्रीरामकृष्ण– मै मानो दूध पिलाने के लिए बैठा हूँ। (सब हँसते है) अच्छा, मुँह सूख रहा है, मै नासपाती या जमरूल * खाऊँ ?

बाबूराम– हाँ वही ठीक है। मै जमरूल ले आऊँ ?

श्रीरामकृष्ण– धूप मे अब न जा।

मास्टर पखा झल रहे थे ।

श्रीरामकृष्ण –तुम बड़ी देर से तो—

मास्टर– जी, मुझे कोई कष्ट नही हो रहा है।

श्रीरामकृष्ण– (सस्नेह)– नही हो रहा है ?

मास्टर पास ही के एक स्कूल मे पढाते है। वे एक बजे पढाने से जरा देर के लिए अवसर लेकर आये है। अब स्कूल मे फिर जाने के लिए उठे। श्रीरामकृष्ण की पाद-वन्दना की ।

श्रीरामकृष्ण– (मास्टर से)– इस समय आओगे ?

एक भक्त– स्कूल की छुट्टी अभी नही हुई। ये बीच मे ही चले आये थे ।

श्रीरामकृष्ण– (हँसते हुए)– जैसे गृहिणी,—सात-आठ बच्चे पैदा कर चुकी —ससार मे रातदिन काम करना पड़ता है, —

---

* एक प्रकार का फल ।

परन्तु उसी समय के भीतर एक-एकवार आकर पति की सेवा कर जाती है। (सव हँसते है)

(२)

चार वज जाने पर स्कूल की छुट्टी हो गयी। वलराम वावू के वाहरवाले कमरे मे मास्टर ने आकर देखा, श्रीरामकृष्ण प्रसन्नता-पूर्वक बैठे है। समाचार पाकर भक्त-मण्डली धीरे धीरे एकत्रित हो रही है। छोटे नरेन्द्र और राम आ गये है। नरेन्द्र आये है। मास्टर ने प्रणाम कर आसन ग्रहण किया। कमरे के भीतर से वलराम ने थाली मे मोहनभोग भेज दिया है, इसलिए कि श्रीरामकृष्ण के गले मे गिलटी पड गयी है, वे कड़ा भोजन न कर सकेगे।

श्रीरामकृष्ण– (मोहनभोग देखकर, नरेन्द्र से)– अरे माल आया है— माल-माल ! खा खा ! (सव हँसते है)

दिन ढलने लगा। श्रीरामकृष्ण गिरीश के घर जायेगे। वहाँ आज उत्सव है। श्रीरामकृष्ण वलराम के दुमंजले के कमरे से उतर रहे है। साथ मास्टर है, पीछे और भी दो एक भक्त है। ड्योढी के पास आकर उन्होने एक उत्तर प्रदेश के भिक्षुक को गाते हुए देखा। रामनाम सुनकर श्रीरामकृष्ण खडे हो गये, देखते ही देखते मन अन्तर्मुख होने लगा। इसी भाव मे कुछ देर खड़े रहे। मास्टर से कहा, इसका स्वर वडा अच्छा है। एक भक्त ने भिक्षुक को चार पैसे दिये।

श्रीरामकृष्ण वोसपाड़ा की गली मे घुसे। हसते हुए मास्टर से पूछा, "क्यो जी, क्या कहता है ?—'परमहस-फौज' आ रही है ? साले कहते क्या है !"

(३)

अवतार तथा सिद्ध-पुरुष में भेद

श्रीरामकृष्ण गिरीश के घर पधारे। गिरीश ने और भी वहुत से भक्तो को उस उत्सव मे बुलाया था। वहुत से लोग आये थे। श्रीरामकृष्ण जव आये तो सव लोगों ने उठकर उनका स्वागत किया। मुसकराते हुए उन्होने अपना आसन ग्रहण किया। भक्त लोग उनको घेरकर वैठ गये। गिरीश, महिमाचरण, राम, भवनाथ, वाबूराम, नरेन्द्र, योगेन, छोटे नरेन्द्र, चुनी, वलराम, मास्टर तथा अन्य भक्तगण श्रीरामकृष्ण के साथ वलराम के ही मकान से आये थे।

श्रीरामकृष्ण–(महिम से)–मैने गिरीश से तुम्हारे वारे मे बातचीत की थी, 'वह वहुत गहरा है, तुम सिर्फ घुटने तक हो।' अच्छा, देखे तो भला जो मैने कहा वह ठीक है या नही। म चाहता हूँ कि तुम दोनो मे वहस हो। पर देखो, आपस में समझौता न कर लेना! (सब हँसते है)

गिरीश और महिमाचरण मे वाद-विवाद होने लगा। थोड़ी देर मे राम ने कहा, "अव काफी हो गया। आइये, अव हम लोगो का कीर्तन हो।"

श्रीरामकृष्ण–(राम से)– नही नहीं, इस वाद-विवाद मे वडा अर्थ है। ये लोग इग्लिशमैन है। मै सुनना चाहता हूँ कि ये क्या कहते है।

महिमाचरण कहते थे कि साधना के द्वारा प्रत्येक व्यक्ति श्रीकृष्ण हो सकता है। पर गिरीश कहते थे कि श्रीकृष्ण ईश्वर के अवतार थे और कोई मनुष्य चाहे कितनी भी साधना करे वह कभी अवतार नही हो सकता।

महिम– तुम समझे, मै क्या कहता हूँ ? मै उदाहरण देकर तुम्हे समझाता हूँ। एक बेल का वृक्ष आम का वृक्ष बन सकता है, केवल यदि उसमे कुछ बाधाएँ हटा दी जायँ। और यह योगाभ्यास द्वारा सम्भव है।

गिरीश– तुम चाहे जो कुछ कहो, परन्तु ऐसा न तो योग द्वारा हो सकता है और न किसी और ही तरह से। केवल भगवान श्रीकृष्ण ही कृष्ण हो सकते है। यदि किसी व्यक्ति मे किसी दूसरे व्यक्ति के समस्त भाव है, उदाहरणार्थ श्रीराधा के, तो वह व्यक्ति श्रीराधा के सिवाय और कोई हो ही नहीं सकता। वह स्वय श्रीराधा ही है। इसी प्रकार यदि किसी व्यक्ति मे मै श्रीकृष्ण के समस्त भाव देखूँ तो मै यही निष्कर्ष निकालूँगा कि मै साक्षात् श्रीकृष्ण ही को देख रहा हूँ।

इसके बाद महिमाचरण बहस मे कुछ ढीले पड़ गये और अन्त मे उन्हे गिरीश का ही मत मान लेना पड़ा।

महिम– (गिरीश से)– हाँ, दोनो मत ठीक है। ईश्वर ने ज्ञान-मार्ग बनाया है और भक्ति-मार्ग भी। (श्रीरामकृष्ण की ओर संकेत करके) जैसा आप कहते है भिन्न भिन्न पन्थो से अन्त मे सब मनुष्य एक ही ध्येय को पहुँच जाते है।

श्रीरामकृष्ण– (महिम के प्रति)– देखा तुमने ? जो मैने कहा था वही ठीक निकला।

महिम–हाँ महाराज ! जैसा आप कहते है, दोनो मार्ग ठीक है।

श्रीरामकृष्ण– (गिरीश की ओर सकेत करके)– तुमने देखा नही इसका विश्वास कितना गहरा है ? वह अपना जलपान करना भी भूल गया। यदि तुम उसका मत स्वीकार न करते तो कुत्ते की तरह वह तुम्हारा गला फाड डालता। लेकिन खैर, हम लोगो

को इस वाद-विवाद मे आनन्द आ गया। तुम लोगो ने भी एक दूसरे को जान लिया है और मुझे भी कई वातें मालूम हो गयी।

(४)

कीर्तनानन्द में

इतने मे गवैये लोग आ पहुँचे और वे लोग कमरे के बीच मे बैठ गये। प्रमुख गवैया श्रीरामकृष्ण की ओर देख रहा था कि वे उससे कीर्तन करने का सकेत करे। श्रीरामकृष्ण ने उसे आज्ञा दे दी।

राम– (श्रीरामकृष्ण से)– कृपया उन्हे बता दीजिये कि वे क्या गावें।

श्रीरामकृष्ण– मै क्या बताऊँ ? (कुछ सोचकर) अच्छा, उनसे कहो कि पूर्व-राग (श्रीराधाकृष्ण-मिलन) गावे।

गवैये ने गाना शुरू किया।

"मेरा गोरा (गौरांग), मेरा सर्वस्व जो मनुष्यो मे रत्न है, श्रीराधा का नाम उच्चारण करते ही रोने लगता है, जमीन पर लोटने लगता है— असीम प्रेम से युक्त हो पुन. पुन. उन्ही का नाम जपता है। उसकी प्रेमपूर्ण आँखो से आँसुओ की धारा वह चलती है। वह जमीन पर फिर लोटने लगता है। और उनका नाम उच्चारण करते करते बेहोश हो जाता है। उसे रोमाच हो जाता है। उसके मुँह से केवल एक ही शब्द निकलता है। वसु कहते है, गौराग इतने व्याकुल क्यो है ?"

कीर्तन जारी रहा।

राधा, कृष्ण से यमुना के किनारे कदम्ब के नीचे मिल चुकी है। उनकी सखियाँ अव उनकी मानसिक और शारीरिक अवस्था का वर्णन करती है।

"प्रत्येक क्षण कितने ही बार वे कमरे के भीतर और बाहर जाती है, कैसी बेचैन है, लम्वी लम्बी साँसे भरती है और वही एकटक कदम्व की ओर दृष्टि लगी है। शंका उत्पन्न होती है— क्या वे अपने वड़े-वूढ़ों के डर से भयभीत है अथवा उन्हे कोई विकार हो गया है— कैसी व्याकुल है वे ! अपने वस्त्रों का भी ध्यान नही है। उनके आभूपण इधर-उधर गिर गये है। शरीर कम्पायमान हो रहा है और खेद तो यह है कि अभी वे इतनी अल्प-वयस्क है। ये एक राजकुमारी रही है और किसी की पत्नी भी है; ऐसा क्या है जिसके लिए ये लालायित है। उनके मन मे क्या है— हमे कुछ समझ नही आता। हमे तो इतना ही प्रतीत होता है कि वे चन्द्रमा को पकड़ने के लिए हाथ बढा रही है। चण्डीदास कहते है, राधा, कृष्ण के जाल मे फँस गयी है।"

कीर्तन जारी है।

राधा की सखियाँ उनसे कह रही है—

"ऐ सुकुमारि चन्द्रवदनि राधा, हमे यह तो बताओ तुम्हे कौन-सी व्यथा है ? तुम्हारा मन क्यो, और कहाँ घूम रहा है ? तुम जमीन क्यो कुरेद रही हो ? हमे वताओ तो सही तुम्हारा यह सुकुमार फूल-सा मुखड़ा क्यो कुम्हला गया है ? उसकी कान्ति क्यो फीकी पड गयी है ? उसमे साँवलापन कैसे आ गया है ? तुम्हारी लाल चुँदरी भी जमीन पर गिर पड़ी है। सखि राधा, देखो तो, तुम्हारी आँखे रोते रोते लाल हो गयी है। तुम्हारा कमल-सा मुखड़ा कुम्हला गया है। वताओ तो सही, तुम्हे कौनसा दर्द है और देखो तो, हमारे हृदय भी तो दु:ख से विदीर्ण हुए जा रहे है।"

राधा अपनी सखियों से कहती है— 'मै कृष्ण का मुखडा देखने

के लिए छटपटा रही हूँ ।'

गवैये ने फिर गाया ।

"कृष्ण की बाँसुरी सुनते ही राधा बावली हो गयी थी । वे अपनी सखियो से कहती है, 'वह कौन जादूगर है जो उस कदम्ब-कुज मे रहता है । उसकी बन्सी की ध्वनि एकाएक मेरे कान मे पडती है और हृद्-तन्त्री को झकार देती है, मेरी आत्मा को मानो भेद जाती है । मेरा धर्म न जाने कहाँ भूल जाता है और मैं बावली हो जाती हूँ । इस व्यथित मन और तृषित आँखो से मुझे साँस भी तो लेते नही बनती । कैसा जादू है उसकी बंसरी मे, जिसकी ध्वनि मेरी आत्मा तक को हिला देती है । वह मेरी दृष्टि के बाहर है इससे मेरा हृदय बैठा जाता है । मै घर पर कैसे ठहर सकती हूँ ? मेरी आत्मा उसके लिए छटपटा रही है, कितना दर्द होता है ! उसकी एक झलक—बस एक झलक पाने के लिए मै छटपटा रही हूँ ।' उद्धव कहते है, 'पर राधा, जानती हो, उसे एक बार देख लेने पर फिर तुम क्या जीवित रह सकती हो ?' "

गवैया गाता रहा ।

"राधा का हृदय कृष्ण की एक झलक के लिए व्याकुल है । वे अपनी सखियो से कहती है, 'पहली बार मैने उनकी बंसरी की ध्वनि कदम्ब-कुज से आती हुई सुनी और दूसरे दिन राजगवैये ने भी आकर उनका सन्देशा दिया—मेरी आत्मा तो मचल उठी । दूसरे दिन, ऐ मेरी प्यारी सखि, तुमने उनका दिव्य नाम हमारे सामने लिया । आह ! कैसा मधुर, कैसा मीठा, कैसा सरस है वह पुण्यनाम—कृष्ण । कितने ही विद्वान् लोगो ने भी मुझसे उनके अगणित गुणो का वर्णन किया, पर हाय, मै क्या करूँ ! मै एक

सीधी-सादी वालिका हूँ, और फिर घर में वड़े-बूढे भी तो है। मै क्या करूँ, उन मेरे प्राणसर्वस्व के लिए मेरा प्रेम वढता जा रहा है। उनके विना मै एक क्षण भी कैसे रह सकती हूँ! लेकिन इतने समय के वाद क्या मुझे अब यही दिखेगा कि उनको विना देखे ही मुझे मर जाना होगा-- ये दुखिया अँखियाँ अधखुली रह जायेगी, ऐ सखि, कोई ऐसा उपाय तो वताओ जिससे मै एक वार तो उन्हे देख लूँ। एक ही वार सही।''

श्रीरामकृष्ण ने जैसे ही यह वाक्य सुना--"आह! कैसा मधुर, कैसा मीठा, कैसा सरस है वह पुण्यनाम---कृष्ण" वे अधिक वैठे नही रह सके। वे खड़े हो गये और वाह्यशून्य हो उन्हे गहरी समाधि लग गयी। छोटे नरेन्द्र उनकी दाहिनी ओर खड़े हो गये। श्रीरामकृष्ण जव किंचित् प्रकृतिस्थ हुए तो उन्होने वड़े मधुर स्वर मे श्रीकृष्ण का नाम उच्चारण किया। उनकी आँखो से प्रेमाश्रु वहने लगे और वे फिर वैठ गये।

गवैये का गाना जारी रहा। राधा की एक सखी विशाखा दौड़कर जाती है और श्रीकृष्ण का एक चित्र ले आती है और उसे राधा की आँखो के सामने कर देती है। राधा कहती है, 'मै उन्ही का चित्र देख रही हूँ जिन्हे मैने जमुना के किनारे देखा था। तभी से मेरी यह दशा हो गयी है।' फिर वे कह रही है--

"मै उन्ही का चित्र देख रही हूँ जिन्हे मैने कालिन्दी के तट पर देखा था। जिनका नाम विशाखा ने लिया है वे वही है जिनका यह चित्र है। जिन्होने वाँसुरी वजायी थी, वे ही मेरे प्राणों के प्यारे है। राजगवैये उनका गुणगान मुझसे कर चुके है। उन्होने मेरे हृदय पर जादू कर दिया है। यह और कोई नही, . . वे . . ही . . . है।" यह कहते ही राधा वेहोश हो गयी। थोड़ी देर वाद

जव उनकी सखियाँ उन्हे होश मे लायी तो उनके मुँह से यही निकला, 'सखियो, मुझे उन्ही को दिखा दो जिनकी झलक मैंने अपनी आत्मा मे देखी है।' सखियो ने वादा किया, 'अच्छा, जरूर दिखा देगी।'

अव श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र तथा अन्य भक्तो के साथ वड़े ऊँचे स्वर मे कीर्तन गान करने लगे। उन्होंने गाया—

"देखो, वे दोनों भाई आ गये है जो हरि का नाम लेते लेते रोने लगते है।"

उन्होने फिर कहा—

"और देखो, श्रीगौराग के प्रेम के कारण समस्त नदिया (श्री गौराग का निवासस्थान) झूम रहा है।"

इतना कहकर फिर श्रीरामकृष्ण समाधिमग्न हो गये। समाधि उतरने पर वे अपने आसन पर वैठे गये। 'एम.' की ओर देखकर उन्होने कहा, 'मुझे स्मरण नही कि मै पहले किस ओर मुँह करके वैठा था।' फिर वे भक्तो से वातचीत करने लगे।

(५)

श्रीरामकृष्ण तथा नरेन्द्र। हाजरा की कथा

नरेन्द्र–(श्रीरामकृष्ण से)–हाजरा अव भला आदमी हो गया है।

श्रीरामकृष्ण– तुम नही जानते कि लोग ऐसे भी होते है जिनके मुँह मे तो रामनाम रहता है पर वगल मे छूरी होती है।

नरेन्द्र– महाराज, इस वात मे मै आपसे सहमत नही हूँ। मैंने स्वयं उससे उन वातो की जाँच की जिनके वारे मे लोग शिकायत करते है, पर उसने साफ इन्कार किया।

श्रीरामकृष्ण– वह भक्ति मे जरूर दृढ है। थोडा-वहुत जप भी करता है, पर कभी कभी उसका व्यवहार विचित्र होता है।

गाड़ीवाले का भाड़ा नही देता।

नरेन्द्र– महाराज, नहीं, ऐसी बात नही है। वह कहता था, उसने दे दिया है।

श्रीरामकृष्ण– उसके पास पैसा कहाँ से आया?

नरेन्द्र– रामलाल अथवा और किसी ने दिया होगा।

श्रीरामकृष्ण– क्या तुमने उससे सब बाते विस्तारपूर्वक पूछी थी? एक बार मैंने जगदम्बा से प्रार्थना की थी, 'माँ! यदि हाजरा ढोंगी है, तो बड़ी कृपा होगी यदि तुम यहाँ से उसे हटा दो।' उसके बाद मैंने हाजरा से कह भी दिया था कि मैंने तुम्हारे बारे मे माँ से ऐसी प्रार्थना की है। थोड़े दिनो बाद वह फिर आया और मुझसे कहा, 'देखिये, मै तो अब भी यहाँ बना हूँ।' (श्रीरामकृष्ण तथा अन्य सब हँसे) पर शीघ्र ही कुछ दिनों बाद उसने यहाँ आना बन्द कर दिया।

"हाजरा की बेचारी माँ ने मेरे पास रामलाल द्वारा कहलाया कि मै हाजरा से कह दूँ कि वह कभी कभी जाकर अपनी बूढी माँ को देख आया करे। वह बेचारी करीब करीब अन्धी ही थी और रोती रहती थी। मैने हाजरा को तरह तरह से समझाया कि वह जाकर देख आया करे। मैंने उससे कहा, 'देखो, तुम्हारी माँ वृद्धा है, कम से कम उसे एक बार जाकर तो देख आओ।' पर मेरे कहने पर भी नही गया। अन्त मे वह बेचारी बुढिया रोते रोते मर गयी।"

नरेन्द्र– पर इस बार वह घर जायेगा।

श्रीरामकृष्ण–हाँ हाँ, मुझे मालूम है वह घर जायेगा। वह बड़ा दुष्ट है, धूर्त है, तुम उसे नही जानते। गोपाल कहता था कि हाजरा सीती मे कुछ दिन रहा था। लोग उसके लिए घी लाते थे, चावल

लाते थे और भी तरह तरह की खाद्य-सामग्री उसे लाकर देते थे, पर उसकी उद्दण्डता तो देखो कि वह उन लोगों से कह देता था, 'मै ऐसा मोटा चावल नही खा सकता। मुझे ऐसा खराव घी नहीं चाहिये।' भाटपारा का ईशान भी उसके साथ गया था। उसने ईशान से कहा, 'शौच के लिए पानी ले आओ।' इससे वहाँ के अन्य ब्राह्मण उससे वहुत नाराज हो गये थे।

नरेन्द्र –मैंने उससे वह वात पूछी थी। वह कहता था, ईशान वावू मेरे लिए खुद पानी लाये थे। और इतना ही नही, वह कहता था कि भाटपारा के वहुत से ब्राह्मण लोग भी उसे मान देते है और श्रद्धा करते है।

श्रीरामकृष्ण– (मुसकराते हुए)– वह सव उसके जप और तपस्या का फल था। जानते हो, मनुष्य की शारीरिक बनावट भी उसके चरित्र पर अपना वहुत प्रभाव डालती है। नाटा कद और शरीर मे इधर-उधर गड्ढे या कूबड़ अच्छे लक्षण नही है। जिन लोगो के ऐसे लक्षण होते है उन्हे आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त करने को वहुत समय लगता है।

भवनाथ– खैर महाराज, जाने दीजिये इन वातो को।

श्रीरामकृष्ण– नही, मुझे गलत न समझना। (नरेन्द्र से) तुम कहते हो कि तुम्हे लोगो की पहचान है, इसीलिए यह सब तुम्हे वता रहा हूँ। जानते हो, हाजरा-ऐसे लोगो को मैं किस दृष्टि से देखता हूँ ?

"जिस प्रकार ईश्वर सत्पुरुषो के रूप मे अवतार लेता है उसी प्रकार वह धोखेवाज और दुष्टो के रूप मे भी अवतीर्ण होता है। (महिमाचरण से) क्यो, तुम्हारी क्या राय है ? वैसे तो सभी ईश्वर है।

महिम– हाँ महाराज, सभी ईश्वर है।

(६)

गोपीप्रेम

गिरीश– (श्रीरामकृष्ण से)– महाराज, एकांगी प्रेम क्या चीज है ?

श्रीरामकृष्ण– इसका अर्थ है केवल एक ओर से प्रेम। उदाहरणार्थ, पानी बतक को ढूँढने नही जाता वरन् बतक ही पानी को चाहता है। प्रेम और भी कई प्रकार के होते है, जैसे 'साधारण' 'समजस' और 'समर्थ'। पहला जो 'साधारण' प्रेम है उसमे प्रेमी केवल अपना ही सुख देखता है। वह इस बात की चिन्ता नहीं करता कि दूसरे व्यक्ति को भी उससे सुख है अथवा नही। इस प्रकार का प्रेम चन्द्रावली का श्रीकृष्ण के प्रति था। दूसरा प्रेम जो 'सामजस्य' रूप होता है उसमे दोनो एक दूसरे के सुख के इच्छुक होते हैं। यह एक ऊँचे दर्जे का प्रेम है, परन्तु तीसरा प्रेम सबसे उच्च है। इस 'समर्थ' प्रेम मे प्रेमी अपनी प्रेमिका से कहता है, 'तुम सुखी रहो, मुझे चाहे कुछ भी हो।' राधा मे यह प्रेम विद्यमान था। श्रीकृष्ण के सुख मे ही उन्हे सुख था। गोपियों ने भी यह उच्चावस्था प्राप्त की थी।

"जानते हो गोपियाँ कौन थी ? श्रीरामचन्द्रजी उस घने जंगल मे घूमते थे जिसमे सात हजार ऋषि रहते थे। वे सब श्रीरामजी को देखने के लिए बड़े उत्सुक थे। उन्होने उन सब पर एक दिव्य दृष्टि डाल दी। कुछ पुराणों का कथन है कि बाद मे वे ही सब ऋषि वृन्दावन मे गोपियो के रूप मे अवतीर्ण हुए।"

एक भक्त– महाराज, अन्तरंग किसे कहते है ?

श्रीरामकृष्ण– मै एक उदाहरण देकर समझाता हूँ। एक

सभामण्डप मे भीतर भी खम्भे होते है और वाहर भी। अन्तरग भीतरवाले खम्भो के सदृश है। जो सदैव गुरु के समीप रहते है वे अन्तरग कहलाते है।

(महिमाचरण से) "ज्ञानी अपने लिए न तो ईश्वर का रूप चाहता है, न अवतार ही। श्रीरामचन्द्रजी जव वन मे घूम रहे थे तो उन्होने कुछ ऋषियो को देखा। ऋषियो ने वड़े स्नेह से उनका अपने आश्रम मे स्वागत किया और कहा, 'प्रभो, आज तुम्हारे दर्शन प्राप्त करके हमारा जोवन कृतकृत्य हो गया, पर हम जानते है कि तुम दशरथ के पुत्र हो। भरद्वाज तथा अन्य ऋषि तुमको ईश्वरी अवतार कहते है, पर हमारा वह दृष्टिकोण नही है। हम तो निर्गुण, निराकार सच्चिदानन्द का ध्यान करते है।' श्रीराम यह सुनकर प्रसन्न हुए और मुसकरा दिये।

"ओह! मुझे भी कैसी कैसी मानसिक परिस्थितियो मे से होकर गुजरना पड़ा। मेरा मन कभी कभी निराकार परमेश्वर मे लीन हो जाता था। कितने ही दिन मैने इस अवस्था मे विताये। मैने भक्ति और भक्त का भी त्याग कर दिया था। मै जड़वत् हो गया था। मुझे अपने सिर तक का ध्यान नही था। मै मरणासन्न हो गया था। तब तो मैने रामलाल की चाची * को अपने पास रखने का सोचा था। मैने अपने कमरे से सभी चित्रो को हटाने के लिए कह दिया। जब मुझे बाह्य ज्ञान प्राप्त हुआ और जव मेरा मन उस अवस्था से उतरकर साधारण अवस्था पर आ गया तो मुझे ऐसा अनुभव हुआ कि मानो एक डूवते हुए मनुष्य के समान मेरा दम घुट रहा हो। अन्त मे मैने अपने मन मे कहा, 'मै तो लोगो का अपने पास रहना भी नही सह सकता हूँ, फिर मै जीवित कैसे

* श्रीरामकृष्ण की लीलासहधर्मिणी।

रहूँगा ?' तब मेरा मन एक बार फिर भक्ति और भक्त की ओर झुक गया। मै लोगों से यही लगातार पूछता था कि मुझे क्या हो गया है। भोलानाथ* ने मुझसे कहा, 'आपकी इस मानसिक स्थिति का वर्णन महाभारत मे है।' समाधि-अवस्था से उतरने के वाद फिर भला मनुष्य कैसे रह सकता है? निश्चय ही उसे ईश्वर-भक्ति की आवश्यकता होती है तथा ईश्वर-भक्तो का सग। नही तो वह अपना मन किस वात मे लगायेगा ?"

महिमाचरण– (श्रीरामकृष्ण से)– महाराज, क्या कोई व्यक्ति समाधि की अवस्था से फिर साधारण सासारिक अवस्था पर आ सकता है?

श्रीरामकृष्ण– (महिम से, धीरे से)– मै तुम्हे एकान्त मे समझाऊँगा। केवल तुम्ही इस योग्य हो कि तुमसे कहा जाय।

"कुँवर सिह ने भी मुझसे यही प्रश्न किया था। तुम जानते हो कि जीव और ईश्वर में वडा अन्तर है। उपासना तथा तपस्या द्वारा जीव अधिक से अधिक समाधि-अवस्था प्राप्त कर सकता है। पर फिर वह उस अवस्था से वापस नही आ सकता। परन्तु जो ईश्वर का अवतार होता है वह समाधि-अवस्था से नीचे उतर भी सकता है। उदाहरणार्थ, जीव उसी प्रकार का है जैसे किसी राजा के यहाँ एक अफसर। वह राजा के सातमजिला महल मे अधिक से अधिक वाहर के दरबार तक जा सकता है, परन्तु राजा के लड़के की पहुँच सातो मंजिलों तक होती है, और वह वाहर भी जा सकता है। यह वात हरएक आदमी कहता है कि समाधि की अवस्था से फिर कोई लौट नही सकता, अगर ऐसी वात है तो शकर तथा रामानुज जैसे महात्माओ के वारे मे

* दक्षिणेश्वर-मन्दिर के एक मुन्शी।

तुम क्या कहोगे ? उन्होने 'विद्या का मैं' रखा था।"

महिम– हाँ, यह बात सचमुच ठीक है, नही तो वे इतने बड़े ग्रन्थ कैसे लिख सकते थे ?

श्रीरामकृष्ण– और देखो, प्रह्लाद, नारद तथा हनुमान जैसे ऋषियो के भी उदाहरण है। उन्होने भी समाधि प्राप्ति कर लेने के बाद भक्ति रखी थी।

महिम– हाँ महाराज, यह बात ठीक है।

श्रीरामकृष्ण– बहुतसे लोग ऐसे होते है कि वे दार्शनिक वाद-विवाद मे ही पड़े रहते है और अपने को बहुत बडा समझते है। शायद वे थोडा-बहुत वेदान्त भी जान लेते है, परन्तु यदि किसी मनुष्य मे सच्चा ज्ञान है तो उसमे अहकार नही हो सकता, अर्थात् समाधि-अवस्था मे यदि मनुष्य ईश्वर से एकरूप हो जाय तो उसमे अहकार नही रह जाता। समाधि के बिना सच्चा ज्ञान असम्भव है। समाधि मे मनुष्य ईश्वर से एक हो जाता है। फिर उसमे अहकार नही रह जाता।

"जानते हो यह किस प्रकार से होता है ? देखो, जैसे दोपहर को सूरज बिलकुल ठीक सिर पर होता है। उस समय यदि तुम अपने चारो ओर देखो तो तुम्हे अपनी परछाई नही दिखायी देगी। इसी प्रकार तुममे ज्ञान अथवा समाधि प्राप्त कर लेने के बाद अहंकार की परछाई नही रह जाती।

"परन्तु यदि तुम किसी मे सत्यज्ञान-प्राप्ति के बाद भी अहकार का भास देखो तो समझ लो कि या तो यह 'विद्या का मैं' है अथवा 'भक्ति का मैं' अथवा 'दास मैं', वह 'अविद्या का मैं' नही होता।

"फिर यह भी समझ लो कि ज्ञान और भक्ति दोनो समानान्तर

मार्ग है। इनमे से तुम किसी का भी अनुसरण करो, अन्त में पहुँचोगे ईश्वर को ही। ज्ञानी ईश्वर को एक दृष्टि से देखता है और भक्त दूसरी से। ज्ञानी का ईश्वर तेजोमय होता है और भक्त का रसमय।"

भवनाथ श्रीरामकृष्ण के पास ही बैठे ये सब बाते सुन रहे थे।

भवनाथ– (श्रीरामकृष्ण से)– महाराज, क्या मै एक प्रश्न पूछूँ ? 'चण्डी' को मै ठीक से नही समझ सका। उसमे ऐसा लिखा है कि जगदम्बा सब जीवो का सहार करती है—इसका क्या अर्थ है ?

श्रीरामकृष्ण– यह सब उनकी लीला है। यह विचार मेरे मन मे भी आया करता था, पर बाद मे मै समझ गया कि यह सब माया है। उत्पत्ति और सहार ईश्वर की माया है।

गिरीश श्रीरामकृष्ण तथा अन्य भक्तो को ऊपर छत पर ले गये जहाँ भोजन परोसा गया। आकाश मे अच्छी चाँदनी छिटकी हुई थी। सब भक्त अपने अपने स्थान पर बैठे गये। उन सबके सामने श्रीरामकृष्ण एक आसन पर बैठे। सब लोग बड़े प्रसन्नचित्त थे। श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र को देखकर अत्यन्त प्रसन्न हुए। वे उनके सामने की पंक्ति मे बैठे। बीच-बीच मे श्रीरामकृष्ण उनसे पूछते जाते थे, 'कहो क्या हाल है— आनन्द से होने दो।' श्रीरामकृष्ण भोजन कर ही रहे थे कि बीच मे से उठकर वे नरेन्द्र के पास आये और अपनी थाली मे से कुछ तरबूज का शरबत और दही लेकर उनको दिया और बड़े मधुर शब्दो मे उनसे कहा, 'लो, यह खा लो।' इसके बाद वे फिर अपने आसन पर चले गये।

परिच्छेद ९

नरेन्द्र आदि भक्तों को उपदेश

(१)

नरेन्द्र तथा हाजरा महाशय

श्रीरामकृष्ण बलराम के दुमंजले के बैठकखाने मे भक्तो के बीच मे प्रसन्नतापूर्वक बैठे हुए उनसे वार्तालाप कर रहे है। नरेन्द्र, मास्टर, भवनाथ, पूर्ण, पल्टू, छोटे नरेन्द्र, गिरीश, रामबाबू, द्विज, विनोद आदि बहुत से भक्त चारो ओर से घेरकर बैठे हुए है।

आज शनिवार है। दिन के तीन बजे होगे। वैशाख की कृष्णा दशमी है। ९ मई, १८८५।

बलराम घर मे नही है। शरीर अस्वस्थ होने के कारण वायु-परिवर्तन के लिए मुँगेर गये हुए है। उनकी बडी कन्या ने श्रीरामकृष्ण और भक्तो को बुलाकर महोत्सव किया है। भोजन के पश्चात् श्रीरामकृष्ण जरा विश्राम कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण मास्टर से बार बार पूछ रहे है, 'बताओ तो सही, क्या मै उदार हूँ ?' भवनाथ ने हँसकर कहा, 'ये और क्या कहेगे, चुप रहने के सिवा ?'

उत्तरप्रदेश का एक भिक्षुक गाने के लिए आया। भक्तो ने दो गाने सुने। गाने नरेन्द्र को अच्छे लगे। उन्होने गानेवाले से कहा, 'और गाओ।'

श्रीरामकृष्ण– बस बस, अब रहने दो, पैसे कहाँ है ?—(नरेन्द्र से)— कह तो दिया तूने।

भक्त– (हँसकर)– महाराज, आपको इसने अमीर समझा है। आप तकिये के सहारे बैठे हुए है न— (सब हँसते है)

श्रीरामकृष्ण– (सहास्य)– यह भी तो सोच सकता है कि

वीमार है।

हाजरा के अहंकार की बात होने लगी। किसी कारण से दक्षिणेश्वर के कालीमन्दिर से हाजरा को चला जाना पड़ा।

नरेन्द्र– हाजरा अब मानता है कि उसे अहकार हुआ था।

श्रीरामकृष्ण– इस बात पर विश्वास न करना। दक्षिणेश्वर मे फिर से आने के लिए उस तरह की वाते कह रहा होगा। (भक्तो से) नरेन्द्र केवल यही कहता है कि हाजरा तो वडा अच्छा है।

नरेन्द्र– मे अब भी कहता हूँ।

श्रीरामकृष्ण– क्या इतनी वाते सुनने पर भी ?

नरेन्द्र– दोष कुछ ही है, परन्तु गुण उसमे वहुतसे है।

श्रीरामकृष्ण– हॉ, निष्ठा है। उसने मुझसे कहा—अभी तो मैं तुम्हे नही सुहाता, परन्तु पीछे से फिर मुझे खोजना होगा। श्रीरामपुर से अद्वैतवंश का एक गोस्वामी आया हुआ था। दक्षिणेश्वर मे दो-एक रात रहने की उसकी इच्छा थी। मैंने उसकी खातिर की और उससे रहने के लिए कहा। हाजरा ने कहा, इसे खजाची के पास भेज दो। उसके इस तरह कहने का मतलब यह था कि कही वह गोस्वामी कुछ मॉग बैठे तो हाजरा के हिस्से से ही न देना हो। मैने कहा—'क्यो रे साला, उसे गोस्वामी समझकर मैं तो लम्बी दण्डवत करता हूँ और तू ससार मे रहकर कामिनी और काचन लेकर अव कुछ जप करके इतना अहकार कर रहा है ?—तुझे लज्जा नही आती ?'

"सतोगुण से ईश्वर मिलते है, रजोगुण और तमोगुण ईश्वर से अलग कर देते है। सतोगुण की उपमा सफेद रंग से दी गयी है, रजोगुण की लाल और तमोगुण की काले से। मैने एक दिन हाजरा

से पूछा—‘तुम बताओ, किसमे कितना सतोगुण हुआ है ?’ उसने कहा, ‘नरेन्द्र को सोलह आना और मुझे एक रुपया दो आना।’ मैंने अपने लिए पूछा, ‘मुझमे कितना है ?’ उसने कहा, ‘तुम्हारी तो ललाई अभी हट रही है,—तुम्हे बारह आना है।’ (सब हँसे)

“दक्षिणेश्वर मे बैठकर हाजरा जप करता था और उसी के भीतर से दलाली की भी कोशिश करता था। घर मे कुछ हजार रुपया कर्ज था— उस कर्ज के अदा करने की फिक्र मे था। भोजन पकानेवाले ब्राह्मणो के सम्बन्ध मे उसने कहा था, ‘इस तरह के आदमियो से क्या हम कभी बातचीत करते है ?’

“बात यह है कि थोड़ी भी कामना के रहते ईश्वर को कोई पा नही सकता। धर्म की गति सूक्ष्म है। सुई के छेद मे सूत डाल रहे हो, परन्तु अगर जरा भी सूत उकसा हुआ हो तो छेद के भीतर कदापि नही जा सकता।

“तीस साल तक लोग माला फेरते रहते है, फिर भी कुछ नहीं होता—क्यो ?

“विषैला घाव होने पर कण्डे की आग से सेका जाता है। साधारण दवा से आराम नही होता।

“कामना के रहते हुए चाहे जितनी साधना करो, सिद्धि नही मिल सकती। परन्तु एक बात है, ईश्वर की कृपा होने पर, उनकी दया होने पर क्षण भर मे सिद्धि मिलती है, जैसे हजार साल का अन्धेरा कमरा— एकाएक अगर कोई दिया ले जाता है तो क्षण भर मे प्रकाशित हो जाता है।

“जैसे गरीब का लड़का बडे आदमी की दृष्टि मे पड़ गया हो, उसके साथ उसने अपनी लडकी का विवाह कर दिया। एक साथ ही गाडी-घोडे, दास-दासी, माल-असबाब, घर-द्वार,

सब कुछ हो गया।"

एक भक्त– महाराज, कृपा किस तरह होती है?

श्रीरामकृष्ण– ईश्वर बालस्वभाव है, जैसे कोई लड़का अपनी धोती के पल्ले मे रत्न भरे बैठा हो। कितने ही आदमी रास्ते से चले जा रहे है। उससे बहुतेरे रत्न माँग रहे है, परन्तु वह कपड़े मे हाथ डाले हुए कहता है, 'नही, मै न दूँगा।' पर किसी एक ने चाहा ही नही, अपने रास्ते चला जा रहा है। उसके पीछे दौडकर उसने उसकी स्वय खुशामद करके उसे रत्न दे दिये।

"त्याग के बिना ईश्वर नही मिलते।

"मेरी बात कौन लेता है? मै आदमी खोज रहा हूँ,—अपने भाव का आदमी। जिसे अच्छा भक्त देखता हूँ, उसके लिए सोचता हूँ कि वह शायद मेरा भाव ले सके। फिर देखता हूँ, वह एक दूसरे ढँग का हो जाता है।

"एक भूत अपना साथी खोज रहा था। शनिवार या मगल को अपघात मृत्यु होने पर भूत होता है। भूत जब कभी देखता था कि शनिवार या मगल को उसी तरह किसी की मृत्यु होने-वाली है तब उसके पास दौड़ जाता था। सोचता था, अब मुझे एक साथी मिला। परन्तु वह उसके पास गया नही कि वह आदमी उठकर बैठ जाता था। छत से गिरकर कोई बेहोश हुआ भी इसी तरह होश मे आ जाता था।

"मथुरबाबू को भावावेश हुआ। वे सदा मतवाले की तरह रहते थे— कोई काम न कर सकते थे। तब लोग कहने लगे, 'इस तरह रहोगे तो जायदाद कौन सम्हालेगा? छोटे भट्टाचार्य (श्रीरामकृष्ण) ने ही कोई यन्त्र-मन्त्र किया होगा।'

"नरेन्द्र जव पहले-पहल आया था, तव इसकी छाती पर हाथ रखते ही यह बेहोश हो गया। फिर होश मे आकर रोते हुए कहने लगा— 'अजी, मुझे तुमने ऐसा क्यो कर दिया?—मेरे वावूजी है— मेरी माँ जो है।' 'मेरा-मेरा' करना, वह अज्ञान से होता है।

"गुरु ने शिष्य से कहा, 'संसार मिथ्या है, तू मेरे साथ निकल चल।' शिष्य ने कहा, 'महाराज, ये सब मुझे इतना चाहते है— मेरे वावूजी, मेरी माँ, मेरी स्त्री— इन्हे छोड़कर मै कैसे जाऊँ?' गुरु ने कहा, 'तू मेरा-मेरा करता तो है, और कहता है कि ये सब प्यार करते है, परन्तु यह सब भूल है। मै तुझे एक उपाय वतलाता हूँ, उसे करके देख, तो तू समझ जायेगा कि ये लोग तुझे सचमुच प्यार करते है या इसमे दिखावट है।' यह कहकर एक दवा उन्होने उसके हाथ मे दी और कहा, 'इसे खा लेना, खाने पर तू मुर्दे की तरह हो जायेगा। तेरा ज्ञान नष्ट न होगा, तू सब देख-सुन सकेगा। फिर मेरे आने पर क्रमशः तेरी पहले की अवस्था हो जायेगी।'

"शिष्य ने ठीक वैसा ही किया। घर मे सब रोने लगे। उसकी माता, स्त्री, सब के सब उल्टी पछाडे खाने लगी। इसी समय एक ब्राह्मण ने आकर पूछा, 'यहाँ क्या हुआ है?' उन लोगो ने कहा, 'महाराज, इस लड़के को राम ले गये।' ब्राह्मण ने उस मुर्दे का हाथ देखकर कहा, 'यह क्या— यह तो मरा नहीं है। मै एक दवा देता हूँ, उसके खाने से यह अभी चगा हो जायेगा।' उस समय डूबते हुए को जैसे सहारा मिल गया,— घरवाले वडे प्रसन्न हुए। तव ब्राह्मण ने कहा, 'परन्तु एक वात है, पहले एक दूसरे आदमी को दवा खानी पड़ेगी, फिर इसे।

परन्तु पहले जो दवा खायेंगे, उनकी मृत्यु अनिवार्य है। इसके तो अपने आदमी बहुत है, कोई न कोई दवा अवश्य ही खा लेगा। इसकी माँ और इसकी स्त्री बहुत रो रही है, ये लोग तो अनायास ही दवा खा लेगी।'

"तब वे सब की सब रोना-धोना बन्द करके चुप हो रही। माता ने कहा, 'ऐं, यह इतना बड़ा परिवार, मै अगर मर गयी तो इन सब की देख-रेख के लिए कौन रहेगा?'— यह कहकर वे सोचने-विचारने लगी। उसकी स्त्री कुछ देर पहले रो रही थी— 'अरी मेरी दीदी, मुझे यह क्या हो गया— री—' उसने कहा, 'अरे उन्हें जो होना था, सो तो हो चुका, मेरे दो-तीन नाबालिग लड़के-बच्चे है, मै अगर मर गयी तो फिर इन्हे कौन देखेगा?'

"शिष्य सब देख-सुन रहा था। वह उठकर खडा हो गया और कहा, 'गुरुजी, चलिये, आपके साथ चलता हूँ।'

(सब हँसते है)

"एक शिष्य और था। उसने अपने गुरु से कहा था, 'मेरी स्त्री मेरी बड़ी सेवा करती है, गुरुजी, मै उसी के लिए ससार नही छोड सकता।' वह शिष्य हठयोग करता था। गुरु ने उसे भी एक उपाय बतलाया। एकाएक उसके घर मे खूब रोना-धोना मच गया। पड़ोसवालों ने आकर देखा, घर मे आसन लगाकर हठयोगी बैठा हुआ था,— देह के पुर्जे-पुर्जे टेढे हो गये थे। सब ने समझा, उसके प्राण निकल गये है। स्त्री पछाड़े खा रही थी— 'अरे, मेरे भाग्य मे क्या यही लिखा था रे— हम अनाथों को छोड़कर तुम कहाँ चले गये— राम— अरी मेरी दीदी री— ऐसा होगा यह मै नही जानती थी री—' इधर उसके आत्मीय

और मित्र खाट ले आये। उसे घर से निकालने लगे।

"इसी समय एक अड़चन हुई। सब देह टेढी हो जाने के कारण, लाश कोठरी के द्वार से निकलती न थी। तब एक पड़ोसी दौडकर कटारी लेकर चौखट काटने लगा। स्त्री अधीर होकर रो रही थी। वह काटने की आवाज सुनकर दौड़ी हुई आयी। रोते हुए उसने पूछा—'यह क्या करते हो—दा—दा—' उन लोगो ने कहा, 'ये नही निकलते इसलिए चौखट काट रहा हूं।' तब स्त्री ने कहा—'अरे मेरे दादा—ऐसा काम न करो, मै तो रॉड़ अब हो ही गयी हूँ ! मेरे घर का सम्हालनेवाला तो अब कोई रहा ही नही, कुछ नाबालिग बच्चे है, उन्हे पालकर आदमी बनाना है। यह दरवाजा चला जायेगा तो दूसरा होने का है ही नही, उन्हे जो होना था, सो तो हो ही चुका—उन्ही के हाथ-पैर काट दो।' तब हठयोगी उठकर खड़ा हो गया। तब दवा का असर जाता रहा था। खड़ा होकर उसने कहा—'क्यो री साली, हाथ-पैर कटाती है ?' यह कहकर घर छोड गुरु के पास चला गया। (सब हँसते है)

"बड़ा ढोग करके स्त्रियाँ रोती है। रोने की खबर मिलती है, तो पहले नथ खोल डालती है, फिर और और गहने खोलकर सन्दूक के अन्दर ताला लगाकर सुरक्षित रख देती है। फिर पछाड़ खा-खाकर रोती है—'अरी दीदी—मेरा यह क्या हुआ री—' "

(२)

अवतार का स्वरूप

नरेन्द्र– Proof (प्रमाण) के बिना कैसे विश्वास करूँ कि ईश्वर आदमी होकर आते है ?

गिरीश– विश्वास ही Sufficient Proof (यथेष्ट प्रमाण) है। यह वस्तु यहाँ है, इसका क्या प्रमाण है ? विश्वास ही इसका प्रमाण है।

एक भक्त– External World (वहिर्जगत्) बाहर है, इस बात को क्या कोई Philosopher (दार्शनिक) Prove (प्रमाणित) कर सका है ? केवल कहा है— Irresistible Belief (अनिवार्य विश्वास)।

गिरीश– (नरेन्द्र से)– ईश्वर सामने आने पर भी तो तुम विश्वास नही करोगे। यदि ईश्वर कहेगे, 'मै ईश्वर हूँ, मनुष्य के शरीर मे आया हुआ हूँ,' तुम शायद कहोगे कि वे झूठ बोल रहे है—धोखा दे रहे है।

अव यह वात चली कि देवता अमर है।

नरेन्द्र– इसका प्रमाण क्या है ?

गिरीश– पर तुम्हारे सामने आने पर भी तो विश्वास नही करोगे।

नरेन्द्र– अमर, अतीतकाल मे थे इसका प्रमाण भी तो चाहिए।

मणि पल्टू से कुछ कह रहे है।

पल्टू– (नरेन्द्र से, हँसकर)– अमर के लिए अनादि की क्या जरूरत है ? होना है तो अनन्त होना चाहिए।

श्रीरामकृष्ण– (सहास्य)– नरेन्द्र वकील का लड़का है, पल्टू डिप्टी का लड़का है। (सब हँसते है)

सव कुछ देर चुप हो रहे।

योगीन्द्र– (गिरीश आदि भक्तों से, सहास्य)– नरेन्द्र की वातो मे ये (श्रीरामकृष्ण) अव नही आते।

श्रीरामकृष्ण– (हँसकर)– मैने एक दिन कहा था, चातक आकाश के पानी के सिवा और पानी नही पीता। नरेन्द्र ने कहा,

'चातक यह पानी भी पीता है।' तब मैंने माँ से कहा, 'माँ, ये सब बाते क्या झूठ हो गयी ?' मुझे बड़ी चिन्ता थी। एक दिन नरेन्द्र आया। कमरे के भीतर कुछ चिड़ियाँ उड़ रही थी। देखकर उसने कहा, 'यही है— यही है!' मैंने पूछा, 'क्या ?' उसने कहा, 'यही चातक है।' मैंने देखा, कुछ चमगीदड उड़ रहे थे। तभी से मै उसकी बातो को ग्रहण नही करता। (सब हँसते है)

"यदु मल्लिक के बगीचे मे नरेन्द्र ने कहा, 'तुम ईश्वर के रूप जितने देखते हो, सब तुम्हारे मन का भ्रम है।' तब आश्चर्य मे आकर मैंने उससे कहा, 'क्यों रे, वे बातचीत जो करते है।' नरेन्द्र ने कहा, 'मनुष्य ऐसा ही सोचता है।' तब माँ के पास आकर मै रोने लगा। कहा, 'माँ, यह क्या हुआ ?— क्या सब झूठ है ? नरेन्द्र ऐसी बाते कहता है।' तब माँ ने दिखलाया, चैतन्य— अखण्ड चैतन्य— चैतन्यमय रूप। और उन्होंने कहा, 'अगर ये बाते झूठ होंगी, तो ये सब मिलती किस तरह है ?' तब मैंने नरेन्द्र से कहा, 'साला, तूने अविश्वास पैदा कर दिया था। तू साला अब यहाँ मत आना।' "

फिर विचार होने लगा। नरेन्द्र विचार कर रहे है। नरेन्द्र की उम्र इस समय बाईस वर्ष चार मास की है।

नरेन्द्र– (गिरीश, मास्टर आदि से)– शास्त्रो पर भी कैसे विश्वास करूँ ? महानिर्वाण-तन्त्र एक बार तो कहता है, ब्रह्मज्ञान के बिना नरक होगा। फिर कहता है, पार्वती की उपासना को छोड़ और उपाय नही है। मनुसहिता मे मनुजी कुछ लिखते है— वे उन्ही की अपनी बाते है। Moses (मूसा) लिखते है Pentateuch (पेन्टटयूच),— उसमे भी उन्होने अपनी ही मृत्यु का वर्णन लिखा है।

"साख्यदर्शन दिखते है, 'ईश्वरासिद्धे:,' ईश्वर है यह कोई प्रमाणित नही कर सकता। फिर कहते है, वेद मानना चाहिए, वेद नित्य है।

"इससे मै यह नही कह रहा हूँ कि ये सब नही है। मै समझ नही सकता, मुझे समझा दो। शास्त्रो का अर्थ जिसके जी मे जैसा आया उसने वैसा ही किया है। अब मै किस-किसका ग्रहण करूँ? White light (सफेद रोशनी) red medium (लाल शीशे) के भीतर से आती है तो लाल दीख पड़ती है और green medium (हरे शीशे) के भीतर से आती है तो हरी दीख पड़ती है।"

एक भक्त – गीता भगवान की उक्ति है।

श्रीरामकृष्ण– गीता सब शास्त्रों का सार है। सन्यासी के पास और चाहे कुछ न रहे, परन्तु एक छोटी-सी गीता जरूर रहेगी।

एक भक्त– गीता श्रीकृष्ण की उक्ति है।

नरेन्द्र –श्रीकृष्ण की उक्ति है या दूसरे किसी की।

श्रीरामकृष्ण निर्वाक् रहकर नरेन्द्र की ये सब बाते सुन रहे है।

श्रीरामकृष्ण– ये सब अच्छी बातें हो रही है।

"शास्त्रों के दो अर्थ है, एक शब्दार्थ और दूसरा मर्मार्थ। ग्रहण मर्मार्थ का ही करना चाहिए, जो अर्थ ईश्वर की वाणी के साथ मिलता हो। चिट्ठी की बातो मे, और जिसने चिट्ठी लिखी है उसकी बातो मे बड़ा अन्तर है। शास्त्र है— चिट्ठी की बातें। ईश्वर की वाणी है— उनके मुख की बाते। मै उस बात को ग्रहण नही करता जो माँ की बात से नही मिलती।"

अब अवतार की बात होने लगी।

नरेन्द्र– ईश्वर पर विश्वास होने से ही होगा। फिर वे कहाँ झूल रहे है, या क्या कर रहे है इससे हमे क्या काम? ब्रह्माण्ड

अनन्त है और अवतार भी अनन्त है।

नरेन्द्र की यह बात सुनकर श्रीरामकृष्ण ने हाथ जोड़ उन्हे नमस्कार करके कहा— 'अहा !'

मणि भवनाथ से कुछ कह रहे है।

भवनाथ– ये कहते है, हाथी को जब हमने नही देखा तो वह सुई के छेद के अन्दर से जा सकता है या नही, यह हमे कैसे विश्वास हो ? ईश्वर को हम जानते नही, फिर वे आदमी के रूप मे अवतार ले सकते है या नही, किस तरह हम इसका विचार करके समझे ?

श्रीरामकृष्ण– सब कुछ है। वे जादू चला देते हैं। बाजीगर गले मे छूरी मार लेता है, उसे फिर निकाल लेता है। कंकड़-पत्थर खा जाता है।

(३)

श्रीरामकृष्ण तथा कर्म

भक्त– ब्राह्मसमाज के आदमी कहते है, संसार मे कर्म करना ही अपना कर्तव्य है। इस कर्म के त्याग करने से कुछ न होगा।

गिरीश– मैने देखा, 'सुलभसमाचार' मे यही बात लिखी है। परन्तु ईश्वर को जानने के लिए जो कर्म है, वे ही तो पूरे नही हो पाते, फिर ऊपर से दूसरे कर्म !

श्रीरामकृष्ण जरा मुस्कराकर मास्टर की ओर देखकर इशारा कर रहे है— 'वह जो कुछ कहता है, वही ठीक है।'

मास्टर समझ गये, कर्मकाण्ड बड़ा ही कठिन है।

पूर्ण आये है।

श्रीरामकृष्ण– किसने तुम्हे खबर दी ?

पूर्ण– शारदा ने।

श्रीरामकृष्ण– (पास की स्त्री-भक्तो से)– इसे कुछ जलपान करने के लिए देना।

अव नरेन्द्र का गाना होगा। श्रीरामकृष्ण तथा भक्तो की सुनने की इच्छा है। नरेन्द्र गा रहे है—

(१) "परवत पाथार। व्योमे जागो रुद्र उद्यत वाज। देव-देव महादेव, कालकाल महाकाल, धर्मराज शकर शिव तारो हर पाप।"

(२) "हे दीनो को शरण देनेवाले! तुम्हारा नाम बड़ा सुन्दर है। ऐ प्राणो मे रमण करनेवाले! अमृत की धारा वह रही है, श्रवण शीतल हो जाते है।"

(३) "जो विपत्ति और भय से परित्राण करनेवाले है, ऐ मन, तुम उन्हे क्यो नही पुकारते? मिथ्या भ्रम मे पड़े हुए इस घोर ससार मे डूव रहे हो, यह बड़े दु.ख की बात है!"

पल्टू– यह गाना आप गाइयेगा?

नरेन्द्र– कौनसा?

पल्टू– "देखिले तोमार सेई अतुल प्रेम-आनने।
कि भय ससार शोक घोर विपद शासने॥"

नरेन्द्र गा रहे है—

"देखिले तोमार सेई अतुल प्रेम-आननने।
कि भय ससार शोक घोर विपद शासने॥
अरुण उदये आँधार जेमन जाय जगत् छाड़िये।
तेमनि देव तोमार ज्योति मंगलमय विराजिले।
भगत-हृदय वीतशोक तोमार मधुर सान्त्वने॥
तोमार करुणा तोमार प्रेम हृदये प्रभु भाविले।
उथले हृदये नयनवारि राखे के निवारिये॥

जय करुणामय, जय करुणामय, तोमार प्रेम गाहिये ।
जाय यदि जाक प्राण तोमार कर्म साधने ।।"

मास्टर के अनुरोध से फिर गा रहे है । मास्टर और भक्तगण हाथ जोड़े हुए गाना सुन रहे है––

(१) "ऐ मेरे मन! हरि-रस मदिरा का पान करके तुम मत्त हो जाओ । पृथ्वी पर लोटते हुए तुम उनका नाम ले लेकर रोओ ।"

(२) "आसमान थाली है, उसमे सूर्य और चन्द्र दिये जल रहे है, नक्षत्र मोतियो की तरह चमक रहे है । मलयानिल धूप है । पवन चमर डुला रहा है । वन-राजियाँ उसकी जीती-जागती ज्योति है । हे भवखण्डन, यह तुम्हारी कैसी सुन्दर आरती हो रही है ! अनाहत नाद के द्वारा तुम्हारी भेरी वज रही है ।"

(३) "उसी एक पुरुपपुरातन––निरजन पर तुम अपने चित्त को समाहित करो ।"

नारायण के अनुरोध करने पर नरेन्द्र ने फिर गाया ।

(भावाथ) "ऐ हृदयरमा माँ–– प्राणो की पुतली ! आओ, तुम हृदय के आसन पर आसीन हो जाओ, मै दृष्टि को तृप्त करता हुआ तुम्हे देखूँ । जन्म से ही मै तुम्हारा मुँह जोह रहा हूँ । ऐ माँ, तुम जानती हो, मै कितना दु.ख भोग चुका हूँ । ऐ आनन्दमयी, एक बार तो हृदय-पद्म को विकसित करके वहाँ अपना प्रकाश दिखा दो ।"

नरेन्द्र मन ही मन गा रहे है––

(भावार्थ) "माँ, तेरा अपरूप रूप घोर अँधेरे मे चमक रहा है । इसीलिए गिरि-गुहाओं मे योगीजन तुम्हारा ध्यान करते है ।"

समाधि का यह संगीत सुनते ही श्रीरामकृष्ण समाधिमग्न हो गये ।

श्रीरामकृष्ण को भावावेश है। उत्तरास्य हो, दीवार के सहारे, पैर लटकाये हुए तकिये पर बैठे हुए है। चारों ओर भक्तगण बैठे है।

भावावेश मे श्रीरामकृष्ण माता से बाते कर रहे है। कह रहे है— "भोजन करके इस समय चला जाऊँगा। तू आयी ? पोटली बाँधकर, जहाँ रहेगी वह घर ठीक करके तू आयी है क्या ?

"अब मुझे कोई नही सुहाता।

"माँ, गाना क्यो सुनूँ ? उससे तो मन कुछ बाहर चला जाता है।"

क्रमश. श्रीरामकृष्ण को बाह्य ससार का ज्ञान हो रहा है। भक्तों की ओर देखकर उन्होने कहा,— "हण्डी मे पानी भरकर किसी को उसमे मछलियो को रखते हुए देख पहले मुझे बड़ा आश्चर्य होता था। मै सोचता था, ये लोग बड़े हत्यारे है, अन्त मे इन मछलियो को मार डालेगे। अवस्था जब बदलने लगी, तब मैंने देखा, यह शरीर ऊपर का ढक्कन है। न इसके रहने से कुछ बनता-बिगड़ता है, न जाने से।"

भवनाथ– तो क्या मनुष्यों की हिसा की जा सकती है ? हत्या की जा सकती है ?

श्रीरामकृष्ण– हाँ, उस अवस्था मे की जा सकती है। वह अवस्था सब की नही होती। वह ब्रह्मज्ञान की अवस्था है।

"दो-एक स्तर उतरने पर भक्ति और भक्त अच्छे लगते है।

"ईश्वर मे विद्या और अविद्या दोनो है। यह विद्या-माया जीव को ईश्वर की ओर ले जाती है, अविद्या-माया ईश्वर से जीव को दूर बहकाकर ले जाती है। विद्या की क्रीडा ज्ञान, भक्ति, दया और वैराग्य है। इनका आश्रय लेनें पर मनुष्य ईश्वर के पास

पहुँच सकता है।

"एक सीढी और चढने पर ईश्वर मिलते है— ब्रह्मज्ञान होता है। इस अवस्था मे सच्चा ज्ञान होता है—तव वास्तव मे समझ पडता है कि मै ठीक देख रहा हूं, वे ही सव कुछ हुए है। उस समय त्याज्य और ग्राह्य नही रहते ! किसी पर क्रोध करने की जगह नही रहती।

मै वग्घी पर चला जा रहा था। एक जगह वरामदे के ऊपर देखा, दो वेश्याएं खडी थी। देखा— साक्षात् भगवती। देखकर मैने प्रणाम किया।

"जव पहले-पहल यह अवस्था हुई तव काली माई की न मै पूजा कर सका और न उन्हे भोग ही दे सका। हलधारी और हृदय ने कहा, 'खजांची कह रहा है— भट्टाचार्यजी भोग नही देगे तो और कौन देगा ?' उसने कटूक्ति की, यह सुनकर मै हँसने लगा, मुझे क्रोध नही आया। यह ब्रह्मज्ञान प्राप्त करके फिर लीला का स्वाद लेते रहो। कोई साधु एक शहर मे तमाशा देखता हुआ घूम रहा था। उसी समय एक दूसरे परिचित साधु से भेट हो गयी। उसने पूछा, 'तुम मौज से घूम रहे हो, तुम्हारा सामान कहाँ है ? उधर सामान लेकर कोई नौ-दो-ग्यारह तो नही हो गया ?' पहले साधु ने कहा, 'नही महाराज, पहले डेरे की तलाश करके, डेरा-डण्डा वहाँ रखकर, ताला वन्द करके फिर शहर का रंग-ढग देखने के लिए निकला हूं।'" (सव हंसते है)

भवनाथ— यह वहुत ऊंची वात है।

मणि— (स्वगत)— ब्रह्मज्ञान के वाद लीला का स्वाद लेना,— समाधि के वाद नीचे उतरना।

श्रीरामकृष्ण— (मास्टर आदि से)—अजी ! ब्रह्मज्ञान क्या ऐसे

सहज ही हो जाता है ? मन का नाश विना हुए नही होता। गुरु ने शिष्य से कहा था, तुम मुझे मन दो, मै तुम्हे ज्ञान देता हूँ। नागा कहता था, 'अरे, मन इधर-उधर न लगाना चाहिए।'

"इस अवस्था मे केवल ईश्वर की वाते सुहाती है और भक्तो का सग।

(राम से) "तुम तो डाक्टर हो, जव खून के साथ मिलकर एक हो जाती है, तभी दवा फायदा करती है—है न ? उसी तरह इस अवस्था मे भीतर और वाहर ईश्वर ही ईश्वर है। वह देखेगा, वे ही देह, मन, प्राण और आत्मा है।

"मन का नाश होने से ही ब्रह्मज्ञान की अवस्था होती है। मन का नाश होने ही से 'अहं' का नाश होता है,— उस 'अह' का, जो 'मै-मै' कर रहा है। यह अवस्था भक्ति के मार्ग से भी होती है और ज्ञान-मार्ग या विचार-मार्ग से भी। 'नेति-नेति' अर्थात् यह सब माया है, स्वप्नवत् है, इस तरह का विचार ज्ञानी करते है। यह ससार 'नेति-नेति'— माया है। ससार जव न रहा, तव वाकी रह गये कुछ जीव— 'मै'-रूपी घट के भीतर।

"सोचो कि पानी से भरे हुए दस घड़े है, उनमे सूर्य का विम्व पड रहा है। कितने सूर्य दिखलायी देते है ?"

भक्त– दस प्रतिबिम्ब, और एक यथार्थ सूर्य तो है ही।

श्रीरामकृष्ण– सोचो, तुमने एक घड़ा फोड़ डाला, अव कितने सूर्य दीख पड़ते है ?

भक्त— नौ, और एक सत्य सूर्य तो है ही।

श्रीरामकृष्ण– आठ और घडे फोड डाले गये। अव कितने सूर्य है ?

भक्त– एक प्रतिविम्ब सूर्य और एक सत्य सूर्य।

श्रीरामकृष्ण– (गिरीश से)– उस रहे-सहे घट को भी फोड़ डालो, अव क्या रह जाता है ?

गिरीश– जी, वही सत्य सूर्य ।

श्रीरामकृष्ण– नही, क्या रहता है, वह कोई मुख से नही वता सकता ।•जो है, वही है । प्रतिविम्वो के विना रहे, सत्य सूर्य है यह वात मनुष्य कैसे जान सकता है ? समाधि के होने पर अहं-तत्त्व का नाश हो जाता है। समाधिस्थ पुरुप उतरकर कह नही सकता कि उसने क्या देखा ।

(४)

ईश्वरदर्शन तथा व्याकुलता

सन्ध्या हुए वडी देर हो गयी। वलराम के वैठकखाने मे दिये जल रहे है। श्रीरामकृष्ण अव भी भावमग्न है। भावावेश मे कह रहे है—

"यहाँ और कोई नही है, इसीलिए तुम लोगो से कह रहा हूँ, आन्तरिकता के साथ जो मनुष्य ईश्वर को जानना चाहेगा, उसका उद्देश्य अवश्य सफल होगा। जो व्याकुल है, ईश्वर के सिवा और कुछ नही चाहता, वह उन्हे अवश्य ही पायेगा।

"यहाँ के जितने आदमी थे— जिन्हे-जिन्हे आना था, वे सव आ चुके। इसके वाद जो आयेगे वे वाहर के आदमी है। ऐसे लोग कभी कभी आ जाया करेगे। माँ उन्हे वता दिया करेगी कि तुम यह करो, वह करो, इस तरह ईश्वर को पुकारो आदि ।

"ईश्वर की ओर मन क्यो नही जाता ? ईश्वर से उनमे (महामाया मे) वल अधिक है। जज से उसके चपरासी मे शक्ति अधिक है। (सव हँसते है)

"नारद से राम ने कहा, 'नारद, तुम्हारी स्तुति से मुझे वड़ो

प्रसन्नता हुई है, तुम कोई वर लो।' नारद ने कहा, 'राम! यह करो, तुम्हारे पादपद्मों मे मेरी श्रद्धा-भक्ति रहे और तुम्हारी भुवनमोहिनी माया मे न पड जाऊँ।' राम ने कहा, 'तथास्तु, कोई वर और लो।' नारद ने कहा, 'राम! और कोई वर मुझे नही चाहिए।'

"इस भुवनमोहिनी माया मे सभी मुग्ध हो रहे है। ईश्वर जब देह धारण करते है, तो वे भी मुग्ध हो जाते है। सीता के लिए राम कितना रोये थे। 'पचभूत के पिजड़े मे पड़कर ब्रह्म को रोना पडता है।'

"परन्तु एक बात है— ईश्वर जब चाहे तभी मुक्त हो सकते है।"

भवनाथ– Guard (गार्ड) अपनी इच्छा से रेलगाड़ी के भीतर अपने को कैद करता है। परन्तु वह जब चाहे तब उतर सकता है।

श्रीरामकृष्ण– ईश्वरकोटि— जैसे अवतार आदि— जब चाहे तब मुक्त हो सकते है। जो जीवकोटि है, वे नही हो सकते। जीव कामिनी और कांचन मे बद्ध है। कमरे के द्वार और झरोखे स्क्रू (पेच) से कसे हुए है। कैसे निकल सकते है?

भवनाथ–(सहास्य)– जैसे रेल के तीसरे दर्जे के मुसाफिर, दरवाजे मे चाभी लगा देने पर फिर नही निकल सकते।

गिरीश– जीव अगर इस तरह बँधा हुआ है तो उसके लिए कोई उपाय है?

श्रीरामकृष्ण– हॉ, गुरु के रूप से ईश्वर अगर स्वय ही माया-पाशो का छेदन करे तो फिर भय की कोई बात नही।

परिच्छेद १०

राम के मकान में

(१)

नित्य तथा लीला। साधना चाहिए

श्रीरामकृष्ण राम के यहाँ आये हुए है। उनके नीचे के बैठकखाने मे भक्तो के साथ बैठे हुए है। मुख पर प्रसन्नता झलक रही है। आनन्दपूर्वक भक्तो से बातचीत कर रहे है।

आज शनिवार है, जेठ की शुक्ला दशमी, २३ मई १८८५। शाम के पाँच बजे का समय है। श्रीरामकृष्ण के सामने महिमाचरण बैठे है। बायी ओर मास्टर है, चारो ओर पल्टू, भवनाथ नृत्यगोपाल और हरमोहन है। आते ही श्रीरामकृष्ण भक्तों के बारे मे पूछने लगे।

श्रीरामकृष्ण– (मास्टर से)– छोटा नरेन्द्र नही आया ?

कुछ देर बाद छोटे नरेन्द्र आ गये।

श्रीरामकृष्ण– वह नही आया ?

मास्टर– जी, कौन ?

श्रीरामकृष्ण– किशोरी ?– गिरीश घोष नही आयेगा ?—और नरेन्द्र ?

कुछ देर बाद नरेन्द्र ने आकर प्रणाम किया।

श्रीरामकृष्ण– (भक्तो से)– केदार (चटर्जी) अगर रहता तो खूब आनन्द आता। गिरीश घोष से उसकी खूब बनती है। (महिमा से, सहास्य) वह भी वही बात दुहराता है (अर्थात् अवतार मानता है)।

कमरे मे कीर्तन होने का बन्दोबस्त कर रखा गया है। कीर्त-

निया हाथ जोड़कर श्रीरामकृष्ण से कह रहा है, 'आप आज्ञा दे तो कीर्तन आरम्भ हो।'

श्रीरामकृष्ण ने कहा, 'थोड़ा-सा पानी पीऊंगा।'

पानी पीकर मसाले की थैली से आपने कुछ मसाला निकालकर खाया। मास्टर से थैली वन्द करने के लिए कहा।

कीर्तन हो रहा है। खोल की आवाज से श्रीरामकृष्ण को भावावेश हो रहा है। गौरचन्द्रिका सुनते सुनते वे समाधिमग्न हो गये। पास ही नृत्यगोपाल थे, उनकी गोद पर श्रीरामकृष्ण ने अपने पैर फैला दिये। नृत्यगोपाल भी भावावेश मे रो रहे है। भक्तगण चुपचाप यह समाधि की अवस्था देख रहे है।

कुछ प्रकृतिस्थ होकर श्रीरामकृष्ण वार्तालाप करने लगे।

श्रीरामकृष्ण– नित्य से लीला और लीला से नित्य,—(नृत्यगोपाल से) तेरा क्या भाव है ?

नृत्यगोपाल– दोनो अच्छे है।

श्रीरामकृष्ण आँखे बन्द करके कह रहे है, "क्या केवल इस तरह ही रहना है ? क्या आँखे वन्द कर लेने पर वे है और आँखें खोलने पर वे नही है ? जिनकी नित्यता है, लीला भी उन्ही की है; जिनकी लीला है, उन्ही की नित्यता हैं।

(महिमा से) "अजी, तुम्हे एक वात बतलानी है—"

महिमाचरण– जी, दोनो ईश्वर की इच्छाएँ है।

श्रीरामकृष्ण– कोई ऊपर चढकर फिर उतर नही सकता, और कोई ऊपर चढकर नीचे उतरकर घूम-फिर सकता है।

"उद्धव ने गोपियो से कहा था, तुम जिन्हे अपना कृष्ण बना रही हो वे सर्वभूतो मे है, वे ही जीव-जगत् हुए है।

"इसीलिए कहता हूँ, क्या आँखे बन्द करने से ही ध्यान होता

है और आँखे खोलने से कुछ नही ?"

महिमा– एक प्रश्न है। जो भक्त है उन्हे भी किसी समय निर्वाण की आवश्यकता है ?

श्रीरामकृष्ण– निर्वाण चाहिए ही, ऐसी कोई बात नही। इस तरह भी है कि कृष्ण भी नित्य है और भक्त भी नित्य है––चिन्मय श्याम, चिन्मय धाम।

"जैसे जहाॅ चन्द्र है, वही तारे भी है। कृष्ण भी नित्य है और भक्त भी नित्य है। तुम्ही तो कहते हो––'अन्तर्बहिर्यदि हरिस्तपसा तत. किम्'–– और तुमसे तो मैंने कहा है कि जिस भक्त मे विष्णु का अश रहता है उसमे भक्ति का बीज नष्ट नहीं होता। मै एक ज्ञानी (न्यांगटा) के पंजे मे फँस गया, उसने ग्यारह महीने तक वेदान्त सुनाया। परन्तु वह मुझमे भक्ति का बीज बिलकुल नष्ट नही कर सका। घूम-फिरकर वही 'माॅ-माॅ'। जब मै गाता था तब (न्यागटा) रोने लगता था। कहता था––'अरे, यह तूने क्या सुनाया !' देखो, इतना बड़ा ज्ञानी भी रोने लगता था। (छोटे नरेन्द्र आदि से) इतना समझ रखना, अलख लता का रस जब पेट मे जाता है तो पेड़ होता ही है। भक्ति का बीज अगर पड़ गया, तो उससे क्रमश. पेड और फूल-फल होते ही है।

" 'मूषलं कुलनाशनम्।' मूषल घिसकर जरा-सा रह गया था। उस थोडे-से अश से यदुवंश का ध्वंस हो गया। चाहे लाख ज्ञान और विचार करो, भक्ति का बीज अगर भीतर रहा, घूम-फिरकर वही 'भज राम––भज सीताराम।' "

भक्तगण चुपचाप सुन रहे है। श्रीरामकृष्ण हँसते हुए महिमाचरण से कह रहे है––तुमको क्या अच्छा लगता है ?

महिमाचरण–(हंसकर)–कुछ भी नही, आम अच्छा लगता है।

श्रीरामकृष्ण– (सहास्य) –अकेले अकेले ? न, आप भी खाओ और दूसरो को भी कुछ दो ?

महिमा– (सहास्य) –देने की विशेप इच्छा तो नही है, अकेले खाया तो बुरा क्या है !

श्रीरामकृष्ण– परन्तु मेरा भाव क्या है, जानते हो ?––क्या आँख खोलने ही से वे गायब हो जाते है ? मै 'नित्य' और 'लीला' दोनो को लेता हूँ। उन्हे प्राप्त करने पर यह समझ मे आ जाता है कि वे ही स्वराट् है और वे ही विराट् है। वे ही अखण्ड सच्चिदानन्द है और वे ही जीव-जगत् हुए है।

"साधना चाहिए। केवल शास्त्र रटने से नही होता। मैने विद्यासागर को देखा, वह पढ़ा-लिखा खूब है, परन्तु अपने भीतर मे क्या है उसने नही देखा। बच्चों को पढ़ा-लिखाकर ही उसे आनन्द मिलता है। ईश्वर के आनन्द का स्वाद उसने नहीं पाया, केवल पढने से क्या होगा ? धारणा कहाँ ? पंचांग मे लिखा है वर्षा पूरी होगी, परन्तु पंचांग दबाओ तो कही बूँद भर भी पानी नही निकलता !"

महिमा– ससार मे कितने ही काम है, अवसर कहाँ मिलता है ?

श्रीरामकृष्ण– क्यों ? तुम तो सब स्वप्नवत् बतलाते हो।

"सामने सागर देखकर लक्ष्मण ने धनुष लेकर कहा था, 'मे वरुण का वध करूँगा। यही समुद्र हमे लंका नही जाने दे रहा है।' राम ने समझाया, 'लक्ष्मण, यह जो सब देख रहे हो, यह स्वप्नवत् अनित्य है न ?— अतएव समुद्र भी अनित्य है और तुम्हारा क्रोध भी अनित्य है। मिथ्या को मिथ्या के द्वारा मारना भी मिथ्या है।'"

महिमाचरण चुप हो रहे।

महिमाचरण को वहुत से पारिवारिक काम करने पडते है। और उन्होने परोपकार के लिए एक नया स्कूल खोला है।

श्रीरामकृष्ण– (महिमा से)– शम्भु ने कहा, 'मेरी इच्छा है, ये रुपये सत्कार्य मे लगाऊँ—स्कूल, दवाखाना खोल दूँ, रास्ताघाट तैयार करा दूँ।' मैंने कहा, 'निष्काम भाव से कर सको तो अच्छा है, परन्तु निष्काम कर्म करना वड़ा कठिन है, न जाने किस तरफ से कामना निकल पड़ती है। तुमसे एक वात और पूछता हूँ, अगर ईश्वर तुम्हे मिल जायँ तो क्या तुम उनसे कुछ स्कूल, अस्पताल, दवाखाने ये सव माँगने लगोगे ?'

एक भक्त– महाराज, ससारियो के लिए क्या उपाय है ?

श्रीरामकृष्ण– साधु-संग— ईश्वर की वाते सुनना।

"ससारी मतवाले हो रहे है, कामिनी और काचन मे मत्त है। मतवाले को भात का पानी थोड़ा-थोडासा पिलाते रहने पर वह अच्छा हो जाता है—उसे होश आ जाता है।

"और सद्‌गुरु के पास उपदेश लेना चाहिए। सद्‌गुरु के लक्षण है। जो वाराणसी गया हो और वाराणसी जिसने देखी हो, उसी से वाराणसी की वाते सुननी चाहिए। केवल पण्डित होने से नहीं होता। जिसे यह वोध नही हुआ कि संसार अनित्य है, उससे उपदेश न लेना चाहिए। पण्डित मे विवेक और वैराग्य के रहने पर ही वह उपदेश दे सकता है।

"सामाध्यायी ने कहा था, ईश्वर नीरस है। जो रसस्वरूप है, उन्हे वतलाता था नीरस ! जैसे किसी ने कहा था—मेरे मामा के यहाँ गोशाले में वहुत घोड़े है ! (सव हँसते है)

"ससारी मतवाले हो रहे है। वे सदा सोचते है, मै ही यह सव कर रहा हूँ, और घर-द्वार यह सब मेरा है। दाँत निकालकर

कहता है-- 'इनके (स्त्री आदि के) लिए फिर क्या होगा ? मैं न रहूँगा तो इनके दिन कैसे कटेंगे ! मेरी स्त्री को और मेरे परिवार को कौन सम्हालेगा ?' राखाल ने कहा, 'मेरी स्त्री की फिर क्या दशा होगी ?' "

हरमोहन– राखाल ने ऐसी वात कही ?

श्रीरामकृष्ण– इस तरह नही कहेगा तो क्या करेगा ? जिसे ज्ञान है, उसे अज्ञान भी है। लक्ष्मण ने राम से कहा, 'भाई ! बड़े आश्चर्य की वात है, साक्षात् वशिष्ठदेव भी पुत्रो के शोक से विकल हो रहे है !' राम ने कहा, 'भाई, जिसे ज्ञान है, उसे अज्ञान भी है। भाई ! ज्ञान और अज्ञान के पार हो जाओ।'

"जैसे किसी के पैर मे एक कॉटा लगा है। वह उस कॉटे को निकालने के लिए एक और कॉटा ले आता है। फिर उस कॉटे से कॉटा निकालकर दोनो कॉटे फेक देता है। अज्ञान-कॉटे को निकालने के लिए ज्ञान-कॉटें की जरूरत होती है। फिर ज्ञान और अज्ञान दोनो कॉटो को फेक देने पर जो कुछ रह जाता है वह विज्ञान है। ईश्वर है, इसका आभासमात्र लेकर उन्हे अच्छी तरह जानना पड़ता है; और उनसे खास तौर से बातचीत की जाती है, यह विज्ञान है। इसीलिए श्रीकृष्ण ने अर्जुन से कहा है, 'भाई, तीनो गुणों से पार हो जाओ।'

"इस विज्ञान को प्राप्त करने के लिए विद्यामाया को अपनाना पडता है। ईश्वर सत्य है, ससार अनित्य है, यह विचार है, अर्थात् विवेक और वैराग्य है। और उनके नामो और गुणो का कीर्तन, ध्यान, साधुसग, प्रार्थना ये सव विद्यामाया के अन्दर है। विद्यामाया जैसे छत की ऊपरवाली कुछ सीढियॉ है, और एक सीढी उठने ही से छत है। (छत मे उठने का अर्थ है ईश्वरलाभ)

"विषयी लोग मतवाले हो रहे है। कामिनी और कांचन में मत्त है, होश नही। इसीलिए तो इन लड़को को मै प्यार करता हूँ। उनमे कामिनी-कांचन का प्रवेश अभी नही हुआ। आधार अच्छा है, ईश्वर के पास पहुँच सकते है। ससारियो मे काँटे चुनते ही चुनते सब साफ हो जाता है— मछली नही मिलती।

"ससारी लोग ओले की चोट खाये हुए आम के सदृश होते है। यदि तुम उन आमों को ईश्वर को अर्पण करना चाहते हो तो उन्हे गगाजल से धोकर शुद्ध कर लेना पड़ता है। परन्तु फिर भी ऐसे फल बहुत कम पूजा मे चढाये जाते है। परन्तु उन्हे यदि चढाना ही पड़े तो ब्रह्मज्ञान के सहित, अर्थात् तुम्हे यह समझ लेना पड़ता है कि सब कुछ ईश्वर ही हुए है।"

श्रीयुत अश्विनीकुमार दत्त तथा श्रीयुत विहारी भादुडी के पुत्र के साथ एक थियोसाफिस्ट आये हुए है। मुखर्जियो ने आकर श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया। आँगन मे सकीर्तन का आयोजन हो रहा है। ज्योंही खोल बजा, श्रीरामकृष्ण घर छोड़कर आँगन मे जा बैठे। साथ ही साथ भक्तगण भी उठ गये।

भवनाथ अश्विनी का परिचय दे रहे है। श्रीरामकृष्ण ने अश्विनी की ओर इशारा करके मास्टर से कुछ कहा। मास्टर और अश्विनी मे कुछ बाते होने लगी। नरेन्द्र भी आँगन मे आये। श्रीरामकृष्ण अश्विनी से कह रहे हैं, 'इसी का नाम नरेन्द्र है।'

परिच्छेद ११

श्रीरामकृष्ण तथा अहंकार का त्याग

(१)

श्रीरामकृष्ण की ज्ञान तथा भक्ति की अवस्था

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर के कालीमन्दिर मे उसी परिचित कमरे मे विश्राम कर रहे है। आज शनिवार है, १३ जून १८८५, जेठ की शुक्ला प्रतिपदा; जेठ की संक्रान्ति। दिन के तीन बजे होगे। श्रीरामकृष्ण भोजन के बाद तखत पर जरा विश्राम कर रहे है।

एक पण्डितजी जमीन पर चटाई पर बैठे हुए है। शोक से विह्वल एक ब्राह्मणी कमरे के उत्तर तरफवाले दरवाजे के पास खड़ी हुई है। किशोरी भी है। मास्टर ने आकर प्रणाम किया। साथ मे द्विज आदि है। अखिलवाबू के पड़ोसी भी बैठे हुए है। उनके साथ आसाम का एक लड़का अभी पहले-पहल आया हुआ है।

श्रीरामकृष्ण कुछ अस्वस्थ है। गले में गिलटी पड़ गयी है, कुछ जुकाम भी हो गया है। उनकी गले की बीमारी बस यही से शुरू होती है।

अधिक गरमी पड़ने के कारण मास्टर का भी शरीर अस्वस्थ रहता है। श्रीरामकृष्ण के दर्शन के लिए वे इधर लगातार दक्षिणेश्वर नहीं आ सके।

श्रीरामकृष्ण— यह लो तुम तो आ गये। तुमने जो बेल भेजा था वह बड़ा अच्छा था। तुम कैसे हो ?

मास्टर— जी, पहले से अब कुछ अच्छा हूँ।

श्रीरामकृष्ण— बड़ी गरमी पड़ रही है। कुछ कुछ बर्फ खाया करो।

"गरमी से मुझे भी बड़ा कष्ट हो रहा है। गरमी मे कुलफी बर्फ—यह सब बहुत खाया गया। इसीलिए गले मे गिलटी पड़ गयी है। गले से बड़ी बदबू निकल रही है।

"माँ से मैने कहा, अच्छा कर दो, अब कुलफी बर्फ न खाऊँगा।

"इसके बाद यह भी कहा है कि बर्फ न खाऊँगा।

"माँ से जब कह दिया है कि अब न खाऊगा तो खाना अवश्य ही न होगा। परन्तु एकाएक भूल भी ऐसी हो जाती है।

"परन्तु जानते मे भूल नही होने पाती। उस दिन गड्डुआ लेकर एक आदमी को झाऊतल्ले की ओर आने के लिए मैने कहा। उस समय वह जगल गया था, इसलिए एक दूसरा आदमी ले आया। मैने जगल से आकर देखा, एक दूसरा ही आदमी गड्डुआ लिए हुए खड़ा था। अब क्या करूँ? हाथ मे मिट्टी लगाये खड़ा रहा जब तक उसी ने आकर पानी नही दिया।

"माता के पादपद्मो मे फूल चढ़ाकर जब मै सब कुछ त्याग करने लगा तब कहा, 'माँ, यह लो अपनी शुचिता और यह लो अशुचिता; यह लो अपना धर्म और यह लो अधर्म, यह लो अपना पाप और यह लो पुण्य, यह लो अपना भला और यह लो बुरा,—मुझे शुद्धा भक्ति दो।' परन्तु यह लो अपना सत्य और यह अपना असत्य, यह मै नही कह सका!"

एक भक्त बर्फ ले आये है। श्रीरामकृष्ण बार बार मास्टर से पूछ रहे है 'क्यो जी, क्या खा लूँ?'

मास्टर ने विनयपूर्वक कहा, 'तो आप माँ की आज्ञा बिना लिये न खाइये।' श्रीरामकृष्ण ने अन्त मे बर्फ नही खायी।

श्रीरामकृष्ण—शुचिता और अशुचिता का विचार भक्त के लिए है, ज्ञानी के लिए नही। विजय की सास ने कहा, 'मेरा क्या

हुआ ? अब भी तो मै सब की जूठन नहीं खा सकती।' मैने कहा, 'सब की जूठन खाने ही से ज्ञान होता है ? कुत्ते जो पाते है वही खा लेते है, इसलिए क्या कुत्ते को बड़ा ज्ञानी कहे ?'

(मास्टर से) "मै पाँच तरह की तरकारियाँ इसलिए खाया करता हूँ कि सब तरह की रुचि रहे—कहीं एक ही ढर्रे मे पड़ गया तो इन्हें (भक्तो को) छोड़ न देना पड़े।

"केशव सेन से मैने कहा, 'और भी बढ़कर अगर बातचीत की जायेगी तो तुम्हारा यह दल फिर न रह जायेगा। ज्ञान की अवस्था मे दल-बल सब स्वप्नवत् मिथ्या है।'

"पक्षी का घोसला अगर कोई जला देता है, तो वह उड़ता फिरता है, आकाश मे आश्रय लेता है। अगर देह, संसार यह सब मिथ्या भासित हो, तो आत्मा समाधिमग्न हो जाती है।

"पहले मेरी ज्ञानी की अवस्था थी। आदमी अच्छे नही लगते थे। हाटखोला मे एक ज्ञानी है अथवा अमुक स्थान पर एक भक्त है, इस तरह की बात मैं सुनता था; फिर कुछ दिनो मे सुनता, वह तो गुजर गया। इसीलिए आदमी अच्छे नही लगते थे। फिर उन्होने (जगदम्बा ने) मन को उतारा, भक्ति और भक्तों मे मन को लगा दिया।"

मास्टर अवाक् है। श्रीरामकृष्ण की अवस्थाओ के बदलने की बातें सुन रहे है। अब श्रीरामकृष्ण यह बतला रहे है कि ईश्वर आदमी होकर क्यो अवतार लेते है।

श्रीरामकृष्ण– (मास्टर से)– भगवान मनुष्य-रूप मे क्यो अवतार लेते है, जानते हो ? नरदेह के भीतर उनकी बाते सुनने को मिलती है। इसके भीतर उनका विलास है, इसके भीतर वे रसास्वादन करते है।

"और अन्य सब भक्तों में उनका थोडा-थोड़ासा प्रकाश है। जैसे किसी चीज को खूब चूसने पर कुछ रस मिलता है, अथवा फूल को चूसने पर कुछ मधु। (मास्टर से) तुम यह बात समझे ?"

मास्टर– जी हॉ, मै खूब समझा।

श्रीरामकृष्ण द्विज के साथ बातचीत कर रहे है। द्विज की उम्र १५-१६ साल की है। उनके पिता ने अपना दूसरा विवाह किया है। द्विज प्राय. मास्टर के साथ आया करते है। श्रीरामकृष्ण उन पर स्नेह करते है। द्विज कह रहे है कि उनके पिता उन्हे दक्षिणेश्वर नही आने देते।

श्रीरामकृष्ण– (द्विज से)– क्या तेरे भाई भी मुझे अवज्ञा की दृष्टि से देखते है ?

द्विज चुप है।

मास्टर– ससार की कुछ ठोकरे खाने पर जिनमे कुछ अवज्ञा है भी वह भी दूर हो जायेगी।

श्रीरामकृष्ण– विमाता है, धक्के तो मिलते ही होंगे।

सब कुछ देर चुप रहे।

श्रीरामकृष्ण– (मास्टर से)– पूर्ण के साथ इसे तुम मिला क्यों नही देते ?

मास्टर– जी हॉ, मिला दूंगा। (द्विज से) पानीहाटी जाना।

श्रीरामकृष्ण– हॉ, इसीलिए मै सबसे कहा करता हूं—इसे भेज देना, उसे भेज देना। (मास्टर से) तुम जाओगे या नहीं ?

श्रीरामकृष्ण पानीहाटी के महोत्सव मे जायेगे। इसीलिए भक्तो से वहॉ जाने की बात कह रहे है।

मास्टर– जी हॉ, इच्छा तो है।

श्रीरामकृष्ण– बड़ी नाव किराये से ले ली जायेगी। वह डाँवा-डोल न होगी। गिरीश घोष क्या नही जायेगा ?

श्रीरामकृष्ण एकदृष्टि से द्विज को देख रहे है।

श्रीरामकृष्ण– अच्छा इतने लड़के है, उनमे यही आता है—यह क्यों ? कहो—पहले का कुछ जरूर रहा होगा।

मास्टर– जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण– संस्कार। गतजन्म मे कर्म किया हुआ है। अन्तिम जन्म मे मनुष्य सरल होता है। अन्तिम जन्म मे पागलपन का भाव रहता है।

"परन्तु है यह उनकी इच्छा। उनकी 'हाँ' से संसार के कुछ काम होते है और उनकी 'ना' से होनहार भी बन्द हो जाता है। इसीलिए तो आदमी को आशीर्वाद नही देना चाहिए।

"मनुष्य की इच्छा से कुछ नही होता। उन्ही की इच्छा से होता जाता है।

"उस दिन मैं कप्तान के यहाँ गया था। देखा, रास्ते से कुछ लड़के जा रहे थे। वे सब एक खास तरह के थे। एक लड़के को मैंने देखा, उन्नीस या बीस साल की उम्र रही होगी, बाल सँवारे हुए था, सीटी बजाता हुआ चला जा रहा था। कोई 'नगेन्द्र — क्षीरोद' कहता हुआ जा रहा था। देखा, कोई तमोगुण मे पड़ा हुआ है, बाँसुरी बजा रहा है, उसी के कारण कुछ अहकार हो गया है। (द्विज से) जिसे ज्ञान हो गया है, उसे निन्दा की क्या परवाह है ? उसकी बुद्धि कूटस्थ है—लोहार की निहाई जैसे, उस पर कितनी ही चोट पड चुकी, परन्तु उसका कही कुछ नही बिगड़ा।

"मैंने (अमुक के) बाप को देखा, रास्ते से चला जा

रहा था।"

मास्टर– बडा सरल आदमी है।

श्रीरामकृष्ण– परन्तु आँखे लाल रहती है।

श्रीरामकृष्ण कप्तान के यहाँ गये हुए थे। वहीं की बाते कर रहे है। जो लडके श्रीरामकृष्ण के पास आते हैं, कप्तान ने उनकी निन्दा की थी। हाजरा महाशय ने कप्तान के पास उनकी निन्दा की होगी।

श्रीरामकृष्ण– कप्तान से बाते हो रही थी। मैने कहा, पुरुष और प्रकृति के सिवा और कुछ भी नही है। नारद ने कहा था, 'हे राम, जितने पुरुष देखते हो सब मे तुम्हारा अंश है, और जितनी स्त्रियाँ देखते हो सब मे सीता का अंश है।'

"कप्तान को बड़ी प्रसन्नता हुई। उसने कहा, 'आप ही को यथार्थ बोध हुआ है। सब पुरुष राम के अंश से हुए अतएव राम है और सब स्त्रियाँ सीता के अश से हुई अतएव सीता हैं।' फिर थोड़ी ही देर मे वह लडकों की निन्दा करने लगा। कहा, वे लोग अंग्रेजी पढते है, जो पाते हैं वही खाते है,— वे लोग आपके पास सर्वदा जाते है, यह अच्छा नही। इससे आप पर बुरा प्रभाव पड सकता है। हाजरा ही एक सच्चा आदमी है। लड़को को अपने पास अधिक आने-जाने न दिया कीजिये। पहले तो मैंने कहा, 'आते है–– मै क्या करूँ?'

"फिर मैने उसे खूब सुनाया। उसकी लडकी हंसने लगी. मैने कहा, 'जिसमे विषय-बुद्धि है, उससे ईश्वर बहुत दूर है। विषय-बुद्धि अगर न रही तो ईश्वर उस आदमी की मुट्ठी मे है–– बहुत निकट है।' कप्तान ने राखाल की बात पर कहा, 'वह सब के यहाँ खाता है।' हाजरा से उसने सुना होगा। तब

मैने कहा, 'कोई चाहे लाख जप-तप करे, यदि उसमे विषय-बुद्धि है तो कही कुछ न होगा, और शूकर-मास खाने पर भी अगर किसी का मन ईश्वर पर है तो वह मनुष्य धन्य है। क्रमश ईश्वर की प्राप्ति उसे होगी ही। हाजरा इतना जप-तप करता है परन्तु भीतर दलाली करने की फिक्र मे रहता है।'

"तव कप्तान ने कहा, 'हाॅ, यह वात तो ठीक है।' मैने कहा, 'अभी अभी तो तुमने कहा,—सव पुरुप राम के अश से हुए अतएव राम है, और सव स्त्रियाॅ सीता के अश से हुई अतएव सीता है, इस तरह कहकर अव ऐसी वात कह रहे हो?'

"कप्तान ने कहा, 'हाॅ ठीक है—मगर आप भी तो सव को प्यार नही करते।'

"मैने कहा, 'आपो नारायण—सभी जल है, परन्तु कोई जल पिया जाता है, किसी से वरतन धोये जाते हैं, कोई शौच के काम आता है। यह जो तुम्हारी वीवी और लडकी वैठी हुई देख रहा हूं, ये साक्षात् आनन्दमयी है।' कप्तान कहने लगा, 'हाँ हाॅ, यह ठीक है।' तव मेरे पैर पकड़ने के लिए हाथ वढाने लगा।"

यह कहकर श्रीरामकृष्ण हँसने लगे। अव श्रीरामकृष्ण कप्तान के गुणों की वात कह रहे है।

श्रीरामकृष्ण– कप्तान मे वहुतसे गुण है। रोज नित्य-कर्म करता है, स्वय देवता की पूजा करता है। नहाते समय कितने ही मन्त्र जपा करता है। कप्तान एक वहुत वडा कर्मी है। पूजा, जप, आरती, पाठ, ये सव नित्यकर्म हमेशा किया करता है।

"फिर मै कप्तान को सुनाने लगा। मैने कहा, 'पढकर ही तुमने सव मिट्टी मे मिलाया, अव हरगिज न पढना।'

"मेरी अवस्था के सम्वन्ध मे कप्तान ने कहा, 'यह आसमान

मे चक्कर मारनेवाला भाव है।' जीवात्मा और परमात्मा, जीवात्मा एक पक्षी है और परमात्मा आकाश—चिदाकाश। कप्तान कहता है, 'तुम्हारा जीवात्मा चिदाकाश मे उड़ जाता है, इसीलिए समाधि होती हैं। (हँसकर) कप्तान ने वगालियों की निन्दा की। कहा, 'वगाली वेवकूफ है। पास ही मणि है और उन लोगो ने न पहचाना !'

"कप्तान का वाप वडा भक्त था। अग्रेजो की फौज मे सूवेदार था, एक हाथ से शिव की पूजा करता था और दूसरे से वन्दूक चलाता था।

(मास्टर से) "परन्तु वात यह है कि विपय के कामो में दिन-रात फँसा रहता है। जव जाता हूँ, देखता हूँ, वीवी और वच्चे घेरे रहते है। और कभी कभी हिसाव की वही भी लोग ले आते है। परन्तु कभी कभी ईश्वर की ओर भी मन जाता है। जैसे सन्निपात का रोगी, विकार-ग्रस्त वना ही रहता है परन्तु कभी जव होश मे आता है, तव 'पानी पिऊँगा, पानी पिऊँगा' कहकर चिल्ला उठता है। पर उसे जव तक पानी दो तव तक वह फिर वेहोश हो जाता है। इसीलिए मैने उससे कहा, तुम कर्मी हो। कप्तान ने कहा, 'जी, मुझे तो पूजा आदि के करने मे ही आनन्द आता है। जीवो के लिए कर्म के सिवा और उपाय भी नही है।'

"मैने कहा, 'तो क्या सदा ही कर्म करते रहना होगा ? मधु-मक्खी तभी तक भन्भन् करती हे जव तक वह फूल पर नहीं वैठ जाती। मधु पीते समय भन्भन् करना छूट जाता है।' कप्तान ने कहा, 'आपकी तरह हम लोग पूजा और कर्म छोड़ थोडे ही सकते है ?' परन्तु उसकी वात कुछ ठीक नही रहती। कभी तो कहता है, 'यह सव जड है' और कभी कहता है, 'सव चैतन्य है।'

पर मै कहता हूँ, 'जड कहाँ है? सभी कुछ तो चैतन्य है।'"

श्रीरामकृष्ण मास्टर से पूर्ण की बात पूछने लगे।

श्रीरामकृष्ण– पूर्ण को एक बार और देख लूँ तो मेरी व्याकुलता कम हो जाय। कितना चतुर है!— मेरी ओर आकर्षण भी खूब है।

"वह कहता है, 'आपको देखने के लिए मेरे हृदय मे भी न जाने कैसा हुआ करता है।'

(मास्टर से) "तुम्हारे स्कूल से उसके घरवालो ने उसे निकाल लिया, इससे तुम्हारे ऊपर कुछ बात तो न आयेगी?'

मास्टर– अगर वे (विद्यासागर) कहे— 'तुम्हारे लिए उसको स्कूल से निकाल लेना पडा'— तो मेरे पास भी कुछ जवाब है।

श्रीरामकृष्ण– क्या कहोगे?

मास्टर– यही कहूँगा कि साधुओ के साथ ईश्वर-चिन्ता होती है, यह कोई बुरा कर्म नही, और आप लोगो ने जो पुस्तक पढाने के लिए दी है, उसी मे है— ईश्वर को हृदय खोलकर प्यार करना चाहिए। (श्रीरामकृष्ण हँसने लगे)

श्रीरामकृष्ण– कप्तान के यहाँ छोटे नरेन्द्र को मैंने वुलाया। पूछा, 'तेरा घर कहाँ है?—चल चले।' उसने कहा, 'चलिये।' परन्तु डरता हुआ साथ जा रहा था की कही वाप को खवर न लग जाय। (सब हँसते है)

(अखिलवावू के पड़ोसी से) "क्यो जी, तुम वहुत दिनो से नही आये, सात-आठ महीने तो हुए होगे?"

पड़ोसी– जी, एक साल हुआ होगा।

श्रीरामकृष्ण– तुम्हारे साथ एक और आते थे।

पडोसी– जी हाँ, नीलमणिवावू।

श्रीरामकृष्ण– वे सब क्यों नही आते ?——एक बार उनसे आने के लिए कहना——उनसे मुलाकात करा देना। (पडोसी के साथ के बच्चे को देखकर) यह बच्चा कौन है ?

पडोसी– यह आसाम का है।

श्रीरामकृष्ण– आसाम कहाँ है ? किस ओर है ?

द्विज आशुतोष की बात करने लगे। कहा, 'आशुतोष के पिता उसका विवाह करनेवाले है, परन्तु उसकी इच्छा नही है।'

श्रीरामकृष्ण– देखो तो, उसकी इच्छा नही है और बलपूर्वक उसका विवाह किया जाता है।

श्रीरामकृष्ण एक भक्त से बडे भाई पर भक्ति करने के लिए कर रहे है। कहा—— बड़ा भाई पिता के समान होता है, उसका बडा सम्मान करना चाहिए।

(२)

श्रीरामकृष्ण तथा श्रीराधिका-तत्त्व। जन्ममृत्यु-तत्त्व

पण्डितजी बैठे हुए है। वे उत्तर प्रदेश के है।

श्रीरामकृष्ण– (हंसकर, मास्टर से)–भागवत के ये बड़े अच्छे पण्डित है।

मास्टर और भक्तगण एकदृष्टि से पण्डितजी को देख रहे है।

श्रीरामकृष्ण– (पण्डितजी से)–क्यो जी, योगमाया क्या है ?

पण्डितजी ने योगमाया की एक तरह की व्याख्या की।

श्रीरामकृष्ण– राधिका को योगमाया क्यो नही कहते ?

पण्डितजी ने इस प्रश्न का उत्तर भी एक खास तरह का दिया। तब श्रीरामकृष्ण ने कहा—— "राधिका विशुद्ध सत्त्व की थी——वे प्रेममयी थी। योगमाया के भीतर तीनों गुण है, सत्त्व, रज और तम, परन्तु राधिका के भीतर शुद्ध सत्त्व के सिवाय

और कुछ न था। (मास्टर से) नरेन्द्र अब श्रीमती को वहुत मानता है। वह कहता है, 'सच्चिदानन्द को प्यार करने की शिक्षा अगर किसी को लेनी है तो राधिका से लेनी चाहिए।'

"सच्चिदानन्द ने स्वयं ही अपना रसास्वादन करने के लिए राधिका की सृष्टि की थी। राधिका सच्चिदानन्द कृष्ण के अग से निकली थी। 'आधार' सच्चिदानन्द कृष्ण ही है और श्रीमती के रूप मे स्वय ही 'आधेय' है---अपना रसास्वादन करने के लिए अर्थात् सच्चिदानन्द को प्यार करके आनन्द-सम्भोग करने के लिए।

"इसीलिए वैष्णवो के ग्रन्थ मे है, राधा ने जन्मग्रहण के बाद आँखे नही खोली थी। यह भाव था कि इन आँखो से और किसे देखूँ! राधिका को देखने के लिए यशोदा जब कृष्ण को गोद मे लेकर गयी थी, तव उन्होने कृष्ण को देखने के लिए आँखे खोली थी। कृष्ण ने क्रीड़ा के वहाने राधिका की आँखो पर हाथ फेरा था। (नये आये हुए आसाम के लड़के से) तूने देखा है, छोटा-सा बच्चा दूसरो की आँखो पर हाथ फेरता है?"

पण्डितजी बिदा होने लगे।

पण्डितजी-- मै घर जाऊँगा।

श्रीरामकृष्ण-- (सस्नेह) --कुछ प्राप्त हुआ?

पण्डितजी-- भाव गिरा हुआ है---रोजगार नही चलता।

कुछ देर बाद श्रीरामकृष्ण को प्रणाम करके पण्डितजी विदा हुए।

श्रीरामकृष्ण-- (मास्टर से)-- देखो, विषयी लोगो और वच्चो मे कितना अन्तर है। यह पण्डित दिन-रात रुपया-रुपया कर रहा है। पेट के लिए कलकत्ता आया हुआ है। नही तो घर के आदमियो को भोजन नही मिलता। इसीलिए इसके-उसके दरवाजे

दौडना पड़ता है। मन को एकाग्र करके ईश्वर की चिन्ता कव करे? परन्तु लडको मे कामिनी और कांचन नही है। इच्छा करने से ही ये ईश्वर पर मन लगा सकते है।

"लड़के विषयी मनुष्यों का संग पसन्द भी नही करते। राखाल कहता था, 'विषयी आदमी को आते हुए देखकर भय होता है।'

"मुझे जब पहले-पहल यह अवस्था हुई तव विषयी आदमी को आते हुए देखकर कमरे का दरवाजा बन्द कर लेता था।

"कामारपुकुर मे श्रीराम मल्लिक को इतना मै प्यार करता था, परन्तु जब वह यहाँ आया तव उसे छू भी न सका।

"श्रीराम से बचपन मे बड़ा मेल था। दिनरात हम दोनो एक साथ रहते थे। एक साथ सोते थे। तब सोलह-सत्रह साल की उम्र थी। लोग कहते थे, इनमे से अगर एक औरत होता तो साथ ही विवाह भी हो जाता! उसके घर मे हम दोनो खेलते थे। उस समय की सब बाते याद आ रही है। उनके सम्बन्धी पालकी पर चढकर आया करते थे, कहार 'हिजोड़ा हिजोड़ा' कहा करते थे।

"श्रीराम को देखने के लिए कितने ही वार मैने बुला भेजा। अब चानक मे उसने दूकान खोली है। उस दिन आया था, यहाँ दो दिन रहा था।

"श्रीराम ने कहा, 'मेरे तो लड़के-वाले नही हुए, भतीजे को पालकर आदमी कर रहा था कि वह भी गुजर गया।' कहते ही कहते श्रीराम ने लम्बी साँस छोड़ी, आँखो मे पानी भर आया। भतीजे के लिए दुःख करने लगा।

"फिर उसने कहा, 'लडका नही हुआ था, इसलिए स्त्री का पूरा प्यार उसी भतीजे पर पड़ा था। अब वह शोक से अधीर हो रही है। मै उसे बहुत समझाता हूँ, पगली, अव शोक करने

से क्या होगा ? तू वाराणसी जायेगी ?'

"अपनी स्त्री को वह पागल कहता था। भतीजे के लिए दुःख करने से वह एकदम dilute हो गया (गल गया)।

"मै उसे छू नही सका। देखा, उसमे कोई माद्दा (तत्त्व) नहीं है।"

श्रीरामकृष्ण शोक के सम्बन्ध मे यही सब बाते कह रहे है। इधर कमरे के उत्तर ओरवाले दरवाजे के पास वह शोक-विह्वल ब्राह्मणी खड़ी हुई है। ब्राह्मणी विधवा है। उसके एक मात्र लड़की थी। उसका विवाह वहुत वड़े घराने मे हुआ था। उस लड़की के पति राजा की उपाधि पाये हुए है। कलकत्ते मे रहते है, जमीदार है। लड़की जब अपने मायके आती थी, तब साथ सशस्त्र सिपाही पालकी के आगे-पीछे लगे हुए आते थे। माता की छाती उस समय गज भर की हो जाती थी। वह एकलौती लड़की, कुछ दिन हुए, गुजर गयी है।

ब्राह्मणी खड़ी हुई भतीजे के वियोग से राम मल्लिक की क्या दशा थी, सुन रही थी। कई दिनो से वह लगातार वागवाजार से पागल की तरह श्रीरामकृष्ण के पास दौड़ी हुई आती थी, इसलिए कि अगर कोई उपाय हो जाय—अगर वे इस दुर्जेय शोक के निराकरण की कोई व्यवस्था कर दे। श्रीरामकृष्ण फिर वातचीत करने लगे—

(ब्राह्मणी और भक्तो से) "एक आदमी यहाँ आया था। कुछ देर वैठने के वाद कहा, 'जाऊँ, जरा बच्चे का चाँदमुख भी देखूँ।'

"तव मुझसे नही रहा गया। मैने कहा, 'क्या कहा रे, उठ यहाँ से, ईश्वर के चाँदमुख से वढ़कर बच्चे का चाँदमुख ?'

(मास्टर से) "वात यह है कि ईश्वर ही सत्य है और सब अनित्य। जीव-जगत्, घर-द्वार, लडके-वच्चे, यह सव वाजीगर का इन्द्रजाल है। वाजीगर डण्डे से ढोल पीटता है और कहता है, 'देख तमाशा मेरा—तू देख तमाशा मेरा।' वस ढक्कन खोला नही कि कुछ पक्षी उसमे से निकलकर आकाश मे उड़ गये। परन्तु बाजीगर ही सत्य है और सब अनित्य—अभी है, थोड़ी देर मे गायब।

"कैलाश मे शिव बैठ हुए थे। पास ही नन्दी थे। उसी समय एक बहुत वड़ा शब्द हुआ। नन्दी ने पूछा, 'भगवन्, यह कैसी आवाज है?' शिव ने कहा, 'रावण पैदा हुआ है, यह उसी की आवाज है।' कुछ देर बाद फिर एक आवाज आयी। नन्दी ने पूछा, 'यह कैसी आवाज है?' शिव ने हँसकर कहा, 'यह रावण मारा गया।' जन्म और मृत्यु, यह सब इन्द्रजाल-सा है। अभी है, अभी गायब! ईश्वर ही सत्य है और सव अनित्य। पानी ही सत्य है, पानी के बुलबुले अभी हैं, अभी नही—बुलबुले पानी में ही मिल जाते है,—जिस जल से उनकी उत्पत्ति होती है, उसी जल मे अन्त मे वे लीन भी हो जाते है।

"ईश्वर महासमुद्र है, जीव बुलबुले; उसी मे पैदा होते है, उसी मे लीन हो जाते है। लड़के-बच्चे एक बड़े बुलबुले के साथ मिले हुए कई छोटे छोटे बुलबुले है।

"ईश्वर ही सत्य है। उन पर कैसे भक्ति हो, उन्हे किस तरह प्राप्त किया जाय, इस समय यही चेष्टा करो। शोक करने से क्या होगा?"

सव चुप है। ब्राह्मणी ने कहा, 'तो अब मै जाऊँ?'

श्रीरामकृष्ण—(ब्राह्मणी से, सस्नेह)—तुम इस समय जाओगी?

धूप बहुत तेज है, क्यो, इन लोगों के साथ गाड़ी पर जाना।

आज जेठ की संक्रान्ति है। दिन के तीन-चार बजे का समय होगा। गरमी बड़े जोर की पड़ रही है। एक भक्त श्रीरामकृष्ण के लिए चन्दन का एक नया पखा लाये है। श्रीरामकृष्ण पंखा पाकर बड़े प्रसन्न हुए, कहा, "वाह-वाह। ॐ तत् सत् काली!" यह कहकर पहले देवताओ को पंखा झलने लगे। फिर मास्टर से कह रहे है, 'देखो, कैसी हवा आती है!' मास्टर भी प्रसन्न होकर देख रहे है।

(३)

दास 'मै'। अवतारवाद

वच्चे को साथ लेकर कप्तान आये है। श्रीरामकृष्ण ने किशोरी से कहा, इन्हे सब दिखा लाओ— ठाकुरबाड़ी आदि।

श्रीरामकृष्ण कप्तान से वातचीत कर रहे है। मास्टर, द्विज आदि भक्त जमीन पर वैठे हुए है। दमदम के मास्टर भी आये हैं। श्रीरामकृष्ण छोटे तखत पर उत्तर की ओर मुँह किये बैठे है। कप्तान से उन्होने तखत के एक ओर अपने सामने बैठने के लिए कहा।

श्रीरामकृष्ण— इन लोगो से तुम्हारी बाते कहा रहा था। तुममे कितनी भक्ति है, कितनी पूजा करते हो, कितने प्रकार से आरती करते हो, यह सव वतला रहा था।

कप्तान (लज्जित होकर)—मै क्या पूजा और आरती करूँगा? मै क्या हूँ?

श्रीरामकृष्ण— जो 'मै' कामिनी और काचन मे पड़ा हुआ है, उसी 'मै' मे दोष है। मै ईश्वर का दास हूँ, इस 'मै' मे दोष नही। और वालक का 'मै'— वालक किसी गुण के वश नही

है; अभी लड़ाई कर रहा है, देखते-देखते, मेल हो गया। कितने ही यत्न से अभी अभी खेलने का घरौंदा बनाया, फिर बात की बात मे उसे बिगाड़ डाला! दास 'मैं' और बच्चे के 'मै' मे दोष नही है। यह 'मै' 'मै' मे नहीं गिना जाता, जैसे मिश्री मिठाई मे नही गिनी जाती— दूसरी मिठाई से बीमारी फैलती है, परन्तु मिश्री अम्लनाश करती है— जैसे ओकार की गणना शब्दो मे नही है।

"इस अह से ही सच्चिदानन्द को प्यार किया जाता है। अहं जाने का है ही नही— इसीलिए दास 'मै' और भक्त का 'मै' है। नही तो आदमी क्या लेकर रहे? गोपियो का प्रेम कितना गहरा था! (कप्तान से) तुम गोपियो की बात कुछ कहो—तुम इतना भागवत पढते हो।"

कप्तान– श्रीकृष्ण वृन्दावन मे थे, कोई ऐश्वर्य नही था, तो भी गोपियाँ उन्हें प्राणो से अधिक प्यार करती थी। इसीलिए श्रीकृष्ण ने कहा था, 'मै कैसे उनका ऋण शोध करूँगा, जिन गोपियों ने मुझे सब कुछ समर्पित कर दिया है— देह, मन, चित्त?'

श्रीरामकृष्ण को भावावेश हो रहा है। 'गोविन्द, गोविन्द, गोविन्द' कहकर भावाविष्ट हो रहे है। प्रायः बाह्यज्ञान-शून्य है। कप्तान विस्मयावेश में 'धन्य है, धन्य है' कह रहे है।

कप्तान तथा अन्य भक्तगण श्रीरामकृष्ण की यह अद्भुत प्रेमावस्था देख रहे है। जब तक वे प्राकृत दशा मे न आ जायँ, तब तक वे चुपचाप एकदृष्टि से देख रहे है।

श्रीरामकृष्ण– इसके बाद?

कप्तान– वे योगियों के लिए भी अगम्य है, 'योगिभिरगम्यम्'। आपकी तरह योगियो के लिए भी अगम्य है, गोपियो के लिए

गम्य है। योगियों ने वर्षो तक योग-साधना करके जिन्हे नहीं पाया, गोपियों ने अनायास ही उन्हे प्राप्त कर लिया।

श्रीरामकृष्ण– (सहास्य)– गोपियों के पास भोजन-पान, हंसना-रोना, क्रीड़ा-कौतुक, यह सब हो चुका।

एक भक्त ने कहा, 'श्रीयुत बंकिम ने कृष्ण-चरित्र लिखा है।'

श्रीरामकृष्ण– बंकिम कृष्ण को मानता है, श्रीमती को नहीं मानता।

कप्तान– वे शायद श्रीकृष्ण-लीला नही मानते।

श्रीरामकृष्ण– सुना, वह कहता है, काम आदि की जरूरत है!

दमदम के मास्टर– 'नवजीवन' मे बंकिम ने लिखा है, धर्म की आवश्यकता शारीरिक, मानसिक और अध्यात्मिक प्रवृत्तियो की स्फूर्ति के लिए है।

कप्तान– 'कामादि की आवश्यकता है'— यह कहते है, फिर भी लीला नही मानते! ईश्वर मनुष्य के रूप मे वृन्दावन में आये थे, पर राधा और कृष्ण की लीला हुई थी यह नही मानते?

श्रीरामकृष्ण– (सहास्य)– ये सब बाते संवाद-पत्रो मे नही है, फिर किस तरह मान ली जायँ?

"एक ने अपने मित्र से आकर कहा, 'देखो जी, कल उस मुहल्ले से मै जा रहा था, उसी समय देखा, वह मकान भरभराकर गिर गया।' मित्र ने कहा, 'जरा ठहरो, अखवार देखूँ।' घर के भरभराकर गिरने की वात अखवार मे तो कही कुछ न थी। तव उस आदमी ने कहा, 'क्यों जी, अखवार मे तो कही कुछ नही लिखा। तुम्हारा कहना सच नही दिखता।' उस आदमी ने कहा, 'मै स्वयं देखकर आ रहा हूँ।' उसने कहा, 'यह हो सकता है, परन्तु अखवार मे यह वात नही लिखी, इसलिए लाचार

होकर मुझे इस पर विश्वास नही आता।' ईश्वर आदमी होकर लीला करते है, यह बात कैसे वे लोग मानेगे ? यह बात उनकी अंग्रेजी शिक्षा के घेरे मे नहीं जो है! पूर्ण अवतार का समझाना बहुत मुश्किल है, क्यो जी ? साढे तीन हाथ के भीतर अनन्त का समा जाना ?"

कप्तान– 'कृष्णस्तु भगवान् स्वयम्' कहते समय पूर्ण और अंश इस तरह कहना पड़ता है।

श्रीरामकृष्ण–[पूर्ण और अंश, जैसे अग्नि और उसका स्फुलिंग। अवतार भक्तों के लिए है— ज्ञानी के लिए नहीं। अध्यात्म-रामायण में है, 'हे राम! तुम्ही व्याप्य हो, तुम्ही व्यापक हो'— 'वाच्यवाचकभेदेन त्वमेव परमेश्वर।'

कप्तान– वाच्य-वाचक अर्थात् व्याप्य-व्यापक।

श्रीरामकृष्ण– व्यापक अर्थात् जैसे एक छोटासा रूप—जैसे अवतार आदमी का रूप धारण करते हैं।

(४)

अहंकार ही विनाश का कारण तथा ईश्वर-लाभ में विघ्न है

सब बैठे हुए है। कप्तान और भक्तों के साथ श्रीरामकृष्ण वातचीत कर रहे है। इसी समय ब्राह्मसमाज के जयगोपाल सेन और त्रैलोक्य आये, प्रणाम करके उन्होने आसन ग्रहण किया। श्रीरामकृष्ण हँसते हुए त्रैलोक्य की ओर देखकर वातचीत कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण– अहकार है, इसीलिए तो ईश्वर के दर्शन नही होते। ईश्वर के घर के दरवाजे के रास्ते मे अहंकाररूपी ठूंठ पड़ा हुआ है। इस ठूंठ के उस पार गये विना कमरे मे प्रवेश नही किया जा सकता।

" एक आदमी प्रेतसिद्ध हो गया था। सिद्ध होकर उसने पुकारा नही कि भूत आ गया। आकर कहा, 'बतलाओ, कौनसा काम करना होगा? अगर नही कह सकोगे तो तुम्हारी गरदन मरोड़ दूंगा।' उस आदमी ने, जितने काम थे, एक एक करके सब करा लिये। फिर उसे कोई नया काम ही नही सूझता था। प्रेत ने कहा, 'अब तुम्हारी गरदन मरोड़ता हूँ।' उसने कहा, 'जरा ठहरो, अभी आया।' इतना कहकर वह अपने गुरु के पास गया और उनसे कहा, 'महाराज, मैं बड़ी विपत्ति मे हूँ,' और सब हाल कह सुनाया। तब गुरु ने कहा, 'तू एक काम कर, उसे एक छल्लेदार बाल सीधा करने के लिए दे।' प्रेत दिन-रात वही काम करने लगा। पर छल्लेदार बाल भी कभी सीधा होता है? ज्यों का त्यो टेढा बना रहा। इसी तरह अहंकार भी देखते ही देखते गया और देखते ही देखते फिर आ गया।

" अहंकार का त्याग हुए बिना ईश्वर की कृपा नहीं होती।

" जिस मकान मे कोई काम-काज (ब्राह्मण-भोजन, विवाह आदि) रहता है तो जब तक भाण्डार मे कोई भण्डारी बना रहता है, तब तक मालिक का चक्कर उधर नही लगता। पर जब भण्डारी स्वयं भाण्डार छोड़कर चला जाता है, तब मालिक उस भाण्डार-घर मे ताला लगा देता है और उसका इन्तजाम खुद करने लगता है।

" ईश्वर मानो बच्चे का वली—बच्चा अपनी जायदाद खुद नही सम्हाल सकता। राजा उसका भार लेते है। अहंकार के गये बिना ईश्वर भार नही लेते।

"वैकुण्ठ मे श्रीलक्ष्मी और नारायण बैठे हुए थे। एकाएक नारायण उठकर खड़े हो गये। श्रीलक्ष्मी चरणसेवा कर रही

थी। उन्होंने पूछा, 'महाराज, कहाँ चले?' नारायण ने कहा, 'मेरा एक भक्त बड़ी विपत्ति मे पड़ गया है, उसकी रक्षा के लिए जा रहा हूँ।' यह कहकर नारायण चले गये। परन्तु उसी समय फिर आ गये। लक्ष्मी ने पूछा, 'भगवन्, इतनी जल्दी कैसे आ गये?' नारायण ने हँसकर कहा, 'प्रेम से विह्वल वह भक्त रास्ते से चला जा रहा था। रास्ते मे धोबियो ने सूखने के लिए कपडे फैलाये थे। वह भक्त उन कपड़ो के ऊपर से जा रहा था, यह देखकर लाठी लेकर धोबी लोग मारने के लिए चले, इसीलिए मै गया था।' श्रीलक्ष्मी ने पूछा, 'तो इतनी जल्दी फिर कैसे आ गये?' नारायण ने हँसते हुए कहा, 'जाकर मैने देखा, उस भक्त ने धोबियों को मारने के लिए खुद ही पत्थर उठा लिया है। (सब हँसते है) इसीलिए मै फिर नही गया।'

"केशव सेन से मैने कहा था, 'अह' का त्याग करना होगा। इस पर केशव ने कहा, 'तो महाराज, दल फिर कैसे रह सकता है?'

"मैने कहा, यह तुम्हारी कैसी बुद्धि है,--तुम 'कच्चे मै' का त्याग करो, --जो 'मै' कामिनी और काचन की ओर ले जाता है। परन्तु मै 'पक्के मै'--'भक्त के मै'--'दास के मै' का त्याग करने के लिए नही कहता। मै ईश्वर का दास हूँ,--ईश्वर की सन्तान हूँ, इसका नाम है 'पक्का मै'। इसमे कोई दोष नही।"

त्रैलोक्य-- अहकार का जाना बहुत कठिन है। लोग सोचते है, अहकार मुझमे नही है।

श्रीरामकृष्ण-- कही अहंकार न हो जाय, इसलिए गौरी 'मै' का प्रयोग ही नही करता था-- 'ये' कहता था! मै भी उसकी देखादेखी 'ये' कहने लगा, 'मैने खाया है' यह न कहकर कहता था, 'इसने खाया है।' यह देखकर एक दिन मथुरबाबू ने कहा,

'यह क्या है बाबा---तुम ऐसा क्यों कहते हो ? यह सब उन लोगों को कहने दो, उनमे अहकार है। तुम्हारे कुछ अहंकार थोड़े ही है, तुम्हे इस तरह बोलने की कोई जरूरत नही।'

"केशव से मैने कहा, 'मै' जाने का तो है ही नही, अतएव उसे दासभाव से पड़ा रहने दो---जैसे दास पड़ा रहता है। प्रह्लाद दो भावो से रहते थे। कभी 'सोऽहम्' का अनुभव करते थे---तुम्ही 'मै' हो---मै ही 'तुम' हूँ। फिर जब अह-बुद्धि आती थी, तव देखते थे, मै दास हूँ---तुम प्रभु हो। एक बार पक्का सोऽहम् अगर हो गया, तो फिर दासभाव से रहना आसान हो जाता है---मै तुम्हारा दास हूँ इस भाव से।

(कप्तान से) "ब्रह्मज्ञान होने पर कुछ लक्षणो से समझ में आ जाता है। श्रीमद्भागवत मे ज्ञानी की चार अवस्थाओ की बाते लिखी है---पहली बालवत्, दूसरी जड़वत्, तीसरी उन्मत्तवत्, चौथी पिशाचवत्। पाँच साल के लड़के जैसी अवस्था हो जाती है। फिर कभी वह पागल की तरह व्यवहार करता है।

"कभी जड़ की तरह रहता है। इस अवस्था मे वह कर्म नहीं कर सकता, कर्म छूट जाते है। परन्तु अगर कहो कि जनक आदि ने तो कर्म किया था, तो असल वात यह है कि उस समय के आदमी कर्मचारियो पर भार देकर निश्चिन्त रहते थे, और उस समय के आदमी भी वड़े विश्वासी होते थे।"

श्रीरामकृष्ण कर्मत्याग की बातें करने लगे। और जिनकी काम पर आसक्ति है, उन्हे अनासक्त होकर कर्म करने का उपदेश देने लगे।

श्रीरामकृष्ण--ज्ञान के होने पर मनुष्य अधिक कर्म नही कर सकता।

त्रैलोक्य– क्यो ? पवहारी बाबा इतने योगी तो है, परन्तु लोगों के झगड़े और विवादों का फैसला कर दिया करते है—यहाँ तक कि मुकदमे का भी फैसला कर देते है।

श्रीरामकृष्ण– हाँ, यह ठीक है, दुर्गाचरण डाक्टर इतना शराबी तो है, परन्तु काम के समय उसके होश दुरुस्त ही रहते है— चिकित्सा के समय किसी तरह की भूल नही होने पाती। भक्ति प्राप्त करके कर्म किया जाय तो कोई दोष नही होता। परन्तु है यह बड़ी कठिन बात, वड़ी तपस्या चाहिए।

"ईश्वर ही सब कुछ कर रहे है, मैं यन्त्र-स्वरूप हूँ। कालीमन्दिर के सामने सिक्ख लोग कह रहे थे, 'ईश्वर दयामय है।' मंने पूछा, 'दया किन पर करते है ?'

"सिक्खो ने कहा, 'महाराज, हम सब पर उनकी दया है।'

"मैने कहा, 'सब उनके लड़के है तो लड़कों पर फिर दया कैसी ? वे अपने लडको की देखरेख कर रहे है, वे नही देखेगे तो क्या अड़ोसी-पडोसी आकर देखेगे ?' अच्छा देखो, जो लोग ईश्वर को दयामय कहते है वे यह नही समझते कि वे किसी दूसरे के लड़के नही, ईश्वर की ही सन्तान है।"

कप्तान– जी हाँ, ठीक है, पर वे ईश्वर को अपना नही मानते।

श्रीरामकृष्ण– तो क्या हम ईश्वर को दयामय न कहे ? अवश्य कहना चाहिए— जब तक हम साधना की अवस्था में हैं। उन्हें प्राप्त कर लेने पर अपने माँ-बाप पर जो भाव रहता है, वही उन पर भी हो जाता है। जब तक ईश्वर-लाभ नही होता, तब तक जान पडता है, हम बहुत दूर के आदमी है,— दूसरे के बच्चे है।

"साधना की अवस्था मे उनसे सब कुछ कहना चाहिए। हाजरा ने एक दिन नरेन्द्र से कहा था, 'ईश्वर अनन्त है। उनका ऐश्वर्य

अनन्त है। वे क्या कभी सन्देश और केले खाने लगेंगे ? या गाना सुनेंगे ? यह सब मन की भूल है।'

"सुनते ही नरेन्द्र मानो दस हाथ धँस गया। तब मैंने हाजरा से कहा, 'तुम कैसे पाजी हो ? अगर बाल-भक्तो से ऐसी बात कहोगे तो वे ठहरेंगे कहाँ ?' भक्ति के जाने पर आदमी फिर क्या लेकर रहे ? उनका ऐश्वर्य अनन्त है, फिर भी वे भक्ताधीन है, बड़े आदमी का दरवान बाबुओं की सभा मे एक ओर खडा हुआ है, हाथ मे एक चीज है--- कपडे से ढकी हुई, वह बड़े सकोच भाव से खड़ा हुआ है। बाबू ने पूछा, 'क्यो दरवान, तुम्हारे हाथ मे यह क्या है ?' दरवान ने सकोच के साथ एक शरीफा निकालकर बाबू के सामने रखा--- उसकी इच्छा थी कि बाबू उसे खायँ। दरवान का भक्तिभाव देखकर बाबू ने शरीफा बड़े आदर के साथ ले लिया, और कहा, 'वाह ! बड़ा अच्छा शरीफा है। तुम कहाँ से इतना कष्ट करके इसे लाये ?'

"वे भक्ताधीन है। दुर्योधन ने इतनी खातिर की और कहा, 'महाराज, यही जलपान कीजिये।' परन्तु श्रीठाकुरजी विदुर की कुटी पर चले गये। वे भक्तवत्सल है, विदुर का शाकान्न बडे प्रेम से अमृत समझकर खाया।

"पूर्ण ज्ञानी का एक लक्षण और है,--- पिशाचवत्--- न खाने-पीने का विचार है, न शुचिता, न अशुचिता का। पूर्ण ज्ञानी और पूर्ण मूर्ख, दोनों के बाहरी लक्षण एक ही तरह के है। पूर्ण ज्ञानी को देखो, गगा नहाकर कभी मन्त्र जपता ही नही; ठाकुर-पूजा करते समय सब फूल एक साथ ठाकुरजी के पैरो पर चढा दिये और चला आया, कोई तन्त्र-मन्त्र नही जपा।

"जितने दिन संसार मे भोग करने की इच्छा रहती है, उतने

दिनो तक मनुष्य कर्मो का त्याग नही कर सकता। जव तक भोग की आशा.है, तव तक कर्म है।

"एक पक्षी जहाज के मस्तूल पर अन्यमनस्क वैठा था। जहाज गगागर्भ मे था। धीरे-धीरे महासमुद्र मे आ गया तव पक्षी को होश आया, उसने चारो ओर देखा, कही भी किनारा दिखलायी नही पड़ता था। तव किनारे की खोज करने के लिए वह उत्तर की ओर उड़ा। वहुत दूर जाकर थक गया। फिर भी किनारा उसे नही मिला। तव क्या करे, लौटकर फिर मस्तूल पर आकर बैठा। कुछ देर के वाद, वह पक्षी फिर उड़ा, इस वार पूर्व की ओर गया। उस तरफ भी उसे कही छोर न मिला। चारो ओर समुद्र ही समुद्र था। तव वहुत ही थककर फिर जहाज के मस्तूल पर आ बैठा। फिर कुछ विश्राम करके दक्षिण ओर गया, पश्चिम ओर गया। पर उसने देखा कि कही ओर-छोर ही नही है। तव लौटकर वह फिर उसी मस्तूल पर बैठ गया। इसके वाद फिर नही उड़ा। निश्चेष्ट होकर बैठा रहा। तव मन मे किसी प्रकार की चचलता या अशान्ति नही रही। निश्चिन्त हो गया, फिर कोई चेष्टा भी नही रही।"

कप्तान– वाह! कैसा दृष्टान्त है!

श्रीरामकृष्ण– ससारी आदमी सुख के लिए जव चारो ओर भटके फिरते है, और नही पाते, तो अन्त मे थक जाते है। जव कामिनी और काचन पर आसक्त होकर केवल दुःख ही दुःख उनके हाथ लगता है, तभी उनमे वैराग्य आता है— तभी त्याग का भाव पैदा होता है। वहुतेरे ऐसे है जो विना भोग किये त्याग नही कर सकते। कुटीचक और वहूदक, ये दो होते है। साधकों मे भी वहुतेरे ऐसे है, जो अनेक तीर्थो की यात्रा किया करते है।

एक जगह पर स्थिर होकर नही बैठ सकते। बहुतसे तीर्थो का उदक अर्थात् पानी पीते है। जब घूमते हुए उनका क्षोभ मिट जाता है तब किसी एक जगह कुटी बनाकर स्थिर हो जाते है और निश्चित तथा चेष्टाशून्य होकर परमात्मा का चिन्तन किया करते हैं।

"परन्तु ससार मे कोई भोग भी क्या करेगा?—कामिनी और कांचन का भोग? वह तो क्षणिक आनन्द है। अभी है, अभी नही।

"प्राय: मेघ छाये रहते है, वर्षा लगी हुई है; सूर्य नही दीख पड़ता। दु ख का भाग ही अधिक है। कामिनी-कांचनरूपी मेघ सूर्य को देखने नही देता।

"कोई कोई मुझसे पूछते है, 'महाराज, ईश्वर ने क्यो इस तरह के ससार की सृष्टि की? हम लोगो के लिए क्या कोई उपाय नही है?'

(५)

उपाय—व्याकुलता। त्याग

"मै कहता हूं, उपाय है क्यों नही? उनकी शरण मे जाओ और व्याकुल होकर प्रार्थना करो, ताकि अनुकूल वायु चलने लगे, जिससे शुभ योग आ जायँ। व्याकुल होकर पुकारोगे तो वे अवश्य सुनेगे।

"एक के लड़के का अब-तब हो रहा था। वह आदमी व्याकुल होकर इधर-उधर उपाय पूछता फिरता था। एक ने कहा, 'तुम अगर एक उपाय कर सको तो लडका अच्छा हो जायेगा। अगर स्वाति नक्षत्र का पानी मुर्दे की खोपड़ी पर गिरे और उसी मे रुक जाय, फिर अगर एक मेढक उस पानी को पीने के लिए बढ़े और साँप उसे खदेड़े, खदेड़कर पकड़ते समय मेढक उछलकर उस

खोपडी को पार कर जाय और साँप का विप उसी खोपड़ी में गिर जाय, और वह विषैला पानी अगर रोगी को थोड़ासा पिला सको, तो वह अच्छा हो सकता है।' वह आदमी उसी समय स्वाति नक्षत्र मे उस दवा की तलाश के लिए निकला। उसी समय पानी बरसना भी शुरू हो गया। तब वह व्याकुल होकर ईश्वर से कहने लगा, 'भगवन्, अब मुर्दे की खोपडी भी कही से ला दो।' खोजते हुए उसे मुर्दे की खोपडी भी मिल गयी। उसमें स्वाति नक्षत्र का पानी भी पड़ा हुआ था। तब वह प्रार्थना करके कहने लगा, 'जय हो तुम्हारी भगवन्, अब और जो कुछ रह गया है वह भी सब जुटा दो— मेढक और साँप।' उसकी जैसी व्याकुलता थी, वैसी ही शीघ्रता से सब सामान भी इकट्ठे होते गये। देखते ही देखते एक साँप मेढक का पीछा करते हुए आने लगा। और काटते समय उसका विष भी उसी खोपड़ी मे गिर गया।

"ईश्वर की शरण मे जाकर, उन्हे व्याकुल होकर पुकारने पर वे उस पुकार पर अवश्य ही ध्यान देगे,— सब सुयोग वे स्वयं जुटा देगे।"

कप्तान– कैसा सुन्दर दृष्टान्त है !

श्रीरामकृष्ण–हाँ, वे स्वयं सब सुयोग जुटा देते है। कभी ऐसा भी होता है कि विवाह नही हुआ, सब मन ईश्वर पर चला गया। कभी यह होता है कि भाई रोजगार करते है, या एक लड़का तैयार हो जाता है, तो फिर उस व्यक्ति को स्वयं संसार का काम नही सम्हालना पड़ता, तब वह अनायास ही सोलहों आना मन ईश्वर को समर्पित कर सकता है। परन्तु बात यह है कि कामिनी और कांचन का त्याग हुए बिना कही कुछ नही होता। त्याग होने पर ही अज्ञान और अविद्या का नाश होता है। आतशी शीशे

पर सूर्य की किरणों के पड़ने पर कितनी चीजें जल जाती है, परन्तु कमरे के भीतर छाया है, वहाँ आतशी शीशे के ले जाने पर यह वात नही होती। घर छोड़कर वाहर निकलकर खड़े होना चाहिए।

"परन्तु ज्ञान-लाभ के बाद कोई कोई ससार मे रहते भी है। वे घर और वाहर दोनो देखते है। ज्ञान का प्रकाश संसार पर पड़ता है, इसीलिए वे भला-वुरा, नित्य-अनित्य, सब उसके प्रकाश मे देख सकते हैं।

"जो अज्ञानी है, ईश्वर को नही मानते और संसार मे रहते है उनका रहना मिट्टी के घरो मे ही रहने के समान है। क्षीण प्रकाश से वे घर का भीतरी हिस्सा ही देखते है। परन्तु जिन्होंने ज्ञान-लाभ कर लिया है, ईश्वर को जान लिया है, और फिर संसार मे रहते है, वे मानो शीशे के मकान मे रहते है। वे घर के भीतर भी देखते है और वाहर भी। ज्ञान-सूर्य का प्रकाश घर के भीतर खूव प्रवेश करता है। वह आदमी घर के भीतर की चीजे वहुत ही स्पष्ट देखता है— कौनसी चीज अच्छी है, कौन वुरी; क्या नित्य है और क्या अनित्य, यह सव वह स्पष्ट रीति से देख लेता है।

"ईश्वर ही कर्ता है, और सव उनके यन्त्र की तरह है।

"इसीलिए ज्ञानी के लिए अहकार करने की जगह नही है। जिसने महिम्न-स्तव लिखा था, उसे अहकार हो गया था। शिव के नन्दी वैल ने जव दाँत दिखलाये तब उसका अहंकार गया था। उसने देखा, एक एक दाँत उसके स्तव का एक एक मन्त्र था। इसका अर्थ क्या है, जानते हो? ये सब मन्त्र अनादिकाल से है, तुमने इनका उद्धार मात्र किया है।

"गुरुआई करना अच्छा नही। ईश्वर का आदेश पाये बिना

कोई आचार्य नही हो सकता। जो स्वय कहता है, मैं गुरु हूँ, उसकी वुद्धि मे नीचता है। तराजू तुमने देखा है न? जिधर हलका होता है, उधर ही का पलड़ा उठ जाता है। जो आदमी खुद ऊँचा होना चाहता है, वह हलका है। सभी गुरु वनना चाहते है!— शिष्य कही खोजने पर भी नही मिलता।"

त्रैलोक्य छोटे तखत के उत्तर ओर वैठे हुए है। त्रैलोक्य गाना गायेगे। श्रीरामकृष्ण कह रहे है, 'वाह! तुम्हारा गाना कितना सुन्दर होता है!' त्रैलोक्य तानपूरा लेकर गा रहे है—

गाना—तुमसे हमने दिल लगाया, जो कुछ है सो तू ही है।

गाना—तुम मेरे सर्वस्व हो— प्राणाधार हो— सार वस्तु के सार भाग हो।

गाना सुनकर श्रीरामकृष्ण भाव मे मग्न हो रहे है। कह रहे है— 'वाह! तुम्ही सव कुछ हो— वाह!!'

गाना समाप्त हो गया। छः वज गये। श्रीरामकृष्ण हाथ-मुँह धोने के लिए झाऊतल्ले की ओर जा रहे है। साथ मे मास्टर हैं।

श्रीरामकृष्ण हँस-हँसकर वाते करते हुए जा रहे है। एकाएक मास्टर से पूछा, "क्यो जी, तुम लोगो ने खाया नही? और उन लोगो ने भी नही खाया?"

आज सन्ध्या के वाद श्रीरामकृष्ण ने कलकत्ता जाने का सोचा है। झाऊतल्ले से लौटते समय मास्टर से कह रहे है— 'परन्तु किसकी गाड़ी मे जाऊँ?'

शाम हो गयी। श्रीरामकृष्ण के कमरे मे दिया जलाया गया और धूना दिया जा रहा है। कालीमन्दिर मे सव जगह दिये जल गये। शहनाई वज रही है। मन्दिरो मे आरती होगी।

तखत पर वैठे हुए श्रीरामकृष्ण नाम-कीर्तन करके माँ का ध्यान

कर रहे है। आरती हो गयी। कुछ देर बाद कमरे मे श्रीरामकृष्ण इधर-उधर टहल रहे हैं। बीच-वीच मे भक्तों के साथ बातचीत कर रहे है, और कलकत्ता जाने के लिए मास्टर से परामर्श कर रहे है।

इतने में ही नरेन्द्र आये। साथ शरद तथा और भी दो-एक लड़के थे। उन लोगों ने आते ही भूमिष्ठ हो श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया।

नरेन्द्र को देखकर श्रीरामकृष्ण का स्नेह उमड चला। जिस तरह छोटे वच्चे को प्यार किया जाता है, श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र के मुख पर हाथ फ़ेरकर उसी तरह प्यार करने लगे। स्नेहपूर्ण स्वरो मे कहा—तू आ गया ?

कमरे के भीतर श्रीरामकृष्ण पश्चिम की ओर मुँह करके खड़े हुए है। नरेन्द्र तथा अन्य लड़के श्रीरामकृष्ण को प्रणाम करके पूर्व की ओर मुँह करके उनके सामने वार्तालाप कर रहे है। श्रीरामकृष्ण मास्टर की ओर मुँह फेरकर कह रहे है, "नरेन्द्र आया है तो अव कैसे जाना होगा ? आदमी भेजकर उसे बुला लिया है। अब कैसे जाना होगा ? तुम क्या कहते हो ?"

मास्टर–जैसी आपकी आज्ञा, चाहे तो आज रहने दिया जाय।

श्रीरामकृष्ण– अच्छा, कल चला जायेगा नाव से या गाड़ी से। (दूसरे भक्तो से) तुम आज जाओ—रात हो गयी है।

भक्त एक एक करके प्रणाम कर विदा हुए।

परिच्छेद १२

रथ-यात्रा के दिन बलराम के मकान में

(१)

पूर्ण, छोटे नरेन्द्र, गोपाल की माँ

श्रीरामकृष्ण बलराम के बैठकखाने मे भक्तो के साथ बैठे हुए है। आज आषाढ की शुक्ला प्रतिपदा है, सोमवार, जुलाई १८८५, सबेरे ९ बजे का समय होगा।

कल रथ-यात्रा है। रथ-यात्रा के उपलक्ष्य मे बलराम ने श्रीराम-कृष्ण को आमन्त्रित किया है। उनके घर मे श्रीजगन्नाथजी की नित्य सेवा हुआ करती है। एक छोटासा रथ भी है। रथ-यात्रा के दिन रथ बाहर के बरामदे मे चलाया जायेगा।

श्रीरामकृष्ण मास्टर के साथ बातचीत कर रहे है। पास ही नारायण, तेजचन्द्र तथा अन्य दूसरे भक्त भी है। पूर्ण के सम्बन्ध में बातचीत हो रही है। पूर्ण की उम्र पन्द्रह साल की होगी। श्रीरामकृष्ण उन्हें देखने के लिए अत्यन्त उत्सुक है।

श्रीरामकृष्ण– (मास्टर से)– अच्छा, वह किस रास्ते से आकर मिलेगा? द्विज और पूर्ण के मिला देने का भार तुम्ही पर रहा।

"एक ही प्रकृति तथा एक ही उम्र के आदमियो को मै मिला दिया करता हूँ। इसका एक विशेष अर्थ है। इससे दोनो की उन्नति होती है। पूर्ण मे कैसा अनुराग है, तुमने देखा?"

मास्टर– जी हाँ, मै ट्राम पर जा रहा था, छत से मुझे देखकर दौड़ा हुआ आया और व्याकुल होकर वही से उसने नमस्कार किया।

श्रीरामकृष्ण– (अश्रूपूर्ण नेत्रो से)– अहाहा! मतलब यह कि तुमने परमार्थ-लाभ के लिए उसका मेरे साथ सयोग करा दिया

है। ईश्वर के लिए व्याकुल हुए बिना ऐसा नहीं होता।

"नरेन्द्र, छोटा नरेन्द्र और पूर्ण, इन तीनों की सत्ता पुरुष-सत्ता है। भवनाथ मे यह वात नही— उसके स्वभाव मे जनानापन है, प्रकृति-भाव है।

"पूर्ण की जैसी अवस्था है, इससे बहुत सम्भव है, उसकी देह का नाश वहुत जल्द हो जाय— इस विचार से कि ईश्वर तो मिल गये, अब किसलिए यहाँ रहा जाय ?— या यह भी सम्भव है कि थोड़े ही दिनों में वह वड़े जोरो की बाढ बढेगा।

"उसका है देव-स्वभाव— देवता की प्रकृति। इससे लोकभय कम रहता है। अगर गले मे माला डाल दी जाय या देह मे चन्दन लगा दिया जाय अथवा धूप-धूना जलाया जाय, तो उस प्रकृतिवाले को समाधि हो जाती है।— उसे जान पड़ता है, हृदय मे नारायण है— वे ही देहधारण करके आये हुए है। मुझे इसका ज्ञान हो गया है।

"दक्षिणेश्वर मे पहले-पहल जब मेरी यह अवस्था हुई, तव कुछ दिनो के वाद एक भले ब्राह्मण-घर की लड़की आयी थी। वह वड़ी सुलक्षणी थी। ज्योंही उसके गले मे माला डाली और धूप-धूना दिया, त्योंही वह समाधिमग्न हो गयी। कुछ देर वाद उसे आनन्द मिलने लगा— और आँखो से अश्रुधारा वह चली। तव मैंने प्रणाम करके पूछा, 'माँ, क्या मुझे भी लाभ होगा ?' उसने कहा, 'हाँ।'

"पूर्ण को एक बार और देखने की इच्छा है। परन्तु देखने की सुविधा कहाँ ?

"जान पड़ता है कला है। कैसा आश्चर्यजनक ! केवल अंश नही, कला है !

"कितना चतुर है! — सुना है, लिखने-पढ़ने में भी वड़ा तेज है।— तव तो मेरा अन्दाजा पूरा उतर गया।

"तपस्या के प्रभाव से नारायण भी सन्तान होकर जन्म लेते है। कामारपुकुर के रास्ते मे एक तालाव पड़ता है, नाम है रणजित राय का तालाव। रणजित राय के यहाँ भगवती ने कन्या होकर जन्म लिया था। अव भी चैत के महीने मे वहाँ मेला लगता है। जाने की मेरी वड़ी इच्छा होती है; परन्तु अव नही जाया जाता।

"रणजित राय वहाँ का जमींदार था। तपस्या के प्रभाव से उसने भगवती को कन्या के रूप मे पाया था। कन्या पर उसका वड़ा स्नेह था। उसी स्नेह के कारण वह अपने पिता का संग नही छोड़ती थी। एक दिन रणजित अपनी जमीदारी का काम कर रहा था,— फुरसत नही थी। लड़की, वच्चो का स्वभाव जैसा होता है, वार वार पूछ रही थी—'वावूजी, यह क्या है?—वह क्या है?' पिता ने वड़े मधुर स्वर से कहा,— 'वेटी, अभी जाओ, वड़ा काम है।' पर लडकी वहाँ से किसी तरह नही टली। अन्त मे ध्यानरहित हो उसके वाप ने कहा, 'तू यहाँ से दूर हो जा।' कन्या वहाँ से चली आयी। उसी समय एक शंख की चूड़ियाँ वेचनेवाला वहाँ से जा रहा था। उसे वुलाकर उसने शख की चूड़ियाँ पहनी। दाम देने की वात पर उसने कहा, 'घर की अमुक अलमारी की वगल मे रुपये रखे है, माँग लेना।' और यह कहकर वहाँ से चली गयी, फिर नही दीख पड़ी। उधर घर मे चूड़ीवाला पुकार रहा था। तव लडकी को घर मे न देख, सव इधर-उधर दौड़ पड़े। रणजित राय ने खोज करने के लिए जगह-जगह आदमी भेजे। चूड़ीवाले का रुपया उसी जगह मिला। रणजित राय रोते हुए घूम रहे

थे, इतने मे ही किसी ने कहा, 'तालाब मे कुछ दीख पड़ता है।' लोगो ने उसके किनारे पर खड़े होकर देखा, एक हाथ जिसमे वही शख की चूड़ियाँ थी, पानी के ऊपर उठा हुआ था। फिर वह हाथ भी न दीख पडा। अव भी मेले के समय भगवती की पूजा होती है,— वारुणी के दिन। (मास्टर से) यह सब सत्य है।"

मास्टर– जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण– नरेन्द्र अब यह सब मानता है।

"पूर्ण का जन्म विष्णु के अश से है। मन ही मन बिल्व-पत्र से मैने पूजा की—पूजा ठीक न हुई, तव चन्दन और तुलसीदल लिया। तव पूजा ठीक हुई।

"वे अनेक रूपो से दर्शन देते है। कभी नररूप से, कभी चिन्मय ईश्वर के रूप से। रूप मानना चाहिए—क्यो जी ?"

मास्टर– जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण– कामारहाटी की ब्राह्मणी (गोपाल की माँ) तरह तरह के रूप देखती है; गगा के किनारे, एक निर्जन कुटिया मे अकेली रहती है और जप किया करती है। गोपाल के पास सोती है। (कहते ही कहते श्रीरामकृष्ण चौके) कल्पना मे नही, साक्षात्। उसने देखा, गोपाल के हाथ लाल हो रहे है! गोपाल उसके साथ साथ घूमते है!—उसका दूध पीते है!—वातचीत करते है! नरेन्द्र रोने लगा!

"पहले मै भी वहुत कुछ देखा करता था। इस समय भाव मे उतना दर्शन नही होता। अब प्रकृति-भाव घट रहा है। पुरुप-भाव आ रहा है। इसीलिए अन्तर मे ही भाव रहता है, वाहर उतना प्रकाश नही हो पाता।

"छोटे नरेन्द्र का पुरुष-भाव है,— इसीलिए मन लीन हो जाया करता है। भावादि नही होते। नित्यगोपाल का प्रकृति-भाव है; इसीलिए टेढ़ा-मेढ़ा वना रहता है— भावावेश मे शरीर लाल हो जाता है।"

(२)

कामिनी-कांचन-त्याग

श्रीरामकृष्ण– (मास्टर से)– अच्छा, आदमियो का त्याग तिल तिल करके होता है, परन्तु इनकी (लड़कों की) कैसी अवस्था है?

"विनोद ने कहा, 'स्त्री के साथ सोना पड़ता है, मन को जरा भी नही रुचता।'

"देखो, संग हो या न हो, एक साथ सोना भी बुरा है। देह का सघर्ष— देह की गरमी तो लगती ही है।

"द्विज की कैसी अवस्था है! वस देह हिलाता हुआ मेरी ओर देखता रहता है! यह क्या कम बात है? सब मन सिमटकर अगर मुझमे आ गया तो समझो सब कुछ हो गया।

"मै और क्या हूँ?— वे ही है। मै यन्त्र हूँ, वे यन्त्री। इसके (मेरे) भीतर ईश्वर की सत्ता है, इसीलिए आकर्षण इतना बंढ रहा है, लोग खिचे आते है। छूने से ही हो जाता है। वह आकर्षण ईश्वर का ही आकर्षण है।

"तारक (बेलघर के) वहाँ से (दक्षिणेश्वर से) घर लौट रहा था। मैने देखा, इसके (मेरे) भीतर से शिखा की तरह जलता हुआ कुछ निकल गया— उसके पीछे पीछे!

"कुछ दिनो वाद तारक फिर आया। तव समाधिस्थ होकर उसकी छाती पर पैर रख दिया— उन्होने, जो इसके (मेरे)

भीतर है।

"अच्छा, इन लड़कों की तरह क्या और लड़के है?"

मास्टर– मोहित अच्छा है। आपके पास दो-एक बार आया था। दो परीक्षाओं के लिए तैयारी कर रहा है और ईश्वर पर अनुराग भी है।

श्रीरामकृष्ण– यह हो सकता है, परन्तु इतना ऊँचा स्थान उसका नही है। शरीर के लक्षण उतने अच्छे नहीं है— मुँह चिपटा है।

"इनका स्थान ऊँचा है। परन्तु शरीर-धारण करने से ही आफतो मे पड़ना है। और शाप रहा तब तो सात बार जन्म लेना ही होगा। बड़ी सावधानी से रहना पड़ता है। वासनाओं के रहने से ही शरीर-धारण होता है।"

एक भक्त– जो अवतार है और देहधारण करके आये है, उनमें कौनसी वासना है?

श्रीरामकृष्ण– (सहास्य)– मैंने देखा है, मेरी सब वासनाएं नही गयी। एक साधु का शाल देखकर मेरी इच्छा हुई थी कि मैं भी इस तरह का शाल ओढ़ूं। अब भी है। कौन जाने, एक बार कही फिर न आना पड़े।

बलराम– (सहास्य)– आपका जन्म होगा शाल के लिए?

श्रीरामकृष्ण–(सहास्य)– एक अच्छी कामना रखनी चाहिए। उसी की चिन्ता करते हुए शरीर का त्याग हो, इसलिए। साधु चार धामों में एक धाम बाकी रख छोड़ते है। बहुतेरे जगन्नाथक्षेत्र बाकी रखते है। इसलिए कि जगन्नाथ की चिन्ता करते हुए शरीर-पात हो।

गेरुआ पहने हुए एक व्यक्ति कमरे के भीतर आये और नमस्कार

किया। ये भीतर ही भीतर श्रीरामकृष्ण की निन्दा किया करते है। इसीलिए बलराम हँस रहे है। श्रीरामकृष्ण अन्तर्यामी है, वलराम से कह रहे है—'कोई चिन्ता नही, यदि वे मुझे ढोगी कहते है तो कहने दो।'

श्रीरामकृष्ण तेजचन्द्र के साथ बातचीत कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण– (तेजचन्द्र से)–तुझे इतना बुला भेजता हूँ, तू आता क्यो नही ? अच्छा, ध्यान आदि करता है ? इसी से मुझे प्रसन्नता होगी। मै तुझे अपना जानता हूँ इसलिए बुला भेजता हूँ।

तेजचन्द्र–जी, आफिस जाना पड़ता है। काम भी बहुत रहता है।

मास्टर (सहास्य)–घर मे शादी थी, दस दिन की इन्होने छुट्टी ली थी।

श्रीरामकृष्ण–तो फिर, अवकाश नही है, अवकाश नही है—ऐसा क्यो कहा ? अभी तो तूने कहा था कि ससार छोड़ दूँगा।

नारायण–मास्टर ने एक दिन कहा था— संसार का अरण्यभाव।

श्रीरामकृष्ण– (मास्टर से)–तुम वह कहानी जरा कहो तो। इन लोगो का उपकार होगा। शिष्य दवा खाकर अचेत हो रहा। गुरु ने आकर कहा, 'इसके प्राण बच सकते है, अगर यह गोली कोई और खा ले। यह तो बच जायेगा परन्तु जो खायेगा, उसके प्राण निकल जायेगे।'

"और वह भी कहो,— टेढा-मेढा हो गया था। उस हठयोगी के बारे मे, जिसने सोचा था, स्त्री-पुत्र यही सब अपने आदमी है।"

दोपहर को श्रीरामकृष्ण ने जगन्नाथजी का प्रसाद पाया। श्रीरामकृष्ण ने कहा, 'बलराम का अन्न शुद्ध है।' भोजन के बाद

कुछ देर के लिए वे विश्राम कर रहे है।

दोपहर ढल चुकी है। श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ उसी कमरे मे वैठे हुए हैं। कर्ताभजा चन्द्रवाबू और वे रसिक ब्राह्मण भी है। ब्राह्मण का स्वभाव एक तरह भाँड़ जैसा है।—वे एक बात कहते है और हँसते हँसते लोगो का पेट फलने लगता है।

श्रीरामकृष्ण ने कर्ताभजा सम्प्रदाय के लोगो पर बहुतसी वातें कही— रूप, स्वरूप, रज, वीर्य, पाकक्रिया आदि बहुतसी बातों का उल्लेख किया।

श्रीरामकृष्ण की भावावस्था

लगभग छः वजे का समय है। गिरीश के भाई अतुल और तेजचन्द्र के भाई आये हुए है। श्रीरामकृष्ण भाव-समाधि में मग्न है। कुछ देर बाद भावावेश मे कह रहे है— "चैतन्य की चिन्ता करके क्या कोई कभी अचेतन होता है ?— ईश्वर की चिन्ता करके क्या कभी किसी को मस्तिष्क-विकार हो सकता है ?— वे वोधस्वरूप जो है— नित्य, शुद्ध और बोधरूप।"

आये हुए लोगों मे से कोई कोई सोचते रहे होंगे कि ईश्वर की चिन्ता करके लोग पागल हो जाते है— शायद इन्हे भी कोई मस्तिष्क-विकार हो गया है।

श्रीरामकृष्ण कृष्णधन नाम के उसी रसिक ब्राह्मण से कह रहे है— "साधारण-से ऐहिक विषय को लेकर तुम दिनरात मजाक कर-करके समय क्यों बिता रहे हो ? उसी को ईश्वर की ओर लगा दो। जो नमक का हिसाव लगा सकता है, वह मिश्री का भी लगा लेता है।"

कृष्णधन– (हँसकर)– आप खीच लीजिये।

श्रीरामकृष्ण– मै क्या करूंगा, सब तुम्हारी ही चेष्टा पर

अवलम्बित है। 'यह मन्त्र नही,— अव मन तेरा है।'

"उस साधारण-सी रसिकता को छोड़कर ईश्वर की ओर वढ जाओ। आगे एक से एक वढकर चीजे मिलेगी। ब्रह्मचारी ने लकड़हारे से वढ़ जाने के लिए कहा था। उसने वढ़कर देखा, चन्दन का वन था—–फिर चाँदी की खान थी, और फिर आगे वढकर सोने की खान,—–फिर हीरे और मणि की खाने।"

कृष्णधन– इस मार्ग का अन्त नही है।

श्रीरामकृष्ण– जहाँ शान्ति हो, वही रुक जाओ।

श्रीरामकृष्ण एक आये हुए व्यक्ति के सम्बन्ध मे कह रहे है—

"उसके भीतर कोई वस्तु मुझे नहीं दीख पड़ी, जैसे जंगली वेर।"

शाम हो गयी। कमरे मे दिया जला दिया गया। श्रीरामकृष्ण जगन्माता की चिन्ता करते हुए मधुर स्वर से उनका नाम ले रहे है। भक्तगण चारो ओर वैठे हुए है।

कल रथ-यात्रा है। आज श्रीरामकृष्ण यही रहेंगे।

अन्त:पुर से कुछ जलपान करके श्रीरामकृष्ण फिर वड़े कमरे में आये। रात के दस वजे होगे। श्रीरामकृष्ण मणि से कह रहे है —–उस कमरे से अँगौछा तो ले आओ।

उसी छोटे कमरे मे श्रीरामकृष्ण के सोने का प्रवन्ध किया गया है। रात के साढ़े दस का समय हुआ। श्रीरामकृष्ण शयन करने के लिए गये।

गरमी का मौसम है। श्रीरामकृष्ण ने मणि से पखा ले आने के लिए कहा। मणि पंखा झल रहे है। रात के वारह वजे श्रीरामकृष्ण की नीद उचट गयी, कहा, 'पंखा वन्द कर दो, जाड़ा लग रहा है।'

(३)

विचार के अन्त में मन का नाश तथा ब्रह्मज्ञान

आज रथ-यात्रा है। दिन मंगलवार। प्रातःकाल उठकर श्रीरामकृष्ण नृत्य करते हुए मधुर कण्ठ से नाम ले रहे है।

मास्टर ने आकर प्रणाम किया। क्रमशः भक्तगण आकर प्रणाम करके श्रीरामकृष्ण के पास बैठे। श्रीरामकृष्ण पूर्ण के लिए बहुत व्याकुल हो रहे है। मास्टर को देखकर उन्ही की बाते कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण— तुम पूर्ण को देखकर क्या कोई उपदेश दे रहे थे ?

मास्टर— जी, मैने चैतन्य-चरितामृत पढने के लिए उससे कहा था। उस पुस्तक की बातें वह खूब बतला सकता है। और आपने कहा था सत्य को पकड़े रहने के लिए; वह बात भी मैने कही थी।

श्रीरामकृष्ण— अच्छा, 'ये (श्रीरामकृष्ण) अवतार है,' इन सब बातों के बताने पर क्या कहता था ?

मास्टर— मैने कहा था, 'चैतन्यदेव की तरह एक और आदमी देखना हो तो चलो।'

श्रीरामकृष्ण— और भी कुछ ?

मास्टर— आपकी वही बात। छोटी-सी गड़ही मे हाथी उतर जाता है तो पानी मे उथल-पुथल मच जाती है,— आधार के छोटे होने पर उसमे से भाव छलककर गिरता है।

लगभग साढ़े छः का समय है। बलराम के घर से मास्टर गगा नहाने के लिए जा रहे है। रास्ते मे एकाएक भूकम्प होने लगा। वे उसी समय श्रीरामकृष्ण के कमरे मे लौट आये। श्रीराम-कृष्ण बैठकखाने मे खड़े हुए है। भक्तगण भी खड़े है। भूकम्प की बात हो रही है। कम्प कुछ अधिक हुआ था। भक्तों मे

बहुतो को भय हो गया था।

मास्टर– तुम सब लोगो को नीचे चले जाना चाहिए था।

श्रीरामकृष्ण– जिस घर मे रहते है, उसी की तो यह दशा है ! इस पर फिर आदमियों का अहकार ! (मास्टर से) तुम्हें वह आश्विन की ऑधी याद है ?

मास्टर– जी हॉ, तब मेरी उम्र बहुत थोड़ी थी— नौ-दस साल की रही होगी— मै कमरे मे अकेला देवताओं का नाम ले रहा था।

मास्टर विस्मय मे आकर सोच रहे है, 'श्रीरामकृष्ण ने एका-एक आश्विन की ऑधी की बात क्यो चलायी ? मै व्याकुल होकर एक कमरे मे बैठा हुआ ईश्वर की प्रार्थना कर रहा था; श्रीराम-कृष्ण क्या सब जानते है ? वे क्या मुझे उसकी याद दिला दे रहे है ? मेरे जन्म के समय से ही वे क्या गुरु-रूप से मेरी रक्षा कर रहे है ?'

श्रीरामकृष्ण– जब दक्षिणेश्वर मे ऑधी आयी, उस समय दिन बहुत चढ गया था, पर कैसा भी करके भोग पकाया गया था। देखो, जिस घर मे निवास है, उसी की यह हालत है !

"परन्तु पूर्ण ज्ञान के होने पर मरना और मारना एक जान पडता है। मरने पर भी कुछ नही मरता— मार डालने पर भी कुछ नही मरता। जिनकी लीला है, नित्यता भी उन्ही की है। एक रूप मे नित्यता है और दूसरे रूप मे लीला। लीला का रूप नष्ट हो जाने पर भी उसकी नित्यता नही जाती। पानी के स्थिर रहने पर भी वह पानी है और हिलने-डुलने पर भी पानी ही है। फिर हिलकर, उस हिलने के बन्द हो जाने पर भी वह वही पानी है।"

श्रीरामकृष्ण भक्तो के साथ बैठकखाने मे बैठे हुए है। महेन्द्र

मुखर्जी, हरिबाबू, छोटे नरेन्द्र तथा अन्य कई बालक-भक्त बैठे हुए है। हरिबाबू अकेले ही रहते है, वेदान्त की चर्चा किया करते है, उम्र २३-२४ साल की होगी। विवाह नही किया है। श्रीरामकृष्ण इन्हे बडा प्यार करते है। सदा दक्षिणेश्वर आने के लिए कहा करते है। वे अकेले ही रहना पसन्द करते है, इसलिए श्रीरामकृष्ण के पास भी अधिक नही जाया करते।

श्रीरामकृष्ण– (हरिबाबू से)– क्यो जी, तुम बहुत दिन नही आये ?

"वे एक रूप से नित्य है, एक रूप से लीला। वेदान्त मे क्या है ? ब्रह्म सत्य, जगत् मिथ्या। परन्तु जब तक उन्होने 'भक्त का मैं' रख दिया है, तब तक लीला भी सत्य है। 'मैं' को जब वे पोछ डालेंगे, तब जो कुछ है, वही है। मुँह से उसका वर्णन नही हो सकता। 'मै' को जब तक उन्होने रखा है, तब तक सब मानना होगा। केले के पेड़ के खोलो को निकालते रहने पर उसका माझा मिलता है। अतएव खोलो के रहने पर माझा का रहना भी सिद्ध होता है और माझे के रहने पर खोलों का। खोलो का ही माझा है और माझे का ही खोल है। नित्य है, यह कहने से लीला का अस्तित्व सिद्ध होता है, और लीला है, यह कहने पर नित्य का अस्तित्व।

"वे ही जीव और जगत् हुए है, चौबीसो तत्त्व हुए है। जब वे निष्क्रिय है, तब उन्हे लोग ब्रह्म कहते है और जब सृष्टि, स्थिति और सहार करते है तब उन्हे शक्ति कहते है। ब्रह्म और शक्ति दोनो अभेद है। पानी स्थिर रहने पर भी पानी है और हिलने-डुलने पर भी पानी ही है।

"'मैं' का भाव दूर नही होता। जब तक 'मै' का भाव है,

तब तक जीव-जगत् को मिथ्या कहने का अधिकार नही है। बेल के खोपडे और बीजो को फेक देने पर, कुल बेल का वजन समझ नही आता।

"जिस ईंट, चूना और सुर्खी से छत बनी है, उसी से सीढियाँ भी बनी है। जो ब्रह्म है उन्ही की सत्ता से यह जीव-जगत् भी बना है।

"भक्त और विज्ञानी निराकार और साकार दोनो मानते है—अरूप और रूप दोनो को ग्रहण करते है, भक्तिरूपी हिम के लगने से उसी जल का कुछ अश बर्फ बन जाता है। फिर ज्ञान-सूर्य के उगने पर वह बर्फ गलकर जल का फिर जल ही हो जाता है।

"जब तक मनुष्य मन के द्वारा विचार करता है, तब तक वह नित्य को नही प्राप्त कर सकता। जब तक तुम अपने मन का सहारा लेकर विचार करते हो तब तक तुम ससार के परे नहीं जा सकते, तथा रूप, रस, गन्ध, स्पर्श, शब्द आदि इन्द्रिय-विषयो को भी नही छोड़ सकते। विचार के बन्द होने पर ही ब्रह्मज्ञान होता है। इस मन से कोई आत्मा को जान नही सकता। आत्मा के द्वारा ही आत्मा का ज्ञान प्राप्त होता है। शुद्ध मन, शुद्ध बुद्धि, शुद्ध आत्मा, ये सब एक ही वस्तु है।

"देखो न, एक ही वस्तु को देखने के लिए कितनी चीजो की आवश्यकता होती है। आँखे चाहिए, उजाला चाहिए और मन का संयोग होना चाहिए। इन तीनों मे से किसी एक को छोड देने से दर्शन नही होता। मन का यह काम जब तक चल रहा है, तब तक किस तरह कहोगे कि ससार नही है या मै नही हूँ?

"मन का नाश होने पर, सकल्प और विकल्प के चले जाने

पर समाधि होती है— ब्रह्मज्ञान होता है। परन्तु— सा, रे, ग, म, प, ध, नि— 'नि' मे बड़ी देर तक नही रहा जाता।"

छोटे नरेन्द्र की ओर देखकर श्रीरामकृष्ण कह रहे है, " 'ईश्वर है'— केवल इतना ही आभास पाने से क्या होगा ? ईश्वर की केवल झलक से ही सब कुछ हो जाता हो, सो बात नही।

"उन्हें अपने घर ले आना चाहिए—उनसे जान-पहचान करनी चाहिए।

"किसी ने दूध की बात सुनी ही है, किसी ने दूध देखा है और किसी ने पिया है।

"राजा को किसी किसी ने देखा है, परन्तु दो एक आदमी उन्हें अपने मकान ले आ सकते है और उन्हे खिला-पिला सकते है।"

मास्टर गंगा-स्नान के लिए गये।

(४)

वाराणसी में शिव तथा अन्नपूर्णा दर्शन

दिन के दस बजे का समय हो गया। श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ वार्तालाप कर रहे है। मास्टर ने गगा-स्नान करके श्रीराम-कृष्ण को प्रणाम किया और उनके पास बैठे।

श्रीरामकृष्ण भाव के पूर्णावेश मे कितनी ही बाते कह रहे है। बीच बीच मे दर्शन की गुह्य बाते कह रहे है।

श्रीरामकृष्ण— मथुरबाबू के साथ मै वाराणसी गया था। मणिकर्णिका के घाट से हमारी नाव जा रही थी; एकाएक मुझे शिव के दर्शन हुए। मै नाव के एक सिरे पर खड़ा हुआ समाधिमग्न हो गया। मल्लाह हृदय से कहने लगे, 'अरे! पकड़ो!' उन्होने सोचा, मै कही गिर न जाऊँ। देखा, शिव मानो ससार की कुल गम्भीरता लिए हुए खड़े है। पहले मैने उन्हे दूर

खड़े हुए देखा था, फिर मेरे पास आने लगे और मेरे भीतर विलीन हो गये।

"भावावेश मे मैने देखा, एक संन्यासी मेरा हाथ पकड़कर मुझे लिए जा रहा है। एक ठाकुर-मन्दिर मे मै घुसा, वहाँ सोने की अन्नपूर्णा देखी।

"वे ही यह सब हुए है,— किसी किसी वस्तु मे उनका प्रकाश अधिक है।

(मास्टर से) "तुम लोग शायद शालग्राम मे विश्वास नही करते— इग्लिशमैन भी नही करते। तुम लोग मानो चाहे न मानो, कोई बात नही। शालग्राम अगर सुलक्षणयुक्त हों—उनमे अच्छे चक्र आदि हो—तभी ईश्वर के प्रतीक रूप मे उनकी पूजा हो सकती है।"

मास्टर— जी, जैसे उत्तम लक्षणवाले मनुष्य के भीतर ईश्वर का प्रकाश अधिक है।

श्रीरामकृष्ण— नरेन्द्र पहले इन सब बातो को मन की भूल कहा करता था; अब सब मानने लगा है।

ईश्वर-दर्शन की बाते कहते हुए श्रीरामकृष्ण को भाव की अवस्था हो रही है। धीरे-धीरे आप भाव-समाधि मे लीन हो गये। भक्तगण चुपचाप एकटक दृष्टि से देख रहे है। बड़ी देर बाद श्रीरामकृष्ण ने भाव को रोका और फिर बातचीत करने लगे।

श्रीरामकृष्ण— (मास्टर से)— मै देख रहा था, ब्रह्माण्ड एक शालग्राम है। उसके भीतर तुम्हारी दो आँखे देख रहा था।

मास्टर और भक्तगण यह अद्भुत और अश्रुतपूर्व दर्शन आश्चर्यचकित होकर सुन रहे है। इसी समय एक और बालक-भक्त सारदा आये और श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया।

श्रीरामकृष्ण–(सारदा से)– तू दक्षिणेश्वर क्यो नही आता ? मैं जब कलकत्ता आया करता हूँ, तो तू दक्षिणेश्वर क्यो नही आता ?

सारदा– मुझे खबर नही मिलती ।

श्रीरामकृष्ण– अब तुझे खबर दूँगा । (मास्टर से, सहास्य) लड़कों की एक फेहरिस्त तो बनाओ । (मास्टर और भक्त हँसते है)

सारदा– घरवाले विवाह कर देना चाहते है । ये (मास्टर) विवाह की बात पर कितने ही बार मना कर चुके है ।

श्रीरामकृष्ण– अभी विवाह क्यो ?

(मास्टर से) "सारदा की अच्छी अवस्था हो गयी है, पहले संकोच का भाव था, अव मुख पर आनन्द आ गया है ।"

श्रीरामकृष्ण एक भक्त से पूछ रहे है— "तुम क्या एक बार पूर्ण को ले आओगे ?"

नरेन्द्र आये । श्रीरामकृष्ण ने नरेन्द्र को जलपान कराने के लिए कहा । नरेन्द्र को देखकर श्रीरामकृष्ण को वड़ा आनन्द हो रहा है । नरेन्द्र को खिलाकर मानो वे साक्षात् नारायण की सेवा करते है । उनकी देह पर हाथ फेरकर उन्हे प्यार कर रहे है । गोपाल की माँ कमरे के भीतर आयीं । श्रीरामकृष्ण ने बलराम से कामारहाटी आदमी भेजकर गोपाल की माँ को ले आने के लिए कहा था । इसीलिए वे आयी हुई है । कमरे के भीतर आते ही गोपाल की माँ कह रही है, 'मारे आनन्द के मेरी आँखों से आँसू वह रहे है ।' यह कहकर श्रीरामकृष्ण को भूमिष्ठ हो उन्होने प्रणाम किया ।

श्रीरामकृष्ण– यह क्या है, तुम मुझे गोपाल भी कहती हो और प्रणाम भी करती हो !

"जाओ, घर मे कोई तरकारी बनाओ जाकर, खूब वघार देना जिससे यहाँ तक सुगन्ध आये।" (सब हँसते है)

गोपाल की माँ– ये लोग (घर के लोग) क्या सोचेगे ?

घर के भीतर जाने से पहले उन्होने नरेन्द्र से कातर स्वर में कहा, 'भैया, मेरी बन गयी या अभी कुछ वाकी है ?'

आज रथ-यात्रा है। श्रीजगन्नाथजी के भोग आदि के होने में कुछ देर हो गयी। अब श्रीरामकृष्ण भोजन करेगे, अन्तःपुर की ओर जा रहे है। भक्त-स्त्रियाँ उनके दर्शन करने के लिए उत्सुक है।

बहुतसी स्त्रियाँ श्रीरामकृष्ण की भक्ति करती थी। परन्तु उनकी बातें वे पुरुष-भक्तो से न कहते थे। कोई भक्त-स्त्री अगर किसी भक्त से पास आती-जाती थी तो वे उससे कहते थे–– "उसके पास ज्यादा न जाया कर, गिर जायेगी।" कभी कभी कहते थे, "अगर मारे भक्ति के कोई स्त्री जमीन मे लोटती भी रहे तो भी उसके पास न जाना चाहिए।" स्त्री-भक्त अलग रहेगी–– पुरुप-भक्त अलग, तभी दोनो की भलाई है। कभी कहते थे, "स्त्रियों के गोपाल-भाव–– वात्सल्य-भाव–– का अतिरेक अच्छा नही। उसी वात्सल्य से एक दिन बुरा भाव पैदा हो जाता है।"

(५)

नरेन्द्रादि भक्तों के साथ कीर्तनानन्द में

दिन के एक वजे का समय है। भोजन करके श्रीरामकृष्ण फिर बैठकखाने मे आकर भक्तों के बीच मे बैठे। एक भक्त पूर्ण को बुला लाये है। श्रीरामकृष्ण बड़े आनन्द मे आकर कहने लगे, 'यह देखो, पूर्ण आ गया।' नरेन्द्र, छोटे नरेन्द्र, नारायण,

हरिपद और दूसरे भक्त श्रीरामकृष्ण के पास बैठे हुए उनसे वार्तालाप कर रहे है।

छोटे नरेन्द्र—अच्छा, हम लोगों मे स्वाधीन इच्छा है या नहीं ?

श्रीरामकृष्ण—मै क्या हूँ—कौन हूँ, पहले इसे खोज तो लो। 'मै' की खोज करते ही करते 'वे' निकल पड़ेगे। 'मै यन्त्र हूँ, तुम यन्त्री !' चीन का बना हुआ (कलवाला) पुतला चिट्ठी लेकर दूकान चला जाता है, तुमने सुना है ? ईश्वर ही कर्ता है। अपने को अकर्ता समझकर कर्ता की तरह काम करते रहो।

"जब तक उपाधियाँ है, तभी तक अज्ञान है। मै पण्डित हूँ, मै ज्ञानी हूँ, मै धनी हूँ, मै मानी हूँ, मै कर्ता हूँ, पिता हूँ, गुरु हूँ, यह सब अज्ञान से होता है। 'मै यन्त्र हूँ, तुम यन्त्री हो,' यह ज्ञान है। उस समय सब उपाधियाँ दूर हो जाती है। काठ के जल जाने पर फिर शब्द नही होता, न ताप रहता है। सब ठण्डा हो जाता है।—शान्ति. शान्तिः शान्तिः।

(नरेन्द्र से) "कुछ गाओ न।"

नरेन्द्र—घर जाऊँगा, कई काम है।

श्रीरामकृष्ण—हाँ भाई, हम लोगों की बात तुम क्यों सुनने लगे। जिसके पास पूँजी है, उसी के पीछे लोग लगे रहते है, और जिसके एक धोती भी साबित नही है उसकी बात भला कौन सुनता है ? (सब हँसते है)

"तुम गुहो के बगीचे तो जा सकते हो ! जब कभी मै पूछता हूँ, 'नरेन्द्र कहाँ है ?'—तो सुनता हू, 'गुहो के बगीचे मे।'—यह बात मै न कहता, तूने ही तो निकाली।"

नरेन्द्र कुछ देर चुप रहे। फिर कहा, 'बाजा नही है, कैसे गाऊँ ?'

श्रीरामकृष्ण– हमारी जैसी हालत !— इसी मे रहकर गा सको तो गाओ। इस पर वलराम का बन्दोवस्त !

“वलराम कहता है, ‘आप नाव पर ही कलकत्ता आया कीजिये, अगर कभी न वने तभी गाडी से आया कीजिये।’ (सव हँसते है) देखते हो, आज उसने खिलाया है, इसीलिए आज तीसरे पहर भर हम सबो को कसकर नचायेगा। (हास्य) यहाँ से एक दिन उसने गाड़ी की— बारह आने मे ! मैने पूछा, ‘क्या वारह आने मे दक्षिणेश्वर तक गाड़ी जायेगी ?’ उसने कहा, ‘हाँ, ऐसा होता है।’ रास्ते मे जाते जाते गाड़ी का कुछ हिस्सा ही अलग हो गया ! (उच्च हास्य) घोड़ा भी बीच-बीच मे पैर अड़ाता था। किसी तरह चलता ही न था, गाड़ीवान जब कसकर चाबुक मारता था तब घोड़े के पैर उठते थे। इधर राम खोल बजायेगा और हम लोग नाचेगे— राम को ताल का भी ज्ञान नही है। (सब हँसे) वलराम का यह भाव है,— आप लोग गाइये, बजाइये, नाचिये और मौज कीजिये !” (सब हँसते हैं)

घर से भोजन कर क्रमश. भक्तगण आते जा रहे है।

महेन्द्र मुखर्जी को दूर से प्रणाम करते हुए देखकर श्रीरामकृष्ण उन्हे प्रणाम कर रहे है— फिर सलाम किया। पास के एक नवयुवक भक्त से कह रहे है, “उसे वताओ कि इन्होने सलाम किया— वह ‘अल्काट’ ‘अल्काट’ (थिऑसफी के एक महात्मा) ही रटता है।”

गृही भक्तो मे से अनेको ने अपने घर की स्त्रियो को भी साथ लाया है— वे श्रीरामकृष्ण के दर्शन करेंगी और रथ के सामने श्रीरामकृष्ण का कीर्तनानन्द देखेगी। राम और गिरीश आदि भक्त भी आ गये है। नवयुवक भक्त भी बहुतसे आ गये है।

नरेन्द्र गाने लगे--

"वह प्रेम का संचार और कितने दिनों में होगा ?"

वलराम ने आज कीर्तन का वन्दोवस्त किया है--वैष्णवचरण और वनवारी का कीर्तन है। वैष्णवचरण ने गाया--"ऐ मेरी रसने, सदा दुर्गा-नाम का जप कर।"

गाने का कुछ अंश सुनते ही श्रीरामकृष्ण समाधिमग्न हो गये। खड़े होकर समाधिस्थ हुए थे-- छोटे नरेन्द्र पकड़े हुए है। मुख पर हास्य की रेखा प्रकट हो गयी। कमरे भर के भक्त आश्चर्य-चकित हो देख रहे है। स्त्रियाँ चिक के भीतर से श्रीरामकृष्ण की यह अवस्था देख रही है।

नाम जपते जपते बड़ी देर के वाद समाधि छूटी। श्रीरामकृष्ण के आसन ग्रहण करने पर वैष्णवचरण ने फिर गाया--

"ऐ वीणे, तू हरिनाम कर।"

अव एक दूसरे कीर्तनिये वनवारी 'रूप' गा रहे है। परन्तु वे गाते ही गाते 'आहा हा, आहा हा' कहकर भूमिष्ठ होकर प्रणाम करने लगते है। इससे कोई श्रोता हँसते है, किसी को विरक्ति होती है।

पिछला प्रहर हो आया। इस समय वरामदे मे श्रीजगन्नाथदेव का वही छोटा रथ ध्वजा-पताकाओं से सुसज्जित करके लाया गया है। श्रीजगन्नाथ, सुभद्रा तथा वलराम चन्दन-चर्चित तथा वसन-भूपण और पुष्पमालाओ से सुशोभित है। श्रीरामकृष्ण वनवारी का कीर्तन छोड़कर वरामदे में रथ के सामने चले गये। साथ साथ भक्तगण भी गये। श्रीरामकृष्ण ने रथ की रस्सी पकड़ जरा खीचा, फिर रथ के सामने भक्तो के साथ नृत्य और कीर्तन करने लगे।

छोटे वरामदे मे रथ चलने के साथ ही कीर्तन और नृत्य हो

रहा है। उच्च सकीर्तन और खोल का शब्द सुनकर बहुतसे बाहर के लोग वहाँ आ गये। श्रीरामकृष्ण भगवत्प्रेम से मतवाले हो रहे है। भक्तगण प्रेमोन्मत्त हो साथ-साथ नाच रहे है।

(६)

भावावेश में श्रीरामकृष्ण

रथ के सामने कीर्तन और नृत्य करके श्रीरामकृष्ण कमरे में आकर बैठे। मणि आदि भक्त उनकी चरण-सेवा कर रहे है।

भावमग्न होकर नरेन्द्र तानपूरा लेकर फिर गाने लगे—"ऐ प्राणो की पुतली, माँ, हृदयरमा, तू हृदय-आसन मे आकर आसीन हो, मै तेरा निरीक्षण करूँ।"

"त्रिगुणरूपधारिणी, परात्परा तारा तुम्ही हो।"

"तुम्ही को मैने अपने जीवन का ध्रुवतारा बना लिया है।"

एक भक्त ने नरेन्द्र से कहा – क्या तुम वह गाना गाओगे —'ऐ अन्तर्यामिनी माँ, तुम हृदय मे सदा ही जाग रही हो।'

श्रीरामकृष्ण– चल, इस समय ये सब गाने क्यों ? इस समय आनन्द के गीत हो— 'श्यामा सुधा-तरंगिणी।'

नरेन्द्र गा रहे है। श्रीरामकृष्ण गाना सुनते ही प्रेमोन्मत्त होकर नृत्य करने लगे। बड़ी देर तक नृत्य करने के बाद उन्होने आसन ग्रहण किया। भावावेश मे नरेन्द्र की आँखो मे आँसू आ गये। श्रीरामकृष्ण को देखकर बड़ा आनन्द हुआ। रात के नौ बजे का समय होगा। अब भी भक्तो के साथ श्रीरामकृष्ण बैठे हुए वैष्णव-चरण का गाना सुन रहे है।

वैष्णवचरण ने दो गाने और गाये। तब तक रात के दस-ग्यारह बजे का समय हो गया। भक्तगण प्रणाम करके विदा हो रहे है।

श्रीरामकृष्ण– अच्छा, अब सब लोग घर जाओ। (नरेन्द्र और

छोटे नरेन्द्र की ओर इशारा करके) इन दोनों के रहने ही से हो जायेगा। (गिरीश से) क्या घर जाकर भोजन करोगे ? रहना चाहो तो कुछ देर रहो। तम्बाकू ! —अरे, बलराम का नौकर भी वैसा ही है। बुलाकर देखो—हरगिज न देगा। (सब हंसते है) परन्तु तुम तम्बाकू पीकर जाना।

श्रीयुत गिरीश के साथ चश्मा लगाये हुए उनके एक मित्र आये है। वे सब कुछ देख-सुनकर चले गये। श्रीरामकृष्ण गिरीश से कह रहे है— "तुमसे तथा अन्य सभी से कहता हूँ, जबरदस्ती किसी को न ले आया करो,—बिना समय के आये कुछ नहीं होता।"

एक भक्त ने प्रणाम किया। साथ एक छोटा लड़का है। श्रीरामकृष्ण सस्नेह कह रहे है— "अच्छा, बड़ी देर हो गयी है, फिर यह लडका भी साथ है।" नरेन्द्र, छोटे नरेन्द्र तथा दो-एक भक्त और कुछ देर रहकर घर गये।

(७)

मधुर नृत्य तथा नामसंकीर्तन

श्रीरामकृष्ण बैठकखाने के पश्चिम ओर खाट पर लेटे हुए हैं। रात के चार बजे का समय होगा। कमरे के दक्षिण ओर बरामदा है, उसमे एक स्टूल पड़ा हुआ है। उस पर मास्टर बैठे है।

कुछ देर बाद श्रीरामकृष्ण बरामदे मे गये। मास्टर ने भूमिष्ठ होकर प्रणाम किया। आज सक्रान्ति है, बुधवार, १५ जुलाई १८८५।

श्रीरामकृष्ण— मै एक बार और उठा था। अच्छा, क्या सबेरे दक्षिणेश्वर जाऊं ?

मास्टर— प्रात.काल गगा बहुत कुछ शान्त रहती है।

सबेरा हो गया है। भक्तों का आगमन अभी नहीं हुआ। श्रीरामकृष्ण हाथ-मुख धोकर मधुर स्वर से नाम ले रहे है। पश्चिम-

वाले कमरे के उत्तर तरफ के दरवाजे के पास खडे होकर नाम ले रहे है। पास ही मास्टर है। थोड़ी देर बाद कुछ दूरी पर गोपाल की माँ आकर खड़ी हुई। अन्त:पुर के द्वार के पास दो-एक स्त्रियाँ श्रीरामकृष्ण को आकर देख रही है।

राम-नाम करके श्रीरामकृष्ण कृष्ण का नाम ले रहे है। "कृष्ण कृष्ण! गोपी कृष्ण! गोपी! गोपी! राखालजीवन कृष्ण! नन्दनन्दन कृष्ण! गोविन्द! गोविन्द!"

फिर गौराग का नाम लेने लगे—"गौरांग प्रभु नित्यानन्द, हरे कृष्ण हरे राम राधे गोविन्द!"

फिर कह रहे है—'अलख निरंजन!' निरजन कहकर रो रहे है। उनका रोना और करुण कण्ठ सुनकर पास मे खडे हुए सब भक्त भी रोने लगे। वे रोते हुए कह रहे है—"निरंजन! आ बेटा, कब तुझे भोजन कराकर जन्म सफल करूँ! देह धारण करके मनुष्य के रूप मे तू मेरे लिए आया हुआ है।"

जगन्नाथजी को अपनी विनय सुना रहे है—"जगन्नाथ! जगद्बन्धो! दीनबन्धो! मै ससार से अलग तो हूँ ही नहीं नाथ, मुझ पर दया करो।"

प्रेमोन्मत्त होकर गा रहे है—"उड़ीसा जगन्नाथपुरी मे भले बिराजे जी।"

अब नारायण का नाम-कीर्तन करते हुए नाच रहे है—"श्रीमन्नारायण! नारायण! नारायण!"

अब श्रीरामकृष्ण भक्तो के साथ छोटे कमरे मे बैठे। दिगम्बर! —जैसे पाँच साल का बच्चा! बलराम, मास्टर और भी दो-एक भक्त बैठे हुए है।

श्रीरामकृष्ण— ईश्वर के रूप के दर्शन होते है। जब सब

उपाधियाँ चली जाती है, विचार बन्द हो जाता है तब दर्शन होता है। तब मनुष्य निर्वाक् हो समाधि में लीन हो जाता है। थिएटर मे जाकर, वहाँ बैठे हुए आदमी कितनी ही गप्पे सुनते-सुनाते रहते है। पर्दा उठा नही कि सब गप्पे बन्द हो जाती है। जो कुछ देखते है, उसी मे मग्न हो जाते है।

"तुम्हें यह मै गुह्य बात सुना रहा हूँ। पूर्ण और नरेन्द्र आदि को प्यार करता हूँ, इसका एक खास अर्थ है। जगन्नाथ को मधुर-भाव मे आकर भेटने के लिए मैने हाथ बढाया नही कि गिरकर हाथ टूट गया। उसने समझा दिया—'तुमने शरीर धारण किया है, इस समय नर-रूपो में ही सख्य, वात्सल्य आदि भावो को लेकर रहो।'

"रामलला पर जो जो भाव होते थे, वे ही अब पूर्णादि को देखकर होते है। रामलला को मै नहलाता था, खिलाता था, सुलाता था, साथ लेकर घूमता था। रामलला के लिए बैठकर रोता था; इन सब लड़कों को लेकर ठीक वे ही बाते हो रही है। देखो न, निरंजन किसी मे लिप्त नही है। खुद रुपया लगाकर गरीबों को दवाखाने ले जाया करता है। विवाह की बात पर कहता है, 'बाप रे! विशालाक्षी नदी का भँवर है।' उसे मैं देखता हूँ, एक ज्योति पर बैठा हुआ है।

"पूर्ण साकार ईश्वर के राज्य का है। उसका जन्म विष्णु के अंश से है। आहा!—कैसा अनुराग है!

(मास्टर से) "देखा नही, वह तुम्हारी तरफ देखने लगा—जैसे गुरुभाई पर दृष्टि हो—जैसे कोई अपना सगा हो? एक बार और मिलने के लिए कहा है। उसने कहा है, कप्तान के यहाँ भेट होगी।

"नरेन्द्र का स्थान वहुत ऊँचा है— निराकार का घर है।— पुरुष की सत्ता है। इतने भक्त आ रहे है, उसकी तरह एक भी नही है।

"एक एक बार मै बैठकर हिसाव लगाता हूँ। देखता हूँ— दूसरो मे से कोई तो पद्मो मे दस दल का है, कोई सोलह दल का, कोई सौ दल का, परन्तु नरेन्द्र सहस्र दल का है।

"दूसरे लोग यदि लोटा, घड़ा आदि है तो नरेन्द्र खूव वड़ा मटका है।

"गड़हियो और तालावो मे नरेन्द्र सरोवर है।—जैसे हालदार सरोवर।

"मछलियो मे नरेन्द्र लाल आँखों की रोहू है तथा अन्य सव तरह-तरह की छोटी मछलियाँ है।

"नरेन्द्र वहुत वड़ा आधार है— उसमे वहुतसी चीजे समा जाती है। वड़े छेदवाला वाँस है।

"नरेन्द्र किसी के वश नही है। वह आसक्ति और इन्द्रिय-सुख के वश नही है। नर-कबूतर है। नर-कवूतर की चोच पकड़ने पर वह चोच खीचकर छुड़ा लेता है,— मादा चुपचाप रह जाती है।

"बेलघर के तारक को 'मृगाल' (एक प्रकार की मछली, चालाक और वड़ी) कह सकते है।

"नरेन्द्र पुरुष है, इसीलिए गाड़ी मे दाहिनी ओर वैठता है। भवनाथ का जनाना भाव है, इसलिए उसे दूसरी ओर बैठाता हूँ।

"नरेन्द्र सभा मे रहता है तो मुझे भरोसा रहता है।"

श्रीयुत महेन्द्र मुखर्जी आये और प्रणाम किया। दिन के आठ बजे होगे। हरिपद, तुलसीराम भी क्रमश. आये और प्रणाम किया। बावूराम को वुखार है। इसलिए वे नही आ सके।

श्रीरामकृष्ण– (मास्टर से)– छोटा नरेन्द्र नही आया ? उसने सोचा होगा—– वे चले गये। (मुखर्जी से) कितने आश्चर्य की वात है, वह (छोटा नरेन्द्र) वचपन मे, स्कूल से लौटकर ईश्वर के लिए रोता था। (ईश्वर के लिए) रोना क्या सहज ही होता है ?

"फिर वुद्धि भी खूव है। वॉसो मे वडे छेदवाला वॉस है।

"और सव मन मुझ पर रंहता है। गिरीश घोप ने कहा, 'नवगोपाल के यहॉ जिस दिन कीर्तन हुआ था, उस दिन (छोटा नरेन्द्र) गया था,—– परन्तु 'वे कहाँ' कहकर वेहोश हो गया, लोग उसके ऊपर से चले जाते थे।'

"उसे भय भी नही है कि घरवाले नाराज होगे। दक्षिणेश्वर मे लगातार तीन रात रहा था।"

(८)

भक्तियोग का रहस्य। ज्ञान तथा भक्ति का समन्वय

मुखर्जी– हरि (वागवाजार के हरिवावू) आपकी वात सुनकर आश्चर्य मे पड़ गये। कहते है, साख्यदर्शन मे, पातंजलि मे, वेदान्त मे ये सव वाते है। ये कोई साधारण व्यक्ति नही है।

श्रीरामकृष्ण– साख्य और वेदान्त तो मैने नही पढा।

"पूण ज्ञान और पूर्ण भक्ति एक ही है। 'नेति नेति' के द्वारा जहॉ विचार का अन्त हो जाता है, वही व्रह्मज्ञान है।—– फिर जो कुछ छोड़कर जाना पडा था, लौटते हुए उसी को ग्रहण करना पडता है। छत पर चढ़ते समय वड़ी सावधानी से चढना चाहिए। फिर वह देखता है, जिन चीजो से छत वनी है, उन्ही से सीढियॉ भी वनी हुई है—– उन्ही ईंटो से—– उसी सुर्खी और चूने से।

"जिसे उच्च का ज्ञान है, उसे निम्न का भी ज्ञान है। ज्ञान के वाद ऊँचा-नीचा एक जान पड़ता है।

"प्रह्लाद को जब तत्त्व-ज्ञान होता था, तब वे 'सोऽहम्' होकर रहते थे। जब देह-बुद्धि आती थी, तब 'दासोऽहम्'— 'मै दास हूँ' यह भाव रहता था।

"हनुमान को भी कभी 'सोऽहम्' का भाव रहता था, कभी 'दास मै,' कभी 'मै तुम्हारा अंश हूँ' यह भाव रहता था।

"भक्ति लेकर क्यो रहना ?— इसे छोड़ दे तो मनुष्य फिर क्या लेकर रहे ?— क्या लेकर दिन पार किया करे ?

" 'मै' जाने का तो है ही नही। 'मै' रूपी घट के रहते 'सोऽहम्' नही होता। समाधिमग्न होने पर 'मै' पूर्ण रूप से चला जाता है।— तब जो कुछ है, वही है। रामप्रसाद ने कहा है— 'फिर मै अच्छा हूँ या तुम, यह तुम्ही समझो।'

"जब तक 'मै' है तब तक भक्त की तरह ही रहना अच्छा है। 'मै ईश्वर हूँ', यह भाव अच्छा नही। हे जीव! भक्तवत् न तु कृष्णवत्!— परन्तु अगर वे खुद खीच लें तो वह बात और है। जिस तरह मालिक नौकर को प्यार करके कहता है— 'आ, पास बैठ, मै जो कुछ हूँ, वही तू भी है।'

"तरगे गगा की है, परन्तु गगा तरंगो की नही।

"शिव की दो अवस्थाएँ है। जब वे आत्माराम रहते है, तब उनकी 'सोऽहम्' अवस्था होती है— योग मे सब कुछ स्थिर है। जब 'मै'-ज्ञान रहता है, तब 'राम राम' कहकर नृत्य करते है।

"जिनमे स्थिरता है, उनमे अस्थिरता भी है।

"अभी तुम स्थिर हो, फिर थोड़ी देर बाद तुम काम करने लगोगे।

"ज्ञान और भक्ति एक ही वस्तु है। अन्तर इतना ही है कि कोई कहता है पानी और कोई कहता है पानी का एक बड़ा

ढेला (वर्फ) ।

"साधारणतया समाधियाँ दो तरह की है। ज्ञान-मार्ग पर विचार करते हुए अहं के नष्ट हो जाने के वाद जो समाधि होती है, उसे स्थिर समाधि या जड-समाधि कहते है। भक्तिपथ की समाधि को भाव-समाधि कहते है। भाव-समाधि मे भोग के लिए 'अह' की एक रेखा रह जाती है, भक्त को ईश्वरानन्द देने के लिए। कामिनी और काचन मे आसक्ति के रहने पर इन सब बातों की धारणा नही होती।

"केदार से मैने कहा, कामिनी और काचन मे मन के रहने पर कुछ होगा नही। इच्छा हुई, एक बार उसकी छाती पर हाथ फेर दूँ,— परन्तु फिर फेर न सका। भीतर टेढापन था। उसके हृदय-रूपी कमरे मे मानो विष्ठा की दुर्गन्ध थी, मै घुस नही सका। उसमे की आसक्ति मानो स्वयम्भू लिग जैसी है, वाराणसी तक उसकी जड़ फैली हुई है। ससार मे आसक्ति— कामिनी और काचन मे आसक्ति के रहते हुए कुछ हो नही सकता।

"इन लड़को मे कामिनी और कांचन का प्रवेश अभी तक नही हो पाया। इसीलिए तो उन्हे मै इतना प्यार करता हूँ। हाजरा कहता है, 'धनी लोगो के सुन्दर लडके देखकर तुम उन्हे प्यार करते हो।' अगर यही वात है तो हरीश, लाटू, नरेन्द्र, इन्हे मै क्यो प्यार करता हूँ ? नरेन्द्र को तो रोटी खाने के लिए नमक खरीदने के लिए भी पैसे नही मिलते।

"इन लडको मे विपय-बुद्धि अभी नही पैठी। इसीलिए उनका मन इतना शुद्ध है।

"और वहुतेरे उनमे नित्य-सिद्ध भी है। जन्म से ही ईश्वर की ओर मन लगा हुआ है। जैसे तुमने एक वगीचा खरीदा। साफ

करते हुए कही जल का स्रोत तुम्हे मिल गया। मिट्टी हटी नही कि कलकल स्वर से पानी निकलने लगा।"

बलराम– महाराज, ससार मिथ्या है, यह ज्ञान पूर्ण को एकदम कैसे हो गया ?

श्रीरामकृष्ण– जन्मगत। पिछले जन्मो मे सब किया हुआ है। शरीर ही छोटा और वृद्ध होता रहता है, पर आत्मा के लिए वह बात नही।

"वे कैसे है, जानते हो ?—जैसे पहले फल लगकर फिर फूल हो। पहले दर्शन, फिर गुण-महिमा आदि का श्रवण, फिर मिलन।

"निरजन को देखो—न लेना है, न देना।—जब पुकार होगी तभी चला जा सकता है। परन्तु जब तक मनुष्य की माँ जीवित है, तब तक उसे उसका भरण-पोषण करना चाहिए। मैं अपनी माँ की फूल-चन्दन से पूजा करता था। वह जगन्माता ही है जो हमारे लिए सासारिक माता के रूप मे विराजमान है।

"जब तक अपने शरीर की खबर है तब तक माता की खबर लेनी चाहिए, इसीलिए मै हाजरा से कहता हूँ, अपने शरीर मे अगर खाँसी की बीमारी हो गयी तो मिश्री और मरिच की व्यवस्था की जाती है—मरिच और नमक की जरूरत होती है।—अतएव, जब तक अपने शरीर के लिए यह इतना किया जाता है, तब तक माता की खबर भी रखना उचित है।

"परन्तु जब अपने शरीर की भी खबर नही रख सकते तब दूसरे के लिए बात ही क्या है ? तब सब भार ईश्वर ले लेते है।

"नाबालिग अपना भार नही ले सकता। इसीलिए उसके एक अभिभावक होता है। नाबालिग अवस्था और चैतन्यदेव की अवस्था दोनो एक है।"

मास्टर गंगा-स्नान करने के लिए गये।

(९)

श्रीरामकृष्ण का ईश्वर-दर्शन

श्रीरामकृष्ण भक्तों से उसी कमरे मे बातचीत कर रहे है। महेन्द्र मुखर्जी, बलराम, तुलसी, हरिपद, गिरीश आदि भक्तगण बैठे हुए है। गिरीश श्रीरामकृष्ण की कृपा प्राप्त कर सात-आठ महीने से आते-जाते है। मास्टर गंगा-स्नान करके आ गये, श्रीरामकृष्ण को प्रणाम करके उनके पास बैठे। श्रीरामकृष्ण अपने अपूर्व दर्शन की बाते सुना रहे है--

"कालीमन्दिर मे एक दिन नागा और हलधारी अध्यात्म-रामायण पढ रहे थे। मैंने एकाएक एक नदी देखी, उसके पास ही वन था--हरे रग के पेड़-पौधे, और जाँघिया पहने हुए राम और लक्ष्मण चले जा रहे थे। एक दिन मैंने कोठी के सामने अर्जुन का रथ देखा था। सारथी के वेश मे श्रीकृष्णजी बैठे हुए थे। वह अव भी मुझे याद है।

"एक दिन और, देश मे (कामारपुकुर मे) कीर्तन हो रहा था। सामने मैंने गौरांग की मूर्ति देखी।

"एक नगा आदमी मेरे साथ घूमता था। उससे मै खूब मजाक करता था। वह नगी मूर्ति मेरे ही भीतर से निकलती थी, परमहस मूर्ति, वालकवत्।

"ईश्वर के कितने रूपो के दर्शन हो चुके है, कुछ कहा नही जा सकता। उस समय मुझे पेट की सख्त बीमारी थी। और वह उन सव दर्शनो के समय और भी अधिक बढ जाती थी। इसलिए जब मुझे वे दर्शन होते थे तब मै उन पर 'थू थू' करने लगता था,--परन्तु वे तो मेरे पीछे भूत के समान लग जाते थे। इन

रूपों के भावावेश मे मै मस्त रहा करता था और रात-दित न जाने कहाँ बीत जाते थे। दूसरे दिन फिर दस्त आने लगते थे।" (हास्य)

गिरीश– (सहास्य)– आप की जन्मपत्री देख रहा हूँ।

श्रीरामकृष्ण– (सहास्य)– द्वितीया के चन्द्र मे जन्म है। और रवि, चन्द्र और बुध को छोड और कोई बड़ी बात नही है।

गिरीश– कुम्भराशि है। कर्क और वृष मे राम और कृष्ण का जन्म है— सिह मे चैतन्यदेव का।

श्रीरामकृष्ण– मुझमे दो वासनाएँ थी,— पहली यह कि मै भक्तों का राजा होऊँगा; दूसरी, तपस्या के मारे सूख जानेवाला साधु न होऊँगा।

गिरीश– आपको साधना क्यो करनी पड़ी ?

श्रीरामकृष्ण– (सहास्य)– भगवती ने शिव के लिए वड़ी कठोर साधना की थी—पंचाग्नि तापना, जाड़े मे पानी के भीतर गले तक डूवकर रहना, सूर्य की ओर एकदृष्टि से ताकते रहना।

"स्वय कृष्ण ने राधायन्त्र लेकर वहुतसी साधनाएँ की थी। यन्त्र ब्रह्मयोनि है– उसी की पूजा और ध्यान। इस ब्रह्मयोनि से कोटि-कोटि ब्रह्माण्डो की सृष्टि हो रही है।

"वड़ी गुप्त वात है। वेल के नीचे मै उसे चमकते हुए देखा करता था।

"वहाँ तन्त्र की वहुतसी साधनाएँ मैने की थी, मुर्दे की खोपड़ी लेकर। ब्राह्मणी (श्रीरामकृष्ण की तान्त्रिक आराधना की आचार्या) सव सामग्री इकट्ठा कर देती थी।

"एक अवस्था और होती थी। जिस दिन मै अहंकार करता था उसके दूसरे ही दिन वीमार पड़ता था।"

सब लोग चुपचाप बैठे हुए है।

तुलसी– ये (मास्टर) नही हँसते ।

श्रीरामकृष्ण– भीतर हँसी है, फग्लु-नदी के ऊपर बालू रहती है और खोदने पर भीतर पानी मिलता है ।

(मास्टर से) "तुम जीभ नही छीलते। रोज जीभ छीला करो।"

बलराम– अच्छा, इनके (मास्टर के) द्वारा पूर्ण आपकी बहुत-सी बातें सुन चुके है—

श्रीरामकृष्ण– पहले की बातें ये जानते है, मुझे याद नही।

बलराम– पूर्ण स्वभावसिद्ध है, और ये (मास्टर) ?

श्रीरामकृष्ण– ये साधन मात्र है ।

नौ बज चुके है। श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर जानेवाले है। इसी का प्रबन्ध हो रहा है। बागबाजार के अन्नपूर्णा-घाट मे नाव ठीक की गयी है। श्रीरामकृष्ण को भक्तगण भूमिष्ठ हो प्रणाम करने लगे।

श्रीरामकृष्ण दो-एक भक्तो को लेकर नाव पर बैठे। गोपाल की माँ भी उसी नाव पर बैठीं– दक्षिणेश्वर मे कुछ देर विश्राम करके पिछले पहर चलकर कामारहाटी जायेगी।

श्रीरामकृष्ण की कैम्प-खाट भी नाव पर चढ़ा दी गयी। इस पर श्रीयुत राखाल सोया करते थे।

अगले शनिवार को श्रीरामकृष्ण फिर बलराम के यहाँ आयेगे।

परिच्छेद १२

श्री नन्द वसु के मकान मे शुभागमन

(१)

वलराम के मकान में श्रीरामकृष्ण

श्रीरामकृष्ण भक्तो के साथ वलराम के बैठकखाने मे वैठे हुए है। मुख पर प्रसन्नता विराज रही है। इस समय दिन के तीन वजे होंगे। विनोद, राखाल, मास्टर आदि श्रीरामकृष्ण के पास वैठे है। छोटे नरेन्द्र भी आये।

आज मंगलवार है, २८ जुलाई, १८८५, आपाढ की कृष्ण प्रतिपदा। श्रीरामकृष्ण सवेरे से वलराम के यहाँ आये है। भक्तो के साथ भोजन भी उन्होने वही किया है।

नारायण आदि भक्तो ने कहा है, 'नन्द वसु के घर मे ईश्वर-सम्वन्धी चित्र बहुतसे है।' आज दिन के पिछले पहर उनके घर जाकर श्रीरामकृष्ण चित्र देखेगे। एक ब्राह्मणी भक्त नन्द वसु के घर के पास ही रहती है, श्रीरामकृष्ण उसके घर भी जायेगे। कन्या के गुजर जाने पर ब्राह्मणी दुखी रहा करती है। प्राय. दक्षिणेश्वर श्रीरामकृष्ण के दर्शन करने के लिए जाया करती है। अत्यन्त व्याकुलता के साथ उसने श्रीरामकृष्ण को निमन्त्रण भेजा है। उसके घर तथा एक और स्त्री-भक्त—गनू की माँ—के घर भी श्रीरामकृष्ण जानेवाले है।

श्रीरामकृष्ण बलराम के यहाँ आते ही वालक-भक्तों को वुला भेजते है। छोटे नरेन्द्र ने अभी उस दिन कहा था, 'मुझे काम रहता है, इसलिए सदा मै नही आ सकता, परीक्षा के लिए भी तैयारी करनी पड रही है।' छोटे नरेन्द्र के आने पर श्रीरामकृष्ण

उनसे वातचीत करते हुए कह रहे है—"तुझे बुलाने के लिए मैंने आदमी नही भेजा।"

छोटे नरेन्द्र–(हँसते हुए)–तो इससे क्या होता है ?

श्रीरामकृष्ण–नही भाई, तुम्हारा नुकसान होता है, जव अवकाश हो तव आया करो !

श्रीरामकृष्ण ने जैसे अभिमान करके ये बातें कही। पालकी आयी है। श्रीरामकृष्ण श्रीयुत नन्द वसु के यहाँ जायेगे।

ईश्वर का नाम लेते हुए श्रीरामकृष्ण पालकी पर वैठे, पैरों मे काली चट्टी, लाल धारीदार धोती पहने। मणि ने जूतों को पालकी की वगल मे एक ओर रख दिया। पालकी के साथ साथ मास्टर जा रहे है। इतने मे परेश भी आ गये।

पालकी नन्द वसु के फाटक के भीतर गयी। क्रमश· घर का लम्वा ऑगन पार करके पालकी मकान के द्वार पर पहुँची।

गुहस्वामी के आत्मीयो ने श्रीरामकृष्ण को आकर प्रणाम किया। श्रीरामकृष्ण ने मास्टर से चट्टियॉ निकाल देने के लिए कहा। पालकी से उतरकर वे ऊपर के दालान मे गये। दालान वहुत लम्वा-चौड़ा है। चारों ओर देवी-देवताओ के चित्र टँगे हुए है।

गृहस्वामी और उनके भाई पशुपति ने श्रीरामकृष्ण से सम्भाषण किया। पालकी के पीछे पीछे भक्तगण भी आ रहे थे। अव वे भी उसी दालान मे एकत्र होने लगे। गिरीश के भाई अतुल भी आये हुए है। प्रसन्न के पिता श्रीयुत नन्द वसु के यहाँ अक्सर आया-जाया करते है। वे भी वहाँ मौजूद है।

(२)

चित्रों का दर्शन

श्रीरामकृष्ण अव चित्रो को देखने के लिए उठे। साथ मास्टर

है तथा कुछ भक्तगण। गृहस्वामी के भ्राता श्रीयुत पशुपति साथ साथ रहकर तस्वीरे दिखा रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण पहले चतुर्भुज विष्णुमूर्ति देख रहे है। देखकर ही भावावेश मे परिपूर्ण हो गये। खड़े थे, बैठ गये। कुछ काल भावाविष्ट रहे।

दूसरा चित्र श्रीरामचन्द्रजी की भक्तवत्सल मूर्ति का है। श्रीराम हनुमान के सिर पर हाथ रखकर उन्हें आशीर्वाद दे रहे है। हनुमान की दृष्टि श्रीरामचन्द्रजी के पादपद्मों पर लगी हुई है। श्रीरामकृष्ण वडी देर तक यह चित्र देखते रहे। भावावेश मे कह रहे है—"आहा! आहा!"

तीसरा चित्र वशीधर श्रीमदनगोपाल का है। कदम्ब के नीचे खड़े हुए है।

चौथा चित्र वामनावतार का है, छाता लगाये हुए बलि के यज्ञ मे जा रहे है। श्रीरामकृष्ण कह रहे है—'वामन', और टकटकी लगाये देख रहे है।

फिर नृसिहमूर्ति देखकर श्रीरामकृष्ण गो-चारण देख रहे है। श्रीकृष्ण गोपाल वालको के साथ गौएँ चरा रहे है। श्रीवृन्दावन और यमुनापुलिन! मणि कह उठे, 'वडी सुन्दर तस्वीर है!'

सप्तम चित्र देखकर श्रीरामकृष्ण कह रहे है— 'धूमावती!' अष्टम, 'षोडशी'; नवम, भुवनेश्वरी; दशम, तारा; एकादश, काली। इन सब मूर्तियों को देखकर श्रीरामकृष्ण कहते है— "ये सब उग्र मूर्तियाँ है, उन्हे घर मे न रखना चाहिए। इन्हे यदि घर पर रखे तो इनकी पूजा करना उचित है, साथ ही भोग भी चढाना चाहिए। परन्तु आप लोगों के भाग्य अच्छे है, आप रख सकते है।"

श्रीअन्नपूर्णा के दर्शन कर श्रीरामकृष्ण भावावेश मे कह रहे है— 'वाह ! वाह !'

फिर देखा राधिका का राजा-वेश, सखियों के साथ वन मे सिंहासन पर वैठी हुई है। श्रीकृष्ण द्वार पर कोतवाल वनकर वैठे हुए है।

फिर झूलना-चित्र। श्रीरामकृष्ण वड़ी देर तक इसके वाद का चित्र देख रहे है। ग्लास-केस के भीतर वीणावादिनी का चित्र है। देवी हाथ मे वीणा लिये हुए आनन्द से रागिनी अलाप रही है।

तस्वीरो का देखना समाप्त हो गया। श्रीरामकृष्ण फिर गृहस्वामी के पास गये। खड़े हुए गृहस्वामी से कह रहे है, "आज वड़ा आनन्द आया। वाह ! आप तो पूरे हिन्दू है। अंग्रेजी चित्र न रखकर इन चित्रो को रखा है, यह सचमुच वड़े आश्चर्य की वात है।"

श्रीयुत नन्द वसु वैठे हुए है, वे श्रीरामकृष्ण से कह रहे है— "वैठिये, आप खड़े क्यो है ?"

श्रीरामकृष्ण– (बैठकर)–ये चित्र काफी वड़े है। तुम अच्छे हिन्दू हो।

नन्द वसु– अग्रेजी चित्र भी है।

श्रीरामकृष्ण– (सहास्य)–वे ऐसे नही है। अग्रेजी की ओर तुम्हारी वैसी दृष्टि नही है।

कमरे की दीवार पर श्रीयुत केशवचन्द्र सेन के नवविधान की तस्वीर लटकी हुई थी। श्रीयुत सुरेश मित्र ने वह चित्र वनाया था। वे श्रीरामकृष्ण के एक प्रिय भक्त है। उस चित्र में दिखाया है कि श्रीरामकृष्ण केशव को दिखा रहे है कि भिन्न-भिन्न मार्गो

से सब धर्मों के लोग ईश्वर की ही ओर अग्रसर होते जा रहे हैं। गम्यस्थान एक है, केवल मार्ग पृथक्-पृथक् है।

श्रीरामकृष्ण– वह तो सुरेन्द्र का वनाया हुआ चित्र है।

प्रसन्न के पिता– (हँसकर)– आप भी उसके भीतर हैं।

श्रीरामकृष्ण– वह एक विशेष ढंग का है, उसके भीतर सव कुछ है— वह आधुनिक भाव का चित्र है।

यह कहते हुए श्रीरामकृष्ण को एकाएक भावावेश हो रहा है। श्रीरामकृष्ण जगन्माता से वार्तालाप कर रहे है।

कुछ देर बाद मतवाले की भाँति कह रहे है— "मै वेहोश नही हुआ।" घर की ओर दृष्टि करके कह रहे है, "वड़ा मकान, इसमे क्या है,— ईंटे, काठ और मिट्टी।"

कुछ देर बाद उन्होने कहा, "देव-देवताओं के ये सब चित्र देखकर मुझे वडा आनन्द हुआ।" फिर कहने लगे— "उग्र मूर्ति, काली, तारा (शव और शिवा के बीच श्मशान मे रहनेवाली) रखना अच्छा नही, रखने पर पूजा चढानी चाहिए।"

पशुपति– (हँसकर)– वे जितने दिन चलायेंगी, उतने दिन तो चलेगा ही।

श्रीरामकृष्ण– यह ठीक है। परन्तु ईश्वर मे मन रखना अच्छा है, उन्हे भूलकर रहना अच्छा नही।

नन्द वसु– उनमे मति होती कहाँ है ?

श्रीरामकृष्ण– उनकी कृपा होने पर सव हो जाता है।

नन्द वसु– उनकी कृपा होती कहाँ है ? उनमे कृपा करने की शक्ति भी हो तब न ?

श्रीरामकृष्ण– (सहास्य) –मै समझा, तुम्हारा मत पण्डितो जैसा है कि जो जैसा कर्म करेगा, उसे वैसा फल मिलता रहेगा;

यह सब छोड़ दो। ईश्वर की शरण मे जाने पर कर्मों का क्षय हो जाता है। मैने माता के पास हाथ मे फूल लेकर कहा था, 'माँ, यह लो अपना पाप और यह लो अपना पुण्य, मै कुछ नही चाहता; तुम मुझे शुद्धा भक्ति दो। यह लो अपना भला और यह लो अपना बुरा, मै भला-बुरा कुछ नही चाहता, मुझे बस अपनी शुद्धा भक्ति दो। यह लो अपना धर्म और यह लो अपना अधर्म, मै धर्माधर्म कुछ नहीं चाहता, मुझे शुद्धा भक्ति दो। यह लो अपना ज्ञान और यह लो अपना अज्ञान; मै ज्ञान-अज्ञान कुछ नही चाहता, मुझे शुद्धा भक्ति दो। यह लो अपनी शुचिता और यह लो अपनी अशुचिता, मुझे शुचिता-अशुचिता नही चाहिए, मुझे शुद्धा भक्ति दो।'

नन्द वसु– क्या वे कानून रद्द कर सकते है?

श्रीरामकृष्ण– यह क्या! वे ईश्वर है, वे सब कुछ कर सकते है। जिन्होंने कानून वनाया है, वे कानून बदल भी सकते है।

"परन्तु यह बात तुम कह सकते हो। तुम्हारी शायद भोग करने की इच्छा है, इसीलिए तुम ऐसी बात कह रहे हो। यह एक मत है भी,—ठीक है, भोग की शान्ति बिना हुए चैतन्य नही होता, परन्तु भोग भी क्या करोगे?—कामिनी और कांचन का भोग?—वह तो अभी है, अभी नही, क्षणिक। कामिनी और कांचन मे है ही क्या?—छिलका और गुठली ही है—खाने पर अम्लशूल होता है। सन्देश निगलने के साथ ही स्वाद भी गायव!"

नन्द वसु चुप हो रहे। फिर कहा—'यह सब कहते तो हैं, परन्तु क्या ईश्वर पक्षपात करनेवाले है? अगर उनकी कृपा से होता है, तो कहना पड़ता है कि ईश्वर मे पक्षपात है।'

श्रीरामकृष्ण– वे स्वयं ही सब कुछ है। ईश्वर स्वयं ही जीव-

जगत् हुए है। जब पूर्ण ज्ञान होगा, तव यह वोध होगा। वे मन, बुद्धि और देह हुए है-- चौबीसों तत्त्व सव वे ही हुए है। वे पक्षपात करे भी तो किस पर करें ?

नन्द वसु-- अनेक रूपो का धारण उन्होने क्यों किया ?-- कोई ज्ञानी और कोई अज्ञानी क्यो है ?

श्रीरामकृष्ण-- उनकी इच्छा।

अतुल-- केदार ने अच्छा कहा है। एक ने उनसे पूछा, 'ईश्वर ने सृष्टि का निर्माण क्यो किया ?' इस पर वे वोले, 'जिस मीटिंग में ईश्वर ने सृष्टि बनाने का ठहराया, उस मीटिंग मे मैं हाजिर नही था।' (सव हँसते है)

श्रीरामकृष्ण-- उनकी इच्छा।

यह कहकर श्रीरामकृष्ण गाने लगे।

"'सब तुम्हारी ही इच्छा है, तुम इच्छामयी तारा हो। माँ, अपने कर्म तुम खुद करती हो, परन्तु लोग कहते है कि मैं करता हूँ। ऐ काली, हाथी को तो तुम दलदल मे फँसा देती हो और किसी पगु से गिरि का उल्लंघन करा देती हो। किसी को तुम ब्रह्मपद दे देती हो और किसी को तुम अधोगामी कर देती हो।'

"वे आनन्दमयी है। इसी सृष्टि, स्थिति और प्रलय की लीला कर रही है। जीव असख्य है, उनमे दो ही एक मुक्त हो रहे है, उससे भी उन्हे आनन्द होता है। कोई संसार मे बंध रहा है, कोई मुक्त हो रहा है।"

नन्द वसु-- उनकी इच्छा तो है, परन्तु इधर तो जान निकली जा रही है।

श्रीरामकृष्ण-- तुम लोग हो कहाँ ? वे ही सब कुछ हुए है। जब तक उन्हे तुम नही समझ सकते हो, तभी तक 'मै मै' कर रहे हो।

"सब लोग अगर उन्हें जान लें तो तर जायँ। परन्तु बात यह है कि किसी को दिन निकलते ही खाने को मिल जाता है, कोई दोपहर के समय भोजन पाता है और कोई शाम को, परन्तु खाना सभी को मिल जाता है—कोई बिना खाये हुए नही रहता। इसी तरह अपने स्वरूप का ज्ञान सभी प्राप्त करेगे।"

पशुपति– जी हाँ, जान पड़ता है, वे ही सब कुछ हुए है।

श्रीरामकृष्ण– मैं क्या हूँ, इसे जरा खोजो तो। क्या मैं हाड़ हूँ ? माँस, खून या आँत हूँ ? 'मैं' को खोजते ही खोजते 'तुम' आ जाता है, अर्थात् अन्दर मे उस ईश्वर की शक्ति के सिवा और कुछ नही है। 'मै' नही है, 'वे' है। (नन्द वसु के प्रति) तुममे अभिमान नही है— इतना ऐश्वर्य होकर भी।

"'मै' का सम्पूर्ण त्याग नही होता। यह सब जाने का नही तो रहने दो इसे ईश्वर का दास बना। मै ईश्वर का भक्त हूँ, ईश्वर का दास हूँ, ईश्वर का पुत्र हूं, यह अभिमान अच्छा है। जो 'मै' कामिनी और कांचन में फंसता है वह कच्चा 'मैं' है, उसी का त्याग करना चाहिए।"

अहंकार की यह व्याख्या सुनकर गृहस्वामी और दूसरे लोग बहुत प्रसन्न हुए।

श्रीरामकृष्ण– ज्ञान के लक्षण है। पहला यह कि अभिमान न रह जायेगा। दूसरा, स्वभाव शान्त बना रहेगा। तुममे दोनों लक्षण है। अतएव तुम पर ईश्वर का अनुग्रह है।

"अधिक ऐश्वर्य के होने पर ईश्वर को लोग भूल जाते है, ऐश्वर्य का स्वभाव ही ऐसा है। यदु मल्लिक को बहुत ऐश्वर्य हुआ है, वह आजकल ईश्वर की बात ही नही करता। पहले ईश्वर-चर्चा खूब किया करता था।

"कामिनी और काचन एक तरह की शराब है। अधिक शराब पीने पर फिर चाचा और दादा का विचार नही रह जाता। उन्हे ही कह डालता है— 'तेरी ऐसी की तैसी।' मतवाले को वड़े-छोटे का ज्ञान नही रहता।"

नन्द वसु– हाँ, यह तो ठीक है।

पशुपति– ये सब क्या ठीक है ?— स्पिरिच्युएलिज्म, थियोसफी, सूर्यलोक, नक्षत्रलोक ?

श्रीरामकृष्ण– नहीं भाई, मै नहीं जानता। इतना हिसाब-किताब क्यों ? आम खाओ। आम के कितने पेड़ हैं, कितनी लाख डालियाँ है, कितने करोड पत्ते है, इसके हिसाब लगाने की क्या जरूरत ? मै बगीचे मे आम खाने के लिए आया करता हूँ, आम खाकर चला जाऊँगा।

"एक बार भी अगर चैतन्य हो, अगर एक बार भी ईश्वर को कोई समझ सके, तो दूसरी व्यर्थ बातो के जानने की इच्छा भी नहीं होती। विकार के होने पर लोग बहुत कुछ बका करते है— 'अरे ! मै तो पाँच सेर चावल का भात खाऊँगा, मै दस घड़ा पिऊँगा रे !'— यह सब। वैद्य कहता है—'खायेगा ! अच्छा खा लेना' —यह कहकर वह तम्बाकू पीने लगता है। विकार अच्छा हो जाने पर, रोगी जो कुछ कहता है उसकी ओर वह ध्यान देता है।"

पशुपति– जान पडता है, हम लोगों का विकार चिरकाल तक बना रहेगा।

श्रीरामकृष्ण– क्यो, ईश्वर पर मन रखो, चैतन्य प्राप्त होगा।

पशुपति–(सहास्य)– हम लोगो का ईश्वर से योग क्षणिक है। तम्बाकू पीने मे जितनी देर लगती है, बस उतनी ही देर तक।

(सब हँसते है)

श्रीरामकृष्ण– तो क्या हुआ, थोड़ी देर के लिए भी उनसे योग हो गया तो मुक्ति होगी ही।

"अहिल्या ने कहा, 'राम, चाहे शूकर-योनि मे जन्म हो, अथवा और कही, ऐसा करो कि तुम्हारे श्रीचरणो मे मन लगा रहे–– शुद्धा भक्ति बनी रहे।'

पाप तथा परलोक। मृत्युकाल के समय ईश्वर-चिन्ता

"नारद ने कहा, 'राम! तुमसे मै और कोई वर नही चाहता। मुझे वस शुद्धा भक्ति दो। और यह आशीर्वाद करो कि फिर कभी तुम्हारी भुवनमोहिनी माया मे वद्ध न होऊँ।' उनसे आन्तरिक प्रार्थना करने पर उन पर मन भी लगता है और शुद्धा भक्ति भी उनके श्रीचरणों मे होती है।

"'क्या हमारा विकार दूर होगा?—हम पापी जो है,' यह सव वुद्धि दूर करो। (नन्द वसु से) चाहिए यह भाव कि एक बार हमने उनका नाम लिया है, अब हममे पाप कहाँ रह गया?"

नन्द वसु– क्या परलोक है? और पाप का शासन?

श्रीरामकृष्ण– तुम आम खाते तो जाओ। इन सव बातो के हिसाव से तुम्हे क्या काम?–– परलोक है या नही–– वहाँ क्या होता है, क्या नही–– इन सव बातो से क्या प्रयोजन?

"आम खाओ, आम की जरूरत है— उनमे भक्ति की जरूरत है।"

नन्द वसु– आम का पेड है कहाँ?–– आम मिलता कहाँ है?

श्रीरामकृष्ण–पेड़! वे अनादि और अनन्त ब्रह्म है। वे तो है ही— वे नित्य है। एक वात और— वे कल्पतरु है।

"उस कल्पतरु के नीचे तुम्हे चारो फल मिलेगे।

"कल्पतरु के पास जाकर प्रार्थना करनी चाहिए, फल तभी

मिलता है। तब देखोगे, पेड़ के नीचे फल है, तब बीन लेना। चार फल है— धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष।

"ज्ञानी मुक्ति चाहते है, भक्त भक्ति चाहते है— अहैतुकी भक्ति, वे धर्म, अर्थ, काम नही चाहते।

"परलोक की बात कहते हो। गीता का मत है, मृत्यु के समय जो कुछ सोचोगे, वही होओगे। राजा भरत ने हरिण-हरिण कहकर दु:ख मे देह छोड़ी थी। दूसरे जन्म मे वे हरिण हुए भी थे। इसीलिए जप, ध्यान और पूजा आदि का दिन-रात अभ्यास किया जाता है, इस तरह अभ्यास के गुण से मृत्यु के समय ईश्वर की याद आती है। इस तरह से अगर मृत्यु होती है तो ईश्वर का स्वरूप मिलता है। केशव सेन ने भी परलोक की बात पूछी थी। मैने केशव से कहा, 'इन सब बातों का हिसाब लगाकर क्या करोगे?' फिर कहा, 'जब तक ईश्वर की प्राप्ति नही होती, तब तक बार बार ससार मे आना-जाना होगा। कुम्हार मिट्टी के बासन धूप मे सुखाता है। बकरी या गाय के पैरों से दबकर जो फूट जाते है उनमे जो पक्के वासन होते है उन्हे तो कुम्हार फेक देता है, परन्तु कच्चे बासनों को वह फिर से गढता है।'"

(३)

ज्ञानमार्ग तथा शुद्धा भक्ति

अब तक गृहस्वामी ने श्रीरामकृष्ण के जलपान के लिए कोई व्यवस्था नही की। श्रीरामकृष्ण स्वय उनसे कह रहे है— "कुछ खाना चाहिए। यदु की माँ से उस दिन इसीलिए मैने कहा, 'कुछ खाने को दो।' नही तो गृहस्थ का कही अमंगल न हो।"

गृहस्वामी ने कुछ मिष्टान्न मँगाया। श्रीरामकृष्ण मिष्टान्न खा रहे है। नन्द वसु तथा अन्य लोग श्रीरामकृष्ण की ओर एकदृष्टि

से ताक रहे है। देख रहे है, वे क्या करते है।

श्रीरामकृष्ण हाथ धोयेगे। जिस तश्तरी मे मिठाई दी गयी थी वह दरी पर बिछी हुई चद्दर पर रखी थी, इसलिए श्रीरामकृष्ण वही अपने हाथ नही धो सके। हाथ धोने के लिए एक आदमी एक बरतन (पीकदान) ले आया।

पीकदान रजोगुण का चिह्न है। श्रीरामकृष्ण देखकर कह उठे, "ले जाओ—ले जाओ।" गृहस्वामी ने कहा, "हाथ धोइये।"

श्रीरामकृष्ण अन्यमनस्क है। कहा, "क्या?—हाथ धोऊँगा।"

श्रीरामकृष्ण बरामदे के दक्षिण ओर उठ गये। मणि को हाथ पर पानी डालने के लिए आज्ञा की। मणि गडुए से पानी छोडने लगे। श्रीरामकृष्ण अपनी धोती मे हाथ पोछकर फिर बैठने की जगह पर आ गये। समागत सज्जनो के लिए तश्तरी मे पान लाये गये थे। उसी मे के पान श्रीरामकृष्ण के पास ले जाये गये। उन्होने पान नही लिया।

नन्द वसु—(श्रीरामकृष्ण से)—एक बात कहूँ?

श्रीरामकृष्ण—(सहास्य)—क्या?

नन्द वसु—पान आपने क्यो नही खाया? सब तो ठीक हुआ, इतना यह अन्याय हो गया।

श्रीरामकृष्ण—इष्ट को देकर खाता हूँ। यह एक अपना भाव है।

नन्द वसु—वह तो इष्ट ही मे जाता।

श्रीरामकृष्ण—ज्ञानमार्ग और चीज है, और भक्तिमार्ग दूसरी। ज्ञानी के मत से सभी चीजे ब्रह्मज्ञान की दृष्टि से ली जा सकती है, भक्तिमार्ग मे कुछ भेद-बुद्धि होती है।

नन्द वसु—तो यह दोष हुआ है।

श्रीरामकृष्ण—यह एक मेरा भाव है। तुम जो कुछ कहते हो ठीक

है, वैसा भी है।

श्रीरामकृष्ण गृहस्वामी को चापलूसो के सम्बन्ध मे सावधान कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण– एक बात के बारे में सावधान रहना। चापलूस अपने स्वार्थ की ताक मे रहते है। (प्रसन्न के पिता से) आप क्या यहाँ रहते है ?

प्रसन्न के पिता– जी नहीं, परन्तु इसी मुहल्ले मे रहता हूँ।

नन्द वसु का मकान बहुत बड़ा है, इस पर श्रीरामकृष्ण कह रहे है— "यदु का मकान इतना बडा नही है। इसीलिए उससे उस दिन मैंने कहा।"

नन्द– हाँ, उन्होने (जोडासाखों मे) एक नया मकान बनवाया है।

श्रीरामकृष्ण नन्द वसु का उत्साह बढा रहे है, कह रहे है—

"तुम संसार मे रहकर ईश्वर की ओर मन रखे हुए हो, क्या यह कुछ कम बात है ? जिसने ससार का त्याग कर दिया है वह तो ईश्वर को पुकारेगा ही। उसमे बहादुरी क्या है ? जो ससार मे रहकर पुकारता है, धन्य वही है।

"किसी एक भाव का आश्रय लेकर उन्हे पुकारना चाहिए। हनुमान मे ज्ञान और भक्ति दोनों थे, नारद में शुद्धा भक्ति थी।

"राम ने पूछा, 'हनुमान, तुम किस भाव से मेरी पूजा करते हो ?' हनुमान ने कहा, 'कभी तो देखता हूँ, तुम पूर्ण हो और मैं अश हूँ, कभी देखता हूँ, तुम प्रभु हो और मैं दास हूँ; और राम, जब तत्त्व का ज्ञान होता है, तब देखता हूँ, तुम्ही 'मैं' हो और मैं ही 'तुम' हूँ।'

"राम ने नारद से कहा, 'तुम वर लो।' नारद ने कहा, 'राम,

यह वर दो कि तुम्हारे पादपद्मो मे शुद्धा भक्ति हो जिससे फिर तुम्हारी भुवन-मोहिनी माया से मुग्ध न होऊँ।' "

श्रीरामकृष्ण अब उठनेवाले है।

श्रीरामकृष्ण– (नन्द वसु से)–गीता का मत है, वहुत-से आदमी जिसे मानते और पूजते है उसमे ईश्वर की विशेष शक्ति है। तुममे ईश्वर की शक्ति है।

नन्द वसु– शक्ति सभी मनुष्यो मे बराबर है।

श्रीरामकृष्ण–(विरक्ति से)–यही तुम लोगो की एक रट है। सव आदमियो की शक्ति कभी बराबर हो सकती है ? विभुरूप से वे सर्वभूतों मे विराजमान है, यह ठीक है, परन्तु शक्ति की विशेपता है।

"यही वात विद्यासागर ने भी कही थी। उसने कहा था, 'क्या उन्होने किसी को अधिक शक्ति दी है और किसी को कम ?' तब मैंने कहा, 'अगर शक्ति की भिन्नता न रहती, तो तुम्हे हम लोग देखने क्यो आते ? क्या तुम्हारे सिर पर दो सींग है ?' "

श्रीरामकृष्ण उठे। साथ-साथ सब भक्त भी उठे। पशुपति साथ साथ दरवाजे तक आये।

(४)

ब्राह्मणी के मकान मे श्रीरामकृष्ण

श्रीरामकृष्ण बागबाजार की एक शोकातुरा ब्राह्मणी के यहाँ आये हुए है। मकान पुराना है, पर पक्का है। छत पर बैठने का प्रबन्ध किया गया है। छत पर कतार बाँधकर कुछ लोग खड़े है, कुछ लोग बैठे हुए है। सब उत्सुक है कि श्रीरामकृष्ण को कब देखे।

ब्राह्मणी दो बहने है, दोनो विधवा है, घर मे उनके भाई

सपत्नीक रहते है। ब्राह्मणी के एक ही कन्या थी। उसके निधन से वह अत्यन्त दु:खी रहा करती है। आज श्रीरामकृष्ण पधारेगे, यह सुनकर दिन भर से वह उनके स्वागत की तैयारी कर रही है। जब तक श्रीरामकृष्ण नन्द वसु के यहाँ थे तब तक ब्राह्मणी भीतर-बाहर कर रही थी कि कब वे आये। आने मे विलम्ब होते देख वह निराश हो रही थी।

भक्तो के साथ आकर छत पर बैठने के स्थान पर श्रीरामकृष्ण ने आसन ग्रहण किया। पास चटाई पर मास्टर, नारायण, योगीन्द्र सेन, देवेन्द्र तथा योगीन बैठे हुए है। कुछ देर बाद छोटे नरेन्द्र आदि बहुत से भक्त आ गये। ब्राह्मणी की बहन छत पर आकर श्रीरामकृष्ण को प्रणाम करके कह रही है—"दीदी नन्द वसु के यहाँ खबर लेने के लिए अभी थोडी देर हुई, गयी है। आती ही होगी।"

नीचे एक शब्द सुनकर उसने कहा, 'वह— दीदी आयी।' यह कहकर वह देखने लगी, परन्तु ब्राह्मणी नही आयी थी।

श्रीरामकृष्ण प्रसन्नतापूर्वक भक्तो के बीच मे बैठे हुए है।

मास्टर–(देवेन्द्र से)– कितना सुन्दर दृश्य है! लड़के बच्चे, पुरुष, स्त्री— सब लोग कतार बाँधकर खड़े हुए है। सब लोग इन्हे देखने के लिए कितने उत्सुक हो रहे है— और इनकी बात सुनने के लिए!

देवेन्द्र– (श्रीरामकृष्ण से)– मास्टर महाशय कहते है, 'नन्द वसु के वहाँ से यह जगह अच्छी है,— इन लोगो मे कितनी भक्ति है!'

श्रीरामकृष्ण हँस रहे है।

अब ब्राह्मणी की बहन कह रही है, 'दीदी वह आ रही है।'

ब्राह्मणी श्रीरामकृष्ण को प्रणाम करके, कुछ सोच न सकी कि क्या कहे।

वह अधीर होकर कहने लगी— "अरी, देख, इतना आनन्द मै कहाँ रखूँ ?— बताओ री— जब मेरी चण्डी आती थी, सिपाहियो को साथ लेकर, और वे लोग रास्ते पर पहरा देते थे, तब भी तो मुझे इतना आनन्द नही हुआ— अरी, अब मुझे चण्डी का दुःख जरा भी नही है। मैने सोचा था, जब वे नही आये, तब जो कुछ आयोजन मैने किया, सब गगा मे फेक दूँगी— फिर कभी उनसे (श्रीरामकृष्ण से) बोलूँगी भी नही— जहाँ आयेगे, आड से एक बार देख भर लूँगी, बस चली आऊँगी।

"जाऊँ, सब से कहूँ, तुम आकर मेरा सुख देख जाओ,— जाऊँ योगीन से कहूँ, मेरा सुख देख जा—"

मारे आनन्द के अधीर होकर ब्राह्मणी फिर कहने लगी— "खेल (लाटरी) मे एक रुपया लगाकर किसी कुली को एक लाख रुपये मिले थे। एक लाख रुपये मिले है, सुसकर मारे आनन्द से वह मर गया था— सचमुच मर गया था!—अरी! मेरी भी तो वही दशा हो गयी है। तुम लोग सब आशीर्वाद दो, नही तो मै भी सचमुच मर जाऊँगी।"

मणि ब्राह्मणी की व्याकुलता और भाव की अवस्था देखकर मुग्ध हो गये है। वे उसके पैरो की धूल लेने के लिए बढे। ब्राह्मणी ने कहा 'अजी, यह क्या ?'— उसने मणि को भी बदले मे प्रणाम किया।

ब्राह्मणी भक्तो को आये हुए देखकर मारे आनन्द के कह रही है— "तुम सब लोग आये हो, छोटे नरेन्द्र को भी मै ले आयी हूँ, नही तो हँसेगा कौन ?" ब्राह्मणी इसी तरह की बाते कह रही

है, इसी समय उसकी बहन ने आकर कहा, 'दीदी, तुम जरा नीचे भी तो आओ, हम लोग अकेले क्या क्या करें?'

ब्राह्मणी आनन्द मे अपने को भूली हुई है। श्रीरामकृष्ण तथा भक्तो को देख रही है। उन्हे अब छोड़कर जा नहीं सकती।

इस तरह की बातो के पश्चात् बडी भक्ति से ब्राह्मणी श्रीरामकृष्ण को एक दूसरे कमरे मे ले गयी और खाने के लिए अनेक मिष्टान्न आदि दिये। भक्तो को भी छत पर बैठाकर खिलाया।

रात के आठ बजे। श्रीरामकृष्ण विदा हो रहे है। नीचे के मँजले में कमरे के साथ बरामदा भी है। बरामदे से पश्चिम की ओर आँगन मे आया जाता है, फिर दाहिनी ओर गौओ के रहने की जगह छोड़कर सदर दरवाजे को रास्ता है। उस समय ब्राह्मणी जोर से पुकार रही थी—'ओ बहू, जल्दी आ—पैरो की धूल ले।' बहू ने प्रणाम किया। ब्राह्मणी के एक भाई ने भी आकर प्रणाम किया।

ब्राह्मणी श्रीरामकृष्ण से कह रही है—'यह एक दूसरा भाई है—मूर्ख है।'

श्रीरामकृष्ण ने कहा, 'नही, सब भलेमानस है।'

एक व्यक्ति साथ साथ दिया दिखाते हुए आ रहे है, आते आते एक जगह प्रकाश ठीक नही पहुँचा, तब छोटे नरेन्द्र ऊँचे स्वर से कहने लगे—'दिया दिखाओ—दिया दिखाओ—यह न सोचो दिया दिखाना अब बस है।' (सब हँसते है)

अब गौओ की जगह आयी। ब्राह्मणी श्रीरामकृष्ण से कहती है, 'यहाँ मेरी गौएँ रहती है।' श्रीरामकृष्ण वहाँ जरा खड़े हो गये, और चारो ओर भक्तगण। मणि ने भूमिष्ठ हो श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया और पैरो की धूल ली।

अब श्रीरामकृष्ण गनू की माँ के घर जायेगे ।

(५)

गनू की माँ के मकान में श्रीरामकृष्ण

गनू की माँ के बैठकखाने मे श्रीरामकृष्ण बैठे हुए है । कमरा एक मंजले पर है, बिलकुल रास्ते पर । उस कमरे मे वजानेवालों का अखाड़ा (Concert) लगा करता है । कुछ नवयुवक श्रीरामकृष्ण के आनन्द के लिए वाद्ययन्त्र लेकर बीच बीच मे वजाते भी है ।

रात के साढे आठ बजे का समय होगा । आज आषाढ की कृष्णा प्रतिपदा है । चाँदनी मे आकाश, गृह, राजपथ, सब कुछ प्लावित हो रहा है । श्रीरामकृष्ण के साथ भक्तगण आकर उसी कमरे मे वैठे ।

साथ साथ ब्राह्मणी भी आयी हुई है, वह कभी घर के भीतर जा रही है, कभी बाहर बैठकखाने के दरवाजे के पास खड़ी होती है । मुहल्ले के कुछ लड़के झरोखो पर चढकर श्रीरामकृष्ण को झाँककर देख रहे है । मुहल्ले भर के लड़के, बूढे और जवान श्रीरामकृष्ण के आगमन की बात सुनकर उनके दर्शन करने के लिए आये है ।

झरोखे पर बच्चो को देखकर छोटे नरेन्द्र कह रहे है, 'अरे, तुम लोग वहाँ क्यो खड़े हो, जाओ अपने अपने घर ।' श्रीरामकृष्ण ने कहा, 'नही, नही, रहने दो ।'

श्रीरामकृष्ण वीच बीच मे 'हरि ॐ— हरि ॐ' कह रहे है ।

दरी पर एक आसन बिछाया गया है । श्रीरामकृष्ण उसी पर बैठे है । वाद्य बजानेवाले लड़को से गाने के लिए कहा गया । उनके लिए वैठने की सुविधा नही है । श्रीरामकृष्ण ने उन्हे अपने पास

दरी पर बैठने के लिए बुलाया।

श्रीरामकृष्ण कहते है, 'इसी पर आकर बैठो। मैं इसे समेटे लेता हूँ।' यह कहकर उन्होंने अपना आसन समेट लिया। नवयुवक गा रहे है—"केशव कुरु करुणा दीने कुंजकाननचारी।"

श्रीरामकृष्ण– अहा! कितना मधुर गाना है!— वेला भी कितना सुन्दर वज रहा है! और गाना भी कैसा स्वरयुक्त हो रहा है!

एक लड़का फ्लुट (वसी) वजा रहा था। उसकी ओर तथा एक दूसरे लडके की ओर उँगली से इशारा करके श्रीरामकृष्ण ने कहा, 'ये इनके जोड़ीदार है।'

अब वाद्य वजने लगे। श्रीरामकृष्ण आनन्दित होकर कह रहे है— "वाह! कितना सुन्दर है!"

एक लड़के की ओर उँगली से इशारा करके कह रहे है— "इनको सव तरह का वाजा वजाना आता है।"

मास्टर से कह रहे है— "ये सव वड़े अच्छे आदमी है।"

वालक-भक्त जव खुद गा-वजा चुके तव भक्तों से उन्होंने कहा, 'आप लोग भी कुछ गाइये।' ब्राह्मणी खड़ी हुई है। उसने दरवाजे के पास ही से कहा, 'ये लोग कोई गाना नही जानते। एक है महिनवावू, परन्तु उनके (श्रीरामकृष्ण के) सामने वे भी नही गायेगे।'

एक वालक-भक्त– क्यो, मै तो अपने वावूजी के सामने गा सकता हूँ।

छोटे नरेन्द्र– (जोर से हँसकर)– इतनी दूर ये नही वढ सके।

सव हँस रहे है। कुछ देर वाद ब्राह्मणी ने आकर कहा, "आप भीतर आइये।" श्रीरामकृष्ण ने पूछा— "क्यो?"

ब्राह्मणी– वहाँ जलपान की व्यवस्था की गयी है।

श्रीरामकृष्ण– यहीं न ले आओ।

ब्राह्मणी– गनू की माँ ने कहा है, 'घर मे ले आओ, पैरों की धूल पड़ जायेगी तो मेरा घर वाराणसी हो जायेगा, इस घर मे मरूँगी तो फिर किसी बात की चिन्ता न रहेगी।'

श्रीरामकृष्ण घर के लड़को के साथ मकान के भीतर गये। भक्त-गण चाँदनी मे टहलने लगे। मास्टर और विनोद घर के दक्षिण ओर सदर रास्ते पर बाते करते हुए टहल रहे है।

(६)

गुह्य कथा। 'तीनों एक'

श्रीरामकृष्ण बलराम के घर लौट आये है। बलराम के बैठक-खाने के पश्चिम ओरवाले कमरे मे विश्राम कर रहे है, अब वे सोयेंगे। गनू की माँ के घर से लौटते हुए बड़ी रात हो गयी है। रात के पौने ग्यारह बजे होगे।

श्रीरामकृष्ण कह रहे है—"योगीन, जरा पैरो पर हाथ तो फेर दो।" पास ही मास्टर भी बैठे हुए है।

योगीन पैरो पर हाथ फेर रहे है, इतने मे ही श्रीरामकृष्ण कह रहे है, 'मुझे भूख लगी है, थोड़ीसी सूजी खाऊँगा।'

ब्राह्मणी यहाँ भी साथ-साथ आयी हुई है। ब्राह्मणी के भाई तबला बहुत अच्छा बजाते है। श्रीरामकृष्ण ब्राह्मणी को देखकर फिर कह रहे है, 'अगली बार नरेन्द्र या किसी दूसरे गवैये के आने पर इनके भाई भी बुला लिये जायेगे।'

श्रीरामकृष्ण ने थोड़ीसी सूजी खायी। क्रमश. योगीन आदि भक्तगण कमरे से चले गये। मणि श्रीरामकृष्ण के पैरो पर हाथ फेर रहे है, श्रीरामकृष्ण उनसे बातचीत कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण—अहा, इन्हे (ब्राह्मणी आदि को) कितना आनन्द हुआ है!

मणि— कैसे आश्चर्य की वात है, ईसा मसीह के समय भी ऐसा ही हुआ था। वे भी दो वहने थी—परम भक्त मारथा (Martha) और मेरी (Mary)।

श्रीरामकृष्ण— (आग्रह से) —उनकी कहानी क्या है, जरा कहो तो।

मणि— ईशू उनके यहाँ भक्तो के साथ विलकुल इसी तरह गये थे। एक वहन उन्हे देखकर भाव और आनन्द के पारावार मे मग्न हो गयी थी। यह मुझे गौरांग के वारे मे एक गीत की याद दिलाती है: 'गौर के रूप-सागर मे मेरे नयन डूव गये, फिर लौटकर मेरे पास न आये; मेरा मन भी, तैरना भूलकर, एकदम तल मे पैठ गया।'

"दूसरी वहन अकेली जलपान का प्रवन्ध कर रही थी। उसने अपनी वहन से कोई मदद न पा ईशू के पास शिकायत की, कहा, 'प्रभु, देखिये तो, दीदी का यह कितना वड़ा अन्याय है! आप यहाँ अकेली चुपचाप वैठी हुई है और मै अकेली यह सव काम कर रही हूँ।'

"तव ईशू ने कहा, 'तुम्हारी दीदी धन्य है, क्योकि मनुष्यजीवन मे जो कुछ चाहिए (ईश्वर-प्रेम) वह उन्हे हो गया है।'"

श्रीरामकृष्ण— अच्छा, यह सव देखकर तुम्हे क्या जान पड़ता है?

मणि— मुझे जान पड़ता है, ईशू, चैतन्य और आप एक ही है।

श्रीरामकृष्ण— एक! एक! एक ही तो! वे (ईश्वर)— देखते नही हो—इसमे किस तरह से है!

यह कहकर श्रीरामकृष्ण ने अपने शरीर की ओर उँगली से इशारा किया।

मणि– उस दिन आप इस अवतीर्ण होने की वात को वहुत अच्छी तरह समझा रहे थे।

श्रीरामकृष्ण– किस तरह, कहो तो।

मणि– जैसे खूव लम्वा-चौड़ा मैदान पड़ा हुआ है। सामने चारदीवार है। इसलिए वह मैदान हमे देखने को नही मिलता। उस चारदीवार मे एक गोलाकार छेद है। उस छेद से उस मैदान का कुछ अंश दिखायी पड़ता है।

श्रीरामकृष्ण– कहो भला वह छेद क्या है?

मणि– वह छेद आप है, आपके भीतर से सव दीख पड़ता है,— वह दिगन्तव्यापी मैदान भी दिखायी पड़ता है।

श्रीरामकृष्ण सन्तुष्ट होकर मणि की पीठ ठोंकने लगे और कहा, 'तुमने इसे समझ लिया, अच्छा हुआ।'

मणि– उसे समझना सचमुच वड़ा कठिन है। पूर्ण ब्रह्म होते हुए भी उतने के भीतर किस तरह रहते है, यह नही समझ में आता।

श्रीरामकृष्ण– उसे किसी ने न पहचाना, वह पागल की तरह जीवों के घरो मे घूम रहा है।

मणि– और आपने ईशू की वात कही थी।

श्रीरामकृष्ण– क्या-क्या?

मणि– यदु मल्लिक के वगीचे मे ईशू की तस्वीर देखकर भाव-समाधि हुई थी, आपने देखा था— ईशू की मूर्ति तस्वीर से निकलकर आपमे आकर लीन हो गयी।

श्रीरामकृष्ण कुछ देर चुप है। फिर मणि से कह रहे है— 'गले मे यह जो हुआ है, सम्भव है इसका कोई अर्थ हो। यदि यह न होता तो मै सव स्थानो मे जाता, गाता और नाचता, और

इस प्रकार स्वयं को खिलवाड़-सा वना लेता ।'

श्रीरामकृष्ण द्विज की बात कह रहे है। कहा— 'द्विज नहीं आया ।'

मणि– मैने तो आने के लिए कहा था। आज आने की वात भी थी; परन्तु क्यो नही आया, कुछ समझ मे नही आता ।

श्रीरामकृष्ण– उसमें अनुराग खूव है। अच्छा, वह यहाँ का (सांगोपांग मे से) कोई एक होगा, न ?

मणि– जी हॉ, होगा जरूर। नही तो इतना अनुराग फिर कैसे होता ?

मणि मसहरी के भीतर श्रीरामकृष्ण को पखा झल रहे है।

श्रीरामकृष्ण करवट वदलकर फिर वातचीत करने लगे। आदमी के भीतर अवतीर्ण होकर वे लीला करते है, यही वात हो रही है।

श्रीरामकृष्ण–पहले मुझे रूपदर्शन नही होता था, ऐसी अवस्था भी हो चुकी है। इस समय भी देखते नही हो ? रूपदर्शन घटता जा रहा है।

मणि– लीलाओ मे नरलीला मुझे अधिक पसन्द है।

श्रीरामकृष्ण–तो बस ठीक है।—और तुम मुझे देखते ही हो!

उपरोक्त कथन से क्या श्रीरामकृष्ण का यही संकेत है कि ईश्वर नररूप मे अवतीर्ण होकर इस शरीर मे लीला कर रहे है?

परिच्छेद १४

श्रीरामकृष्ण के आध्यात्मिक अनुभव

(१)

द्विज तथा द्विज के पिताजी। मातृऋण तथा पितृऋण

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर मन्दिर मे अपने उसी कमरे मे राखाल, मास्टर आदि भक्तों के साथ बैठे हुए है। दिन के ३—४ बजे का समय होगा।

श्रीरामकृष्ण के गले की बीमारी की जड़ जमने लगी है। तथापि दिन भर वे भक्तो की मंगलकामना करते रहते है। किस तरह वे संसार मे बद्ध न हो, किस तरह उनमे ज्ञान और भक्ति हो—ईश्वर की प्राप्ति हो, इसी की चिन्ता किया करते है।

श्रीयुत राखाल वृन्दावन से आकर कुछ दिन घर पर थे। आजकल वे श्रीरामकृष्ण के पास रहते है। लाटू, हरीश और रामलाल भी श्रीरामकृष्ण के पास रहते है।

श्रीमाताजी (श्रीरामकृष्ण की धर्मपत्नी) भी कई महीने हुए श्रीरामकृष्ण की सेवा के लिए देश से आयी हुई है। वे नौवतखाने मे रहती है। शोकातुरा ब्राह्मणी कई रोज से उनके पास रहती है।

श्रीरामकृष्ण के पास द्विज, द्विज के पिता और भाई, मास्टर आदि बैठे हुए है। आज ९ अगस्त है, १८८५।

द्विज की उम्र सोलह साल की होगी। उनकी माता के निधन के बाद उनके पिता ने दूसरा विवाह कर लिया है। द्विज मास्टर के साथ प्राय: श्रीरामकृष्ण के पास आया करते है। परन्तु उनके पिता को इससे बड़ा असन्तोष है।

द्विज के पिता श्रीरामकृष्ण के दर्शन के लिए आयेंगे, यह वात उन्होने वहुत दिन पहले ही कही थी। आज इसीलिए आये भी है। वे कलकत्ते के किसी विदेशी वनिये के ऑफिस के मैनेजर है।

श्रीरामकृष्ण– (द्विज के पिता से)– आपका लड़का यहाँ आता है, इससे आप कुछ और न सोचियेगा।

"मैं तो कहता हूँ, चैतन्य प्राप्त करके संसार मे रहो। वडी मेहनत के वाद अगर कोई सोना पा ले, तो वह उसे चाहे मिट्टी मे गाड़ रखे, सन्दूक मे वन्द कर रखे, अथवा पानी मे रखे, सोने का इससे कुछ वनता-बिगड़ता नहीं।

"मै कहता हूँ, अनासक्त होकर ससार करो। हाथों में तेल लगाकर कटहल काटो, तो हाथ मे दूध न चिपकेगा।

"कच्चे 'मै' को संसार मे रखने पर मन मलिन हो जाता है। ज्ञानलाभ करके ससार मे रहना चाहिए।

"पानी मे दूध को डाल रखने पर दूध नप्ट हो जाता है। परन्तु उसी का मक्खन निकालकर पानी में डालने पर फिर कोई झंझट नही रह जाती।"

द्विज के पिता– जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण– (सहास्य)– आप जो इन्हे डाँटते है, इसका मतलब मै समझता हूँ। आप इन्हें डरवाते है। ब्रह्मचारी ने सॉप से कहा, 'तू तो वड़ा मूर्ख है ! मैने तुझे वस काटने ही के लिए मना किया था, फुफकारने के लिए नही। तूने अगर फुफकारा होता तो तेरे शत्रु तुझे मार न सकते।' इसी तरह आप जो लड़कों को डॉटते है, वह केवल फुफकारना ही है। (द्विज के पिता हंस रहे है)

"लड़के का अच्छा होना पिता के पुण्य के लक्षण है। अगर

कुएँ का पानी अच्छा निकला तो वह कुएँ के मालिक के पुण्य का चिह्न है।

"बच्चे को आत्मज कहते है। तुममे और तुम्हारे बच्चे मे कोई भेद नही। एक रूप से बच्चा तुम्ही हुए हो। एक रूप से तुम विषयी हो, ऑफिस का काम करते हो, ससार का भोग करते हो, एक दूसरे रूप से तुम्ही भक्त हुए हो---अपने सन्तान के रूप से। मैने सुना था, तुम घोर विषयी हो। परन्तु बात ऐसी तो नही है। (सहास्य) यह सब तो तुम जानते ही हो। परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि शायद तुम बहुत अधिक सतर्क हो, इसीलिए जो कुछ मै कहता हूँ उस पर तुम सिर हिला-हिलाकर अपनी राय देते हो। (द्विज के पिता मुसकराते है)

"यहाँ आने पर तुम क्या हो, यह ये लोग समझ सकेंगे। पिता का स्थान किता ऊँचा है! माता-पिता को धोखा देकर जो धर्म करना चाहता है उसे क्या खाक हो सकता है?

"आदमी के बहुत से ऋण है, पितृऋण, देवऋण, ऋषिऋण, इसके अतिरिक्त मातृऋण भी है। फिर स्त्री के ऋण का भी उल्लेख है---इसे भी मानना चाहिए। अगर वह सती है तो पति को अपनी मृत्यु के बाद उसके भरण-पोषण के लिए व्यवस्था कर जानी चाहिए।

"मै अपनी माँ के कारण वृन्दावन मे न रह सका। ज्योही याद आया कि माँ दक्षिणेश्वर के कालीमन्दिर मे है, फिर वृन्दावन मे मन न लगा।

"मै इन लोगो से कहता हूँ, ससार भी करो और ईश्वर मे भी मन रखो। संसार छोड़ने के लिए मै नही कहता, यह करो और वह भी करो।"

पिता— मैं उससे यही कहता हूँ कि वह लिखना-पढना भी करे, आपके यहाँ आने से मैं मनाई तो नही करता। परन्तु लड़को के साथ हँसी-मजाक मे समय नष्ट न किया करे—

श्रीरामकृष्ण— इसमे अवश्य ही संस्कार था। इसके दूसरे दो भाइयो मे वह बात न होकर इसी मे यह क्यो पैदा हुई?

"जबरदस्ती क्या तुम मना कर सकोगे? जिसमे जो कुछ है, वह होकर ही रहेगा।"

पिता— हाँ, यह तो है।

श्रीरामकृष्ण द्विज के पिता के पास चटाई पर आकर बैठे। बातचीत करते हुए एक बार उनकी देह पर हाथ लगा रहे है।

सन्ध्या हो आयी। श्रीरामकृष्ण मास्टर आदि से कह रहे है, 'इन्हे सब देवता दिखा ले आओ— अच्छा रहता तो मै भी साथ चलता।'

लडको को सन्देश देने के लिए कहा। द्विज के पिता से कह रहे है— 'ये कुछ जलपान करेंगे, कुछ जलपान करना चाहिए।' द्विज के पिता देवालय देखकर बगीचे मे जरा टहल रहे है। श्रीरामकृष्ण अपने कमरे के दक्षिण-पूर्ववाले बरामदे मे भूपेन, द्विज और मास्टर आदि के साथ आनन्द-पूर्वक वार्तालाप कर रहे है। कौतुक करते हुए भूपेन और मास्टर की पीठ मे मीठी चपत मार रहे है। द्विज से हँसते हुए कह रहे है, "कैसा कहा मैने तेरे बाप से?"

सन्ध्या के बाद द्विज के पिता श्रीरामकृष्ण के कमरे में फिर आये। कुछ देर मे बिदा होनेवाले है।

द्विज के पिता को गरमी लग रही है। श्रीरामकृष्ण अपने हाथों से पंखा झल रहे है।

द्विज के पिता बिदा हुए। श्रीरामकृष्ण उठकर खड़े हो गये।

(२)

समाधि के प्रकार

रात के आठ बजे है। श्रीरामकृष्ण महिमाचरण से बातचीत कर रहे है। कमरे मे राखाल, मास्टर और महिमाचरण के दो-एक मित्र बैठे है।

महिमाचरण आज रात को यही रहेगे।

श्रीरामकृष्ण– अच्छा, केदार को कैसा देख रहे हो ?—उसने दूध देखा ही है या पिया भी है ?

महिमा– हाँ, आनन्द पा रहे है।

श्रीरामकृष्ण– और नृत्यगोपाल ?

महिमा– सुन्दर ! अच्छी अवस्था है।

श्रीरामकृष्ण– हाँ, अच्छा गिरीश घोष कैसा हुआ है ?

महिमा– अच्छा हुआ है, परन्तु लड़कों का दर्जा और है।

श्रीरामकृष्ण– और नरेन्द्र ?

महिमा– मै पन्द्रह साल पहले जैसा था, यह वैसा ही है।

श्रीरामकृष्ण– और छोटा नरेन्द्र ? कैसा सरल है !

महिमा– जी हाँ, खूब सरल।

श्रीरामकृष्ण– तुमने ठीक कहा है। (सोचते हुए) और कौन है ?

"जो सब लडके यहाँ आ रहे है, उन्हे बस दो बातो को जानने से ही हुआ। ऐसा होने से फिर अधिक साधन-भजन न करना होगा। पहली बात—मै कौन हूँ, दूसरी—वे कौन है। इन लड़को में बहुतेरे अन्तरग है।

"जो अन्तरग है, उनकी मुक्ति न होगी। वायव्य दिशा में

एक बार और (मुझे) देह धारण करना होगा।

"बच्चो को देखकर मेरे प्राण शीतल हो जाते है। और जो लोग बच्चे पैदा कर रहे है, मुकदमा और मामलेबाजी कर रहे है, उन्हे देखकर कैसे आनन्द हो सकता है ? शुद्ध आत्मा को बिना देखे रहूँ कैसे ?"

महिमाचरण शास्त्रो से श्लोको की आवृत्ति करके सुना रहे है, और तन्त्रो से भूचरी, खेचरी और शाम्भवी, कितनी ही मुद्राओं की बाते कह रहे है।

श्रीरामकृष्ण– अच्छा, समाधि के बाद मेरी आत्मा महाकाश मे पक्षी की तरह उड़ती हुई घूमती है, ऐसी बात कोई कोई कहते है।

"हृषीकेश का साधु आया था। उसने कहा, 'समाधियाँ पाँच प्रकार की होती है,— देखता हूँ तुम्हें तो सभी समाधियाँ होती है। पिपीलिकावत्, मीनवत्, कपिवत्, पक्षीवत्, तिर्यग्वत्।'

"कभी वायु चढकर चीटी की तरह सुरसुराया करती है। कभी समाधि-अवस्था मे भाव-समुद्र के भीतर आत्मारूपी मीन आनन्द से क्रीड़ा करता है।

"कभी करवट बदलकर पड़ा हुआ हूँ, देखा, महावायु बन्दर की तरह मुझे ठेलकर आनन्द करती है। मै चुपचाप पड़ा रहता हूँ। वही वायु एकाएक बन्दर की तरह उछलकर सहस्रार मे चढ़ जाती है। इसीलिए तो मैं उछलकर खड़ा हो जाता हूँ।

"फिर कभी पक्षी की तरह इस डाल से उस डाल पर, उस डाल से इस डाल पर महावायु चढ़ती रहती है। जिस डाल पर बैठती है वह स्थान आग की तरह जान पडता है। कभी मूलाधार से स्वाधिष्ठान, स्वाधिष्ठान से हृदय, और इस तरह क्रमश. सिर मे चढती है।

"कभी महावायु की तिर्यक्-गति होती है—टेढी-मेढी चाल।

उसी तरह चलकर अन्त मे जब सिर में आती है तब समाधि होती है।

"कुण्डलिनी के जागृत हुए विना चैतन्य नही होता।

"कुण्डलिनी मूलाधार मे रहती है। चैतन्य होने पर वह सुषुम्ना नाडी के भीतर से स्वाधिष्ठान, मणिपुर, इन सब का भेद करके अन्त मे मस्तक मे पहुँचती है, इसे ही महावायु की गति कहते है। अन्त मे समाधि होती है।

"केवल पुस्तक पढने से चैतन्य नही होता। उन्हे पुकारना चाहिए। व्याकुल होने पर कुलकुण्डलिनी जागृत होती है। सुनकर या किताबे पढकर जो ज्ञान होता है उससे क्या होगा ?

"जब यह अवस्था हुई, उससे ठीक पहले मुझे दिखलाया गया किस तरह कुलकुण्डलिनी शक्ति के जागृत होने पर क्रमशः सब पद्म खिलने लगे, और फिर समाधि हुई। यह बड़ी गुप्त बात है। मैंने देखा, बिलकुल मेरी तरह का २२–२३ साल का एक युवक सुषुम्ना नाड़ी के भीतर जाकर, जिह्वा के द्वारा योनिरूप पद्मों के साथ रमण कर रहा है। पहले गुह्य, लिंग और नाभि—चतुर्दल, षड्दल और दशदल पद्म, पहले ये सब अधोमुख थे, फिर वे ऊर्ध्वमुख हो गये।

"जब वह हृदय मे आया, मुझे खूब याद है, जीभ से रमण करने के बाद द्वादशदल अधोमुख पद्म ऊर्ध्वमुख होकर खिल गया, फिर कण्ठ मे षोड़पदल और कपाल मे द्विदल पद्म के खुलने के बाद सिर में सहस्रदल पद्म प्रस्फुटित हो गया। तभी से मेरी यह अवस्था है।"

(३)

श्रीरामकृष्ण के आध्यात्मिक अनुभव

श्रीरामकृष्ण यह बात कहते हुए उतरकर महिमाचरण के पास

जमीन पर बैठे। पास मास्टर है, तथा दो-एक भक्त और कमरे मे राखाल भी है।

श्रीरामकृष्ण– (महिमा से)– आपसे कहने की इच्छा वहुत दिनों से थी, पर कह नही सका, आज कहने की इच्छा हो रही है।

"मेरी जो अवस्था आप वतलाते है, साधना करने ही से ऐसा नही हुआ करता। इसमे (मुझमे) कुछ विशेषता है।

"बातचीत की!— केवल दर्शन ही नही, बातचीत की! वट के नीचे मैने देखा, गगाजी के भीतर से निकलकर कितनी हँसी— कितना मजाक किया। हँसी ही हँसी मे मेरी उँगली मरोड दी गयी! फिर बातचीत हुई,—वे (भगवान्) बोले!

"तीन दिन लगातार मै रोया, उन्होने वेदों, पुराणो और तन्त्रों मे क्या है, सब दिखला दिया!

"महामाया क्या है, यह भी एक दिन दिखला दिया। कमरे के भीतर छोटीसी ज्योति क्रमशः बढने लगी और ससार को आच्छन्न करने लगी।

"फिर उन्होने दिखलाया—मानो बहुत बड़ा तालाब काई से भरा हुआ है। हवा से काई कुछ हट गयी और पानी जरा दीख पड़ा, परन्तु देखते ही देखते चारो ओर से नाचती हुई काई फिर आ गयी और पानी को ढक लिया। दिखलाया, वह जल सच्चिदानन्द है और काई माया। माया के कारण सच्चिदानन्द को कोई देख नही सकता। अगर एक बार देखता भी है तो पल भर के लिए, फिर माया उसे ढक लेती है।

"किस तरह का आदमी यहाँ आ रहा है, उसके आने से पहले ही वे मुझे दिखा देते है। बट के नीचे से बकुल के पेड़ तक उन्होने चैतन्यदेव के संकीर्तन का दल दिखलाया। उसमे मैने बलराम को

देखा था— नही तो भला मिश्री और यह सब मुझे कौन देता ? और इन्हे (मास्टर को) भी देखा था।

"केशव सेन से मुलाकात होने के पहले उसे मैने देखा ! समाधि-अवस्था मे मैने देखा केशव सेन और उसके दल को। कमरे मे ठसाठस भरे हुए आदमी मेरे सामने वैठे हुए थे। केशव को मैने देखा, उन लोगों मे मोर की तरह अपने पख फैलाये वैठा हुआ था। पंख अर्थात् दल-वल। केशव के सिर मे, देखा, एक लाल मणि थी। वह रजोगुण का लक्षण है। केशव अपने चेलों से कह रहा था— 'ये (श्रीरामकृष्ण) क्या कह रहे है, तुम लोग सुनो।' माँ से मैने कहा, 'माँ, इन लोगो का अंग्रेजी मत है, इनसे क्या कहना है ?' फिर माँ ने समझाया, कलिकाल मे ऐसा ही होता है। तब यहाँ से (मेरे पास से) वे लोग हरिनाम तथा माता का नाम ले गये। इसीलिए माता ने विजय को केशव के दल से अलग कर लिया। परन्तु विजय आदि-समाज मे सम्मिलित नही हुआ।

(अपने को दिखाकर) "इसके भीतर कोई एक है। गोपाल सेन नाम का एक लड़का आया करता था, वहुत दिन हो गये। इसके भीतर जो है, उन्होने गोपाल की छाती पर पैर रख दिया। वह भावावेश मे कहने लगा, 'अभी तुम्हे देर है; परन्तु मै संसारी आदमियो के वीच मे नही रह सकता।'— फिर 'अव जाता हूँ' कहकर वह घर चला गया। वाद मे मैने सुना, उसने देह छोड़ दी है। जान पडता है, वही नित्यगोपाल है !

"सब वड़े आश्चर्यपूर्ण दर्शन हुए है। अखण्ड सच्चिदानन्द-दर्शन भी हो चुका है। उसके भीतर मैने देखा है, वीच मे घेरा लगाकर उसके दो हिस्से कर दिये गये है। एक हिस्से मे केदार, चुन्नी

तथा अन्य साकारवादी भक्त है, घेरे के दूसरी ओर खूब लाल सुर्खी की ढेरी की तरह प्रकाश है, उसके वीच मे समाधिमग्न नरेन्द्र (स्वामी विवेकानन्द) वैठा हुआ है।

"ध्यानस्थ देखकर मैंने पुकारा-- 'नरेन्द्र !', उसने जरा आँख खोली।-- मै समझ गया, वही एक रूप मे, सिमला (कलकत्ता) में, कायस्थ के यहाँ पैदा होकर रह रहा है। तव मैंने कहा, 'माँ, उसे माया मे वाँध लो, नहीं तो समाधि मे वह देह छोड़ देगा।' केदार साकारवादी है, उसने झाँककर देखा, उसे रोमांच हो आया और वह भागा।

"यही सोचता हूँ, इस शरीर के भीतर माँ स्वय है, भक्तो को लेकर लीला कर रही है। जव पहले-पहल यह अवस्था हुई, तव ज्योति से देह दमका करती थी। छाती लाल हो जाती थी। तव मैंने कहा, 'माँ, वाहर प्रकाशित न होओ-- भीतर समा जाओ।' इसीलिए अव यह देह मलिन हो रही है।

"नही तो आदमी जला डालते। आदमियो की भीड़ लग जाती अगर वैसी ज्योतिर्मय देह वनी रहती। अव वाहर प्रकाश नही है। इससे तमाशबीन भाग जाते है-- जो शुद्ध भक्त है, वे ही रहेगे। यह बीमारी क्यो हुई, इसका अर्थ यही है। जिनकी भक्ति सकाम है, वे वीमारी देखकर भाग जायेगे।

"मेरी एक इच्छा थी। मैने माँ से कहा था-- 'माँ, मै भक्तो का राजा होऊँगा।'

"फिर मेरे मन मे यह वात उठी कि हृदय से जो ईश्वर को पुकारेगा, उसे यहाँ आना होगा-- आना ही होगा। देखो, वही हो रहा है, वे ही सब लोग आते है।

"इसके भीतर कौन है, यह मेरे पिता आदि जानते थे। पिताजी

ने गया में स्वप्न देखा था। स्वप्न मे आकर रघुवीर ने कहा था, 'मैं तेरा पुत्र होकर पैदा होऊँगा।'

"इसके भीतर वे ही है। कामिनी और कांचन का त्याग!— यह क्या मेरा कर्म है? स्त्री-सम्भोग स्वप्न मे भी नही हुआ।

"नागे ने वेदान्त का उपदेश दिया। तीन ही दिन मे समाधि हो गयी। माधवीलता के नीचे उस समाधि-अवस्था को देखकर उसने कहा— 'अरे! यह क्या है।' फिर उसने समझा था, इसके भीतर कौन है। तव उसने मुझसे कहा, 'मुझे तुम छोड़ दो।' यह वात सुनकर मेरी भावावस्था हो गयी। उसी अवस्था मे मैंने कहा, 'वेदान्त का वोध हुए विना तुम यहाँ से नहीं जा सकते।'

"तव मै दिन-रात उसी के पास रहता था। केवल वेदान्त की चर्चा होती थी। ब्राह्मणी (श्रीरामकृष्ण की तन्त्र-साधना की आचार्या) कहती थी, 'बच्चा, वेदान्त पर ध्यान न दो, इससे भक्ति की हानि होती है।'

"माँ से मैंने कहा, 'माँ, इस देह की रक्षा किस तरह होगी?— और साधुओ तथा भक्तो को लेकर भी किस तरह रह सकूँगा?— एक वड़ा आदमी ला दो।' इसीलिए मथूरवाबू ने चौदह वर्प तक सेवा की।

"इसके भीतर जो है, वे पहले से ही वतला देते है, किस श्रेणी का भक्त आनेवाला है। ज्योही देखता हूँ गौरांग का रूप सामने आया कि समझ जाता हूँ, कोई गौराग-भक्त आ रहा है। अगर कोई शाक्त आता है तो शक्तिरूप— कालीरूप दीख पडता है।

"कोठी की छत पर से आरती के समय मै चिल्लाया करता था, 'अरे, तुम सव लोग कहाँ हो?— आओ!' देखो, अव क्रम क्रम

से सब आ गये है।

"इसके भीतर वे खुद है---स्वय ही मानो इन सब भक्तो को लेकर काम कर रहे है।

"एक-एक भक्त की अवस्था कितने आश्चर्य की है! छोटा नरेन्द्र--- इसे कुम्भक आप ही आप होता है और फिर समाधि भी! एक-एक बार कभी-कभी ढाई घण्टे तक! कभी और देर तक!---कैसे आश्चर्य की बात है!

"यहाँ सब तरह की साधनाएँ हो चुकी है---ज्ञानयोग, भक्ति-योग, कर्मयोग। उम्र बढाने के लिए हठयोग भी किया जा चुका है। इस शरीर के भीतर कोई और (ईश्वर) वास कर रहा है; नही तो समाधि के बाद फिर मैं भक्तों के साथ कैसे रह सकता तथा ईश्वर-प्रेम का आनन्द कैसे उठा सकता? कुंवरसिह कहता था, 'समाधि के बाद लौटा हुआ आदमी कभी मैंने नहीं देखा---तुम नानक हो।'

"चारो ओर संसारी आदमी है--- चारों ओर कामिनी-काचन---इस तरह की परिस्थिति के भीतर यह अवस्था है!---समाधि और भाव लगे ही रहते है। इसी पर प्रताप ने (ब्राह्म-समाज के प्रतापचन्द्र मुजूमदार)---कुक साहब जब आया था---जहाज मे मेरी अवस्था देखकर कहा, 'बाप रे! जैसे भूत लगा ही रहता हो!'"

राखाल, मास्टर आदि अवाक् होकर ये सब बाते सुन रहे है।

क्या महिमाचरण ने श्रीरामकृष्ण के इस इशारे को समझा? इन सब बातों को सुनकर भी वे कह रहे है---'जी, आपके प्रारब्ध के कारण यह सब हुआ है।' उनका मनोभाव यह है कि श्रीरामकृष्ण एक साधु या भक्त है। श्रीरामकृष्ण उनकी बात पर

अपनी सम्मति देते हुए कह रहे है—'हाँ, प्रारब्ध—जैसे बाबू के बहुत से वैठकखाने हो, यहाँ भी उनका एक वैठकखाना है। भक्त उनका बैठकखाना है।'

(४)

स्वप्न-दर्शन

रात के नौ बजे है। श्रीरामकृष्ण छोटे तखत पर बैठे हुए है। महिमाचरण की इच्छा है— कमरे मे श्रीरामकृष्ण के रहते हुए वे ब्रह्मचक्र की रचना करें। राखाल, मास्टर, किशोरी तथा और दो-एक भक्तो को साथ लेकर जमीन पर उन्होने चक्र बनाया। सब लोगो से उन्होने ध्यान करने के लिए कहा। राखाल को भावावस्था हो गयी। श्रीरामकृष्ण उतरकर उनकी छाती मे हाथ लगाकर माता का नाम लेने लगे। राखाल का भाव संवरण हो गया।

रात के एक बजे का समय होगा। आज कृष्णपक्ष की चतुर्दशी है। चारों ओर घोर अन्धकार है। दो-एक भक्त गंगा के तट पर अकेले टहल रहे है। श्रीरामकृष्ण उठे। वे बाहर आये। भक्तो से कहा, "नागा कहा करता था, 'इस समय—गम्भीर रात्रि की इस निस्तब्धता मे—अनाहत शब्द सुन पड़ता है।'"

रात के पिछले पहर मे महिमाचरण और मास्टर श्रीरामकृष्ण के कमरे मे जमीन पर ही लेट गये। कैम्पखाट पर राखाल थे। श्रीरामकृष्ण पाँच वर्ष के बच्चे की तरह दिगम्बर होकर कभी कभी कमरे के भीतर टहल रहे है।

सवेरा हुआ। श्रीरामकृष्ण माता का नाम ले रहे है। पश्चिम के गोल वरामदे मे जाकर उन्होने गंगादर्शन किया। कमरे के भीतर जितने देव-देवियो के चित्र थे, सब के पास जा-जाकर

प्रणाम किया। भक्तगण शय्या से उठकर प्रणाम आदि करके प्रातःक्रिया करने के लिए गये।

श्रीरामकृष्ण पंचवटी में एक भक्त के साथ बातचीत कर रहे हैं। उन्होंने स्वप्न में चैतन्यदेव को देखा था।

श्रीरामकृष्ण– (भावावेश में)–आहा! आहा!

भक्त– जी स्वप्न में——।

श्रीरामकृष्ण– स्वप्न क्या कम है?

श्रीरामकृष्ण की आँखों में आँसू आ गये। स्वर गद्‌गद है।

जागृत अवस्था में एक भक्त के दर्शन की बात सुनकर कह रहे हैं, 'इसमें आश्चर्य क्या है? आजकल नरेन्द्र भी ईश्वरी रूप देखता है।'

प्रातःक्रिया समाप्त करके महिमाचरण ठाकुर-मन्दिर के उत्तर-पश्चिम ओर के शिवमन्दिर में जाकर निर्जन में वेद-मन्त्रों का उच्चारण कर रहे हैं।

दिन के आठ बजे का समय है। मणि गंगा नहाकर श्रीरामकृष्ण के पास आये। सन्तप्त ब्राह्मणी भी श्रीरामकृष्ण के दर्शन करने के लिए आयी है।

श्रीरामकृष्ण– (ब्राह्मणी से)–इन्हें (मास्टर को) कुछ प्रसाद देना, पूड़ी-मिठाई—— ताक पर रखा है।

ब्राह्मणी– पहले आप पाइये। फिर वे भी पा लेंगे।

श्रीरामकृष्ण– तुम पहले जगन्नाथजी का भात खाओ, फिर प्रसाद पाना।

प्रसाद पाकर मणि शिवमन्दिर में शिवदर्शन करके श्रीरामकृष्ण के पास लौट आये और प्रणाम करके बिदा हो रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण–(सस्नेह)–तुम चलो। तुम्हें काम पर जाना है।

(५)

मौनधारी श्रीरामकृष्ण और माया का दर्शन

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर मन्दिर मे प्रातः आठ वजे से दिन के तीन वजे तक मौन व्रत धारण किये हुए हैं। आज मंगलवार है, ११ अगस्त १८८५ ई.। कल अमावस्या थी।

श्रीरामकृष्ण कुछ अस्वस्थ है। क्या उन्होंने जान लिया है कि शीघ्र ही वे इस धाम को छोड़ जायेगे ? क्या इसीलिए मौन धारण किये हुए हैं ? उन्हे वात न करते देख श्रीमाँ रो रही है। राखाल और लाटू रो रहे है। वागवाजार की ब्राह्मणी भी इस समय आयी थी। वह भी रो रही है। भक्तगण वीच वीच मे पूछ रहे हैं, "क्या आप हमेशा के लिए चुप रहेगे ?"

श्रीरामकृष्ण इशारे से कह रहे है, 'नही।' नारायण आये है— दिन के तीन वजे के समय।

श्रीरामकृष्ण नारायण से कह रहे है, "माँ तेरा कल्याण करेंगी।"

नारायण ने आनन्द के साथ भक्तों को समाचार दिया। श्रीरामकृष्ण ने अव वात की है। राखाल आदि भक्तों की छाती पर से मानो एक पत्थर उतर गया। वे सभी श्रीरामकृष्ण के पास आकर वैठे।

श्रीरामकृष्ण— (राखाल आदि भक्तो के प्रति)— माँ दिखा रही थी कि सभी माया है। वे ही सत्य हैं और शेप सभी माया का ऐश्वर्य है।

"और एक वात देखी, भक्तो मे से किसका कितना हुआ है।"

नारायण आदि भक्त— अच्छा, किसका कितना हुआ है ?

श्रीरामकृष्ण— इन सभी को देखा— नित्यगोपाल, राखाल, नारायण, पूर्ण, महिमा चक्रवर्ती आदि।

(६)

श्रीरामकृष्ण गिरीश, शशधर पण्डित आदि भक्तों के साथ

श्रीरामकृष्ण की बीमारी का समाचार कलकत्ते के भक्तो को प्राप्त हुआ, उन्होने सोचा कि शायद वह उनके गले मे एक प्रकार का घाव मात्र है ।

रविवार, १६ अगस्त । अनेक भक्त उनके दर्शन के लिए आये है— गिरीश, राम, नित्यगोपाल, महिमा चक्रवर्ती, किशोरी (गुप्त), पण्डित शशधर तर्कचूड़ामणि आदि ।

श्रीरामकृष्ण पहले जैसे ही आनन्दमय है तथा भक्तों के साथ वार्तालाप कर रहे है ।

श्रीरामकृष्ण– रोग की बात माँ से कह नही सकता, कहने में लाज लगती है।

गिरीश– मेरे नारायण अच्छा करेंगे ।

राम– ठीक हो जायेगा ।

श्रीरामकृष्ण– (हंसते हुए)– हाँ, यही आशीर्वाद दो। (सभी की हँसी)

गिरीश आजकल नये नये आ रहे है। श्रीरामकृष्ण उनसे कह रहे है, "तुम्हे अनेक झमेलो मे रहना होता है, तुम्हे अनेक काम रहते है । तुम और तीन बार आओ ।" अब शशधर के साथ बातचीत कर रहे है ।

श्रीरामकृष्ण– (शशधर के प्रति)– तुम शक्ति की बात कुछ कहो ।

शशधर– मै क्या जानता हूँ ?

श्रीरामकृष्ण– (हंसते हुए)– एक आदमी एक व्यक्ति की

बहुत भक्ति करता था। उसने उस भक्त से तम्बाकू भर लाने के लिए कहा। इस पर भक्त ने कहा, 'क्या मैं आपकी आग लाने के योग्य हूँ ?' फिर आग भी नही लाया ! (सभी हँसे)

शशधर— जी, वे ही निमित्त-कारण है, वे ही उपादान-कारण है। उन्होने ही जीव और जगत् को पैदा किया, और फिर वे ही जीव तथा जगत् बने हुए है, जैसे मकड़ी ने स्वयं जाला तैयार किया (निमित्त-कारण) और उस जाले को अपने ही अन्दर से निकाला (उपादान-कारण)।

श्रीरामकृष्ण— फिर यह भी है कि जो पुरुष है, वे ही प्रकृति है; जो ब्रह्म है, वे ही शक्ति है। जिस समय निष्क्रिय है, सृष्टि, स्थिति, प्रलय नही कर रहे है, उस समय उन्हे हम ब्रह्म कहते है, पुरुष कहते है। और जब वे उन सब कामों को करते है, उस समय उन्हे शक्ति कहते है, प्रकृति कहते है। परन्तु जो ब्रह्म है, वे ही शक्ति है। जो पुरुष है, वे ही प्रकृति बने हुए है।

"जल स्थिर रहने पर भी जल है और हिलने पर भी जल है। साँप टेढ़ा-मेढा होकर चलने पर भी साँप है और फिर चुपचाप कुण्डलाकार रहने पर भी साँप है।

भोग और कर्म

"ब्रह्म क्या है यह मुख से नहीं कहा जा सकता, मुख वन्द हो जाता है। 'निताई मेरा मतवाला हाथी है, निताई मेरा मतवाला हाथी है'— ऐसा कहते कहते अन्त मे कीर्तनिया और कुछ भी नही कह सकता, केवल कहता है 'हाथी-हाथी'; फिर 'हाथी-हाथी' कहते कहते केवल 'हा-हा' कहता है, और अन्त मे वह भी नही कह सकता— बाह्यशून्य।"

ऐसा कहते कहते श्रीरामकृष्ण समाधिमग्न हो गये। खड़े-खड़े

ही समाधिमग्न !

समाधि-भग होने के थोड़ी देर वाद कह रहे है— " 'क्षर' व 'अक्षर' से परे क्या है मुँह से कहा नही जाता ।"

सभी चुप है; श्रीरामकृष्ण फिर कह रहे है, "जव तक कुछ भोग बाकी रहता है या कर्म वाकी है तव तक समाधि नही होती।

(शशधर के प्रति) "इस समय ईश्वर तुमसे कर्म करा रहे है, व्याख्यान देना आदि। अव तुम्हें वही सव करना होगा।

"कर्म समाप्त हो जाने पर ही तुम्हें शान्ति प्राप्त होगी। घरवाली घर का काम-काज समाप्त करके जव नहाने जाती है तो फिर वुलाने पर भी नहीं लौटती।"

परिच्छेद १५

दक्षिणेश्वर मन्दिर मे

(१)

पण्डित श्यामापद पर कृपा

श्रीरामकृष्ण दो-एक भक्तो के साथ कमरे मे वैठे हुए है। शाम के पाँच बजे का समय है। श्रावण कृष्णा द्वितीया, २७ अगस्त १८८५।

श्रीरामकृष्ण की वीमारी का सूत्रपात हो चुका है। फिर भी भक्तो के आने पर वे शरीर पर ध्यान नही देते, उनके साथ दिन भर वातचीत करते रहते है,——कभी गाना गाते है।

श्रीयुत मधु डाक्टर प्राय· नाव पर चढ़कर आया करते है—— श्रीरामकृष्ण की चिकित्सा के लिए। भक्तगण वहुत ही चिन्तित हो रहे है, उनकी इच्छा है, मधु डाक्टर रोज देख जाया करे। मास्टर श्रीरामकृष्ण से कह रहे है, 'ये अनुभवी है, ये अगर रोज देखे तो अच्छा हो।'

पण्डित श्यामापद भट्टाचार्य ने आकर श्रीरामकृष्ण के दर्शन किये। ये आँटपुर मौजे मे रहते है। सन्ध्या हो गयी, अतएव 'सन्ध्या कर लूँ' कहकर पण्डित श्यामापदजी गगा की ओर—चाँदनीघाट चले गये।

सन्ध्या करते करते पण्डितजी को एक बड़ा अद्भुत दर्शन हुआ। सन्ध्या समाप्त कर वे श्रीरामकृष्ण के कमरे मे आकर वैठे। श्रीरामकृष्ण माता का नाम-स्मरण समाप्त करके तखत पर वैठे हुए है। पाँवपोश पर मास्टर वैठे है, राखाल और लाटू आदि कमरे मे आ-जा रहे है।

श्रीरामकृष्ण– (मास्टर से, पण्डितजी को इशारे से वताकर) ——ये वडे अच्छे आदमी है। (पण्डितजी से) 'नेति नेति' करके जहाँ मन को विराम मिलता है, वही वे है।

"राजा सात ड्योढियो के पार रहते है। पहली ड्योढी मे किसी ने जाकर देखा, एक धनी मनुष्य वहुत से आदमियों को लेकर बैठा हुआ है, बडे ठाट-बाट से। राजा को देखने के लिए जो मनुष्य गया हुआ था, उसने अपने साथवाले से पूछा, 'क्या राजा यही है ?' साथवाले ने जरा मुस्कराकर कहा, 'नही।'

"दूसरी ड्योढी तथा अन्य ड्योढियो मे भी उसने इसी तरह कहा। वह जितना ही वढता था, उसे उतना ही ऐश्वर्य दीख पड़ता था, उतनी ही तडक-भडक। जब वह सातो ड्योढियो को पार कर गया तब उसने अपने साथवाले से फिर नही पूछा,— राजा के अतुल ऐश्वर्य को देखकर अवाक् होकर खड़ा रह गया।— समझ गया राजा यही है, इसमे कोई सन्देह नही।"

पण्डितजी– माया के राज्य को पार कर जाने से उनके दर्शन होते है।

श्रीरामकृष्ण– उनके दर्शन हो जाने के वाद दिखता है कि यह जीव-जगत् वे ही हुए है। यह ससार 'धोखे की टट्टी' है—स्वप्नवत् है। यह बोध तभी होता है जव साधक 'नेति-नेति' का विचार करता है। उनके दर्शन हो जाने पर यही संसार 'मौज की कुटिया' हो जाता है।

"केवल शास्त्रो के पाठ से क्या होगा ? पण्डित लोग सिर्फ विचार किया करते है।"

पण्डितजी– मुझे कोई पण्डित कहता है, तो घृणा होती है।

श्रीरामकृष्ण– यह उनकी कृपा है। पण्डित लोग केवल विचार

करते है। परन्तु किसी ने दूध का नाम मात्र सुना है और किसी ने दूध देखा है। दर्शन हो जाने पर सव को नारायण देखोगे—देखोगे, नारायण ही सव कुछ हुए है।

पण्डितजी नारायण का स्तव सुना रहे है। श्रीरामकृष्ण आनन्द मे मग्न है।

पण्डितजी– सर्वभूतस्थमात्मान सर्वभूतानि चात्मनि। ईक्षते योगयुक्तात्मा सर्वत्र समदर्शन ॥

श्रीरामकृष्ण– आपने अध्यात्म-रामायण देखी है ?

पण्डितजी– जी हॉ, कुछ-कुछ देखी है।

श्रीरामकृष्ण– ज्ञान और भक्ति से वह पूर्ण है। शवरी का उपाख्यान, अहिल्या की स्तुति, सव भक्ति से पूर्ण है।

"परन्तु एक वात है। वे विपय-वुद्धि से वहुत दूर है।"

पण्डितजी– जहाँ विपय वुद्धि है, वे वहाँ से 'सुदूरम्' है। और जहाँ वह वात नही है वहाँ वे 'अदूरम्' है। उत्तरपाड़ा के एक जमीदार मुखर्जी को मैने देखा, उम्र पूरी हो गयी है और वह वैठा हुआ उपन्यास सुन रहा था।

श्रीरामकृष्ण– अध्यात्म मे एक वात और लिखी है, वह यह कि जीव-जगत् वे ही हुए है।

पण्डितजी आनन्दित होकर, यमलार्जुन के द्वारा की गयी इसी भाव की स्तुति की आवृत्ति कर रहे है, श्रीमद्भागवत के दशम स्कन्ध से—'कृष्ण कृष्ण महायोगिन् त्वमाद्य: पुरुप पर:। व्यक्ताव्यक्तमिद विश्व रूपं ते ब्रह्मणो विदु: ॥ त्वमेक. सर्वभूतानां देहस्वात्मेन्द्रियेश्वर। त्व महान् प्रकृतिः सूक्ष्मा रज सत्त्वतमोमयी ॥ त्वमेव पुरुषोऽध्यक्ष. सर्वक्षेत्रविचारवित् ॥'

स्तुति सुनकर श्रीरामकृष्ण समाधिमग्न हो गये। खड़े हुए है।

पण्डितजी बैठे है। पण्डितजी की गोद और छाती पर एक पैर रखकर श्रीरामकृष्ण हँस रहे है।

पण्डितजी चरण धारण करके कह रहे है, 'गुरो, चैतन्य देहि।' श्रीरामकृष्ण छोटे तखत के पास पूर्वास्य खड़े हुए है।

कमरे से पण्डितजी के चले जाने पर श्रीरामकृष्ण मास्टर से कह रहे है, "मै जो कुछ कहता हूँ, वह पूरा उतर रहा है न? जो लोग अन्तर से उन्हे पुकारेगे, उन्हे यहाँ आना होगा।"

रात के दस वजे सूजी की थोडीसी खीर खाकर श्रीरामकृष्ण ने शयन किया। मणि से कहा, 'पैरो मे जरा हाथ तो फेर दो।'

कुछ देर वाद उन्होने देह और छाती मे भी हाथ फेर देने के लिए कहा।

एक झपकी के वाद उन्होने मणि से कहा, 'तुम आओ— सोओ। देखूँ, अगर अकेले मे आँख लगे।' फिर रामलाल से कहा, 'कमरे के भीतर ये (मणि) और राखाल चाहे तो सो सकते है।'

(२)

श्रीरामकृष्ण तथा ईशू

सवेरा हुआ। श्रीरामकृष्ण उठकर माता का स्मरण कर रहे है। शरीर अस्वस्थ रहने के कारण भक्तों को वह मधुर नाम सुनायी न पड़ा। प्रात.कृत्य समाप्त करके श्रीरामकृष्ण अपने आसन पर बैठे। मणि से पूछ रहे है, 'अच्छा, रोग क्यों हुआ?'

मणि– जी, आदमी की तरह अगर सब बाते न होगी तो जीवों मे साहस फिर कैसे होगा? वे देखते है, इस देह मे इतनी बीमारी है, फिर भी आप ईश्वर को छोड और कुछ भी नही जानते।

श्रीरामकृष्ण– (सहास्य)– वलराम ने भी कहा, 'आप ही को

अगर यह है तो हमे फिर क्यो नही होगा ?'

"सीता के शोक से जब राम धनुष्य न उठा सके तब लक्ष्मण को वड़ा आश्चर्य हुआ। परन्तु पचभूतो के फन्दे मे पड़कर ब्रह्म को भी आँसू बहाना पड़ता है।"

मणि– भक्तो का दु:ख देखकर ईशू भी साधारण मनुष्यो की तरह रोये थे।

श्रीरामकृष्ण– क्या हुआ था ?

मणि– जी, मार्था और मेरी दो वहने थी। उनके एक भाई थे––– लैजेरस। ये तीनो ईशू के भक्त थे। लैजेरस का देहान्त हो गया। ईशू उनके घर जा रहे थे। रास्ते मे एक बहन, मेरी, दौड़ी हुई गयी और उनके पैरो पर गिरकर रोने लगी और कहा, 'प्रभो, तुम अगर आ जाते तो वह न मरता।' उसका रोना देखकर ईशू भी रोये थे।

"फिर वे कब्र के पास जाकर उसका नाम ले-लेकर पुकारने लगे। लैजेरस जीकर उनके पास आ गया।"

श्रीरामकृष्ण– मै ये सब वातें नही कर सकता।

मणि– आप खुद नही करते, क्योकि आपकी इच्छा नही होती। ये सब सिद्धियॉ है, इसीलिए आप नही करते। इनका प्रयोग करने पर आदमी का मन देह की ओर चला जाता है, शुद्धा भक्ति की ओर नही। इसीलिए आप नही करते।

"आपके साथ ईशू का बहुत कुछ मेल होता है।"

श्रीरामकृष्ण– (सहास्य)– और क्या क्या मिलता है ?

मणि– आप भक्तो से न तो व्रत करने के लिए कहते है, न किसी दूसरी कठोर साधना के लिए। खाने-पीने के लिए भी कोई कठोर नियम नही है। ईशू के शिष्यो ने रविवार को निय-

मानुकूल भोजन नही किया, इसलिए जो लोग शास्त्र मानकर चलते थे, उन लोगो ने उनका तिरस्कार किया। ईशू ने कहा, 'वे लोग खायेगे और खूब खायेंगे। जब तक वर के साथ है तब तक बरातवाले आनन्द तो करेगे ही।'

श्रीरामकृष्ण– इसका क्या अर्थ है?

मणि– अर्थात् जब तक अवतारी पुरुष के साथ है तब तक अन्तरंग शिष्य सब आनन्द मे ही रहेगे।—क्यो वे निरानन्द का भाव लाये? जब वे निजधाम चले जायेगे, तब उनके (अन्तरग शिष्यो के) निरानन्द के दिन आयेगे।

श्रीरामकृष्ण– (सहास्य)– और भी कुछ मिलता है?

मणि– जी, आप जिस तरह कहते है, 'लड़को मे कामिनी और कांचन का प्रवेश नही हुआ; वे उपदेशों की धारणा कर सकेगे,—जैसे नयी हण्डी मे दूध रखना; दही जमायी हण्डी मे रखने से दूध बिगड़ सकता है,' ईशू भी इसी तरह कहते थे।

श्रीरामकृष्ण– क्या कहते थे?

मणि– 'पुरानी बोतल मे शराब रखने से बोतल फूट सकती है। पुराने कपड़े मे नया पेवन लगाने पर कपड़ा जल्दी फट जाता है।'

"आप जैसा कहते है, 'माँ और आप एक है,' उसी तरह वे भी कहते थे, 'पिता और मै एक हूँ'।"

श्रीरामकृष्ण– (सहास्य)– और कुछ?

मणि– आप जैसा कहते है, 'व्याकुल होकर पुकारने से वे सुनेगे।' वे भी कहते थे, 'व्याकुल होकर द्वार पर धक्का मारो, द्वार खुल जायेगा।'

श्रीरामकृष्ण– अच्छा, यदि ईश्वर फिर अवतार के रूप में

प्रकट हुए है तो वे पूर्ण रूप मे है, अथवा अंश रूप मे अथवा कला रूप मे ?

मणि– जी, मै तो पूर्ण, अंश और कला, यह अच्छी तरह समझता ही नही, परन्तु जैसा आपने कहा था, चारदीवार मे एक गोल छेद, यह खूब समझ गया हूँ ।

श्रीरामकृष्ण– क्या, बताओ तो जरा ?

मणि– चारदीवार के भीतर एक गोल छेद है। उस छेद से चारदीवार के उस तरफ के मैदान का कुछ अंश दीख पड़ता है। उसी तरह आप के भीतर से उस अनन्त ईश्वर का कुछ अंश दीख पड़ता है।

श्रीरामकृष्ण– हाँ, दो-तीन कोस तक बराबर दीख पड़ता है।

चाँदनी घाट मे गंगास्नान कर मणि फिर श्रीरामकृष्ण के पास आये। दिन के आठ बजे होगे।

मणि लाटू से श्रीजगन्नाथजी के सीत (भात) माँग रहे है।

श्रीरामकृष्ण मणि के पास आकर कह रहे है—'इसका (प्रसाद खाने का) नियमपूर्वक पालन करते रहना। जो लोग भक्त है, प्रसाद बिना पाये वे कुछ खा नही सकते।'

मणि– मै बलरामबाबू के यहाँ से सीत ले आया हूँ, कल से रोज दो-एक सीत पा लिया करता हूँ ।

मणि भूमिष्ठ हो श्रीरामकृष्ण को प्रणाम कर रहे है। फिर बिदा होने लगे। श्रीरामकृष्ण सस्नेह कह रहे है—'तुम कुछ सबेरे आ जाया करो, भादो की धूप बड़ी खराब होती है।'

परिच्छेद १६

पूर्ण आदि भक्तों को उपदेश

(१)

पूर्ण, मास्टर आदि भक्तों के संग में

श्रीरामकृष्ण अपने कमरे में विश्राम कर रहे हैं। रात के आठ बजे होंगे। सोमवार, श्रावण की कृष्णा षष्ठी है, ३१ अगस्त १८८५।

श्रीरामकृष्ण अस्वस्थ रहते हैं। गले की बीमारी का वही हाल है; परन्तु दिनरात भक्तों के लिए शुभ-कामना और ईश्वर-चिन्तन किया करते हैं। कभी कभी बालक की तरह विकल हो जाते हैं, परन्तु वह थोड़ी देर के लिए। उसी क्षण उनका वह भाव बदल जाता है और वे ईश्वर के आनन्द में मग्न हो जाते हैं। भक्तों के प्रति स्नेह और वात्सल्य के आवेश में पागल रहते हैं।

दो दिन हुए—पिछले शनिवार की रात को—पूर्ण ने पत्र लिखा है, 'मुझे खूब आनन्द मिल रहा है। कभी-कभी रात को मारे आनन्द के आँख नहीं लगती।'

श्रीरामकृष्ण ने पत्र सुनकर कहा—'सुनकर मुझे रोमाच हो रहा है। उसके आनन्द की वह अवस्था बाद में भी ज्यों की त्यों बनी रहेगी। अच्छा, देखूँ तो जरा पत्र।'

पत्र को हाथ में लेकर उसे मरोड़ते-दबाते हुए कह रहे हैं—'दूसरे का पत्र मैं नहीं छू सकता, पर इसकी चिट्ठी बहुत अच्छी है।'

उसी रात को वे जरा सोये ही थे कि एकाएक देह से पसीना बह चला। पलंग से उठकर कहने लगे—'मुझे जान पड़ता है कि यह बीमारी अब अच्छी न होगी।'

यह बात सुनकर भक्त सब चिन्ता मे पड़ गये।

श्रीमाताजी श्रीरामकृष्ण की सेवा के लिए आयी हुई है और बहुत ही एकान्त मे नौबतखाने मे रहती है। वे नौबतखाने मे रहती है, यह बात किसी भक्त को भी मालूम न थी। एक भक्त-स्त्री (गोलाप माँ) भी कई दिनो से नौबतखाने मे रहती है। वे प्रायः श्रीरामकृष्ण के कमरे मे आती और दर्शन कर जाया करती हैं।

श्रीरामकृष्ण उनसे दूसरे दिन रविवार को कह रहे है, 'तुम बहुत दिनो से यहाँ पर हो, लोग क्या समझेगे ? बल्कि दस दिन घर मे भी जाकर रहो।' मास्टर ने इन सब बातो को सुना।

आज सोमवार है। श्रीरामकृष्ण अस्वस्थ है। रात के आठ बजे होगे। श्रीरामकृष्ण छोटे तखत पर, पीछे की ओर फिरकर, दक्षिण की ओर सिरहाना करके लेटे हुए है। सन्ध्या के बाद मास्टर के साथ गंगाधर कलकत्ते से आये। वे उनके पैरो की ओर एक किनारे बैठे है। श्रीरामकृष्ण मास्टर से बातचीत कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण– दो लड़के आये हुए थे। एक तो शंकर घोष के नाती का लड़का है— सुबोध, और दूसरा उसी के टोले का एक लड़का क्षीरोद। दोनो बड़े अच्छे लड़के है। उनसे मैने कहा, 'मेरी तबीयत इस समय अच्छी नही।' फिर मैने तुम्हारे पास आकर उपदेश लेने के लिए कहा। उन्हे जरा देखना।

मास्टर– जी हाँ, मेरे ही मुहल्ले मे वे रहते है।

श्रीरामकृष्ण– उस दिन फिर देह से पसीना निकला और नीद उचट गयी। यह क्या बीमारी हो गयी ?

मास्टर– जी, हम लोगों ने एक बार डा भगवान रुद्र को दिखलाने का निश्चय किया है। वे एम. डी. 'पास' बड़े अच्छे डाक्टर है।

श्रीरामकृष्ण– कितना लेगा ?

मास्टर– दूसरी जगह बीस-पच्चीस रुपये लेते है।

श्रीरामकृष्ण– तो रहने दो।

मास्टर– जी, हम लोग अधिक से अधिक चार या पाँच रुपये देगे।

श्रीरामकृष्ण– अच्छा, इतने पर ठीक करके एक बार कहो, 'कृपा कर उन्हे चलकर देखिये जरा।' यहाँ की बात क्या उसने कुछ सुनी नही ?

मास्टर–शायद सुनी है। एक तरह से कुछ भी न लेने के लिए कहा है। परन्तु हम लोग देंगे, क्योंकि इस तरह वे फिर आयेगे।

श्रीरामकृष्ण– निताई डाक्टर को ले आओ तो और अच्छा है। दूसरे डाक्टर आकर करते ही क्या है ? घाव दबाकर और बढ़ा देते है।

रात के नौ बजे का समय है। श्रीरामकृष्ण सूजी की खीर खाने के लिए बैठे। खाने मे कोई कष्ट नही हुआ। इसलिए हँसते हुए मास्टर से कह रहे है, "कुछ खाया गया, इससे मन को आनन्द है।"

(२)

नरेन्द्र, राम आदि भक्तों के संग में

आज जन्माष्टमी है, मगलवार, १ सितम्बर १८८५।

श्रीरामकृष्ण स्नान करेगे। एक भक्त उनकी देह मे तेल लगा रहे है। श्रीरामकृष्ण दक्षिण के बरामदे मे बैठकर तेल लगवा रहे है। गंगास्नान करके मास्टर ने श्रीरामकृष्ण को आकर प्रणाम किया।

स्नान करके एक अंगौछा पहनकर श्रीरामकृष्ण ने बरामदे से ही देवताओं को प्रणाम किया। शरीर अस्वस्थ रहने के कारण कालीमन्दिर या विष्णुमन्दिर मे नही जा सके।

आज जन्माष्टमी है। राम आदि भक्त श्रीरामकृष्ण के लिए आज नया वस्त्र ले आये है।

श्रीरामकृष्ण ने नया वस्त्र पहना—वृन्दावनी धोती, और ओढने के लिए लाल दुपट्टा। उनका शुद्ध पुण्य शरीर नये वस्त्रों से अपूर्व शोभा दे रहा है। वस्त्र पहनकर उन्होने देवताओ को प्रणाम किया।

आज जन्माष्टमी है। गोपाल की माँ गोपाल (श्रीरामकृष्ण) को खिलाने के लिए कुछ भोजन कामारहाटी से लेकर आयी है। श्रीरामकृष्ण के पास दुःख प्रकट करते हुए वे कह रही है—'तुम तो खाओगे ही नही।'

श्रीरामकृष्ण– यह देखो, मुझे यह बीमारी हो गयी है।

गोपाल की माँ– मेरा दुर्भाग्य! अच्छा, हाथ मे थोड़ासा ले लो।

श्रीरामकृष्ण– तुम आशीर्वाद दो।

गोपाल की माँ श्रीरामकृष्ण को ही गोपाल कहकर सेवा करती थी।

भक्तगण मिश्री ले आये है। गोपाल की माँ कह रही है, 'यह मिश्री मै नौवतखाने मे लिये जा रही हूँ।' श्रीरामकृष्ण ने कहा, 'यहाँ भक्तो के लिए खर्च होती है, कौन सौ बार माँगता रहेगा। यही रहने दो।'

दिन के ग्यारह बजे का समय है। क्रमश. भक्तगण कलकत्ते से आते जा रहे है। श्रीयुत बलराम, नरेन्द्र, छोटे नरेन्द्र, नवगोपाल, कटोवा के एक वैष्णव भक्त, सब क्रमशः आ गये। आजकल

राखाल और लाटू यही रहते है। एक पंजावी साधु कुछ दिनो से पंचवटी मे टिके हुए हैं।

छोटे नरेन्द्र के मत्थे मे एक उभरी हुई गुल्थी है। श्रीरामकृष्ण पंचवटी मे टहलते हुए कह रहे है, 'तू इस गुल्थी को कटा क्यो नही डालता ? वह गले मे तो है ही नही-- सिर पर ही है। इससे कष्ट क्या हो सकता है ?-- लोग तो वढ़ा हुआ अण्डकोश तक कटा डालते है।' (हास्य)

पंजावी साधु वगीचे के रास्ते से जा रहे है।

श्रीरामकृष्ण कह रहे है-- 'मै उसे नही खीचता। उसका भाव ज्ञानी का है। देखता हूँ, जैसे सूखी लकड़ी।'

श्रीरामकृष्ण कमरे मे लौटे। श्यामापद भट्टाचार्य की वात हो रही है।

वलराम-- उन्होंने कहा है, 'नरेन्द्र की छाती पर पैर रखने से नरेन्द्र को जैसा भावावेश हुआ था, वैसा मेरे लिए तो नही हुआ।'

श्रीरामकृष्ण-- वात यह है कि कामिनी और कांचन मे मन के रहने पर विक्षिप्त मन को एकत्र करना वड़ा कठिन हो जाता है। उसने कहा है, उसे 'सालिसिटर'-पन (वकालत) करनी पड़ती है और घर के वच्चो के लिए भी चिन्ता करनी पड़ती है। नरेन्द्र आदि का मन विक्षिप्त थोड़े ही है।--उनमे अभी कामिनी और काचन का प्रवेश नही हो पाया।

"परन्तु वह (श्यामापद) है वडा चोखा आदमी।"

कटोवा के वैष्णव श्रीरामकृष्ण से प्रश्न कर रहे है। वैष्णवजी कुछ कजे है।

वैष्णव-- महाराज, क्या पुनर्जन्म होता है ?

श्रीरामकृष्ण-- गीता मे है, मृत्यु के समय जिस चिन्ता को लेकर

मनुष्य देह छोड़ता है, उसी को लेकर वह पैदा होता है। हरिण की चिन्ता करते हुए देह छोड़ने के कारण महाराज भरत को हरिण होकर जन्म लेना पड़ा था।

वैष्णव–यह बात होती है इसे अगर कोई आँख से देखकर कहे तो विश्वास भी हो।

श्रीरामकृष्ण–यह मैं नहीं जानता, भाई। मैं अपनी बीमारी ही तो अच्छी नहीं कर सकता, तिसपर मरकर क्या होता है—यह प्रश्न !

"तुम जो कुछ कह रहे हो, ये हीन बुद्धि की बातें है। किस तरह ईश्वर में भक्ति हो, यह चेष्टा करो। भक्ति-लाभ के लिए ही आदमी होकर पैदा हुए हो। बगीचे मे आम खाने के लिए आये हो, कितनी हजार डालियाँ है, कितने लाख पत्ते है, इसकी खबर लेकर क्या करोगे ?—जन्मान्तर की खबर !"

श्रीयुत गिरीश घोप दो-एक मित्रों के साथ गाड़ी पर चढकर आये। कुछ शराब भी उन्होने पी थी। रोते हुए आ रहे है। श्रीरामकृष्ण के पैरो पर मस्तक रखकर रो रहे है।

श्रीरामकृष्ण सस्नेह उनकी देह मे मीठी थपकियाँ मारने लगे। एक भक्त को पुकारकर कहा,—'अरे, इसे तम्बाकू पिला।'

गिरीश सिर उठाकर हाथ जोड़ कह रहे है—"तुम्ही पूर्ण ब्रह्म हो, यह अगर सत्य न हो तो सब मिथ्या है।

"बड़ा खेद रहा, मैं तुम्हारी सेवा न कर सका। (ये बाते वे एक ऐसे स्वर मे कह रहे है कि भक्तों की आँखों मे आँसू आ गये— वे फूट-फूटकर रो रहे है।)

"भगवन् ! यह वर दो कि साल भर तुम्हारी सेवा करता रहूँ। मुक्ति क्या चीज है !— वह तो मारी मारी फिरती है—

उस पर मैं थूकता हूँ। कहिये सेवा एक साल के लिए करूँगा।"

श्रीरामकृष्ण—यहाँ के आदमी अच्छे नही है। कोई कुछ कहेगा।

गिरीश— वह बात न होगी, आप कह दीजिये—

श्रीरामकृष्ण—अच्छा, तुम्हारे घर जब जाऊँ तब सेवा करना।

गिरीश—नही, यह नही। यही करूँगा।

श्रीरामकृष्ण ने हठ देखकर कहा, 'अच्छा, ईश्वर की जैसी इच्छा।'

श्रीरामकृष्ण के गले मे घाव है। गिरीश फिर कहने लगे, "कह दीजिये, अच्छा हो जाय। अच्छा, मैं इसे झाड देता हूँ—काली! काली!"

श्रीरामकृष्ण— मुझे लगेगा।

गिरीश— अच्छा हो जा! (फूक मारते हैं)

"क्या अच्छा नही हुआ?—अगर आपके चरणों मे मेरी भक्ति होगी तो अवश्य अच्छा हो जायेगा— कहिये अच्छा हो गया।"

श्रीरामकृष्ण—(विरक्ति से)—जाओ भाई, ये सब बाते मुझसे नही कही जाती। रोग के अच्छे होने की बात माँ से मैं नहीं कह सकता।

"अच्छा, ईश्वर की इच्छा से होगा।"

गिरीश—आप मुझे बहका रहे हैं। आपकी ही इच्छा से होगा।

श्रीरामकृष्ण— छिः, ऐसी बात नही कहनी चाहिए। भक्तवत् न तु कृष्णवत्। तुम्हे जैसा रुचे सोच सकते हो— अपने गुरु को भगवान समझ सकते हो; परन्तु इन सब बातो के कहने से अपराध होता है। ऐसी बाते फिर नही कहना।

गिरीश—कहिये, अच्छा हो जायेगा।

श्रीरामकृष्ण— अच्छा, जो कुछ हुआ है वह चला जायेगा।

गिरीश शायद अब भी अपने नशे मे है। कभी कभी बीच मे

वे श्रीरामकृष्ण से कहते है, "क्या बात है कि इस बार आप अपने दैवी सौन्दर्य को लेकर पैदा नही हुए ?"

कुछ देर बाद फिर कह रहे है—"अबकी बार जान पड़ता है, बंगाल का उद्धार है।"

एक भक्त अपने आप से कह रहे है, "केवल बगाल का ही क्यो ? समस्त जगत् का उद्धार होगा।"

गिरीश फिर कह रहे है—"ये यहाँ क्यो है, इसका अर्थ किसी की समझ मे आया ? जीवो के दु.ख से विकल होकर आये हैं, उनका उद्धार करने के लिए।"

गाड़ीवान पुकार रहा था। गिरीश उठकर उसके पास जा रहे है। श्रीरामकृष्ण मास्टर से कह रहे है—"देखो, कहाँ जाता है—गाड़ीवान को मारेगा तो नही ?" मास्टर भी साथ जा रहे है।

गिरीश फिर लौटे, श्रीरामकृष्ण की स्तुति करने लगे—"भगवन्, मुझे पवित्रता दो, जिससे कभी थोड़ीसी भी पाप-चिन्ता न हो।"

श्रीरामकृष्ण—तुम पवित्र तो हो ही। तुममे इतनी भक्ति और विश्वास जो है ! तुम तो आनन्द मे हो न ?

गिरीश—जी नही, मन खराब रहता है—बड़ी अशान्ति रहती है, इसीलिए तो शराव पी और खूब पी।

कुछ देर वाद गिरीश फिर कह रहे है—"भगवन्, आश्चर्य हो रहा है, मैं पूर्णब्रह्म भगवान की सेवा कर रहा हूँ ! ऐसी कौनसी तपस्या मैंने की जिससे इस सेवा का अधिकारी हुआ ?"

दोपहर हो गयी है, श्रीरामकृष्ण ने भोजन किया। वीमारी के होने से बहुत थोड़ासा भोजन किया।

श्रीरामकृष्ण की सदैव भावावस्था रहती है—जबरदस्ती उन्हें

शरीर की ओर मन को ले आना पड़ता है। परन्तु बालक की तरह वे खुद अपने शरीर की रक्षा नही कर सकते। बालक की तरह भक्तो से कह रहे है, "जरासा भोजन किया, अब थोड़ी देर के लिए लेटूँगा। तुम लोग जरा बाहर जाकर बैठो।"

श्रीरामकृष्ण ने थोड़ा विश्राम किया। भक्तगण कमरे में फिर आये।

श्री गुरु ही इष्ट हैं। दो प्रकार के भक्त

गिरीश– गुरु और इष्ट। मुझे गुरुरूप बहुत अच्छा लगता है— उसका भय नहीं होता— क्यों भला ? मैं भावावेश से दूर भागता हूँ—उससे मुझे भय लगता है।

श्रीरामकृष्ण– जो इष्ट हैं, वे ही गुरु के रूप में आते है। शव-साधना के पश्चात् जब इष्टदेव के दर्शन होते हैं, तब गुरु स्वयं शिष्य से आकर कहते है—'ऐ (शिष्य), वह देख (इष्ट को)।' यह कहकर वे इष्ट के रूप मे लीन हो जाते है। शिष्य तब गुरु को नही देखता। जब पूर्ण ज्ञान हो जाता है तब कौन गुरु और कौन शिष्य ? 'वह बड़ी कठिन अवस्था है, वहाँ गुरु और शिष्य एक दूसरे को नहीं देख पाते।'

एक भक्त– गुरु का सिर और शिष्य के पैर।

गिरीश– (आनन्द से)– हाँ, हाँ, सच है।

नवगोपाल– इसका अर्थ सुन लो। शिष्य का सिर गुरु की वस्तु है और गुरु के पैर शिष्य की वस्तु। सुना ?

गिरीश– नही, यह अर्थ नहीं है। बाप के कन्धे पर क्या लड़का चढता नहीं ? इसीलिए शिष्य के पैर और गुरु का सिर, ऐसा कहा है।

नवगोपाल– वह शिष्य अगर वैसा ही छोटासा हो, तब न ?

श्रीरामकृष्ण– भक्त दो तरह के है— एक वे जिनका भाव बिल्ली के बच्चे जैसा होता है, सारा अवलम्ब माता पर।

"बिल्ली का बच्चा बस 'मिऊँ मिऊँ' करता रहता है। कहाँ जाना है, क्या करना है, वह कुछ नही जानता। माँ कभी उसे कन्डौरे मे रखती है और कभी बिस्तरे पर ले जाकर रखती है। इस तरह का भक्त ईश्वर को अपना आममुख्तार बना लेता है। उन्हे मुख्तारी सौपकर वह निश्चिन्त हो जाता है।

"सिक्खों ने कहा था, 'ईश्वर दयालु है।' मैने कहा, 'वे हमारे माँ-बाप है; उनका दयालु होना फिर कैसा? बच्चों को पैदा करके माँ-बाप उनका पालन-पोषण नही करेंगे तो क्या टोलेवाले आकर करेंगे?' इस तरह के भक्तो को दृढ विश्वास है— 'वे हमारी माँ है, हमारे पिता है।'

"एक दर्जे के भक्त और है। उनका स्वभाव बन्दर के बच्चे की तरह है। बन्दर का बच्चा खुद किसी तरह माँ को पकड़े रहता है। इस दर्जे के लोगों को कुछ कर्तृत्व का विचार रहता है। मुझे तीर्थ करना है, जप-तप करना है, षोड़शोपचार पूजा करनी है तब ईश्वर मिलेंगे,— इनका यह भाव है।

"भक्त दोनो है। (भक्तों से) जितना ही बढ़ोगे, उतना ही देखोगे, वे ही सब कुछ हुए है— वे ही सब कुछ करते है। वे ही गुरु है और वे ही इष्ट भी है। वे ही ज्ञान और भक्ति सब दे रहे है।

"जितना ही आगे बढ़ोगे उतना ही अधिक पाओगे। देखोगे, चन्दन की लकड़ी, फिर आगे और भी बहुत कुछ है— चाँदी-सोने की खान, हीरे और मणि की खान; इसीलिए कहता हूँ, 'आगे बढ़ते जाओ।'

"और 'बढते जाओ' यह बात भी किस तरह कहूँ ?—संसारी आदमी अगर अधिक बढ जायँ तो घर और गृहस्थी सब साफ हो जाय। केशव सेन उपासना कर रहा था, कहा, 'हे ईश्वर, ऐसा करो जिससे तुम्हारी भक्ति की नदी मे हम डूब जायँ।' जब उपासना समाप्त हो गयी तब मैने कहा, 'क्यो जी, तुम भक्ति की नदी मे डूब कैसे जाओगे ? डूब जाओगे तो जो चिक के भीतर बैठी हुई है, उनकी क्या दशा होगी ? एक काम करो— कभी कभी डूब जाना और कभी कभी निकलकर फिर किनारे पर सूखे मे आ जाना।' " (सब हँसते है)

कटोवा के वैष्णव तर्क कर रहे थे। श्रीरामकृष्ण उनसे कह रहे है— "तुम कलकलाना छोड़ो। घी जब तक कच्चा रहता है तभी तक कलकलाया करता है।

"एक बार उनका आनन्द मिलने से विचार-बुद्धि दूर हो जाती है। जब मधु-पान का आनन्द मिलने लगता है तो गूँजना बन्द हो जाता है।

"किताब पढकर कुछ बातों के कह सकने से क्या होगा ? पण्डित कितने ही श्लोक कहते है—'शीर्णा गोकुलमण्डली' आदि सब।

" 'भंग-भग' रटते रहने से क्या होगा ? उसकी कुल्ली करने से भी कुछ न होगा। पेट मे पड़ना चाहिए— नशा तभी होगा। निर्जन मे और एकान्त मे व्याकुल होकर ईश्वर को बिना पुकारे इन सब बातो की धारणा कोई कर नही सकता।"

डाक्टर राखाल श्रीरामकृष्ण को देखने के लिए आये है। श्रीरामकृष्ण व्यस्त भाव से कह रहे है—"आइये, बैठिये।"

वैष्णव से बातचीत होने लगी।

श्रीरामकृष्ण– मनुष्य और 'मन-होश'। जिसे चैतन्य हुआ है, वह 'मन-होश' है। बिना चैतन्य के मनुष्य-जन्म वृथा है!

"हमारे देश (कामारपुकुर) मे मोटे पेट और वड़ी बड़ी मूछोवाले आदमी बहुत है; फिर भी वहाँ के लोग दस कोस से अच्छे आदमी को पालकी पर चढाकर क्यो ले आते है?—— उन्हे धार्मिक और सत्यवादी देखकर, वे झगड़े का फैसला कर देंगे, इसलिए। जो लोग केवल पण्डित है, उन्हे नही लाते।

"सत्य बोलना कलिकाल की तपस्या है। सत्य वचन, ईश्वर पर निर्भरता तथा पर-स्त्री को माता के समान देखना—— ये सब ईश्वर-दर्शन के उपाय है।"

श्रीरामकृष्ण वच्चे की तरह डाक्टर से कह रहे है— "भाई, इसे अच्छा कर दो।"

डाक्टर– मै अच्छा करूंगा?

श्रीरामकृष्ण– (हंसकर)– डाक्टर नारायण है। मै सब मानता हूँ।

"अगर कहो—— सब नारायण है, तो चुप मारकर क्यों नही रहते?——तो उत्तर यह है कि मै महावत नारायण को भी मानता हूँ।

"शुद्ध मन और शुद्ध आत्मा एक ही वस्तु है।

"शुद्ध मन मे जो बात पैदा होती है वह उन्ही की वाणी है। 'महावत नारायण' वे ही है।

" उनकी वात फिर क्यो न मानूँ? वे ही कर्ता है। 'मै' को जब तक उन्होने रखा है, तव तक उनकी आज्ञा को सुनकर काम करूँगा।"

अव डाक्टर श्रीरामकृष्ण के गले की वीमारी की परीक्षा करेगे।

श्रीरामकृष्ण कह रहे है— "महेन्द्र सरकार ने जीभ दबायी थी— जैसे बैल की जीभ दबायी जाती है!"

श्रीरामकृष्ण बालक की तरह बार-बार डाक्टर के कुर्ते मे हाथ लगाते हुए कह रहे है— "भाई! तुम इसे अच्छा कर दो।"

Laryngoscope (गला देखने का आईना) को देखकर श्रीरामकृष्ण हँसते हुए कह रहे है— "इसमे छाया पडेगी, समझ गया।"

नरेन्द्र ने गाया। परन्तु श्रीरामकृष्ण की बीमारी के कारण अधिक सगीत नही हुआ।

(३)

डा० रुद्र तथा श्रीरामकृष्ण

दोहपर के भोजन के बाद श्रीरामकृष्ण अपनी चारपाई पर बैठे हुए डाक्टर भगवान रुद्र और मास्टर से वार्तालाप कर रहे है। कमरे मे राखाल, लाटू आदि भक्त भी है।

आज बुधवार है, श्रावण की अष्टमी-नवमी तिथि, २ सितम्बर १८८५। डाक्टर ने श्रीरामकृष्ण की बीमारी का कुल विवरण सुना। श्रीरामकृष्ण जमीन पर उतरकर डाक्टर के पास बैठे हुए है।

श्रीरामकृष्ण– देखो जी, दवा नही सही जाती। मेरी प्रकृति कुछ और है।

"अच्छा, यह तुम्हे क्या जान पड़ता है? रुपया छूने पर हाथ टेढ़ा हो जाता है। और अगर मै धोती मे गाँठ दे दूँ, तो जब तक वह खोल न दी जाय तब तक के लिए साँस बन्द हो जाती है।"

यह कहकर उन्होंने एक रुपया ले आने के लिए कहा। डाक्टर को यह देखकर बडा आश्चर्य हुआ कि रुपये को हाथ पर रखते

ही हाथ टेढ़ा हो गया और साँस बन्द हो गयी। रुपये को हटा लेने पर तीन वार साँस कुछ जोर से चली और तब हाथ कही ठीक हुआ। डाक्टर ने मास्टर से कहा, "Action on the nerves." (स्नायु के ऊपर क्रिया)

श्रीरामकृष्ण डाक्टर से कह रहे है— "एक अवस्था और है। कुछ संचय नही किया जाता। एक दिन मै शम्भु मल्लिक के बगीचे मे गया था। उस समय पेट मे बड़ी पीड़ा थी। शम्भु ने कहा, 'जरा जरा अफीम खाया कीजिये तो ठीक हो जायेगा।' मेरी धोती के छोर मे जरासी अफीम उसने बाँध दी। जब लौटा आ रहा था तब फाटक के पास न जाने चक्कर आने लगा। रास्ता नही मिल रहा था। फिर जब अफीम खोलकर फेक दी गयी तब फिर ज्यो की त्यो अवस्था हो गयी और मै बगीचे में लौट आया।

"देश मे मै आम तोड़कर लिये आ रहा था, थोड़ी दूर जाने के बाद फिर चल न सका। खड़ा हो गया। फिर आमो को एक गढ़े मे जब रख दिया तब कही घर आ सका। अच्छा, यह क्या है?"

डाक्टर– इसके पीछे एक शक्ति और है, मन की शक्ति।

मणि– ये कहते है, यह ईश्वर की शक्ति है और आप बतलाते है, मन की शक्ति।

श्रीरामकृष्ण– (डाक्टर से)–ऐसी भी अवस्था है—अगर कोई कहता है, 'पीड़ा घट गयी,' तो साथ ही साथ कुछ घट भी जाती है। उस दिन ब्राह्मणी ने कहा, 'आठ आना बीमारी अच्छी हो गयी;' उसके कहने के साथ ही मै नाचने लगा।

डाक्टर का स्वभाव देखकर श्रीरामकृष्ण को प्रसन्नता हुई। वे डाक्टर से कह रहे है— "तुम्हारा स्वभाव अच्छा है। ज्ञान के दो लक्षण है, स्वभाव का शान्त हो जाना और अभिमान का

लोप हो जाना।"

मणि– इन्हें पत्नी-वियोग हो गया है।

श्रीरामकृष्ण– (डाक्टर से)– मैं कहता हूँ, इन तीन आकर्षणों के एकत्र होने पर ईश्वर मिलते है–– माता का बच्चे पर, सती का पति पर तथा विषयी मनुष्य का विषय पर जैसा आकर्षण होता है।

"कुछ भी हो, भाई, मेरी यह बीमारी अच्छी कर दो।"

डाक्टर अब गला देखेगे। गोल बरामदे मे एक कुर्सी पर श्रीरामकृष्ण बैठे। श्रीरामकृष्ण पहले डाक्टर सरकार की बात कह रहे है– "उसने खूब जोर से जीभ दबायी–– जैसे बैल की हो!"

डाक्टर– उन्होंने इच्छापूर्वक वैसा न किया होगा।

श्रीरामकृष्ण– नही, ठीक ठीक जॉच करने के लिए उसने जीभ को दबाया।

(४)

अस्वस्थ श्रीरामकृष्ण तथा डाक्टर राखाल। भक्तों के साथ नृत्य

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर मन्दिर मे भक्तो के साथ अपने कमरे मे बैठे है। रविवार, २० सितम्बर, १८८५ ई०, शुक्ला एकादशी। नवगोपाल, हिन्दू स्कूल के शिक्षक हरलाल, राखाल, लाटू, कीर्तनकार गोस्वामी तथा अन्य लोग उपस्थित है। बड़ा बाजार के डाक्टर राखाल को साथ लेकर मास्टर आ पहुंचे। डाक्टर से श्रीरामकृष्ण के रोग की जॉच करायेगे।

डाक्टर देख रहे है कि श्रीरामकृष्ण के गले मे क्या रोग हुआ है। वे मोटे आदमी है, उँगलियॉ मोटी मोटी है।

श्रीरामकृष्ण– (हंसते हुए, डाक्टर से)– जो लोग ऐसा ऐसा करते है (अर्थात् कुश्ती लड़ते है) उनकी तरह है, तुम्हारी

उंगलियाँ ! महेन्द्र सरकार ने देखा था, परन्तु जीभ को इतने जोर से दवा दिया था कि बहुत तकलीफ हुई। जैसे गाय की जीभ दबाकर पकड़ी हो !

डाक्टर राखाल—जी, मै देखता हूँ, आपको कुछ कष्ट न होगा।

डाक्टर द्वारा दवा की व्यवस्था करने के बाद श्रीरामकृष्ण फिर वातचीत कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण—(भक्तो के प्रति)—भला, लोग कहते है, ये यदि साधु है तो इन्हे रोग क्यों होता है ?

तारक—भगवानदास बाबाजी बहुत दिनो तक रोग से बिस्तर पर पड़े रहे।

श्रीरामकृष्ण—मधु डाक्टर साठ वर्ष की अवस्था मे वेश्या के लिए उसके घर पर खाना लेकर जाता है, और इधर उसे कोई रोग नहीं है।

गोस्वामी—जी, आपका जो रोग है, यह दूसरों के लिए है। जो लोग आपके यहाँ आते है, उनका अपराध आपको लेना पड़ता है। उन्ही सब अपराध-पापों को लेने से आपको रोग होता है।

एक भक्त—यदि आप माँ से कहें, 'माँ, इस रोग को मिटा दो,' तो जल्द ही मिट जाय।

श्रीरामकृष्ण—रोग मिटाने की बात कह नही सकता, फिर हाल मे सेव्य-सेवक भाव कम हो रहा है। एक वार कहता हूँ, 'माँ, तलवार के खोल की जरा मरम्मत कर दो,' परन्तु उस प्रकार की प्रार्थना कम होती जा रही है। आजकल 'मै' को खोजने पर भी नही पाता। देखता हूँ, वे ही इस खोल मे विद्यमान है।

कीर्तन के लिए गोस्वामी को लाया गया है। एक भक्त ने पूछा, 'क्या कीर्तन होगा ?'

श्रीरामकृष्ण अस्वस्थ है, कीर्तन होने पर भावावस्था आयेगी, यही सब को भय है।

श्रीरामकृष्ण कर रहे है, "होने दो थोड़ासा। कहते है, मेरा भाव होता है—इसीलिए भय होता है। भाव होने पर गले के उसी स्थान मे जाकर लगता है।"

कीर्तन सुनते सुनते श्रीरामकृष्ण भाव को सम्हाल न सके। खड़े हो गये और भक्तो के साथ नृत्य करने लगे।

डाक्टर राखाल ने सब देखा, उनकी किराये की गाड़ी खड़ी है। वे और मास्टर उठ खड़े हुए,—कलकत्ता जायेगे। दोनों ने श्रीरामकृष्णदेव को प्रणाम किया।

श्रीरामकृष्ण– (स्नेह के साथ, मास्टर के प्रति)–क्या तुमने खाया है?

मास्टर के प्रति आत्मज्ञान का उपदेश—'देह' खोल मात्र है

बृहस्पतिवार, २८ सितम्वर, पूर्णिमा की रात को श्रीरामकृष्ण अपने कमरे मे छोटे तख्त पर बैठे है। गले के रोग से पीड़ित है।

मास्टर आदि भक्तगण जमीन पर बैठे है।

श्रीरामकृष्ण– (मास्टर के प्रति)–कभी कभी सोचता हूँ, यह देह केवल खोल है। उस अखण्ड (सच्चिदानन्द) के अतिरिक्त और कुछ नही है।

"भाव का आवेश होनेपर गले का रोग एक किनारे पड़ा रहता है। अव थोड़ा-थोड़ा वह भाव हो रहा है और हँसी आ रही है।"

द्विज की बहन और छोटी दादी श्रीरामकृष्ण की अस्वस्थता का समाचार पाकर देखने के लिए आयी है। वे प्रणाम करके कमरे के एक कोने मे बैठी। द्विज की दादी को श्रीरामकृष्ण कह रहे है, "ये कौन है? जिन्होंने द्विज को पाला-पोसा है? अच्छा,

द्विज ने एकतारा क्यो खरीदा है ?"

मास्टर–जी, उसमे दो तार है।

श्रीरामकृष्ण–उसके पिता उसके विरोधी है। सब लोग क्या कहेगे ? उसको तो गुप्त रूप से ईश्वर को पुकारना ही ठीक है।

श्रीरामकृष्ण के कमरे की दीवाल पर टँगा हुआ गौर-निताई का एक चित्र था। गौर-निताई दल-बल के साथ नवद्वीप मे संकीर्तन कर रहे है—वह इसी का चित्र है।

रामलाल– (श्रीरामकृष्ण के प्रति)–तो फिर. यह चित्र इन्हें ही (मास्टर को) देता हूँ।

श्रीरामकृष्ण–बहुत अच्छा, दे दो।

श्रीरामकृष्ण कुछ दिनों से प्रताप की दवा ले रहे है। आज रात रहते ही उठ पड़े है, इसलिए मन बेचैन है। हरीश सेवा करते है, उसी कमरे मे है, वही राखाल भी है। श्रीरामलाल बाहर के बरामदे मे सो रहे है। श्रीरामकृष्ण ने बाद मे कहा, 'प्राण बेचैन होने से हरीश को बाँह मे लेने की इच्छा हुई। मध्यम नारायण तेल मालिश करने से अच्छा हुआ, तब फिर नाचने लगा।'

परिच्छेद १७

श्यामपुकुर में श्रीरामकृष्ण

(१)

सुरेन्द्र की भक्ति। गीता

आज विजयादमी है। १८ अक्टूवर १८८५। श्रीरामकृष्ण श्यामपुकुरवाले मकान मे है। शरीर अस्वस्थ रहता है, कलकत्ते मे चिकित्सा कराने के लिए आये है। भक्तगण निरन्तर रहते और उनकी सेवा किया करते है। भक्तो मे से अभी तक किसी ने ससार का त्याग नही किया। वे लोग अपने घर से आया-जाया करते है।

जाड़े का मौसम है, सवेरे आठ वजे का समय है। श्रीरामकृष्ण अस्वस्थ है, विस्तर पर वैठे हुए है, जैसे पाँच वर्ष का वालक जो माता के सिवा और कुछ नहीं जानता। सुरेन्द्र आये और आसन ग्रहण किया। नवगोपाल, मास्टर तथा और भी कई लोग उपस्थित है। सुरेन्द्र के यहाँ दुर्गापूजा हुई थी। श्रीरामकृष्ण नही जा सके; भक्तो को प्रतिमा के दर्शन करने के लिए भेजा था। आज विजयादशमी है, इसीलिए सुरेन्द्र का मन कुछ उदास है।

सुरेन्द्र– मै घर से भाग आया।

श्रीरामकृष्ण– (मास्टर से)– प्रतिमा पानी मे डाल दी गयी तो क्या, माँ वस हृदय मे विराजती रहे।

सुरेन्द्र 'माँ माँ' करके जगदीश्वरी के सम्वन्ध मे वहुत कुछ कहने लगे। श्रीरामकृष्ण सुरेन्द्र को देखते हुए आँसू वहाने लगे। मास्टर की ओर देखकर गद्‌गद स्वर से कहने लगे, "अहा! कैसी भक्ति है! ईश्वर के लिए कैसा अगाध प्रेम!"

श्रीरामकृष्ण– कल साढे सात बजे के लगभग मैंने देखा, तुम्हारे दालान में श्रीदेवीप्रतिमा है, चारो ओर ज्योति ही ज्योति है। सब एकाकार हो गया है— यह और वह। दोनों जगह के बीच मानो ज्योति की एक तरंग बह रही है— इस घर से तुम्हारे उस घर तक।

सुरेन्द्र– उस समय मै देवीजीवाले दालान मे खड़ा हुआ 'माँ माँ' कहकर उन्हें पुकार रहा था। मेरे भाई मुझे छोड़कर ऊपर चले गये थे। मेरे मन मे ऐसा जान पड़ा कि माँ कह रही है, 'मै फिर आऊँगी।'

दिन के ग्यारह बजे का समय है। श्रीरामकृष्ण को पथ्य दिया गया। मणि मुँह धुलाने के लिए उनके हाथों पर पानी डाल रहे है।

श्रीरामकृष्ण– (मणि से)– चने की दाल खाकर राखाल कुछ अस्वस्थ है। आहार सात्त्विक करना अच्छा है। तुमने गीता मे नही देखा? क्या तुम गीता नही पढते?

मणि– जी हाँ, युक्ताहार की बाते है। सात्त्विक आहार, राजसिक आहार और तामसिक आहार; और सात्त्विक दया, राजसिक दया और तामसिक दया भी है। सात्त्विक अहं आदि सब हैं।

श्रीरामकृष्ण– तुम्हारे पास गीता है?

मणि– जी हाँ, है।

श्रीरामकृष्ण– उसमे सब शास्त्रो का सार है।

मणि– जी हाँ, ईश्वर को अनेक प्रकार से देखने की बाते लिखी है; आप जैसा कहते है, अनेक मार्गों से उनके पास जाना; ज्ञान, भक्ति, कर्म, ध्यान आदि अनेक मार्गों से।

श्रीरामकृष्ण– कर्मयोग का अर्थ जानते हो? सब कर्मो का फल

ईश्वर को समर्पण कर देना।

मणि– जी हाँ, मैंने देखा है। गीता मे लिखा है, कर्म भी तीन तरह से किये जा सकते है।

श्रीरामकृष्ण– किस किस तरह से ?

मणि– प्रथम, ज्ञान के लिए। दूसरा, लोक-शिक्षा के लिए। तीसरा, स्वभाववश।

(२)

श्रीरामकृष्ण तथा अवतारवाद

श्रीरामकृष्ण मास्टर से डाक्टर सरकार की वातें कह रहे है। पहले दिन मास्टर श्रीरामकृष्ण का हाल लेकर डाक्टर सरकार के पास गये थे।

श्रीरामकृष्ण–तुम्हारे साथ क्या-क्या वाते हुई ?

मास्टर–– डाक्टर के यहाँ वहुतसी पुस्तके है। मै वहाँ बैठा हुआ एक पुस्तक पढ रहा था। उसी से कुछ अंश पढकर डाक्टर को सुनाने लगा। सर हम्फ्रे डेवी की पुस्तक है। उसमे अवतार की आवश्यकता पर लिखा गया है।

श्रीरामकृष्ण– हाँ ? तुमने क्या कहा था ?

मास्टर– उसमे एक बात यह है कि ईश्वर की वाणी आदमी के भीतर से होकर बिना आये मनुष्य उसे समझ नही सकते। इसीलिए अवतार की आवश्यकता है।

श्रीरामकृष्ण– वाह ! ये सव तो वड़ी अच्छी बातें है।

मास्टर– लेखक ने उपमा दी है कि सूर्य की ओर कोई देख नही सकता, परन्तु सूर्य की किरणे जिस जगह पर पड़ती है (Reflected Rays) वहाँ लोग देख सकते है।

श्रीरामकृष्ण– यह तो वड़ी अच्छी बात है, कुछ और है ?

मास्टर– एक दूसरी जगह लिखा था, यथार्थ ज्ञान विश्वास है।

श्रीरामकृष्ण– ये तो वहुत सुन्दर वातें है। विश्वास हुआ तब तो सब कुछ हो गया।

मास्टर– लेखक ने स्वप्न मे रोमन देव-देवियों को देखा था।

श्रीरामकृष्ण– क्या इस तरह की पुस्तके निकल रही है? ऐसी जगह वे ही (ईश्वर) काम कर रहे है। और भी कोई बात हुई?

मास्टर– वे लोग कहते है, हम ससार का उपकार करेंगे। तब मैने आपकी वात कही।

श्रीरामकृष्ण– (सहास्य)– कौनसी बात ?

मास्टर– शम्भु मल्लिक-वाली वात। उसने आपसे कहा था, 'मेरी इच्छा होती है कि रुपये लगाकर कुछ अस्पताल और दवाखाने, स्कूल आदि बनवा दूँ। इससे वहुतो का उपकार होगा।' आपने उससे कहा था, 'अगर ईश्वर सामने आये तो क्या तुम कहोगे, मेरे लिए कुछ अस्पताल, दवाखाने और स्कूल बनवा दो?' एक वात मैंने और कही थी।

श्रीरामकृष्ण– जो कर्म करने के लिए आते है उनका दर्जा अलग है। हाँ, और कौनसी वात ?

मास्टर–मैंने कहा, 'यदि आपका उद्देश्य श्रीकाली की मूर्ति का दर्शन करना है तो सड़क के किनारे खड़े होकर गरीबों को भीख वाँटने मे ही अपना सब समय लगा देने से क्या लाभ होगा? पहले आप किसी प्रकार मूर्ति के दर्शन कर ले। फिर जी भर के भीख दे?'

श्रीरामकृष्ण– और भी कोई वात हुई ?

मास्टर– आपके पास जो लोग आते है, उनमे वहुतों ने काम को जीत लिया है, यह बात हुई। डाक्टर ने कहा, 'मेरा भी काम-भाव दूर हो गया है, इतना समझ लेना।' मैंने कहा, 'आप तो

बड़े आदमी है। आपने काम को जीत लिया तो कोई आश्चर्य की बात नही। क्षुद्र प्राणियो मे भी, उनके पास रहकर, इन्द्रियों को जीतने की शक्ति आ रही है, यही आश्चर्य है।' फिर मैंने वह बात कही जो आपने गिरीश घोष से कही थी।

श्रीरामकृष्ण– (सहास्य)– क्या कहा था ?

मास्टर– आपने गिरीश घोष से कहा था, 'डाक्टर नुमसे ऊँचे नही चढ़ सका।' वही अवतारवाली बात।

श्रीरामकृष्ण– अवतार की बात उससे (डाक्टर से) कहना। अवतार वे है जो तारते है। इस तरह दस अवतार है, चौबीस अवतार है और असंख्य अवतार भी है।

मास्टर– गिरीश घोष की वे (डा. सरकार) खूब खबर रखते है। यही पूछते रहे कि गिरीश घोष ने क्या बिलकुल शराब पीना छोड़ दिया ? उन पर खूब नजर है।

श्रीरामकृष्ण– क्या गिरीश घोष से यह बात तुमने कही थी ?

मास्टर– जी हाँ, कही थी, और बिलकुल शराब छोड़नेवाली बात भी।

श्रीरामकृष्ण– उसने क्या कहा ?

मास्टर– उन्होने कहा, 'तुम लोग जब कह रहे हो, तो इस दशा मे इसे श्रीरामकृष्ण की बात समझकर मान लेता हूँ—परन्तु मैं स्वय अब जोर देकर कोई बात न कहूँगा।'

श्रीरामकृष्ण– (आनन्दपूर्वक)– कालीपद ने कहा है, उसने एकदम शराब पीना छोड़ दिया है।

(३)

नित्य-लीला-योग

दिन का पिछला पहर है, डाक्टर आये हुये है। अमृत (डाक्टर

के लड़के) और हेम भी डाक्टर के साथ आये है। नरेन्द्र आदि भक्त भी उपस्थित है। श्रीरामकृष्ण एकान्त मे अमृत के साथ बातचीत कर रहे है। पूछ रहे है, 'क्या तुम्हे ध्यान जमता है?' और कह रहे है, 'क्या जानते हो, ध्यान की अवस्था कैसी होती है? मन तैलधारा की तरह हो जाता है। ईश्वर की ही चिन्ता रह जाती है। उसमे कोई दूसरी चिन्ता नही आती।' अब श्रीरामकृष्ण दूसरो से बातचीत कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण– (डाक्टर से)–तुम्हारा लड़का अवतार नहीं मानता। यह अच्छी बात है। नही मानता तो न सही।

"तुम्हारा लड़का बड़ा अच्छा है। और होगा भी क्यों नही? बम्बई-आम के पेड मे कभी खट्टे आम भी लगते है? ईश्वर पर उसका कैसा विश्वास है! ईश्वर पर जिसका मन है, आदमी तो बस वही है। मनुष्य और मन-होश। जिसमे होश है—चैतन्य है, जो निश्चयपूर्वक जानता है कि ईश्वर सत्य है और सब अनित्य, वही वास्तव में मनुष्य है। अवतार नही मानता तो इसमे क्या दोप? 'ईश्वर है, यह सम्पूर्ण जीव-जगत् उनका ऐश्वर्य है,' इसे मानने से ही हो गया।—जैसे कोई बड़ा आदमी और उसका बगीचा।

"बात यह है कि दस अवतार है, चौबीस अवतार है और फिर असख्य अवतार भी है। जहाँ कही उनकी शक्ति का विशेष प्रकाश है, वही अवतार है। मेरा यही मत है।

"एक बात और है, जो कुछ देख रहे हो यह सब वे ही हुए है।—जैसे बेल के बीज, खोपड़ा, गूदा, तीनों को मिलाकर एक बेल है। जिनकी नित्यता है, उन्ही की लीला भी है। नित्य को छोड़कर केवल लीला समझ मे नही आती। लीला के रहने के

कारण ही, लीला को छोड़-छोडकर लोग नित्य मे जाया करते है।

"जब तक अहं-बुद्धि रहती है तब तक लीला के परे मनुष्य नही जा सकता। 'नेति नेति' करके ध्यान-योग द्वारा नित्य में लोग पहुँच सकते है, परन्तु कुछ भी छोड़ा नही जा सकता, क्योकि यह सब वे ही हुए है— जैसा मैंने कहा— बेल।"

डाक्टर– बहुत ठीक है।

श्रीरामकृष्ण– कचदेव निर्विकल्प समाधि मे थे। जब समाधि छूटी तब एक ने पूछा, 'आप इस समय क्या देखते है?' कचदेव ने कहा, 'मै देख रहा हूँ, ससार मानो उनसे मिला हुआ है। वे ही पूर्ण है। जो कुछ देख रहा हूँ, सब वे ही हुए है। इसमे से क्या छोड़ूँ और क्या पकड़ूँ, कुछ समझ मे नही आता।'

"बात यह है कि नित्य और लीला का दर्शन करके दास-भाव मे रहना चाहिए। हनुमान ने साकार और निराकार दोनो का साक्षात्कार किया था। इसके बाद, दास-भाव से— भक्त के भाव से रहे थे।"

मणि– (स्वगत)– नित्य और लीला, दोनो को लेना होगा। जर्मनी मे वेदान्त के प्रवेश के समय से यूरोपीय पण्डितों मे भी किसी किसी का मत ऐसा ही है; परन्तु श्रीरामकृष्ण ने तो कहा है कि सम्पूर्ण रूप से त्याग— कामिनी-कांचन का त्याग— हुए बिना नित्य और लीला का साक्षात्कार नही होता। सच्चे साधक को ठीक ठीक त्यागी, सम्पूर्ण अनासक्त होना चाहिए। यही पर उनमे तथा हेगल जैसे यूरोपीय पण्डितो मे भेद है।

(४)

श्रीरामकृष्ण तथा ज्ञानयोग

डाक्टर कह रहे है, 'ईश्वर ने हमारी सृष्टि की है, और हम

सब लोगों की आत्माएँ अनन्त उन्नति करेंगी।' वे यह मानने के लिए राजी नही कि एक आदमी किसी दूसरे आदमी से बड़ा है। इसीलिए वे अवतार नही मानते।

डाक्टर– अनन्त उन्नति। यह अगर न हो तो पाँच-सात वर्ष और बचकर क्या होगा? इससे तो मै गले मे रस्सी की फाँसी लगाकर मर जाना बेहतर समझता हूँ।

"अवतार फिर है क्या? जो मनुष्य शौच जाता है— पेशाब करता है, उसके पैरो सिर झुकाऊँ! हाँ, परन्तु यह मानता हूँ कि मनुष्य मे ईश्वर की ज्योति प्रतिबिम्बित होती है।"

गिरीश–(हँसकर)– आपने ईश्वरी ज्योति कभी देखी नही—

डाक्टर उत्तर देने से पहले कुछ इधर-उधर करने लगे। पास ही एक मित्र बैठे हुए थे— धीरे धीरे उन्होंने कुछ कहा।

डाक्टर– (गिरीश के प्रति)– आपने भी तो प्रतिबिम्ब के सिवा और कुछ नही देखा।

गिरीश– मै देखता हूँ! वह ज्योति मै देखता हूँ! श्रीकृष्ण अवतार है, यह मै प्रमाणित कर दूँगा, नहीं तो अपनी जीभ काट-कर फेक दूँगा!

श्रीरामकृष्ण– यह सब जो बातचीत हो रही है, कुछ भी नही है।

"यह सब सन्निपात-ग्रस्त रोगी की बकवाद है। विकार के रोगी ने कहा था, 'मै घडा भर पानी पिऊँगा, हण्डी भर भात खाऊँगा।' वैद्य ने कहा, 'अच्छा, खाना तब खाना। अच्छे हो जाने के बाद जो कुछ तू कहेगा, वैसा ही किया जायगा।'

"जब घी कच्चा रहता है, तभी तक उसमे कलकलाहट होती है। पक जाने पर फिर आवाज नही निकलती। जिसका जैसा

मन है, वह ईश्वर को उसी तरह देखता है। मैने देखा है, बड़े आदमी के घर मे रानी की तस्वीर आदि—यह सब है और भक्तों के यहाँ देव-देवियो की तस्वीरें है।

"लक्ष्मण ने कहा था, 'हे राम, वशिष्ठदेव जैसे पुरुष को भी पुत्रो का शोक हो रहा है।' राम ने कहा, 'भाई, जिसमे ज्ञान है उसमे अज्ञान भी है। जिसे उजाले का ज्ञान है, उसे अँधेरे का भी ज्ञान है। इसलिए ज्ञान और अज्ञान से परे हो जाओ।' ईश्वर को विशेष रूप से जान लेने पर यह अवस्था प्राप्त हो जाती है। इसे ही विज्ञान कहते है।

"पैर मे काँटा चुभ जाने से, उसे निकालने के लिए एक और काँटा ले आना पड़ता है। निकालने के बाद फिर दोनों काँटे फेक दिये जाते है। ज्ञानरूपी काँटे से अज्ञानरूपी काँटा निकालकर, ज्ञान और अज्ञानरूपी दोनों काँटे फेक दिये जाते है।

"पूर्ण ज्ञान के कुछ लक्षण है। उस समय विचार बन्द हो जाता है। पहले जैसा कहा, कच्चा रहने से ही घी में कलकलाहट रहती है।"

डाक्टर—पूर्ण ज्ञान रहता कहाँ है? सब ईश्वर हैं, तो फिर आप परमहस का काम क्यों करते है? और ये लोग आकर आपकी सेवा क्यों करते है? आप चुप क्यो नही रहते?

श्रीरामकृष्ण—(सहास्य)—पानी स्थिर रहने पर भी पानी है, और तरग-रूप से हिलने-डुलने पर भी वह पानी ही है।

"एक बात और। महावत-नारायण की बात भी क्यों न मानी जाय? गुरु ने शिष्य को समझाया था कि सब नारायण है। पागल हाथी आ रहा था, शिष्य गुरु की बात पर विश्वास करके वहाँ से नही हटा। यही सोचकर कि हाथी भी नारायण है! महावत

इधर चिल्ला-चिल्लाकर कह रहा था, 'सब लोग हट जाओ—रास्ते से सब हट जाओ।' पर शिष्य नही हटा। हाथी आया और उसे एक ओर फेककर चला गया। शिष्य को बडी चोट लगी, केवल जान ही नही निकली। मुँह पर पानी के छीटे लगाने से उसे चेत हुआ। जब उससे पूछा गया कि तुम हटे क्यो नही, तब उसने कहा, 'क्यो, गुरु महाराज ने तो कहा था—सब नारायण है।' गुरु ने कहा, 'बेटा, अगर ऐसा ही था तो तुमने महावत-नारायण की बात क्यो नही मानी? महावत भी तो नारायण हुआ।' वे ही शुद्ध मन और शुद्ध बुद्धि होकर भीतर वास करते है। मै यन्त्र हूँ, वे यन्त्री है। मै घर हू, वे मालिक। वे ही महावत-नारायण है।"

डाक्टर—और एक बात कहूँगा, आप फिर ऐसा क्यो कहते है कि रोग अच्छा कर दो?

श्रीरामकृष्ण—जब तक 'मै'-रूपी घट है, तभी तक ऐसा हो रहा है। सोचो, एक महासमुद्र है, ऊपर-नीचे जल से पूर्ण है। उसके भीतर एक घट है। घट के भीतर और बाहर पानी है; परन्तु उसे बिना फोड़े यथार्थ मे एकाकार नही होता। उन्ही ने इस 'मै'-घट को रख छोड़ा है।

डाक्टर—तो यह 'मै' जो आप कह रहे है, यह सब क्या है? इसका भी तो अर्थ कहना होगा। क्या वे (ईश्वर) हमारे साथ कोई मजाक कर रहे है?

गिरीश—(डाक्टर से)—महाशय, आपको कैसे मालूम हुआ कि वह मजाक नही है?

श्रीरामकृष्ण—(सहास्य)—इस 'मै' को उन्ही ने रख छोड़ा है। उनकी क्रीड़ा—उनकी लीला!

"एक राजा के चार लड़के थे। सब थे तो राजा के लड़के, परन्तु उन्ही मे कोई मन्त्री, कोई कोतवाल, इसी तरह बन-बनकर खेल रहे थे। राजा के लड़के होकर कोतवाल का खेल !

(डाक्टर से) "सुनो, यदि तुम्हे आत्म-साक्षात्कार हो जाय तो यह सब तुम मानने लग जाओगे। उनके दर्शन से सब संशय दूर हो जाते है।"

डाक्टर– सब सन्देह कहाँ जाता है ?

श्रीरामकृष्ण– मेरे पास इतना ही सुन जाओ। इससे अधिक कुछ जानना चाहो तो अकेले मे उनसे (ईश्वर से) कहना। उनसे पूछना, क्यो उन्होने ऐसा किया है।

"लडका भिक्षुक को मुट्ठी भर चावल ही दे सकता है। अगर रेल के किराये की उसे आवश्यकता होती है, तो यह बात मालिक के कान तक पहुँचायी जाती है।"

डाक्टर चुप है।

श्रीरामकृष्ण– अच्छा, तुम्हे विचार प्यारा है, तो सुनो कुछ विचार करता हूँ। ज्ञानी के मत से अवतार नही है। कृष्ण ने अर्जुन से कहा था, 'तुम मुझे अवतार-अवतार कह रहे हो, आओ, तुम्हें एक दृश्य दिखलाऊँ।' अर्जुन साथ-साथ गये। कुछ दूर जाने पर कृष्ण ने पूछा, 'क्या देखते हो ?' अर्जुन ने कहा, 'एक बहुत बड़ा पेड है और उसमे गुच्छे के गुच्छे जामुन लटक रहे है।' कृष्ण ने कहा, 'वे जामुन नही है। जरा और बढ़कर देखो।' तब अर्जुन ने देखा, गुच्छो मे कृष्ण फले हुए थे। कृष्ण ने कहा, 'अब देखा ?—मेरी तरह कितने कृष्ण फले हुए है।'

"कबीरदास ने कृष्ण की बात पर कहा था, 'वह तो गोपियों की तालियो पर बन्दर-नाच नाचा था !'

"जितना ही बढ जाओगे, ईश्वर की उपाधि उतनी ही कम देखोगे। भक्त को पहले दशभुजा के दर्शन हुए। और भी बढ़कर उसने देखा, षडभुजा मूर्ति। और भी बढ़कर देखा, द्विभुज गोपाल। जितना ही बढ रहा है, उतना ही ऐश्वर्य घट रहा है। और भी बढा तब ज्योति के दर्शन हुए—कोई उपाधि नही।

"जरा वेदान्त का भी विचार सुनो। किसी राजा को एक आदमी इन्द्रजाल दिखाने के लिए आया था। उसके जरा हट जाने पर राजा ने देखा, एक सवार आ रहा है—घोड़े पर बड़े रोब-दाब से, हाथ मे अस्त्र-शस्त्र लिये हुए। सभा भर के आदमी और राजा विचार करने लगे कि इसके भीतर क्या सत्य है। वह घोड़ा तो सत्य नही है, वह साज-बाज भी सत्य नही है, वे अस्त्र-शस्त्र भी सत्य नही है। अन्त मे सचमुच देखा, सवार ही अकेला खड़ा था और कुछ नही। अर्थात् ब्रह्म सत्य है, संसार मिथ्या। विचार करना चाहो तो फिर और कोई चीज नही टिकती।"

डाक्टर—इसमे मेरी ओर से कोई आपत्ति नहीं।

श्रीरामकृष्ण—परन्तु यह भ्रम सहज ही दूर नही होता। ज्ञान के बाद भी कुछ कुछ रहता है। स्वप्न मे अगर कोई बाघ देखता है तो आँख खुलने के बाद भी छाती धडकती रहती है।

"चोर खेत मे चोरी करने के लिए गये हुए थे। वहाँ आदमी के आकार का पुतला बनाकर खड़ा कर दिया गया था, डरवाने के लिए। चोर मारे डर के घुस नही रहे थे। एक ने पास जाकर देखा तो केवल घास!—आदमी के शक्ल की बाँधकर खड़ी कर दी गयी थी। उसने वहाँ से आकर अपने साथियो से कहा कि डरने की कोई बात नही। किन्तु फिर भी वे लोग मारे डर

के कदम आगे नही बढा रहे थे। कहते थे, 'छाती धड़कती है।' तब जिसने पास जाकर देखा था, उसने उस गड़े हुए आकार को जमीन मे सुला दिया और कहने लगा, 'यह कुछ नही है, यह कुछ नही है'—'नेति' 'नेति'।"

डाक्टर– यह तो बड़ी सुन्दर बात है!

श्रीरामकृष्ण– (सहास्य)– हाँ, कैसी बात है?

डाक्टर– बड़ी सुन्दर है।

श्रीरामकृष्ण– एक बार थैन्क यू (Thank you) भी तो कहो।

डाक्टर– क्या आप मेरे मन का भाव नही समझ रहे हैं? इतना कष्ट करके आपको यहाँ देखने के लिए आता हूँ!

श्रीरामकृष्ण– (सहास्य)– नही जी, मूर्ख के कल्याण के लिए भी तो कुछ कहो। विभीषण ने लंका का राजा होना अस्वीकृत कर दिया था, कहा था, 'राम, मैं तुम्हे जब पा गया तो अब राज्य से क्या काम?' राम ने कहा, "विभीषण, तुम मूर्खों के लिए राजा बनो। जो लोग कह रहे है, 'तुमने राम की इतनी सेवा की, परन्तु तुम्हें ऐश्वर्य क्या मिला?'—उनकी शिक्षा के लिए तुम राजा बनो।"

डाक्टर– यहाँ उस तरह का मूर्ख है कौन?

श्रीरामकृष्ण– (सहास्य)– नही जी, यहाँ शख भी है और शम्बुक भी है! (सब हँसते है)

(५)

डाक्टर के प्रति उपदेश

डाक्टर ने श्रीरामकृष्ण के लिए दवा दी, दो गोलियाँ, कहने लगे, 'ये गोलियाँ दी है—पुरुष और प्रकृति!' (सब हंसते है)

श्रीरामकृष्ण– (सहास्य)– हाँ, पुरुष और प्रकृति एक ही साथ

रहते है। तुमने कबूतरो को नही देखा ? नर तथा मादी अलग नही रह सकते। जहाँ पुरुष है, वही प्रकृति भी है। जहाँ प्रकृति है, वही पुरुष भी है।

आज विजयादशमी है। श्रीरामकृष्ण ने डाक्टर से कुछ मिष्टान्न खाने के लिए कहा। भक्तगण मिष्टान्न लाकर देने लगे।

डाक्टर–(खाते हुए)– भोजन के लिए थैन्क यू (Thank you) कहता हूँ; आपने जो ऐसा उपदेश दिया, उसके लिए नहीं। वह थैन्क यू मुँह से क्यो निकाला जाय ?

श्रीरामकृष्ण–(सहास्य)– उनमे मन रखना। और क्या कहूँ, और थोड़ी थोड़ी देर के लिए ध्यान करना। (छोटे नरेन्द्र को दिखलाकर) देखो, इसका मन ईश्वर मे बिलकुल लीन हो जाता है। जो सब वाते तुमसे कही गयी थी—

डाक्टर– अव इन लोगो से कहिये।

श्रीरामकृष्ण– जिसे जैसा सह्य है उसके लिए वैसी ही व्यवस्था की जाती है। वे सव वाते ये सव लोग कभी समझ सकते है ? तुमसे कही गयी थी, वह और वात है। लडके को जो भोजन रुचता है और जो उसे सह्य है वही भोजन उसके लिए माँ पकाती है। (सब हंसते है)

डाक्टर चले गये। विजया के उपलक्ष्य मे सब भक्तों ने श्रीरामकृष्ण को साष्टाग प्रणाम करके उनके पैरो की धूल लेकर सिर से लगायी। फिर एक दूसरे को सप्रेम भेटने लगे। आनन्द की मानो सीमा नही रही। श्रीरामकृष्ण को इतनी सख्त वीमारी है, परन्तु वे जैसे सब भूल गये हों। प्रेमालिगन और मिष्टान्न भोजन वडी देर तक चल रहा है। श्रीरामकृष्ण के पास छोटे नरेन्द्र, मास्टर तथा दो-चार भक्त और बैठे हुए है। श्रीरामकृष्ण

आनन्द से वातचीत कर रहे है। डाक्टर के वारे मे वातचीत होने लगी।

श्रीरामकृष्ण–डाक्टर को और अधिक कुछ कहना न होगा। पेड़ का काटना जव समाप्त हो आता है तव जो आदमी काटता है वह जरा हटकर खड़ा हो जाता है। कुछ देर वाद पेड़ आप ही गिर जाता है।

(मास्टर से) "डाक्टर वहुत वदल गया है।"

मास्टर–जी हॉ ! यहॉ आने पर उनकी अक्ल ही मारी जाती है। क्या दवा दी जानी चाहिए, इसकी वात ही नही उठाते। हम लोग जव याद दिलाते है, तव कहते है— 'हॉ-हॉ, दवा देनी है।'

वैठकखाने मे कोई कोई भक्त गा रहे थे। श्रीरामकृष्ण जिस कमरे मे है, उसी मे सव के आने पर श्रीरामकृष्ण कहने लगे— "तुम सव गा रहे थे— ताल ठीक क्यो नही रहता था ? कोई एक वेतालसिद्ध था— यह भी वैसी ही वात हुई !" (सव हँसते है)

छोटे नरेन्द्र का आत्मीय एक लड़का आया हुआ है। खूव भडकीली पोशाक पहने और नाक पर चश्मा लगाये। श्रीरामकृष्ण छोटे नरेन्द्र से वातचीत कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण–देखो, इसी रास्ते से एक जवान आदमी जा रहा था। उसकी कमीज की आस्तीनो मे 'प्लेट' पड़ी थी। उसके चलने का ढग भी कैसा था ! रह-रहकर वह चादर हटाकर अपनी कमीज दिखाता था और इधर-उधर देखता था कि कोई उसकी कमीज देखता भी है या नही ! परन्तु जव वह चलता था तो साफ मालूम हो जाता था कि उसके पैर टेढे है ! मोर अपने पख तो दिखलाता है, पर उसके पैर वड़े गन्दे होते है। इसी प्रकार

परिच्छेद १८

गृहस्थाश्रम तथा संन्यासाश्रम

(१)

श्रीरामकृष्ण तथा गृहस्थाश्रम

आज आश्विन की शुक्ला चतुर्दशी है। सप्तमी, अष्टमी और नवमी ये तीन दिन श्रीजगन्माता की पूजा और उत्सव मे कटे है। दशमी को विजया थी। उस समय पारस्परिक मिलने-जुलने का जो शुभ संयोग था, वह भी हो चुका। श्रीरामकृष्ण भक्तो के साथ कलकत्ते के श्यामपुकुर नामक स्थान मे रहते है। शरीर मे कठिन व्याधि है। गले मे कैन्सर हो गया है। जब वे बलराम के घर पर थे तब कविराज गगाप्रसाद देखने के लिए आये थे। श्रीराम-कृष्ण ने उनसे पूछा था— 'यह रोग साध्य है या असाध्य ?' इसका कोई उत्तर कविराज ने नही दिया। चुप हो रहे थे। अग्रेजी चिकित्सा के डाक्टरो ने भी रोग के असाध्य होने का इशारा किया था। इस समय डाक्टर सरकार चिकित्सा कर रहे हैं।

आज बृहस्पतिवार है, २२ अक्टूबर १८८५। श्यामपुकुर के एक दुमंजले मकान मे श्रीरामकृष्ण का पलंग बिछाया गया है, उसी पर श्रीरामकृष्ण बैठे हुए हैं। डाक्टर सरकार, श्रीयुत ईशानचन्द्र मुखोपाध्याय और भक्तगण सामने तथा चारो ओर बैठे हुए है। ईशान बड़े दानी है, पेन्शन लेकर भी दान किया करते है, ऋण करके दान करते है और सदा ईश्वर की चिन्ता में रहते है। पीड़ा का हाल सुनकर वे देखने के लिए आये हुए है। डाक्टर सरकार चिकित्सा के लिए आते है तो छः सात घण्टे तक रहते है। श्रीरामकृष्ण पर उनकी बड़ी श्रद्धा है और भक्तो को

तो वे अपने आत्मीयों की तरह मानते है।

शाम के सात वजे का समय है। वाहर चाँदनी छिटकी हुई है। पूर्णाग निशानाथ चारो ओर सुधावृष्टि कर रहे है। भीतर दीपक का प्रकाश है। कमरे मे वहुतसे आदमी वैठे हुए है। वहुतसे लोग श्रीरामकृष्णदेव के दर्शन करने के लिए आये हैं। सब के सव एकदृष्टि से उनकी ओर देख रहे है। उनकी वातें सुनने के लिए लोगो की इच्छा प्रवल हो रही है। उनके कार्य देखने के लिए लोग उत्सुक हो रहे है। ईशान को देखकर श्रीरामकृष्ण कह रहे है—

"जो संसारी व्यक्ति ईश्वर के पादपद्मो मे भक्ति करके संसार का काम करता है, वह धन्य है, वह वीर है। जैसे किसी के सिर पर दो मन का बोझा रखा हुआ हो, और एक वरात जा रही हो। इधर तो सिर पर इतना बड़ा बोझा है, फिर भी वह खड़े होकर वरात को देखता है। इस प्रकार ससार मे रहना बिना अधिक शक्ति के नही होता। जैसे पाँकाल मछली, रहती तो कीच के भीतर है, परन्तु देह मे कीच छू नही जाता। 'पनडुब्बी' पानी मे डुवकियाँ लगाया करती है, परन्तु एक ही वार परो को झाडने से फिर पानी नही रह जाता।

"परन्तु संसार मे यदि निर्लिप्त भाव से रहना है तो कुछ साधना चाहिए। कुछ दिन निर्जन मे रहना जरूरी है, एक वर्ष के लिए हो या छः महीने के लिए, अथवा तीन महीने के लिए या महीने ही भर के लिए। उसी एकान्त मे ईश्वर की चिन्ता करनी चाहिए। और मन ही मन कहना चाहिए— 'इस ससार मे मेरा कोई [illegible] जिन्हे मै अपना कहता हूँ, वे दो दि[illegible] लिए है, भ[illegible] अपने है, वे ही मेरे सर्वस्व है। किस तरह

"भक्तिलाभ के पश्चात् ससार मे रहा जा सकता है। जैसे हाथ मे तेल लगाकर कटहल काटने से फिर उसका दूध हाथ में नही चिपकता। ससार पानी की तरह है और मनुष्य का मन जैसे दूध। पानी मे अगर दूध रखना चाहते हो तो दूध और पानी एक हो जायेगा, इसीलिए निर्जन स्थान मे दही जमाना चाहिए। दही जमाकर मक्खन निकालना चाहिए। मक्खन निकालकर अगर पानी मे रखो तो फिर वह पानी मे नही मिलता, निर्लिप्त होकर तैरता रहता है।

"ब्रह्मसमाजवालो ने मुझसे कहा था, 'महाराज, हमारा वह मत है जो राजर्षि जनक का था। हम लोग उनकी तरह निर्लिप्त रहकर ससार करेगे।' मैने कहा, 'निर्लिप्त भाव से संसार करना बड़ा कठिन है। मुँह से कहने से ही जनक राजा नही हो सकते। राजर्षि जनक ने सिर नीचे और पैर ऊपर करके वर्षो तपस्या की थी। तुम्हे सिर नीचे और पैर ऊपर नही करना होगा। परन्तु साधना करनी चाहिए, निर्जन मे वास करना चाहिए। निर्जन मे ज्ञान और भक्ति प्राप्त करके फिर संसार कर सकते हो। दही एकान्त मे जमाया जाता है। हिलाने-डुलाने से दही नही जमता।'

"जनक निर्लिप्त थे, इसलिए उनका एक नाम विदेह भी था— अर्थात् देह मे बुद्धि नही रहती थी,— ससार मे रहकर भी जीवन्मुक्त होकर घूमते थे। परन्तु देह-बुद्धि का नाश होना बहुत दूर की बात है। बड़ी साधना चाहिए।

"जनक बड़े वीर थे। वे दो तलवारें चलाते थे। एक ज्ञान की, दूसरी कर्म की।

श्रीरामकृष्ण तथा संन्यासाश्रम

"अगर पूछो, 'गृहस्थाश्रम के ज्ञानी और संन्यासाश्रम के ज्ञानी

मे कोई अन्तर है या नहीं,' तो उसका उत्तर यह है कि दोनो वास्तव मे एक ही है—यह भी ज्ञानी है और वह भी ज्ञानी है; परन्तु इतना ही है कि ससार मे गृहस्थ ज्ञानी के लिए एक भय रह जाता है। कामिनी और काचन के भीतर रहने से ही कुछ न कुछ भय है। तुम चाहे जितने ही बुद्धिमान होओ, पर काजल की कोठरी मे रहने से देह मे स्याही का थोड़ासा दाग लग ही जायगा।

"मक्खन निकालकर अगर नयी हण्डी मे रखो तो मक्खन के नष्ट होने की सम्भावना नही रहती। अगर मट्ठे की हण्डी में रखो तो सन्देह होता है। (सब हँसे)

"धान के लावे जब भूने जाते है तब दो-चार भाड़ के बाहर चिकटकर गिर पड़ते है। वे चमेली के फूल की तरह शुभ्र होते है, देह मे कही एक भी दाग नही रहता। जो लावे कड़ाही में रहते है, वे भी अच्छे होते है, परन्तु उन बाहरवालों के समान नही होते, देह मे कुछ दाग होते है। संसार-त्यागी संन्यासी अगर ज्ञानलाभ करता है तो ठीक इसी चमेली के फूल की तरह बेदाग होता है, और ज्ञान के पश्चात् संसाररूपी कड़ाही मे रहने पर देह मे ऊपर से कुछ लाल दाग लग सकता है। (सब हंसते है)

"जनक राजा की सभा मे एक भैरवी आयी हुई थी। स्त्री देखकर जनक राजा ने सिर झुका लिया। यह देखकर भैरवी ने कहा, 'जनक! स्त्री को देखकर अब भी तुम डरते हो!' पूर्ण ज्ञान होने पर पाँच साल के बच्चे का स्वभाव हो जाता है, तब स्त्री और पुरुष में भेद-बुद्धि नही रह जाती।

"कुछ भी हो, ससार मे रहनेवाले ज्ञानी की देह पर दाग चाहे लग जाय, परन्तु उससे उसकी कोई हानि नही होती। चाँद में कलंक तो है, परन्तु उससे किरणो के निकलने मे कोई रुकावट

नही होती।

"कोई कोई लोग ज्ञानलाभ के पश्चात् लोक-शिक्षा के लिए कर्म करते है, जैसे जनक और नारद आदि। लोक-शिक्षा के लिए शक्ति के रहने की जरूरत है। ऋपिगण अपने-ही-अपने ज्ञानोपार्जन मे व्यस्त रहते थे। नारदादि आचार्य दूसरों के हित के लिए विचरण किया करते थे। वे वीर पुरुप थे।

"सड़ी हुई लकड़ी जव वह जाती है, तो उस पर कोई चिडिया के वैठने से ही वह डूव जाती है, परन्तु मोटी लकड़ी का लट्ठा जव वहता है, तव गौ, आदमी, यहाँ तक कि हाथी भी उसके ऊपर चढकर पार हो सकता है।

"स्टीम वोट खुद भी पार होता है और कितने ही आदमियों को भी पार कर देता है।

"नारदादि आचार्य काठ के लट्ठे की तरह है, स्टीम वोट की तरह।

"कोई खाकर अंगौछे से मुँह पोछकर वैठा रहता है कि कहीं किसी को खवर न लग जाय। (सव हँसते है) और कोई कोई अगर एक आम पाते है तो जरा जरासा सव को देते है और आप भी खाते है।

"नारदादि आचार्य सव के कल्याण के लिए ज्ञानलाभ के वाद भी भक्ति लेकर रहे थे।"

(२)

भक्तियोग तथा ज्ञानयोग

डाक्टर–ज्ञान होने पर मनुष्य अवाक् हो जाता है, आँखे मुँद जाती है और आँसू वह चलते है। तव भक्ति की आवश्यकता होती है।

श्रीरामकृष्ण– भक्ति स्त्री है। इसीलिए अन्तःपुर तक उसकी पैठ है। ज्ञान बहिर्द्वार तक ही जा सकता है। (सब हँसते है)

डाक्टर– परन्तु अन्तःपुर मे हरएक स्त्री को घुसने नही दिया जाता, वेश्याएँ वहाँ नही जाने पाती। ज्ञान चाहिए।

श्रीरामकृष्ण– यथार्थ मार्ग जो नही जानता, परन्तु ईश्वर पर जिसकी भक्ति है––उन्हे जानने की जिसे इच्छा है, वह भक्ति के वल पर ही ईश्वर को प्राप्त कर सकता है। एक आदमी बड़ा भक्त था, वह जगन्नाथजी के दर्शन करने के लिए घर से निकला। पुरी का कोई रास्ता वह जानता नही था,––दक्षिण की ओर न जाकर वह पश्चिम की ओर चला गया। रास्ता भूल गया था सही, परन्तु व्याकुल होकर आदमियो से वह पूछा करता था। उन लोगों ने कह दिया, 'यह मार्ग नही है, उस मार्ग से जाओ।' अन्त मे वह भक्त पुरी पहुँच ही गया और वहाँ उसने जगन्नाथजी के दर्शन भी किये। देखो, न जानने पर भी कोई न कोई मार्ग वतला ही देता है।

डाक्टर– वह भूल तो गया था।

श्रीरामकृष्ण– हाँ, ऐसा हो जाता है जरूर, परन्तु अन्त मे वह पाता भी है।

एक ने पूछा– ईश्वर साकार है या निराकार?

श्रीरामकृष्ण– वे साकार भी है और निराकार भी। एक सन्यासी जगन्नाथजी के दर्शन करने गया था। जगन्नाथजी के दर्शन करके उसे सन्देह हुआ कि ईश्वर साकार है या निराकार। हाथ मे उसके दण्ड था, उसी दण्ड को वह जगन्नाथजी की देह मे छुआने लगा, यह देखने के लिए कि दण्ड छू जाता है या नहीं। एक वार दण्ड के एक सिरे से छुआया तो दण्ड नही लगा, फिर

दूसरे सिरे से छुआया तो वह उनकी देह से लग गया। तब सन्यासी ने समझा कि ईश्वर साकार भी है और निराकार भी।

"परन्तु इसकी धारणा करना बड़ा कठिन है। जो निराकार हैं, वे फिर साकार कैसे हो सकते है ? यह सन्देह मन मे उठता है। और यदि वे साकार हो भी, तो ये अनेक रूप क्यो है ?"

डाक्टर– उन्होने नाना रूपो की सृष्टि की है, इसलिए वे साकार है। उन्होने मन की सृष्टि की है, इसलिए वे निराकार है। वे सब कुछ हो सकते है।

श्रीरामकृष्ण– ईश्वर को प्राप्त किये विना ये सब बातें समझ मे नही आती। साधक को वे अनेक भावों मे और अनेक रूपो में दर्शन देते है। एक के गमला भर रंग था। बहुतेरे उसके पास कपड़े रँगाने के लिए आया करते थे। वह आदमी पूछा करता था, 'तुम किस रंग से रँगाना चाहते हो ?' किसी ने कहा, 'लाल रंग से।' बस, वह आदमी गमले मे कपड़ा छोड़ देता था और निकालकर कहता था, 'यह लो, तुम्हारा कपड़ा लाल रंग से रँग गया।' कोई दूसरा कहता था, 'मेरा कपड़ा पीले रंग से रँग दो।' रगरेज उसी समय उसका कपड़ा भी उसी गमले मे डुबाकर कहता था, 'यह लो, तुम्हारा पीले रंग से रँग गया।' अगर कोई आसमानी रग से रँगाना चाहता था, तो वह रंगरेज फिर उसी गमले मे डुबाकर कहता, 'यह लो, तुम्हारा आसमानी रंग से रँग गया।' इसी तरह, जो जिस रग से कपडा रँगाना चाहता था, उसका कपड़ा उसी रग से और उसी गमले में डालकर वह रँग देता था। एक आदमी यह आश्चर्यजनक कार्य देख रहा था। रगरेज ने उससे पूछा, 'क्यो जी, तुम्हारा कपडा किस रग से रँगना होगा ?' तब उस देखनेवाले ने कहा, 'भाई,

तुमने जो रग इस गमले मे डाल रखा है, वही रग मुझे दो।' (सब हँसते है)

"एक आदमी जंगल गया था। उसने देखा, पेड पर एक बहुत सुन्दर जीव बैठा है। उसने एक आदमी से आकर कहा, 'भाई, अमुक पेड पर मैने एक लाल रग का जीव देखा है।' उस आदमी ने कहा, 'मैने भी देखा है। पर वह लाल क्यों होने लगा? वह तो हरा है।' तीसरे ने कहा, 'नही जी, वह हरा नही, पीला है।' अन्त मे लडाई ठन गयी। तब उन लोगों ने पेड़ के नीचे जाकर देखा, वहाँ एक आदमी बैठा हुआ था। पूछने पर उसने कहा, 'मै इसी पेड के नीचे रहता हूँ। उस जीव को मै खूब पहचानता हूँ। तुम लोगो ने जो कुछ कहा सब ठीक है। वह कभी तो लाल होता है, कभी आसमानी, और भी न जाने क्या क्या होता है। फिर कभी देखता हूँ, उसमे कोई रग नही।'

"जो आदमी सदा ही ईश्वर-चिन्तन करता है, वही समझ सकता है कि उनका स्वरूप क्या है। वही मनुष्य जानता है कि ईश्वर अनेक रूपो से दर्शन देते है। वे सगुण भी है और निर्गुण भी। जो आदमी पेड़ के नीचे रहता है, वही जानता है कि उस वहुरुपिये के अनेक रग हैं और कभी कोई रंग नही रहता। दूसरे आदमी तर्क-वितर्क करके केवल कष्ट ही उठाते है।

"वे साकार है और निराकार भी। यह किस प्रकार है, जानते हो? जैसे सच्चिदानन्द एक समुद्र हो, जिसका कही ओर छोर नही। भक्ति की हिम-शक्ति से उस समुद्र का पानी जगह जगह जमकर वर्फ वन गया हो,—मानो पानी वर्फ के आकार मे बँधा हुआ हो, अर्थात् भक्त के पास वे कभी कभी साकार रूप मे दर्शन देते है। ज्ञान-सूर्य के उगने पर वह वर्फ गलकर फिर पानी

हो जाता है !"

डाक्टर– सूर्य के उगने पर बर्फ गलकर पानी हो जाता है; और आप जानते है---बाद मे सूर्य की उष्णता से पानी निराकार बाष्प बन जाता है ?

श्रीरामकृष्ण– अर्थात् 'ब्रह्म सत्य है और ससार मिथ्या' इस विचार के बाद समाधि के होने पर रूप आदि कुछ नही रह जाते। तब फिर ईश्वर के सम्बन्ध मे किसी को यह नही मालूम होता कि वे व्यक्ति है अथवा अन्य कुछ। वे क्या है, यह मुख से नही कहा जा सकता। कहे भी कौन ? जो कहेगे, वे ही नहीं रह गये ! वे अपने 'मै' को फिर खोजकर भी नही पाते ! उनके लिए ब्रह्म निर्गुण है। तब केवल बोध रूप मे ब्रह्म का बोध होता है। मन और बुद्धि के द्वारा कोई उसे पकड नही सकता।

"इसीलिए कहते है, भक्ति चन्द्र है और ज्ञान सूर्य। मैने सुना है, बिलकुल उत्तर मे और दक्षिण मे समुद्र है। वहाँ इतनी ठण्डक है कि पानी पर बर्फ की चट्टाने बन जाती है। जहाज नही चलते। वहाँ जाकर अटक जाते है।"

डाक्टर– भक्ति के मार्ग मे आदमी अटक जाते है।

श्रीरामकृष्ण– हाँ, ऐसा होता तो है, परन्तु इससे हानि नही होती। उस सच्चिदानन्द-सागर का पानी ही बर्फ के आकार में जमा हुआ है। यदि और भी विचार करना चाहो, यदि 'ब्रह्म सत्य है और संसार मिथ्या' यह विचार करना चाहो तो इसमें भी कोई हानि नही है। ज्ञानसूर्य से वह बर्फ गल जायेगा, और वह गलकर भी उसी सच्चिदानन्द-सागर मे रहेगा।

"ज्ञान-विचार के बाद समाधि के होने पर 'मै' 'मेरा' यह कुछ नही रह जाता। परन्तु समाधि का होना बहुत मुश्किल है।

'मै' किसी तरह जाना नही चाहता। और जाना नही चाहता, इसीलिए फिर-फिरकर इस ससार मे उसे आना पड़ता है।

"गौ 'हम्बा' (हम-हम) करती है, इसीलिए उसे इतना दु.ख मिलता है। बैल को दिन भर हल जोतना पड़ता है— गरमी हो या वर्षा। और फिर उसे कसाई काटते है। इतने पर भी बचाव नही होता, चमार चमडे से जूते वनाते है। अन्त मे आँत की ताँत बनती है। धुनिया के हाथ मे जब वह 'तूँ तूँ' करती है, तव कही उसका निस्तार होता है।

"जव जीव कहता है, 'नाह नाह नाह, हे ईश्वर, मै कुछ भी नही हूँ, तुम्ही कर्ता हो; मै दास हूँ, तुम प्रभु हो,' तव उसका निस्तार होता है, तभी उसकी मुक्ति होती है।"

डाक्टर– परन्तु धुनिये के हाथ मे पडे तव तो! (सव हँसते है)

श्रीरामकृष्ण– जव 'मै' जाने का है ही नही, तो पड़ा रहे दास 'मै' वना हुआ! (सव हँसते है)

"समाधि के वाद भी किसी किसी का 'मै' रह जाता है— 'दास मै', 'भक्त का मै'। शकराचार्य ने लोकशिक्षा के लिए 'विद्या का मै' रख छोड़ा था। 'दास मै, विद्या का मै, भक्त का मै' यह पक्का 'मै' है।

"कच्चा 'मै' क्या है, जानते हो? मै कर्ता हूँ, मै इतने वड़े आदमी का लड़का हूँ, विद्वान्, हूँ, धनवान हूँ, मुझे ऐसी वात कही जाय!—ये सव कच्चे 'मै' के भाव है। अगर कोई घर मे चोरी करे और उसे अगर कोई पकड़ ले, तो पहले सव चीजे उससे छुड़ा लेता है, फिर मार-पीटकर उसे सीधा कर देता है, फिर पुलिस को सौंप देता है। कहता है, 'हः, नही जानता किसके घर में चोरी की!'

"ईश्वर-प्राप्ति होने पर पाँच वर्ष के बच्चे जैसा स्वभाव हो जाता है। 'बालक का मैं' और 'पक्का मैं'। बालक किसी गुण के वश नही है। वह तीनो गुणो से परे है। सत्त्व, रज और तम मे से किसी गुण के वश नही। देखो, बच्चा तमोगुण के वश मे नही है। अभी तो उसने लडाई की और देखते ही देखते फिर गले से लिपट गया। कितना प्रेम और कितना खेल! वह रजोगुण के भी वश मे नही है। अभी उसने घरौदा बनाया, कितनी मेहनत की, पर कुछ देर मे सब पड़ा रह गया! वह माता के पास दौड चला। कभी देखो तो एक सुन्दर धोती पहने हुए घूम रहा है, पर कुछ देर बाद देखो तो वह कपडा खुलकर गिर गया है। कभी देखो, वह कपडे की बात ही बिलकुल भूल गया है या उसे बगल मे ही दबाये घूम रहा है। (हास्य)

"अगर बच्चे से कहो, 'यह बडी अच्छी धोती है, यह किसकी धोती है?' तो वह कहेगा, 'यह मेरी धोती है—मेरे बाबूजी ले आये है।' अगर कहो, 'वाह, बच्चू, तू बड़ा अच्छा है, बच्चू, मुझे यह धोती दे दे' तो वह कहेगा—'नही, मेरी धोती है, मेरे बाबूजी की दी हुई है। उँहूँ, मै न दूँगा।' फिर उसे एक खिलौने पर या एक बाजे पर फुसला लो—वह पाँच रुपये की धोती तुम्हे देकर चला जायगा। पाँच वर्ष का बच्चा सत्त्वगुण के भी वश मे नही है, पडोस के बच्चो से कितना प्यार है, बिना देखे रहा नही जाता, परन्तु माँ-बाप के साथ अगर किसी दूसरी जगह चला गया तो वहाँ नये साथी मिल जाते है, उन्ही पर सब प्यार हो जाता है, पुराने साथियो को एक प्रकार से एकदम भूल जाता है। बच्चे को फिर जाति आदि का अभिमान भी नही होता। माता ने कह दिया है कि वह तेरा दादा है, बस उसे पूरा विश्वास

हो गया कि यह मेरा दादा है। चाहे एक ब्राह्मण का लडका हो और दूसरा कुम्हार का, दोनो एक ही पत्तल पर खा सकते है। बच्चे मे शुचिता और अशुचिता का भी विचार नही है, न लोक-लज्जा ही है।

"और 'वृद्ध का मै' भी है। (डाक्टर हँसते है) वृद्ध के बहुत से पाश है,— जाति, अभिमान, लज्जा, घृणा, भय, विषय-बुद्धि, पटवारी-बुद्धि, कपटाचरण। अगर किसी से वह नाराज हो जाता है तो सहज ही उसका रंज नही मिटता। सम्भव है, जीवन भर के लिए वह कसकता रहे। तिसपर पाण्डित्य का अहंकार और धन का अहंकार भी है। 'वृद्ध का मै' कच्चा 'मै' है।

(डाक्टर से) "चार-पॉच आदमी ऐसे है जिन्हे ज्ञान नही होता। जिसे विद्या का अहकार है, जिसे धन का अहंकार है, पाण्डित्य का अहंकार है, उसे ज्ञान नही होता। इस तरह के आदमियो से अगर कहा जाय, 'वहॉ एक बहुत अच्छे महात्मा आये है, दर्शन करने चलोगे?'— तो कितने ही बहाने करके कहता है, 'न', मै न जाऊँगा।' और मन ही मन कहता है, 'मै इतना बड़ा आदमी हूँ, मै क्यो जाऊँ?'

सत्त्वगुण से ईश्वर-लाभ। इन्द्रियसंयम के उपाय

"तमोगुण का स्वभाव अहकार है। अहकार, अज्ञान, यह सब तमोगुण से होता है।

"पुराणो मे है, रावण मे रजोगुण था, कुम्भकर्ण मे तमोगुण और विभीपण मे सतोगुण। इसीलिए विभीषण श्रीरामचन्द्रजी को पा सके थे। तमोगुण का एक और लक्षण है क्रोध। क्रोध मे उचित और अनुचित का ज्ञान नही रहता। हनुमान ने लंका जला

दी, परन्तु यह ज्ञान नही था कि इससे सीताजी की कुटी भी जल जायेगी।

"तमोगुण का एक लक्षण और है, काम। पथरियाघट्टे के गिरीन्द्र घोष ने कहा था, 'काम, क्रोध आदि रिपु जब कि नहीं हटने के, तो इनका मोड फेर दो।' ईश्वर की कामना करो। सच्चिदानन्द के साथ रमण करो। क्रोध अगर न जाता हो तो भक्ति का तम धारण करो। 'क्या! मैने उनका नाम लिया और मेरा उद्धार न होगा? मुझे फिर पाप कैसा?—वन्धन कैसा?' ईश्वर की प्राप्ति के लिए लोभ करो। ईश्वर के रूप पर मुग्ध हो जाओ। अगर अहंकार करना है तो इस तरह का अहकार करो, 'मै ईश्वर का दास हूँ, मै ईश्वर का पुत्र हूँ।' इस तरह छहों रिपुओ का मोड़ फेर दिया जाता है।"

डाक्टर– इन्द्रियो का संयम करना बड़ा कठिन है। घोडे की आँख के दोनो बगल आड लगायी जाती है, किसी किसी घोडे की आँखे बिलकुल बन्द कर दी जाती है।

श्रीरामकृष्ण– अगर एक बार भी उनकी कृपा हो जाय, एक बार भी अगर ईश्वर के दर्शन मिल जायँ, आत्मा का साक्षात्कार हो जाय, तो फिर कोई भय नही रह जाता। छहो रिपु फिर कुछ भी नही बिगाड सकते।

"नारद और प्रह्लाद जैसे नित्यसिद्ध महापुरुषो को उस तरह दोनो ओर से आँखो मे आड लगाने की आवश्यकता नही थी। जो लडका स्वय ही बाप का हाथ पकडकर खेत की मेड़ पर से चल रहा है, वह, सम्भव है, असावधानी के कारण पिता का हाथ छोडकर गड्ढे मे गिर पड़े, परन्तु पिता जिस लडके का हाथ पकडता है, वह कभी गड्ढे मे नही गिरता।"

डाक्टर– परन्तु बच्चे का हाथ बाप पकड़े यह अच्छा नहीं मालूम होता।

श्रीरामकृष्ण– बात ऐसी नही। महापुरुषो का स्वभाव बालकों जैसा होता है। ईश्वर के पास वे सदा ही बालक है, उनमे अहंकार नही है। उनकी सब शक्ति ईश्वर की शक्ति है, पिता की शक्ति है, अपनी स्वयं की शक्ति कुछ भी नही। यही उनका दृढ़ विश्वास है।

डाक्टर– घोड़े के दोनों ओर आँखों मे आड़ लगाये बिना क्या घोड़ा कभी बढना चाहता है? रिपुओ को वशीभूत किये बिना क्या ईश्वर कभी मिल सकते है?

श्रीरामकृष्ण– तुम जो कुछ कहते हो, उसे विचार-मार्ग कहते है— ज्ञानयोग। उस रास्ते से भी ईश्वर मिलते है। ज्ञानी कहते है, पहले चित्त की शुद्धि आवश्यक है। पहले साधना चाहिए तब ज्ञान होता है।

"भक्तिमार्ग से भी वे मिलते है। यदि ईश्वर के पादपद्मो मे एक बार भक्ति हो, यदि उनका नाम लेने मे जी लगे तो फिर प्रयत्न करके इन्द्रियों का संयम नही करना पड़ता। रिपु आप ही आप वशीभूत हो जाते है।

"यदि किसी को पुत्र का शोक हो, तो क्या उस दिन वह किसी से लडाई कर सकता है?— या न्योते मे खाने के लिए जा सकता है? वह क्या लोगो के सामने अहकार कर सकता है या सुख-सम्भोग कर सकता है?

"कीड़े अगर एक बार उजाला देख ले तो क्या फिर वे कभी अँधेरे मे रह सकते है?"

डाक्टर– (सहास्य)– चाहे जल जायँ, फिर भी उजाला नहीं

छोडेगे ।

श्रीरामकृष्ण– नही जी, भक्त कीडे की तरह जलकर नहीं मरते । भक्त जिस उजाले को देखकर उसके पीछे दौड़ते है, वह मणि का उजाला है। मणि का उजाला वहुत उज्ज्वल तो है, परन्तु स्निग्ध और शीतल है। इस उजाले से देह नही जलती। इससे शान्ति और आनन्द होता है ।

"विचार-मार्ग से——ज्ञानयोग के मार्ग से भी वे मिलते है; परन्तु यह पथ बडा कठिन है। मै न शरीर हूं, न मन, न वुद्धि, मन मे न रोग है, न शोक, न अशान्ति, मै सच्चिदानन्दस्वरूप हूॅ, मै सुख और दु:ख से परे हूँ, मैं इन्द्रियो के वश मे नही हूँ—इस तरह की वातें मुख से कहना वहुत सीधा है, परन्तु कार्य मे इन्हे परिणत करना या इनकी धारणा करना वहुत कठिन है। कॉटे से हाथ छिदा जा रहा है, धर धर खून गिर रहा है, परन्तु फिर भी यह कहे जा रहा है कि 'कहॉ हाथ मे कॉटा चुभा ? मैं तो बहुत अच्छी तरह हूँ।' ये सब वाते शोभा नही देती। पहले उस कॉटे को ज्ञानाग्नि मे जलाना होगा, नही ?

"बहुतेरे यह सोचते है कि बिना पुस्तकें पढ़े ज्ञान नही होता, विद्या नही होती; परन्तु पढने की अपेक्षा सुनना अधिक अच्छा है और सुनने की अपेक्षा देखना अच्छा है। वाराणसी के सम्बन्ध मे पढने या सुनने तथा दर्शन करने मे वडा अन्तर है ।

"जो लोग खुद शतरंज खेलते है, वे खुद चाल उतनी नही समझते, परन्तु जो लोग खेलते नही और तटस्थ रहकर चाल बतला देते है, उनकी चाल खेलनेवालो की चाल से वहुत अंशो मे ठीक होती है । संसारी लोग सोचते है, हम वड़े बुद्धिमान है, परन्तु वे विषयासक्त है, वे खुद खेल रहे है । अपनी चाल स्वयं

नहीं समझ सकते; परन्तु संसार-त्यागी साधु-महात्मा विषयों से अनासक्त है, वे संसारियो से बुद्धिमान है। खुद नहीं खेलते, इसीलिए चाल अच्छी बतला सकते है।"

डाक्टर– (भक्तो से)–पुस्तक पढ़ने से इनको (श्रीरामकृष्ण को) इतना ज्ञान न होता। फैरडे (एक वैज्ञानिक) खुद प्रकृति का दर्शन किया करता था, इसीलिए वह इस तरह के वैज्ञानिक सत्यो का आविष्कार कर सका। किताबी ज्ञान के होने पर इतना न हो सकता था। गणित के नियम मस्तिष्क को उलझन मे डाल देते है, मौलिक आविष्कार के रास्ते मे वे विघ्न ला खड़ा कर देते है।

श्रीरामकृष्ण– (डाक्टर से)– जब पंचवटी मे जमीन पर लोटता हुआ मैं माँ को पुकारा करता था तब मैंने माँ से कहा था, 'माँ, मुझे वह सब दिखा दो जो कर्मियों ने कर्म के द्वारा पाया है, योगियो ने योग के द्वारा और ज्ञानियो के ज्ञान के द्वारा।' और भी बहुतसी बाते है, उनके सम्बन्ध मे अब क्या कहूँ ?

"अहा! कैसी अवस्था बीत गयी है! नीद बिलकुल चली गयी थी!" यह कहकर श्रीरामकृष्णदेव गाने लगे— 'नींद टूट गयी है, अब मैं कैसे सो सकता हूँ ? योग और याग मे जाग रहा हूँ . . . . .।'

"मैंने तो पुस्तक एक भी नही पढी! परन्तु देखो, माता का नाम लेता हूँ, इसलिए सब लोग मुझे मानते है। शम्भु मल्लिक ने मुझसे कहा था, 'न ढाल है, न तलवार, और शान्तिराम सिंह बने है।'" (सब हँसते है)

श्रीयुत गिरीश घोष के बुद्धदेव-चरित के अभिनय की चर्चा होने लगी। उन्होने डाक्टर को निमन्त्रण देकर वह अभिनय

दिखलाया था। डाक्टर को अभिनय देखकर वड़ी प्रसन्नता हुई थी।

डाक्टर– (गिरीश से)– तुम वड़े वुरे आदमी हो, अव मुझे रोज थिएटर देखने के लिए जाना होगा!

श्रीरामकृष्ण– (मास्टर से)– क्या कहता है? मै नही समझा।

मास्टर– थिएटर उन्हे वहुत अच्छा लगा है।

(३)

अवतार तथा जीव

श्रीरामकृष्ण– (ईशान के प्रति)– तुम कुछ कहो; यह (डाक्टर) अवतार नही मान रहा है।

ईशान– जी, अव क्या विचार करूँ? विचार अव नही सुहाता।

श्रीरामकृष्ण– (विरक्ति से)– क्यो? यथार्थ वात भी नहीं कहोगे?

ईशान– (डाक्टर से)– अहकार के कारण हम लोगो में विश्वास कम है। काकभुपुण्डि ने श्रीरामचन्द्रजी को पहले अवतार नहीं माना था। अन्त मे जव चन्द्रलोक, देवलोक और कैलाश में उसने भ्रमण करके देखा कि राम के हाथ से उसका किसी प्रकार निस्तार ही नही हो रहा है, तव खुद वह राम की शरण मे आया। राम उसे पकडकर निगल गये। भुषुण्डि ने तव देखा कि वह अपने पेड पर ही बैठा हुआ है। उसका अहकार जव चूर्ण हो गया तव उसने समझा कि राम देखने मे तो मनुष्य की तरह है, परन्तु ब्रह्माण्ड उनके उदर मे समाया हुआ है। उन्ही के पेट मे आकाश, चन्द्र, सूर्य, नक्षत्र, समुद्र, पर्वत, जीव-जन्तु, पेड़-पौधे आदि है।

श्रीरामकृष्ण– (डाक्टर से)– इतना समझना ही मुश्किल है

कि वे ही स्वराट् है और वे ही विराट् हैं। जिनकी नित्यता है, उन्ही की लीला भी है। 'वे आदमी नही हो सकते' यह वात क्या हम अपनी क्षुद्र वुद्धि द्वारा कह सकते है? हमारी क्षुद्र वुद्धि मे क्या इन सव वातों की धारणा हो सकती है? एक सेर भर के लोटे मे क्या चार सेर दूध समा सकता है?

"इसीलिए जिन साधु और महात्माओ ने ईश्वर को प्राप्त कर लिया है उनकी वात पर विश्वास करना चाहिए। साधु-महात्मा ईश्वर की ही चिन्ता लेकर रहते है, जैसे वकील मुकदमे की चिन्ता लेकर। क्या काकभुषुण्डि की वात पर तुम्हें विश्वास होता है?"

डाक्टर– जितना अच्छा है, उतने पर मैंने विश्वास कर लिया। पकड मे आ जाने से ही हुआ, फिर कोई शिकायत नही रहती; परन्तु राम को कैसे हम अवतार माने? पहले वालि का वध देखो। छिपकर चोर की तरह तीर चलाकर उसे मारा। यह तो मनुष्य का काम है, ईश्वर का कैसे कहा जाय?

गिरीश घोष– महाशय, यह काम ईश्वर ही कर सकते है।

डाक्टर– फिर देखो, सीता का परित्याग।

गिरीश घोप– महाशय, यह काम भी ईश्वर ही कर सकते है, आदमी नही।

ईशान– (डाक्टर से)– आप अवतार क्यो नही मानते? अभी तो आपने कहा, जिन्होने नाना रूपो की सृष्टि की है वे साकार है, जिन्होने मन की सृष्टि की है वे निराकार है। अभी अभी तो आपने कहा, ईश्वर के लिए सव कुछ सम्भव है।

श्रीरामकृष्ण– (हंसते हुए)– ईश्वर अवतार ले सकते है, यह वात इनके Science (विज्ञान) मे नही जो है, फिर भला कैसे

विश्वास हो ? (सब हंसते है)

"एक कहानी सुनो। किसी ने आकर कहा, 'अरे, उस टोले मे मैं देखकर आ रहा हूँ--- अमुक का घर धँसकर वैठ गया है!' जिससे उसने यह बात कही, वह अंग्रेजी पढा हुआ था। उसने कहा, 'ठहरो, जरा अखवार देख लूँ।' अखवार उलटकर उसने देखा, वहाँ कही कुछ न था। तव उसने कहा, 'चलो जी, तुम्हारी बात का हमे विश्वास नही। कहाँ, घर के धँसकर वैठ जाने की बात अखबार में तो नही लिखी है ? यह सब झूठ खवर है!' " (सब हँसे)

गिरीश-- (डाक्टर से)-- आपको कृष्ण को तो अवतार मानना ही होगा। आपको मै उन्हे आदमी नहीं मानने दूँगा। कहिये, Demon or God (शैतान है या ईश्वर) ?

श्रीरामकृष्ण-- सरल हुए विना जल्दी किसी को ईश्वर पर विश्वास नही होता, विपय-बुद्धि से ईश्वर बहुत दूर है। विषय-बुद्धि के रहते अनेक प्रकार के संशय आकर उपस्थित हो जाते है। और अनेक तरह के अहंकार आ जाते है, पाण्डित्य का अहकार, धन का अहकार, आदि आदि। परन्तु ये (डाक्टर) सरल है।

गिरीश-- (डाक्टर से)-- महाशय, आप क्या कहते है ? टेढो को क्या कभी ज्ञान हो सकता है ?

डाक्टर-- राम कहो, ऐसा भी कभी हो सकता है ?

श्रीरामकृष्ण-- केशव सेन कितना सरल था! एक दिन वहाँ (दक्षिणेश्वर कालीमन्दिर) गया था। अतिथिशाला देखकर दिन के चार बजे उसने पूछा, 'क्यो जी, अतिथि और कंगालो को कव भोजन दिया जायगा ?' विश्वास जितना वढेगा, ज्ञान भी उतना ही बढता जायगा। जो गौ चुन-चुनकर घास चरती है उसकी दूध

की धार खूब नही फूटती, और जो गौ लता-पत्ता, घास-फूस, चोकर-भूसा आदि सव कुछ पेट मे भर लेती है, उसकी धार नहीं टूटती--घर्र-घर्र खूव दूध देती है ! (सव हंसते है)

"वालक की तरह जव तक विश्वास नहीं होता, तब तक ईश्वर नही मिलते। माता ने कह दिया है--वह तेरा दादा है, बस वालक को सोलहो आने विश्वास हो गया कि वह मेरा दादा है। माता ने कह दिया--उस कमरे मे 'हौआ' रहता है, वालक सोलहो आने विश्वास करता है कि सचमुच उस कमरे मे 'हौआ' रहता है। इस तरह वालक-जैसा विश्वास देखकर ही ईश्वर को दया उत्पन्न होती है। ससार-बुद्धि से वे नही मिलते।"

डाक्टर- (भक्तो से)- जो कुछ सामने आया वही खाकर गौ का दूध वनना अच्छी वात नही। मेरे एक गौ थी, उसके आगे इसी तरह सव कुछ डाल दिया जाता था। अन्त मे मै सख्त बीमार हो गया। तव सोचा कि इसका कारण क्या है। वड़ी ढूँढ-तलाश के वाद पता चला कि गौ कितनी ही ऐसी-वैसी चीजें खा गयी थी। तव वड़ी आफत हुई, मुझे लखनऊ जाना पड़ा। अन्त तक वारह हजार रुपयों पर पानी फिर गया ! (सव लोग वड़े जोर से हँसे)

"किससे क्या हो जाता है, कुछ कहा नही जाता। पाकापाड़ा के वावुओं के यहाँ सात साल की एक लड़की बीमार पड़ी। उसे कूकर-खाँसी आती थी। मै देखने के लिए गया। बीमारी के कारण का पता मुझे किसी तरह नहीं मिल रहा था। अन्त में पता चला, वह गधी भीग गयी थी जिसका दूध वह लड़की पीती थी !" (सव हँसते है)

श्रीरामकृष्ण- कहते क्या हो ? इमली के पेड़ के नीचे से मेरी

गाड़ी निकल गयी थी, इससे मेरा हाजमा बिगड़ गया था! (सब हँसे)

डाक्टर– (हँसते हँसते)–जहाज के कप्तान को बड़े जोर से सिर-दर्द हो रहा था। तब डाक्टरों ने सलाह करके जहाज को दवा (ब्लिस्टर) लगा दी। (सब हँसते हैं)

साधु-संग तथा त्याग

श्रीरामकृष्ण–(डाक्टर से)–साधु-संग की सदैव आवश्यकता है। रोग लगा ही हुआ है। साधुओं के उपदेश के अनुसार काम करना चाहिए। केवल सुनने से क्या होगा? दवा का सेवन करना होगा और भोजन का भी परहेज रखना होगा। उस समय पथ्य आवश्यक है।

डाक्टर–पथ्य से ही बीमारी अच्छी होती है।

श्रीरामकृष्ण– वैद्य तीन तरह के होते है, उत्तम, मध्यम और अधम। जो वैद्य नाड़ी देखकर, 'दवा खाते रहना' कहकर चला जाता है, वह अधम वैद्य है,— रोगी ने दवा का सेवन किया या नही, इसकी खबर वह नही रखता। और जो वैद्य रोगी को दवा खाने के लिए बहुत तरह से समझाता है, मीठी बातों द्वारा कहता है—'अजी, दवा नही खाओगे तो भला अच्छे कैसे होगे? भलेमानस, मै खुद दवा पीसकर देता हूँ, लो खाओ' वह मध्यम वैद्य है। और जो वैद्य रोगी को किसी तरह दवा न खाते देखकर छाती पर घुटना रखकर जबरदस्ती दवा खिलाता है, वह उत्तम वैद्य है।

डाक्टर–दवा ऐसी भी होती है जिससे छाती पर घुटना रखने की जरूरत नहीं होती, जैसे होमियोपैथिक।

श्रीरामकृष्ण– उत्तम वैद्य अगर छाती पर घुटना रख भी दे

तो कोई भय की बात नही।

"वैद्य की तरह आचार्य भी तीन प्रकार के है। जो धर्मोपदेश देकर शिष्यों की फिर कोई खबर नही लेते, वे अधम आचार्य है। जो शिष्य के कल्याण के लिए बार बार उसे समझाते है, जिससे वह उपदेशों की धारणा कर सके, बहुत कुछ निवेदन और प्रार्थना करते है, प्यार दिखलाते है, वे मध्यम आचार्य है। और शिष्यो को किसी तरह अपनी बात न मानते हुए देखकर कोई कोई आचार्य जबरदस्ती उनसे काम लेते हैं, वे उत्तम श्रेणी के आचार्य है।

(डाक्टर से) "सन्यासी के लिए आवश्यक है कामिनी और कांचन का त्याग करना। सन्यासी को स्त्रियो का चित्र भी न देखना चाहिए। स्त्री कैसी है, जानते हो?—जैसा इमली का अचार। उसकी याद ही से लार टपक पड़ती है। उसे सामने नही लाना पडता।

"परन्तु यह आप लोगों के लिए नही—यह संन्यासियो के लिए है। आप लोग जहाँ तक हो सके, स्त्री के साथ अनासक्त होकर रहियें—कभी कभी निर्जन मे ईश्वर का ध्यान किया कीजिये। वहाॅ वे (स्त्रियाॅ) न रहे। ईश्वर पर विश्वास और भक्ति होने पर, बहुत कुछ अनासक्त होकर रह सकोगे। दो-एक बच्चे हो जाने पर स्त्री और पुरुप मे भाई-बहन जैसा व्यवहार रहना चाहिए, और ईश्वर से प्रार्थना करते रहना चाहिए जिससे इन्द्रिय-सुख की ओर मन न जाय—लड़के-बच्चे और न हों।"

गिरीश—(सहास्य, डाक्टर से)—आप तीन-चार घण्टे से यहाॅ है. रोगियो की चिकित्सा के लिए न जाइयेगा?

डाक्टर—कहाॅ रही डाक्टरी और कहाँ रहे रोगी! ऐसे परमहंस से पाला पड़ा है कि मेरा तो सर्वस्व ही स्वाहा

हुआ ! (सब हँसे)

श्रीरामकृष्ण—देखो, कर्मनाशा नाम की एक नदी है। उस नदी मे डुबकी लगाना एक महाविपत्ति है। इससे कर्मो का नाश हो जाता है! फिर वह मनुष्य कोई काम नही कर सकता। (डाक्टर आदि सब हंसते है)

डाक्टर— (मास्टर, गिरीश तथा दूसरे भक्तों से)— मित्रो, तुम मुझे अपने मे से ही एक समझो— यह बात मै डाक्टर की हैसियत से नहीं कह रहा हूं; परन्तु यदि तुम मुझे अपना समझो तो मैं तुम्हारा ही हूं।

श्रीरामकृष्ण— (डाक्टर से)— एक है अहैतुकी भक्ति। यह अगर हो तो बहुत अच्छा है। यह अहैतुकी भक्ति प्रह्लाद मे थी। उस तरह का भक्त कहता है, 'हे ईश्वर, मै धन-मान, देह-सुख, यह कुछ नही चाहता। ऐसा करो कि तुम्हारे पादपद्मों मे मेरी शुद्धा भक्ति हो।'

डाक्टर— हॉ, कालीतले मे लोगों को प्रणाम करते हुए मैंने देखा है; उनके भीतर कामना ही कामना रहती है—कही मेरी नौकरी लगा दो, कही मेरा रोग अच्छा कर दो, यही सब।

(श्रीरामकृष्ण से) "आपको जो बीमारी है, इससे लोगों से बातचीत करना बन्द कर देना होगा। हॉ, जब मै जाऊं, तब मेरे साथ बातचीत अवश्य कीजिये !" (सब हंसते है)

श्रीरामकृष्ण— यह बीमारी अच्छी कर दो; उनका नाम-गुण-कीर्तन नही कर पाता हूं।

डाक्टर— ध्यान करने ही से उद्देश्य पूरा होता है।

श्रीरामकृष्ण— यह कैसी बात ? मैं एक ही ढर्रे पर क्यों चलूं ? मै कभी पूजा करता हूं, कभी जप, कभी ध्यान, कभी उनका नाम

लिया करता हूँ और कभी उनके गुण गा-गाकर नाचता हूँ।

डाक्टर– मै भी एक ढर्रे का आदमी नही हूँ।

श्रीरामकृष्ण– तुम्हारा लड़का, अमृत, अवतार नही मानता। परन्तु इसमे कोई दोष नही। ईश्वर को निराकार मानकर अगर उनमे विश्वास रहे तो भी वे मिलते है। और साकार मानकर अगर उनमे विश्वास हो तो भी वे मिलते है। उनमे विश्वास का रहना और उनकी शरण मे जाना ये दोनो बातें आवश्यक है। आदमी तो अज्ञानी है, उससे भूल हो जाती है। एक सेर भर के लोटे मे क्या कभी चार सेर दूध समा सकता है? परन्तु चाहे जिस मार्ग मे रहो, व्याकुल होकर उन्हे पुकारना चाहिए। वे अन्तर्यामी है—अन्तर की पुकार वे सुनेगे ही। व्याकुल होकर चाहे साकार-वादी के मार्ग से जाओ, चाहे निराकारवादी के मार्ग से, उन्हें ही पाओगे।

"मिश्री की रोटी चाहे सीधी तरह से खाओ या टेढी करके, मीठी जरूर लगेगी। तुम्हारा लड़का अमृत बड़ा अच्छा है।"

डाक्टर– वह आपका ही चेला है।

श्रीरामकृष्ण– (हँसकर)– कोई साला मेरा चेला-वेला नहीं है। मै खुद सब का चेला हूँ। सब ईश्वर के बच्चे है, ईश्वर के दास है—मै भी ईश्वर का बच्चा हूँ, ईश्वर का दास हूँ।

"चन्दा मामा सब का मामा है।" (सब हँसते है)

परिच्छेद १९

श्रीरामकृष्ण तथा डा. सरकार

(१)

पूर्वकथा

श्रीरामकृष्ण चिकित्सा के लिए श्यामपुकुरवाले मकान मे भक्तों के साथ रहते है। आज शरद पूर्णिमा है, शुक्रवार, २३ अक्टूबर १८८५। दिन के दस वजे का समय होगा। श्रीरामकृष्ण मास्टर के साथ वाचचीत कर रहे है। मास्टर उनके पैरो मे मोजा पहना रहे है।

श्रीरामकृष्ण– (सहास्य)– मफलर को काटकर पैरों मे न पहन लिया जाय? वह खूव गरम है।

मास्टर हँस रहे है।

कल बृहस्पतिवार की रात को डाक्टर सरकार के साथ वहुतसी वाते हुई थी। उनका वर्णन करते हुए श्रीरामकृष्ण हँसकर मास्टर से कह रहे है–– 'कल कैसा मैने तूँऊँ-तूँऊँ कहा!'

कल श्रीरामकृष्ण ने कहा था, "त्रिताप की ज्वाला मे जीव झुलस रहे है, फिर भी कहते है–– 'हम वड़े मजे मे है।' हाथ में काँटा चुभ गया है, धर-धर खून वह रहा है, फिर भी कहते हैं, 'हमारे हाथ मे कही कुछ नही हुआ।' ज्ञानाग्नि मे इस काँटे को जलाना होगा।"

इन वातो को याद कर छोटे नरेन्द्र कह रहे है–– "कल के टेढ़े काँटेवाले की वात वड़ी अच्छी थी। ज्ञानाग्नि मे जला देना।"

श्रीरामकृष्ण– उन सव अवस्थाओ को मै खुद भोग चुका हूँ।

"कुटीर के पीछे से जाते हुए जान पड़ा कि देह मे मानो

होमाग्नि जल उठी !

"पद्मलोचन ने कहा था, 'सभा करके मै तुम्हारी अवस्था का हाल लोगो से कहूँगा।' परन्तु इसके बाद उसकी मृत्यु हो गयी।"

ग्यारह बजे के लगभग श्रीरामकृष्ण का सवाद लेकर डाक्टर सरकार के यहाँ मणि गये। हाल सुनकर डाक्टर उन्ही के सम्बन्ध मे वातचीत करने लगे और उनका हाल सुनने के लिए उत्सुकता प्रकट करने लगे।

डाक्टर– (सहास्य)–मैने कल कैसा कहा, 'तूँऊँ-तूँऊँ' कहने के लिए धुनिये के हाथ मे जाना पडता है !

मणि– जी हाँ, उस तरह के गुरु के हाथ मे बिना पड़े अहकार दूर नही होता।

"कल भक्तिवाली बात कैसी रही ! भक्ति स्त्री है, वह अन्तःपुर तक जा सकती है।"

डाक्टर–हाँ, वह बड़ी अच्छी बात है। परन्तु इसलिए कही ज्ञान थोड़े ही छोड़ दिया जा सकता है !

मणि–श्रीरामकृष्णदेव यह कहते भी तो नही है। वे ज्ञान और भक्ति दोनों लेते है,—साकार और निराकार। वे कहते है, 'भक्ति की शीतलता से जल का कुछ अश वर्फ वना, फिर ज्ञान-सूर्य के उगने पर वह वर्फ गल गया, अर्थात् भक्तियोग से साकार और ज्ञानयोग से निराकार।'

"और आपने देखा है, ईश्वर को वे इतना समीप देखते है कि उनसे वातचीत भी करते है। छोटे वच्चे की तरह कहते है—'माँ, दर्द वहुत होता है।'

"और उनका Observation (दर्शन) भी कितना अद्भुत है ! म्यूजियम मे उन्होने लकड़ी तथा जानवरों को देखा था जो

फॉसिल (पत्थर) हो गये है। वस वही उन्हे साधु-संग की उपमा मिल गयी। जिस तरह पानी और कीच के पास रहते हुए लकडी आदि पत्थर हो गये है, उसी तरह साधु के पास रहते हुए आदमी साधु वन जाता है।"

डाक्टर– ईशानवावू कल अवतार-अवतार कर रहे थे। अवतार कौनसी वला है—आदमी को ईश्वर कहना ?

मणि– उन लोगों का जैसा विश्वास हो, इस पर तर्कवितर्क क्यों ?

डाक्टर– हाँ, क्या जरूरत ?

मणि– और उस वात से कैसा हँसाया उन्होने ! —एक आदमी ने देखा था कि मकान धँस गया है, परन्तु अखवार मे वह वात लिखी नही थी, अतएव उस पर विश्वास कैसे किया जाता !

डाक्टर चुप है, क्योंकि श्रीरामकृष्ण ने कहा था, 'तुम्हारे Science (विज्ञान) मे अवतार की वात नही है, अतएव तुम्हारी दृष्टि से अवतार नही हो सकता !'

दोपहर का समय है। डाक्टर मणि को साथ लेकर गाड़ी पर वैठे। दूसरे रोगियों को देखकर अन्त मे श्रीरामकृष्ण को देखने जायेंगे।

डाक्टर उस दिन गिरीश का निमन्त्रण पाकर 'वुद्धलीला' अभिनय देखने गये थे। वे गाड़ी में वैठे हुए मणि से कह रहे है, 'वुद्ध को दया का अवतार कहना अच्छा था;—विष्णु का अवतार क्यो कहा ?'

डाक्टर ने मणि को हेदुए के चौराहे पर उतार दिया।

(२)

श्रीरामकृष्ण की परमहंस अवस्था

दिन के तीन बजे का समय है। श्रीरामकृष्ण के पास दो-एक भक्त बैठे हुए है। बालक की तरह अधीर होकर श्रीरामकृष्ण बार बार पूछ रहे है, 'डाक्टर कब आयेगा ? क्या बजा है ?' आज सन्ध्या के बाद डाक्टर आनेवाले है। एकाएक श्रीरामकृष्ण की बालक-जैसी अवस्था हो गयी,— तकिया गोद मे लेकर वात्सल्य-रस से भरकर बच्चे को जैसे दूध पिला रहे हो। भावावेश मे है, बालक की तरह हंस रहे है, और एक खास ढंग से धोती पहन रहे है।

मणि आदि आश्चय में आकर देख रहे है।

कुछ देर बाद भाव का उपशम हुआ। श्रीरामकृष्ण के भोजन का समय आ गया। उन्होंने थोड़ी सूजी की खीर खायी।

मणि को एकान्त मे बहुत ही गुप्त बाते बतला रहे है।

श्रीरामकृष्ण– (मणि से, एकान्त मे)– अब तक भावावस्था में मै क्या देख रहा था, जानते हो ?— सिऊड़ के रास्ते मे तीन-चार कोस का एक मैदान है, वहाँ मै अकेला हूँ। बड़ के नीचे मैंने जो १५-१६ साल के लड़के की तरह एक परमहंस देखा था, फिर ठीक उसी तरह देखा। चारों ओर आनन्द का कुहरा-सा छाया है— उसी के भीतर से १३-१४ साल का एक लड़का निकला, केवल उसका मुँह दीख पडता था। पूर्ण की तरह का था। हम दोनो ही दिगम्बर !— फिर आनन्दपूर्वक मैदान मे दोनों ही दौडने और खेलने लगे। दौडने से पूर्ण को प्यास लगी। एक पात्र मे उसने पानी पिया, पानी पीकर मुझे देने के लिए आया। मैंने कहा, 'भाई, तेरा जूठा पानी तो मै न पी सकूँगा।' तब वह हंसते हुए गिलास धोकर मेरे लिए पानी ले आया।

श्रीरामकृष्ण समाधिमग्न है। कुछ देर बाद प्राकृत अवस्था मे आकर मणि के साथ बातचीत कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण– अवस्था फिर बदल रही है। अब मै प्रसाद नहीं ले सकता। सत्य और मिथ्या एक हुए जा रहे है!—फिर क्या देखा, जानते हो?—ईश्वरी रूप! भगवती मूर्ति!—पेट के भीतर बच्चा है—उसे निकालकर फिर निगल रही है!—भीतर बच्चे का जितना अश जा रहा है, उतना बिलकुल शून्य हुआ जा रहा है। मुझे दिखला रही थी कि सब शून्य है।

"मानो कह रही है, देख, तू भानुमती का खेल देख!"

मणि श्रीरामकृष्ण की बात सोच रहे है, 'बाजीगर ही सत्य है और सब मिथ्या है।'

श्रीरामकृष्ण– उस समय पूर्ण पर मैने आकर्षण का प्रयोग किया, परन्तु क्यो कुछ न हुआ? उससे विश्वास घटा जा रहा है

मणि– ये तो सब सिद्धियाँ है।

श्रीरामकृष्ण– निरी सिद्धि!

मणि– उस दिन अधर सेन के यहाँ से गाडी पर हम लोग आपके साथ जब दक्षिणेश्वर जा रहे थे, तब बोतल फूट गयी थी। एक ने कहा, 'आप बतलाइये, इससे क्या हानि होगी?' आपने कहा, 'मुझे क्या गरज जो यह सब बतलाऊँ?—यह सब तो सिद्धि का काम है।'

श्रीरामकृष्ण– हाँ, लोग बीमार बच्चों को जमीन पर लिटा देते है और फिर कुछ लोग भगवान का नाम लेकर मन्त्र जपने लगते है जिससे वह अच्छा हो जाय। इसी प्रकार लोग अन्य बीमारियाँ भी मन्तर-जन्तर से अच्छी कर देते है। ये सब विभूतियाँ है। जिनका स्थान बहुत ही निम्न है वे ही लोग रोग अच्छा करने

के लिए ईश्वर को पुकारते है।

(३)

श्रीमुखकथित चरितामृत

शाम हो गयी। श्रीरामकृष्ण चारपाई पर बैठे हुए जगन्माता की चिन्ता करते हुए उनका नाम ले रहे है। कई भक्त चुपचाप उनके पास बैठे हुए है।

कुछ देर बाद डाक्टर सरकार आये। कमरे मे लाटू, शशि, शरद, छोटे नरेन्द्र, पल्टू, भूपति, गिरीश आदि बहुतसे भक्त बैठे हुए है। गिरीश के साथ थिएटर के श्रीयुत रामतारण भी आये हैं—ये गाना गायेंगे।

डाक्टर– (श्रीरामकृष्ण से)–कल रात तीन बजे तुम्हारे लिए मुझे बड़ी चिन्ता हुई थी। पानी बरसने लगा, तब मैंने सोचा, 'परमात्मा जाने, तुम्हारे कमरे की दरवाजे-खिड़कियाँ खुली है या बन्द कर दी गयी है।'

डाक्टर का स्नेह देखकर श्रीरामकृष्ण प्रसन्न हुए। कहा—"कहते क्या हो! जब तक देह है, तब तक उसके लिए प्रयत्न करना पड़ता है।

"परन्तु देख रहा हूँ, यह एक अलग बात है। कामिनी और काचन से प्यार अगर बिलकुल दूर हो जाय, तो ठीक ठीक समझ मे आ जाता है कि देह अलग है और आत्मा अलग। नारियल का सब पानी जब सूख जाता है तब खोपड़ा अलग और गोला अलग हो जाता है। तब नारियल को हिलाने से ही यह समझ मे आ जाता है कि भीतर गोला खोपडे से छूटकर खडखड़ा रहा है,—जैसे म्यान और तलवार, म्यान अलग है और तलवार अलग।

"इसीलिए देह की बीमारी के लिए उनसे अधिक कुछ कहा भी

नही जाता।"

गिरीश— (भक्तो के प्रति)—पण्डित शशधर ने इनसे कहा था, 'आप समाधि की अवस्था में शरीर की ओर मन को ले आया करें तो बीमारी अच्छी हो जाय।' और इन्हे भाव मे ऐसा दिखा कि शरीर केवल हाड़-माँस का एक ढेर है।

श्रीरामकृष्ण— बहुत दिन हुए, मुझे उस समय सख्त बीमारी थी। कालीमन्दिर मे मै बैठा हुआ था। माता के पास प्रार्थना करने की इच्छा हुई। पर ठीक ठीक खुद न कह सका। कहा, 'माँ, हृदय मुझसे कहता है कि मै तुम्हारे पास अपनी बीमारी की बात कहूँ।' पर और अधिक मै न कह सका। कहते ही कहते सोसायटी के अजायबघर (Asiatic Society's Museum) की याद आ गयी। वहाँ का तारो से बँधा हुआ मनुष्य का अस्थिपंजर आँखों के सामने आ गया। झट मैने कहा, 'माँ, मै केवल यही चाहता हूँ कि तुम्हारा नाम-गुण गाता रहूँ। इतने के लिए अस्थिपजर को तारों से कसे भर रखना, उस अजायबघर के अस्थिपंजर की तरह।'

"सिद्धि की प्रार्थना मुझसे होती ही नही। पहले-पहल हृदय ने कहा था—मै हृदय के 'अण्डर' (आधीन) था न—'माँ से कुछ विभूति माँगो।' मै कालीमन्दिर मे प्रार्थना करने के लिए गया। जाकर देखा एक अधेड विधवा, कोई ३०-३५ वर्ष की होगी, तमाम मल से सनी हुई है। तब मुझे यह स्पष्ट हुआ कि सिद्धियाँ इस मल के सदृश ही है। तब तो हृदय पर मुझे बड़ा क्रोध आया,— क्यो उसने मुझसे कहा कि मै सिद्धियों के लिए प्रार्थना करूँ?"

रामतारण का गाना हो रहा है। गिरीश घोष के 'बुद्धदेव'

नाटक का एक गीत वे गा रहे है।

(भावार्थ) "मेरी यह वीणा मुझे बड़ी प्रिय है। उसके तार बड़े यत्न से गूँथे हुए है। उस वीणा को जो यत्नपूर्वक रखना जानता है वही उसे बजाता है, और तब उससे अनवरत सुधा-धारा बह चलती है। ताल-मान के साथ उसके तारों को कसने पर माधुरी शत धाराओं से होकर प्रवाहित होने लगती है। तारों के ढीले रहने पर वह नही बजती, और अधिक खीचने से उसके कोमल तार टूट जाते है।"

डाक्टर– (गिरीश से)–क्या यह सब गान मौलिक है ?

गिरीश– नही, ये एड्विन आर्नल्ड के भाव है।

रामतारण गा रहे है, 'बुद्धदेव' नाटक का एक गीत .

"जुड़ाना चाहता हूँ, परन्तु कहाँ जुड़ाऊँ ? न जाने कहाँ से आकर कहाँ बहा जा रहा हूँ ! बार बार आता हूँ, न जाने कितना हँसता और कितना रोता हूँ ! सदा मुझे यही सोच लगा रहता है कि मै कहाँ जा रहा हूँ।...ऐ जागनेवाले, मुझे भी जगा दो। हाय ! कब तक और यह स्वप्न चलता रहेगा ? क्या तुम सचमुच जाग रहे हो, यदि नहीं तो अब अधिक मत सोओ। ऐ सोनेवाले ! नीद से उठो, और कही फिर मत सो जाना। यह घोर निविड़ अन्धकार बड़ा दारुण है, बड़ा कष्टदायी है। इस अन्धकार का नाश करो, हे प्रकाश ! तुम्हारे बिना और कोई उपाय ही नही है—तुम्हारे श्रीचरणों में मै शरण चाहता हूँ !"

यह गीत सुनते ही सुनते श्रीरामकृष्ण को भावावेश हो रहा है।

गाना– "सन् सन् सन् चल री आँधी।"

गाने के समाप्त होने पर श्रीरामकृष्ण ने कहा, "यह क्या किया ? खीर खिलाकर फिर नीम की तरकारी ?

"इन्होंने ज्योंही गाया 'करो तमोनाश' त्योंही मैंने देखा सूर्य ! —— उदय होने के साथ ही चारों ओर का अन्धकार दूर हो गया। और उसी के चरणों मे सव लोग शरणागत होकर गिर रहे है !"

रामतारण फिर गा रहे हैं—

गाना—दीनतारिणी, दुरितवारिणी, सत्त्वरजस्तम त्रिगुणधारिणी, सृजनपालननिधनकारिणी, सगुणा निर्गुणा सर्वस्वरूपिणी . . . . . .।

गाना– मेरा धर्म और कर्म सव तो चला गया, परन्तु मेरी श्यामापूजा शायद पूरी नही हुई ! . . . . . .

यह गीत सुनकर श्रीरामकृष्ण फिर भावाविष्ट हो गये।

गवैये ने फिर गाया, "ओ माँ, तेरे चरणों मे लाल जवा फूल किसने चढाया ? . . ."

(४)

संन्यासी तथा गृहस्थ के कर्तव्य

गाना समाप्त हो गया। भक्तों मे वहुतों को भावावेश हो गया है। सव चुपचाप वैठे है। छोटे नरेन्द्र ध्यानमग्न हो काठ के पुतले की तरह वैठे हुए है।

श्रीरामकृष्ण– (छोटे नरेन्द्र को दिखाकर, डाक्टर से)– यह वहुत ही शुद्ध है। इसमे विषय-वुद्धि छू भी नहीं गयी।

डाक्टर नरेन्द्र को देख रहे हैं। अव भी उनका ध्यान नहीं छूटा।

मनोमोहन– (डाक्टर से हँसकर)– आपके वच्चे की वात पर ये (श्रीरामकृष्ण) कहते है, 'वच्चा अगर मिल जाय तो मुझे उसके वाप की चाह नही है।'

डाक्टर– यही तो ! इसीलिए तो कहता हूँ, तुम लोग वच्चे को लेकर भूल जाते हो ! (अर्थात् मनुष्य वच्चे को— अवतार

को—लेकर, पिता को—ईश्वर को—भूल जाता है।)

श्रीरामकृष्ण—(सहास्य)—मै यह नही कहता कि मुझे बाप की कुछ भी चाह नही है।

डाक्टर—यह मै समझ गया, इस तरह दो-एक बातें बिना कहे काम कैसे चल सकेगा ?

श्रीरामकृष्ण—तुम्हारा लड़का बड़ा सरल है। शम्भु ने मुँह लाल करके कहा था, 'सरल भाव से उन्हें पुकारने पर वे अवश्य ही सुनेंगे।' मै लड़कों को इतना प्यार क्यों करता हूँ, जानते हो ? वे सब निखालिस दूध हैं—थोड़ासा गरम कर लेने से ही श्रीठाकुरजी की सेवा में लगाया जा सकता है।

"जिस दूध मे पानी मिला रहता है, उसे बडी देर तक गरम करना पडता है, बहुत लकड़ी खर्च होती है।

"बच्चे सब मानो नयी हण्डियाँ है, पात्र अच्छा है, इसलिए निश्चिन्त होकर दूध रखा जा सकता है। उन्हें ज्ञानोपदेश देने पर बहुत शीघ्र चैतन्य होता है। विषयी आदमियो को शीघ्र होश नही होता। जिस हण्डी मे दही जमाया जा चुका है, उसमे दूध रखते भय होता है कि कही दूध नष्ट न हो जाय।

"तुम्हारे लडके मे अभी विषय-बुद्धि—कामिनी-कांचन का प्रवेश नही हुआ।"

डाक्टर—बाप की कमाई उडा रहे है न ! अपने को करना पड़ता तब मै देखता कि ये अपने को सांसारिकता से कैसे अलग रख सकते थे।

श्रीरामकृष्ण—यह ठीक है। परन्तु बात यह है कि विषय-बुद्धि से वे बहुत दूर है, नही तो वे मुट्ठी मे ही है। (सरकार और डाक्टर दोकौडी से) कामिनी और काचन का त्याग आप लोगो के

लिए नही है। आप लोग मन ही मन त्याग करेंगे। गोस्वामियो से इसलिए मैंने कहा, 'तुम लोग त्याग की बात क्यो कर रहे हो ?—त्याग करने से तुम्हारा काम नही चल सकता— श्यामसुन्दर की सेवा जो है।'

"त्याग संन्यासी के लिए है। उसके लिए स्त्रियों का चित्र भी देखना निषिद्ध है। स्त्री उसके लिए विष की तरह है। कम से कम दस हाथ की दूरी पर रहना चाहिए। अगर बिलकुल न निर्वाह हो तो एक हाथ का अन्तर स्त्रियों से हमेशा रखना चाहिए। स्त्री चाहे लाख भक्त हो, परन्तु उससे अधिक बातचीत नही करनी चाहिए।

"यहाँ तक कि संन्यासी को ऐसी जगह रहना चाहिए जहाँ स्त्रियाँ बिलकुल नही या बहुत कम जाती हों।

"रुपया भी संन्यासी के लिए विषवत् है। रुपये के पास रहने से ही चिन्ताएँ, अहंकार, देह-सुख की चेष्टा, क्रोध आदि सब आ जाते है। रजोगुण की वृद्धि होती है। और रजोगुण के रहने से ही तमोगुण होता है। इसलिए संन्यासी काचन का स्पर्श नही करते। कामिनी-कांचन ईश्वर को भुला देते है।

"तुम्हें यह समझना चाहिए कि रुपये से दाल-रोटी मिलती है, पहनने के लिए वस्त्र मिलता है, रहने की जगह मिलती है, श्रीठाकुरजी की सेवा होती है और साधुओं तथा भक्तों की सेवा होती है।

"धन-सचय की चेष्टा मिथ्या है। मधुमक्खी बड़े कष्ट से छत्ता तैयार करती है, और कोई दूसरा आकर उसे तोड ले जाता है।"

डाक्टर— लोग रुपये इकाट्ठा करते है। किसके लिए ?—एक

बदमाश बच्चे के लिए ।

श्रीरामकृष्ण– लड़का ही आवारा निकला या बीबी किसी दूसरे के साथ फँस गयी–– शायद तुम्हारी ही घड़ी और चेन अपने यार को लगाने के लिए दे दे !

"परन्तु स्त्री का बिलकुल त्याग करना तुम्हारे लिए नही है। अपनी पत्नी से उपभोग करने मे दोष नही है; परन्तु लड़के-बच्चे हो जाने पर भाई-बहन की तरह रहना चाहिए।

"कामिनी और कांचन मे आसक्ति के रहने पर विद्या का अहकार, धन का अहकार, उच्च पद का अहंकार–– यह सब होता है।"

(५)

अहंकार तथा विद्या का 'मै'

श्रीरामकृष्ण– अहंकार के बिना गये ज्ञानलाभ नही होता। ऊँचे टीले पर पानी नही रुकता। नीची जमीन में ही चारों ओर का पानी सिमटकर भर जाता है।

डाक्टर– परन्तु नीची जमीन मे जो चारों ओर का पानी आता है, उसके भीतर अच्छा पानी भी रहता है और दूषित भी। पहाड़ के ऊपर भी नीची जमीन है। नैनीताल, मानसरोवर ऐसे स्थान है जहाँ आकाश का ही शुद्ध पानी रहता है।

श्रीरामकृष्ण– आकाश का ही शुद्ध पानी––यह बहुत अच्छा है !

डाक्टर– और ऊँची जगह का पानी चारों ओर काम में भी लाया जा सकता है।

श्रीरामकृष्ण –(सहास्य)– एक सिद्ध ने मन्त्र पाया था। उसने पहाड़ पर खड़े होकर चिल्लाते हुए कह दिया–– 'तुम लोग इस मन्त्र को जपकर ईश्वर-लाभ कर सकोगे।'

डाक्टर– हाँ ।

श्रीरामकृष्ण– परन्तु एक बात है, जब ईश्वर के लिए प्राण विकल होते हैं, तब यह विचार नही रहता कि यह पानी अच्छा है और यह बुरा। तब उन्हे जानने के लिए कभी भले आदमी के पास जाया जाता है, कभी बुरे आदमी के पास। उनकी कृपा होने पर गँदले पानी से कोई नुकसान नही होता। जब वे ज्ञान देते हैं, तब यह सुझा देते है कि कौन अच्छा है और कौन बुरा।

"पहाड़ के ऊपर नीची जमीन रह सकती है, परन्तु वैसी जमीन बदजात 'मै'-रूपी पहाड़ पर नहीं रहती। विद्या का 'मै,' भक्त का 'मै' यदि हो, तभी आकाश का शुद्ध पानी आकर जमता है।

"ऊँची जगह का पानी चारों ओर काम मे लगाया जा सकता है, यह ठीक है। परन्तु यह काम विद्या के 'मे'-रूपी पहाड़ से ही सम्भव है।

"उनके आदेश के बिना लोक-शिक्षा नही होती। शंकराचार्य ने ज्ञान के बाद विद्या का 'मै' रखा था— लोक-शिक्षा के लिए। उन्हें प्राप्त किये बिना ही लेक्चर! इससे आदमियों का क्या उपकार होगा?

"मै नन्दनबाग के ब्राह्मसमाज मे गया था। उपासना आदि के बाद उनके प्रचारक ने एक वेदी पर बैठकर लेक्चर दिया। उन्होंने वह लेक्चर घर पर तैयार किया था। लेक्चर वे पढ़ते जाते थे और चारों ओर देखते भी जाते थे। ध्यान करते समय वे कभी-कभी आँखें खोलकर लोगों को देखते जाते थे!

"जिसने ईश्वर के दर्शन नही किये, उसका उपदेश असर नहीं करता। एक बात अगर ठीक हुई, तो दूसरी बेसिर-पैर की निकल

जाती है।

"सामाध्यायी ने लेक्चर दिया। कहा, 'ईश्वर वाणी और मन से परे है। उनमें कोई रस नहीं है— तुम लोग अपने प्रेम और भक्तिरस से उनकी अर्चना किया करो।' देखो, जो रसस्वरूप हैं, आनन्द-स्वरूप है, उनके लिए ऐसी बाते कही जा रही थी। इस तरह के लेक्चर से क्या होगा? इसमें क्या कभी लोक-शिक्षा होती है? एक आदमी ने कहा था 'मेरे मामा के यहाँ गोशाले भर घोड़े है।' गोशाले मे घोड़ा! (सब हंसते है) इससे समझना चाहिए कि घोड़ा-वोड़ा कही कुछ भी नही है!"

डाक्टर— (सहास्य)— गौएं भी न होगी! (सब हंसते है)

जिन भक्तों को भावावेश हो गया था, उनकी प्राकृत अवस्था हो गयी है। भक्तो को देखकर डाक्टर आनन्द कर रहे है।

डाक्टर मास्टर से भक्तो का परिचय पूछ रहे है। पल्टू, छोटे, नरेन्द्र, भूपति, शरद, शशी आदि लड़कों का, एक एक करके, मास्टर ने परिचय दिया।

श्रीयुत शशी के सम्बन्ध में मास्टर ने कहा, 'ये बी. ए. की परीक्षा देगे।' डाक्टर कुछ अन्यमनस्क हो रहे थे।

श्रीरामकृष्ण— (डाक्टर से)— देखो जी, ये क्या कह रहे हैं।

डाक्टर ने शशी का परिचय सुना।

श्रीरामकृष्ण— (मास्टर को बताकर, डाक्टर से)— ये स्कूल के लड़कों को उपदेश देते है।

डाक्टर— यह मैंने सुना है।

श्रीरामकृष्ण— कितने आश्चर्य की बात है! मै मूर्ख हूं, फिर भी पढ़े-लिखे लोग यहाँ आते है। यह कितने आश्चर्य की बात है! इससे तो मानना पड़ता है कि यह ईश्वर की लीला है।

आज शरद पूर्णिमा है। रात के नौ बजे का समय होगा। डाक्टर छः बजे से बैठे हुए ये सब बाते सुन रहे है।

गिरीश– (डाक्टर से)– अच्छा महाशय, आपको ऐसा कभी होता है कि यहाँ आने की इच्छा न होते हुए भी मानो कोई शक्ति खीचकर यहाँ ले आती हो ? मुझे तो ऐसा होता है और इसीलिए आपसे भी पूछ रहा हूं।

डाक्टर–पता नही, परन्तु हृदय की बात हृदय ही जानता है। (श्रीरामकृष्ण से) और बात यह है कि यह सब कहने में लाभ ही क्या है ?

परिच्छेद २०

श्रीरामकृष्ण तथा डाक्टर सरकार

(१)

डा. सरकार तथा धर्मचर्चा

नरेन्द्र, महिमाचरण, मास्टर, डाक्टर सरकार आदि भक्तो के साथ श्रीरामकृष्ण श्यामपुकुर के दुमंजले पर कमरे मे बैठे हुए है। दिन के एक बजे का समय होगा। २४ अक्टूबर १८८५, कार्तिक नवमी।

श्रीरामकृष्ण–तुम्हारी यह (होमियोपैथिक) चिकित्सा अच्छी है।

डाक्टर– इसमे रोगी की अवस्था पुस्तक में लिखे चिह्नों के साथ मिलायी जाती है। जैसे अग्रेजी बाजा बजाने की लिपि,— वह पढी जाती है और साथ ही साथ गायी भी।

"गिरीश घोष कहाँ है ?— परन्तु रहने दो। कल का जगा हुआ होगा।"

श्रीरामकृष्ण– अच्छा, भाव की अवस्था मे भंग जैसा नशा चढ़ता है, यह क्या है ?

डाक्टर–(मास्टर से)–स्नायुओं के केन्द्र है, उनकी क्रिया वन्द हो जाती है, इसीलिए सब जड़ हो जाता है— इधर पैर लड़खड़ाते रहते है। सब शक्ति मस्तिष्क की ओर जाती है। इसी स्नायविक क्रिया से जीवन है। गरदन के पास मेडूला आब्लांगेटा (Medulla Oblongata) है, इसकी क्षति होने पर जीवन का दीपक बुझा हुआ जानो।

श्रीयुत महिमाचरण चक्रवर्ती सुषुम्ना नाड़ी के भीतर कुण्डलिनी शक्ति की बात कह रहे है— 'मेरुदण्ड के भीतर सूक्ष्म भाव

से सुषुम्ना नाम की एक नाड़ी है— इसे कोई देख नही सकता। यह महादेवजी का वाक्य है।'

डाक्टर– शिव ने मनुष्य की परीक्षा उसकी पूर्ण अवस्था में की। परन्तु युरोपियनो ने तो मनुष्य की जाँच गर्भावस्था से लेकर पूर्ण अवस्था तक सभी मे की है। इसका तुलनात्मक इतिहास समझ लेना अच्छा है। भीलो का इतिहास पढ़कर पता चला है कि काली एक भीलनी थी, वह खूब लड़ी थी! (सब हंसते है)

"तुम लोग हंसो मत। तुलनात्मक जीवशरीर विद्या (Anatomy) से कितना उपकार हुआ है, सुनो। पहले पाचनशक्ति पैदा करनेवाले रस और पित्त का भेद समझ मे नही आ रहा था। फिर क्लाड बरनार्ड ने खरगोश की यकृत आदि की परीक्षा करके देखा कि पित्त और उस रस की क्रिया में अन्तर है।

"इससे सिद्ध होता है कि छोटे छोटे प्राणियों की ओर भी हमे ध्यान देना चाहिए। केवल मनुष्य को देखने से काम न चलेगा।

"इसी तरह तुलनात्मक धर्म से भी बड़ा उपकार होता है।

"ये (श्रीरामकृष्णदेव) जो कुछ कहते हैं, हृदय पर उसका असर अधिक क्यो होता है! सब धर्म इनके देखे हुए हैं। हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, वैष्णव, शाक्त सब धर्मो को इन्होने स्वयं साधना करके देखा है। मधुमक्खी जब अनेक फूलों से मधु-संचय करती है तभी उसके छत्ते मे अच्छा मधु तैयार होता है।"

मास्टर– (डाक्टर से)– इन्होंने (महिमाचरण ने) विज्ञान का अध्ययन खूब किया है।

डाक्टर– (हंसकर)– कौनसा विज्ञान? क्या मैक्समूलर का साइन्स ऑफ रिलिजन (धर्मविज्ञान)?

महिमा– (श्रीरामकृष्ण से)– आपकी बीमारी मे डाक्टर क्या करेंगे ? जब मैने सुना, आप बीमार है, तब सोचा, डाक्टरों का आप अहंकार बढा रहे है।

श्रीरामकृष्ण– ये बड़े अच्छे डाक्टर है, और बहुत बड़े विद्वान् भी है।

महिमा– जी हाँ, वे जहाज है और हम सब डोंगे है।

विनयपूर्वक डाक्टर हाथ जोड़ रहे है।

महिमा– परन्तु वहाँ (श्रीरामकृष्ण के पास) सब बराबर है।

श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र से गाने के लिए कह रहे है। नरेन्द्र गा रहे है––

गाना– तुम्हे ही मैने अपने जीवन का ध्रुवतारा बनाया है..।

गाना– अहकार मे मत्त हो रहा हूँ, अपार वासनाएँ उठ रही है...।

गाना– तुम्हारी रचना अपार है, चमत्कारो से भरी हुई है ...।

गाना– महान् सिहासन पर बैठे हुए हे विश्वपिता, तुम अपने ही रचित छन्दो मे विश्व के महान् गीत सुन रहे हो। मर्त्य की मृत्तिका बनकर, इस क्षुद्र कण्ठ को लेकर, तुम्हारे द्वार पर मैं भी आया हुआ हूं ...।

गाना– हे राजराजेश्वर, दर्शन दो ! मै तुम्हारी करुणा का भिक्षुक हूँ, मेरी ओर कृपाकटाक्ष करो। तुम्हारे श्रीचरणों में मैं अपने इन प्राणों का उत्सर्ग कर रहा हूँ, परन्तु ये भी संसार के अनलकुण्ड मे झुलसे हुए है...।

गाना– हरिरस-मदिरा पीकर, ऐ मेरे मन-मानस, मत्त हो जाओ। पृथ्वी पर लोटते हुए उनका नाम लो और रोओ...।

श्रीरामकृष्ण– और वह गाना–– "जो कुछ है सब तू ही है।"

डाक्टर– अहा !

गाना समाप्त हो गया। डाक्टर मुग्ध हो गये। कुछ देर बाद

डाक्टर बड़े भक्तिभाव से हाथ जोड़कर श्रीरामकृष्ण से कह रहे है— तो आज आज्ञा दीजिये, कल फिर आऊँगा।

श्रीरामकृष्ण– अभी कुछ देर और ठहरो। गिरीश घोष के पास खबर भेजी गयी है।

(महिमा की ओर सकेत करके) "ये विद्वान् हैं, और ईश्वर के कीर्तन मे नाचते भी है। इनमे अहंकार छू नहीं गया। ये कोन्नगर चले गये थे, इसलिए कि हम लोग वहाँ चले गये थे। स्वाधीन है, धनवान है, किसी की नौकरी नही करते। (नरेन्द्र को दिखलाकर) यह कैसा है?"

डाक्टर– जी, बहुत अच्छे है।

श्रीरामकृष्ण– और ये—

डाक्टर– अहा!

महिमा– हिन्दुओ के दर्शन अगर न पढ़े गये तो मानो दर्शनो का पढ़ना ही अधूरा रह गया। सांख्य के चौबीस तत्त्वों को यूरोप न तो जानता है और न समझ ही सकता है।

श्रीरामकृष्ण– (सहास्य)– तुम कौन से तीन मार्गो की बात कहते हो?

महिमा– सत्‌पथ— ज्ञानमार्ग। चित्‌पथ— योगमार्ग, कर्म-मार्ग; इसमे चार आश्रमो की क्रिया, कर्तव्य आदि वर्णित है। तीसरा है आनन्दपथ— भक्ति और प्रेम का मार्ग। आपमें तीनों मार्ग है— आप तीनो मार्ग की खबर बतलाते है। (श्रीरामकृष्ण हँस रहे है।)

महिमा– मैं और क्या कहूँ? वक्ता जनक और श्रोता शुकदेव!

डाक्टर विदा हो गये।

नित्यगोपाल तथा नरेन्द्र । 'जपात् सिद्धि ।'

सन्ध्या के बाद चन्द्रोदय हुआ है । आज शनिवार, शरद पूर्णिमा का दूसरा दिन है । श्रीरामकृष्ण खड़े हुए समाधिमग्न है । नित्यगोपाल भी उनके पास भक्तिभाव से खड़े है ।

श्रीरामकृष्ण बैठे । नित्यगोपाल पैर दबा रहे है । कालीपद, देवेन्द्र आदि भक्त पास बैठे हुए है ।

श्रीरामकृष्ण– (देवेन्द्र आदि से)– मेरे मन में यह भासित हो रहा है कि नित्यगोपाल की ये अवस्थाएँ अब चली जायेगी । उसका सब मन सिमटकर मुझमे आ जायेगा— जो मेरे भीतर है, उनमे ।

"नरेन्द्र को देखते हो न, उसका सब मन सिमटकर मुझपर आ रहा है ।"

भक्तो मे बहुतेरे बिदा हो रहे है । श्रीरामकृष्ण खड़े हुए एक भक्त को जप की बाते बतला रहे है– "जप करने का अर्थ है निर्जन मे चुपचाप उनका नाम लेना । एकाग्र होकर उनका नाम-जप करते रहने से उनके रूप के भी दर्शन होते है और उनसे साक्षात्कार भी होता है । जंजीर से बंधी लकड़ी गंगा मे जैसे डुबायी हुई हो और जजीर का दूसरा छोर तट पर बंधा हुआ हो । जंजीर की एक एक कड़ी पकड़कर कुछ दूर बढकर, फिर पानी मे डुबकी मारकर, उसी प्रकार और आगे बढते हुए लोग लकड़ी को अवश्य ही छू सकते है । इसी तरह जप करते हुए मग्न हो जाने पर धीरे-धीरे ईश्वर के दर्शन होते है ।"

कालीपद– (सहास्य, भक्तो से)– हमारे ये अच्छे ठाकुर है । ——जप, ध्यान, तपस्या, कुछ करना ही नही पड़ता !

इसी समय श्रीरामकृष्ण ने एकाएक कहा– "यहाँ (गले मे)

न जाने कैसा हो रहा है।"

श्रीरामकृष्ण के गले मे दर्द हो रहा है। देवेन्द्र ने कहा, "हम इस तरह की वातों में नहीं आनेवाले।" देवेन्द्र का भाव यह है कि श्रीरामकृष्ण ने लोगों को धोखे मे डालने के लिए रोग का आश्रय लिया है।

भक्तगण विदा हो गये। रात में कुछ वालक-भक्त वारी वारी से जागकर श्रीरामकृष्ण की सेवा करेंगे। आज रात को मास्टर भी यही रहेंगे।

(२)

डाक्टर सरकार तथा मास्टर

आज रविवार है, कार्तिक, कृष्णद्वितीया, २५ अक्टूवर, १८८५। श्रीरामकृष्ण कलकत्ते के श्यामपुकुरवाले मकान में रहते हैं। गले मे पीड़ा (Cancer) है, उसी की चिकित्सा हो रही है। आजकल डाक्टर सरकार देख रहे है।

डाक्टर को श्रीरामकृष्णदेव की अवस्था की खवर देने के लिए रोज मास्टर जाया करते है। आज सुवह साढे छः वजे के समय प्रणाम करके मास्टर ने पूछा— "आप कैसे हैं?" श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं— "डाक्टर से कहना, रात के पिछले भाग में मुँह कुल्ला भर पानी से भर जाता है, खाँसी है। पूछना, नहाऊं या नहीं।"

सात वजे के वाद मास्टर डाक्टर सरकार से मिले और कुल हाल उनसे कहा। डाक्टर के वृद्ध शिक्षक तथा दो-एक मित्र वहाँ उपस्थित थे। डाक्टर ने वृद्ध शिक्षक से कहा 'महाशय, रात तीन वजे से मुझे परमहंस की चिन्ता है, नीद नही आयी, अव भी परमहंस की चिन्ता है।' (सव हंसते है)

डाक्टर के मित्र डाक्टर से कह रहे है, "महाशय, मैंने सुना है, कोई कोई उन्हें अवतार कहते हैं। आप तो रोज देखते है, आपको क्या जान पड़ता है?" डाक्टर ने कहा, "मनुष्य की दृष्टि से उनकी मै अत्यन्त भक्ति करता हूँ।"

मास्टर– (डाक्टर के मित्र से)– डाक्टर महाशय बड़ी कृपा करके उनकी चिकित्सा कर रहे हैं।

डाक्टर– कृपा करके ?

मास्टर– हम लोगो पर आप कृपा करते है, श्रीरामकृष्णदेव पर मै नही कह रहा।

डाक्टर– नही जी, ऐसा भी नही, तुम लोग नही जानते। वास्तव मे मेरा नुकसान हो रहा है, दो-तीन Call (बुलावा) रोज ही रह जाते है—जा नही पाता। उसके दूसरे दिन रोगी के यहाँ खुद जाता हूं और फीस (Fees) नहीं लेता,—खुद जाकर फीस लूं भी कैसे ?

श्री महिमाचरण चक्रवर्ती की बात चली। शनिवार को जब डाक्टर परमहंसदेव को देखने के लिए गये थे, तब चक्रवर्ती महाशय उपस्थित थे। डाक्टर को देखकर उन्होंने श्रीरामकृष्ण से कहा था, 'महाराज, डाक्टर का अहंकार बढ़ाने के लिए आपने रोग की सृष्टि की है।'

मास्टर– (डाक्टर से)– महिमा चक्रवर्ती आपके यहाँ पहले आया करते थे। आप घर मे डाक्टरी विज्ञान पर लेक्चर देते थे, वे सुनने के लिए आया करते थे।

डाक्टर– ऐसी बात ? परन्तु उस मनुष्य मे तमोगुण भी कितना है! देखा था तुमने ?—मैंने नमस्कार किया था जैसे वह तमो-गुणी ईश्वर हो। और ईश्वर के भीतर तो तीनों गुण है। उसकी

उस वात पर तुमने ध्यान दिया था ?—'आपने डाक्टरों का अहकार वढ़ाने के लिए रोग का आश्रय लिया है।'

मास्टर—महिमा चक्रवर्ती को विश्वास है कि श्रीरामकृष्णदेव अगर खुद चाहे तो वीमारी अच्छी कर सकते हैं।

डाक्टर—अजी, ऐसा भी कभी होता है ?—आप ही आप वीमारी अच्छी कर लेना ? हम लोग डाक्टर है, हम लोग तो जानते है न, कि उस वीमारी के भीतर क्या क्या है।

"हम ही जव इस तरह की वीमारी अच्छी नहीं कर सकते—तव वे तो कुछ जानते भी नही, वे किस तरह अच्छी करेंगे ? (मित्रों से) देखिये, रोग दुःसाध्य है, परन्तु इतना अवश्य है कि ये लोग उनकी सेवा भी खूव कर रहे है।"

(३)

श्रीरामकृष्ण तथा मास्टर

डाक्टर से आने के लिए कहकर मास्टर लौटे। भोजन आदि करके दिन के तीन वजे वे श्रीरामकृष्ण से मिले और डाक्टर की कुल कथा कह सुनायी। कहा, 'डाक्टर ने आज वहुतसी वातें सुनायी।'

श्रीरामकृष्ण—क्यों, क्या कहा ?

मास्टर—महाराज, कल वे यहाँ सुन गये थे कि आपने यह रोग डाक्टर का अहंकार वढाने के लिए स्वयं ही पैदा किया है।

श्रीरामकृष्ण—किसने कहा था ?

मास्टर—महिमा चक्रवर्ती ने।

श्रीरामकृष्ण—फिर ?

मास्टर—वह महिमा चक्रवर्ती को तमोगुणी ईश्वर कहने लगा। अव डाक्टर ने मान लिया है कि ईश्वर मे सत्त्व, रज, तम तीनों

गुण है। (श्रीरामकृष्णदेव का हास्य) फिर मुझसे उन्होने कहा, 'आज रात को तीन बजे मेरी नीद उचट गयी और तभी से श्रीरामकृष्णदेव का चिन्तन कर रहा हूँ।' जब मै उनसे मिला था तब आठ बजे थे, और उन्होने कहा, 'अभी भी श्रीरामकृष्ण का मै चिन्तन कर रहा हूँ।'

श्रीरामकृष्ण– देखो, तुम जानते हो, वह अग्रेजी पढा-लिखा है, उससे यह नही कहा जा सकता कि तुम मेरी चिन्ता करो। परन्तु अच्छा है, वह आप ही कर रहा है।

मास्टर– फिर उन्होने कहा, 'मैं उन्हे अवतार नही कहता, परन्तु मनुष्य समझकर उन पर मेरी सबसे अधिक भक्ति है।'

श्रीरामकृष्ण– कुछ और बात हुई है ?

मास्टर– मैने पूछा, 'आज बीमारी के लिए क्या बन्दोवस्त किया जाय ?' डाक्टर ने कहा, 'बन्दोबस्त मेरा सर होगा ! आज मुझे फिर जाना पड़ेगा और क्या !' (श्रीरामकृष्ण का हँसना)

"उन्होने इतना और कहा, 'तुम लोग नही जानते, मेरे कितने रुपयो पर पानी फिर जाता है। रोज दो-तीन जगह जाना नही हो पाता।' "

(४)

विजय आदि भक्तों के संग में

कुछ देर बाद श्रीयुत विजयकृष्ण गोस्वामी श्रीरामकृष्णदेव के दर्शन करने के लिए आये। साथ कई ब्राह्म भक्त भी है। विजयकृष्ण बहुत दिनो तक ढाके मे थे। इधर पश्चिम के बहुतसे तीर्थो मे भ्रमण करके अभी थोड़े ही दिन हुए कलकत्ता आये है। आते ही उन्होने श्रीरामकृष्ण को भूमिष्ठ हो प्रणाम किया। बहुतसे लोग उपस्थित है,— नरेन्द्र, महिमाचरण चक्रवर्ती

नवगोपाल, भूपति, लाटू, मास्टर, छोटे नरेन्द्र आदि बहुतसे भक्त।

महिमा चक्रवर्ती– (विजय से)– महाशय, आप तीर्थ कर आये, बहुतसे देश देखकर आये, अब कहिये, आपने क्या क्या देखा।

विजय– क्या कहूँ? मै अनुभव कर रहा हूँ कि जहाँ अभी मैं बैठा हुआ हूँ, यही सब कुछ है। इधर-उधर भटकना व्यर्थ है। और जहाँ जहाँ मै गया, कही इनका (श्रीरामकृष्ण का) एक आना, कही दो आने या चार आने अंश ही पाया, परन्तु पूरे सोलह आने तो केवल यही पा रहा हूँ।

महिमा– आप ठीक कहते है। फिर, ये ही चक्कर लगवाते है और ये ही बैठाते है।

श्रीरामकृष्ण– (नरेन्द्र से)– देख, विजय की कैसी अवस्था हो गयी है! लक्षण सब बदल गये है, मानो उबाला हुआ है। मैं परमहस की गरदन और कपाल देखकर बतला सकता हूँ कि वह परमहंस है या नही।

महिमा– महाराज, क्या आपका भोजन घट गया है?

विजय– हाँ, शायद घट गया है। (श्रीरामकृष्ण से) आपकी पीड़ा का हाल पाकर देखने के लिए आया हूँ। और फिर ढाके मे—

श्रीरामकृष्ण– क्या?

विजय ने कोई उत्तर नही दिया। कुछ देर चुप हो रहे।

विजय– अगर अपने आप को वे (श्रीरामकृष्ण) खुद न पकड़वा दे तो पकड़ना मुश्किल है। यही सोलहो आना (प्रकाश) है।

श्रीरामकृष्ण– केदार ने कहा, 'दूसरी जगह खाने को नहीं मिलता, परन्तु यहाँ आते ही पेट भर जाता है।'

महिमा– पेट भरना ही नही— इतना मिलता है कि पेट में

समाता नही—— बाहर गिर जाता है !

विजय– (हाथ जोडकर, श्रीरामकृष्ण से)–आप कौन है, यह मै समझ गया, अब कहना न होगा।

श्रीरामकृष्ण– (भावस्थ)– अगर ऐसा है तो यही सही।

विजय ने कहा, 'मै समझा।' यह कहकर श्रीरामकृष्ण के पैर पर गिर पड़े और उनके चरणो को अपनी छाती से लगा लिया।

श्रीरामकृष्ण ईश्वरावेश मे बाह्यशून्य हो चित्रवत् बैठे हुए है।

इस प्रेमावेश को, इस अद्‌भुत दृश्य को देखकर, भक्तों में किसी की आँखो से आँसू बह रहे हैं और कोई स्तुति-पाठ कर रहे है। जिसका जैसा भाव है, वह उसी भाव से श्रीरामकृष्ण की ओर हेर रहा है। कोई उन्हे परम भक्त देखता है, कोई साधु, कोई देह धारण करके आये हुए साक्षात् ईश्वरावतार, जिसका जैसा भाव।

महिमाचरण गाने लगे। गाते हुए आँखो मे पानी भर आया– 'देखो देखो प्रेममूर्ति।' और बीच-बीच मे इस भाव से श्लोकों की आवृत्ति करने लगे जैसे ब्रह्म का साक्षात् दर्शन कर रहे हों—— 'तुरीय सच्चिदानन्द द्वैताद्वैतविवर्जितम्।'

नवगोपाल रोने लगे। एक दूसरे भक्त भूपति ने गाया।

गाना– हे परब्रह्म, तुम्हारी जय हो, तुम अपार हो, अगम्य हो, परात्पर हो......। मुझ ज्ञान दो, भक्ति और प्रेम दो, और अपने श्रीचरणो मे मुझे आश्रय दो।

भूपति फिर गा रहे है ——

गाना– चिदानन्द-सिन्धु-सलिल मे प्रेम और आनन्द की लहरें उठ रही है। रासलीला के महान् भाव मे कैसी सुन्दर माधुरी है ! ...

बड़ी देर के बाद श्रीरामकृष्ण प्रकृतिस्थ हुए।

श्रीरामकृष्ण– (मास्टर से)– आवेश मे न जाने क्या हो जाता है। इस समय लज्जा आ रही है। उस समय जैसे भूत सवार हो जाता है, 'मै' फिर 'मै' नही रह जाता।

"इस अवस्था के बाद गिनती नही गिनी जा सकती। गिनने लगो तो १,७,९ इस तरह की गणना होती है।"

नरेन्द्र– सब एक ही है, इसलिए।

श्रीरामकृष्ण– नही, एक और दो से परे।

महिमाचरण– जी हाँ, द्वैताद्वैतविवर्जितम्।

श्रीरामकृष्ण– वहाँ तर्क-विचार नष्ट हो जाता है। पाण्डित्य द्वारा उन्हें कोई पा नही सकता। वे शास्त्रो, वेदो, पुराणो और तन्त्रों से परे है। किसी के हाथ मे अगर मैं एक पुस्तक देखता हूँ तो उसके ज्ञानी होने पर भी मै उसे राजर्षि कहता हूँ। ब्रह्मर्षि का कोई बाह्य लक्षण नही रहता। शास्त्रो का उपयोग क्या है, जानते हो? एक ने चिट्ठी लिखी थी, उसमे था, पाँच सेर सन्देश और एक धोती भेजना। जिसे वह चिट्ठी मिली उसने पाँच सेर सन्देश और एक धोती, इतना याद करके चिट्ठी फेंक दी। चिट्ठी की क्या जरूरत थी?

विजय– सन्देश भेजे गये, यह समझ लिया!

श्रीरामकृष्ण– ईश्वर आदमी की देह धारण करके आते है। यह सच है कि वे सब जगहो मे और सर्व भूतों मे है, परन्तु अवतार के बिना जीवो की आकांक्षा की पूर्ति नही होती, उनकी आवश्यकताएँ नही मिटती। वह इस तरह कि गौ को चाहे जहाँ छुओ वह गौ को ही छूना हुआ, सीग छूने पर भी गौ को छूना हुआ, परन्तु दूध गौ के थनो से ही आता है। (हास्य)

महिमा– दूध की अगर ज़रूरत हो तो गौ के सीगो मे मुँह लगाने से क्या होगा ? उसके थनो मे मुँह लगाना चाहिए। (सब हँसते है)

विजय–परन्तु बछडा पहले पहले इधर-उधर ही हूँथा मारता है।

श्रीरामकृष्ण–(हँसते हुए)– बछड़े को उस तरह भटकते हुए देखकर कोई कोई ऐसा भी करते है कि उसका मुँह थनो मे लगा देते है ! (सब हँसते है)

(५)

भक्तो के साथ प्रेमानन्द में

ये सब बाते हो रही थी कि श्रीरामकृष्ण को देखने के लिए डाक्टर आ पहुँचे और आसन ग्रहण किया। वे कह रहे है, 'कल रात तीन बजे से मेरी आँख नही लगी। बस तुम्हारी ही चिन्ता थी कि कही ऐसा न हो कि सर्दी लग जाय। और भी मै बहुत कुछ सोच रहा था।'

श्रीरामकृष्ण– खाँसी हुई है, गले मे भी सूजन है। सवेरे तड़के मुँह मे पानी आ गया था। मेरा पूरा शरीर टूट रहा है।

डाक्टर– सुबह को सब खबर मुझे मिली है।

महिमाचरण अपने भारतवर्ष-भ्रमण की चर्चा कर रहे है। कहा, 'लंकाद्वीप मे हंसता हुआ आदमी नही दीख पड़ता। डाक्टर सरकार ने कहा, 'हाँ होगा, परन्तु इसकी खोज होनी चाहिए।' (सब हँसते है)

डाक्टरी कार्य की बातचीत होने लगी।

श्रीरामकृष्ण– (डाक्टर से)– बहुतों का यह ख्याल है कि डाक्टरी का स्थान अन्य कार्यो से बहुत ऊँचा है। यदि रुपया न लेकर, दूसरे का दु:ख देखकर कोई चिकित्सा करे तब तो वह

महान् व्यक्ति है, उसका कार्य भी महत्त्वपूर्ण है, नही तो जो लोग रुपया लेकर यह सब काम करते है, वे तो निर्दय है, और निर्दय होते जाते है। व्यवसाय की दृष्टि से मल-मूत्र देखना तो नीचो का काम है।

डाक्टर– महाराज, आप बिलकुल ठीक कहते है। डाक्टर के लिए उस भाव से काम करना तो सचमुच बहुत बुरा है। परन्तु आपके सम्मख मै अपने ही मुँह से क्या कहूँ––

श्रीरामकृष्ण– हाँ, डाक्टरी मे निःस्वार्थ भाव से अगर दूसरे का उपकार किया जाय, तब तो बहुत अच्छा है।

"चाहे जो काम आदमी करे, संसारी मनुष्य के लिए बीच-बीच मे साधुसंग की बड़ी आवश्यकता है। ईश्वर मे भक्ति रहने पर लोग साधुसंग आप खोज लेते है। मै उपमा दिया करता हूं–– गँजेड़ी गँजेड़ी के साथ ही रहता है। दूसरे आदमी को देखता है तो वह सिर झुकाकर चला जाता है या छिप रहता है; परन्तु एक दूसरे गँजेड़ी को देखकर उसे परम प्रसन्नता होती है। कभी तो मारे प्रेम के दोनों गले लग जाते है। (सब हँसते है) और, गीध भी गीध ही के साथ रहता है।"

डाक्टर– परन्तु कौए के डर से ही गीध भाग जाता है। मै कहता हूं, सिर्फ मनुष्य की ही नही, सब जीवो की सेवा करनी चाहिए। मै प्रायः गौरैयों को आटे की गोलियाँ दिया करता हूं। और छत पर हजारो गौरैयाँ इकट्ठी हो जाती है।

श्रीरामकृष्ण– वाह ! यह तो बड़ी अच्छी बात है। जीवो को खिलाना तो साधुओ का काम है। साधु-महात्मा चीटियो को शक्कर देते है।

डाक्टर– आज गाना नही होगा ?

श्रीरामकृष्ण– (नरेन्द्र से)– कुछ गाओ ।

नरेन्द्र गा रहे है, हाथ मे तानपूरा लिए हुए । आज वाजा भी वज रहा है ।

गाना– हे दीनों के शरण ! तुम्हारा नाम वड़ा सुन्दर है । ऐ प्राणों मे रमण करनेवाले ! अमृत की धारा वरस रही है, कर्ण शीतल बन जाते है ..।

नरेन्द्र फिर गा रहे है–

गाना– माँ । मुझे पागल कर दे, ज्ञान और विचार की अब कोई आवश्यकता नही है ...।

गाने के साथ ही इधर अद्‌भुत दृश्य दिखायी देने लगा— भावावेश में सव लोग पागल हो रहे है। पण्डित अपने पाण्डित्य का अभिमान छोड़कर खड़े हो गये। कह रहे है— 'माँ, मुझे पागल कर दे, ज्ञान और विचार की अब कोई आवश्यकता नही है।' सब से पहले आसन छोड़कर भावावेश में विजय खड़े हुए, फिर श्रीरामकृष्ण। श्रीरामकृष्ण देह की कठिन असाध्य व्याधि को विलकुल भूल गये है। सामने डाक्टर है। वे भी खडे हो गये। न रोगी को होश है, न डाक्टर को। छोटे नरेन्द्र और लाटू दोनों को भावसमाधि हो गयी। डाक्टर ने साइन्स (विज्ञान) पढी है, परन्तु यह विचित्र अवस्था देखते हुए अवाक् हो रहे है। देखा, जिन्हे भावावेश है उनमे वाह्यज्ञान विलकुल नही रह गया। सब के सब स्थिर और निःस्पन्द हो रहे है। भाव का उपशम होने पर कोई हँस रहे है, कोई रो रहे है, मानो कुछ मतवाले इकट्ठे हो गये हों।

(६)

भक्त के संग में। श्रीरामकृष्ण तथा क्रोध-जय

इस घटना के वाद लोगो ने आसन ग्रहण किया। रात के

आठ वज गये है । फिर वातचीत होने लगी ।

श्रीरामकृष्ण– (डाक्टर से)– यह जो भाव तुमने देखा, इसके सम्वन्ध मे तुम्हारी साइन्स क्या कहती है ? तुम्हे क्या यह जान पड़ता है कि यह सव ढोंग है ?

डाक्टर– (श्रीरामकृष्ण से)– जहाँ इतने आदमियो को ऐसा हो रहा है, वहाँ तो स्वाभाविक ही जान पड़ता है; ढोंग नही मालूम होता । (नरेन्द्र से) जब तुम गा रहे थे, 'माँ, पागल कर दे, अव ज्ञान और विचार की आवश्यकता नही है,' तव मुझसे रहा नही गया, खडा हो गया, फिर वड़ी मुश्किल से भाव को दवाना पड़ा । मैने सोचा कि वाहरी दिखाव न होने देना चाहिए ।

श्रीरामकृष्ण– (डाक्टर से, हँसकर)– तुम तो अटल, अचल और सुमेरुवत् हो । (सव हँसते है) तुम गम्भीरात्मा हो । रूप-सनातन का भाव किसी को मालूम न हो पाता था । अगर किसी गडही मे हाथी उतर जाता है तो पानी मे उथल-पुथल मच जाती है, परन्तु वड़े सरोवर मे कही कुछ नही होता । किसी को मालूम भी नही होता । श्रीमती ने सखियों से कहा, 'सखियो, कृष्ण के विरह मे तुम लोग इतना रो रही हो, परन्तु मुझे देखो, मेरी आँखो मे कही एक बूँद भी आँसू नहीं है ।' तव वृन्दा ने कहा, 'सखि, तेरी आँखो मे आँसू नही है, इसका बहुत वडा अर्थ है । तेरे हृदय मे विरह की आग सदा जल रही है, आँखो मे आँसू आते है पर उस अग्नि की ज्वाला से सूख जाते हैं ।

डाक्टर– आपके साथ वातचीत मे पार पाना कठिन है । (हास्य)

फिर दूसरी चर्चा होने लगी । श्रीरामकृष्ण भावावेश की अपनी पहली अवस्था वतला रहे है । और काम, क्रोध आदि

को किस तरह वश मे लाया जाय, ये वाते भी वतला रहे है।

डाक्टर– आप भावावेश मे पडे हुए थे, एक दूसरे ने उस समय आपको बूट से पाद-प्रहार किया था, ये सब बाते मै सुन चुका हूँ।

श्रीरामकृष्ण– वह कालीघाट का चन्द्र हालदार था। वह मथुरबाबू के पास प्राय' आया करता था। मै ईश्वरावेश में अँधेरे मे जमीन पर पड़ा हुआ था। चन्द्र हालदार पहले ही से सोचा करता था कि यह ढोग किया करता है, मथुरबाबू का प्रिय पात्र वनने के लिए। वह अँधेरे मे आकर जूते पहने हुए पैरो से ठेलने लगा। देह मे निशान बन गये थे। सब ने कहा, 'मथुर-वावू से कह दिया जाय।' मैने मना कर दिया।

डाक्टर– यह भी ईश्वर की लीला है। इससे भी लोगो को शिक्षा होगी। क्रोध किस तरह जीता जाता है, क्षमा किसे कहते है, लोग समझेगे।

श्रीरामकृष्ण के सामने विजय के साथ भक्तों की बातचीत हो रही है।

विजय– न जाने कौन मेरे साथ सब समय रहते है, मेरे दूर रहने पर भी वे मुझे वतला देते है, कहाँ क्या हो रहा है!

नरेन्द्र– स्वर्गीय दूत की तरह रखवाली करते हुए!

विजय– ढाके मे इन्हे (श्रीरामकृष्ण को) मैने देखा है! देह छूकर!

श्रीरामकृष्ण– (हंसते हुए)– तो वह कोई दूसरा होगा।

नरेन्द्र– मैने भी इन्हे कई वार देखा है। (विजय से) अतएव किस तरह कहूँ कि आपकी वात पर मुझे विश्वास नही होता?

परिच्छेद २१

भक्ति, विवेक-वैराग्य तथा पाण्डित्य

(१)

श्रीरामकृष्ण तथा शिष्य-प्रेम

आज आश्विन की कृष्ण तृतीया है, सोमवार, २६ अक्टूबर १८८५। श्रीरामकृष्णदेव की चिकित्सा डाक्टर सरकार उसी श्यामपुकुर के घर मे कर रहे है। रोज आते है। आदमी भी संवाद लेकर रोज जाता है।

शरद ऋतु है। कुछ दिन हुए, शारदीय पूजा हो गयी है। श्रीरामकृष्ण की शिष्यमण्डली को हर्ष और विषाद मे वह समय बिताना पड़ा था। श्रीरामकृष्ण की पीड़ा तीव्र है। डाक्टर सरकार ने सूचित किया है कि रोग असाध्य है। शिष्यों को तव से हार्दिक दु:ख है। वे सदा ही चिन्तित और व्याकुल रहा करते है। कुमार-अवस्था से ही वैराग्ययुक्त उनके नरेन्द्र आदि शिष्य-गण अभी कामिनी और कांचन के त्याग की शिक्षा ग्रहण कर रहे है।

इतनी पीड़ा है फिर भी दल के दल आदमी श्रीरामकृष्ण के पास आते रहते है। उनके पास आते ही उन्हें आनन्द मिलता है। वे समागत मनुष्यो की मंगल-कामना करते हुए, अपनी असाध्य व्याधि को भूलकर उन्हे शिक्षा और उपदेश देते है। डाक्टरो ने, विशेषत: डाक्टर सरकार ने, बातचीत करने के लिए मना कर दिया है। परन्तु डाक्टर सरकार खुद छ:-सात घण्टे तक रहते है। वे कहते है, 'किसी दूसरे के साथ बातचीत नहीं करने पाओगे, वस हमारे साथ किया करो।'

श्रीरामकृष्ण की बातें सुनते-सुनते डाक्टर एकदम मुग्ध हो जाते हैं। इसीलिए वे इतनी देर तक बैठे रहते हैं।

श्रीरामकृष्ण– (मास्टर से)– बीमारी बहुत कुछ अच्छी-सी हो गयी है, इस समय तबीयत खूब अच्छी है। अच्छा, तो क्या दवा से ऐसा हुआ है? तो इसी दवा का सेवन क्यों न किया जाय?

मास्टर– मैं डाक्टर के पास जा रहा हूँ, उनसे सब हाल कह दूंगा। वे जो कुछ अच्छा सोचेंगे, कहेंगे।

श्रीरामकृष्ण– देखो, दो-तीन दिन से पूर्ण नहीं आया। मन में न जाने कैसा हो रहा है।

मास्टर– कालीबाबू, तुम जाओ न जरा पूर्ण को बुलाने।

काली– अभी जाता हूँ।

पूर्ण की उम्र १४-१५ साल की होगी।

श्रीरामकृष्ण –(मास्टर से)– डाक्टर का लड़का अच्छा है। जरा एक बार आने के लिए कहना।

(२)

मास्टर तथा डाक्टर का सम्भाषण

डाक्टर के घर पर पहुँचकर मास्टर ने देखा, डाक्टर दो-एक मित्रों के साथ बैठे हुए हैं।

डाक्टर– (मास्टर से)– अभी मिनट भर हुआ होगा, मैं तुम्हारी ही बातें कर रहा था। दस बजे आने के लिए तुमने कहा था, मैं डेढ़ घण्टे से बैठा हुआ हूँ। कैसे हैं, क्या हुआ, इसी सोच में पड़ा था। (मित्र से) अजी, जरा वही गाना गाओ तो।

मित्र गा रहे हैं —

गाना– देह में जब तक प्राण है तब तक उनके नाम और गुणों का कीर्तन करते रहो। उनकी महिमा एक ज्वलन्त ज्योति है—

संसार को प्रकाशित करनेवाली। सकल जीवो को सुख देनेवाला प्रेमामृत-प्रवाह वह रहा है। उनकी अपार करुणा का स्मरण कर शरीर पुलकित हो जाता है। वाणी क्या कभी उनकी थाह पा सकती है? उनकी कृपा से पल भर मे समस्त शोक दूर हो जाते है। मनुष्य उन्हे सर्वत्र— ऊपर, नीचे, देश-देशान्तर, जल-गर्भ, आकाश मे— अक्लान्त ढूँढते रहते है, और अनवरत जिज्ञासा करते रहते है, 'उनका अन्त कहाँ है, उनकी सीमा कहाँ तक है?' वे चेतन-निकेतन है, पारस-मणि है, सदा जाग्रत और निरंजन है। उनके दर्शन से दुःख का लेशमात्र भी नही रह जाता।

डाक्टर– (मास्टर से)– गाना बहुत अच्छा है, है न? विशेषतः उस जगह, जहाँ यह है— "लोक अनवरत जिज्ञासा करते रहते है, 'उनका अन्त कहाँ है, उनकी सीमा कहाँ तक है?' "

मास्टर– हाँ, वह भाग बड़ा सुन्दर है, अनन्त के खूब भाव है।

डाक्टर– (सस्नेह)– दिन बहुत चढ़ गया। तुमने भोजन किया या नही? मै दस बजे के भीतर भोजन कर लेता हूँ, फिर डाक्टरी करने निकलता हूँ। बिना खाये अगर निकल जाता हूँ, तो तबीयत खराब हो जाती है। एक दिन तुम लोगो को भोजन कराने की बात सोच रहा हूँ।

मास्टर– यह तो बड़ी अच्छी बात है।

डाक्टर– अच्छा, यहाँ या वहाँ? तुम लोग जैसा कहो।

मास्टर– महाशय, यहाँ हो चाहे वहाँ; सब लोग आनन्द से भोजन करेगे।

अब जगन्माता काली की बात चलने लगी।

डाक्टर– काली तो एक भीलनी थी। (मास्टर हँसते है)

मास्टर– यह बात कहाँ लिखी है?

डाक्टर– मैने ऐसा ही सुना है। (मास्टर हँसते है)

पिछले दिन विजयकृष्ण और दूसरे भक्तो को भावसमाधि हुई थी। उस समय डाक्टर भी थे। वही बात हो रही है।

डाक्टर– भावावेश तो मैने देखा। पर क्या अधिक भावावेश होना अच्छा है?

मास्टर– श्रीरामकृष्णदेव कहते है, ईश्वर की चिन्ता करके जो भावावेश होता है, उसके अधिक होने पर कोई हानि नही होती। वे कहते है, मणि की ज्योति से जो उजाला होता है उससे शरीर स्निग्ध हो जाता है, जलता नही।

डाक्टर– मणि की ज्योति; वह तो प्रतिविम्बित ज्योति (Reflected light) है।

मास्टर– वे और भी कहते है कि अमृत-सरोवर मे डूबने से कोई मरता नही। ईश्वर अमृत-सरोवर है, उनमे डूबने से आदमी का अनिष्ट नही होता, वरन् वह अमर हो जाता है, परन्तु तभी, अगर ईश्वर पर विश्वास हो।

डाक्टर– हाँ, यह वात ठीक है।

डाक्टर गाडी मे वैठे, दो-चार रोगियो को देखकर श्रीरामकृष्णदेव को देखने जायेगे। रास्ते मे फिर मास्टर के साथ बातचीत होने लगी। चक्रवर्ती के अहकार की बात डाक्टर ने चलायी।

मास्टर– श्रीरामकृष्णदेव के पास वे आया-जाया करते है। अहंकार अगर उनमे हो भी, तो कुछ दिनो मे न रह जायगा। श्रीरामकृष्णदेव के पास वैठने से जीवों का अहंकार दूर हो जाता है, क्योकि उनमे स्वय मे अहंकार नही है। नम्रता रहने से अहंकार नही रह सकता। विद्यासागर महाशय इतने बड़े आदमी है, फिर भी उन्होने उस समय विनय और नम्रता प्रदर्शित की जब श्रीराम-

कृष्णदेव उन्हे देखने गये थे—उनके वादुड़वागानवाले मकान में। जव वहाँ से बिदा हुए तव रात के नौ वजे का समय था। विद्यासागर महाशय लाइब्रेरीवाले कमरे से वरावर साथ-साथ हाथ में वत्ती लिये हुए उन्हे गाडी पर चढ़ा गये थे, और विदा होते समय हाथ जोड़े हुए थे।

डाक्टर– अच्छा इनके (श्रीरामकृष्ण के) सम्बन्ध मे विद्यासागर महाशय का क्या मत है?

मास्टर– उस दिन वड़ी भक्ति की थी, परन्तु वातचीत करके मैने देखा, वैष्णवगण जिसे भाव कहते है, इस तरह की वाते उन्हे पसन्द नही,—जैसा आपका मत है।

डाक्टर–हाथ जोडना, पैरों पर सिर रखना यह सव मुझे पसन्द नही। सिर जो कुछ है, पैर भी वही है। परन्तु जिसे यह ज्ञान है कि सिर कुछ है और पैर कुछ, वह ऐसा कर सकता है।

मास्टर–आपको भाव पसन्द नही है। श्रीरामकृष्णदेव आपको कभी कभी गम्भीरात्मा कहा करते है, आपको शायद याद हो। उन्होने कल आपके लिए कहा था, 'छोटीसी गडही मे हाथी उतर जाता है तो पानी मे उथलपुथल मच जाती है, परन्तु वडे सरोवर मे कही कुछ नही होता।' गम्भीरात्मा के भीतर भाव-हाथी के उतरने पर उसका कही कुछ नही होता। वे कहते है, आप गम्भीरात्मा है।

डाक्टर– मै किसी तरह की प्रशंसा नही चाहता। आखिर भाव और है क्या? यह केवल एक प्रकार की 'feeling' है। इसी प्रकार की अन्य 'feelings' भी होती है, उदाहरणार्थ 'भक्ति'। जव यह अत्यधिक हो जाती है तो कोई तो उसे दवाकर रख सकता है, और कोई नही।

मास्टर– 'भाव' का अर्थ कोई एक तरह से समझाता है, और कोई समझा ही नही सकता। परन्तु महाशय, यह बात तो माननी ही होगी कि भाव और भक्ति ये अपूर्व वस्तुएँ है। मैने आपके पुस्तकालय मे डारविन के सिद्धान्तो पर लिखी हुई स्टेविग की एक पुस्तक देखी है। स्टेविग साहब का मत है कि मनुष्य का मन बड़ा ही आश्चर्यजनक है— उसका निर्माण चाहे क्रम-विकास (Evolution) द्वारा हुआ हो, अथवा ईश्वर के एक खास सृष्टि-उत्पादन से। स्टेविग साहब ने एक बड़ी अच्छी उपमा दी है। उन्होने कहा है, 'प्रकाश को ही लीजिये। चाहे आप प्रकाश की तरंगों के सिद्धान्त को जाने या न जाने, प्रत्येक दशा मे प्रकाश आश्चर्यजनक ही है।'

डाक्टर– हाँ, और देखते हो, स्टेविंग डारविन के सिद्धान्त को मानता है, फिर ईश्वर को भी मानता है !

फिर श्रीरामकृष्णदेव की बात चली।

डाक्टर– देखता हूँ, ये (श्रीरामकृष्णदेव) काली के उपासक है।

मास्टर– उनका काली का अर्थ और कुछ है। वेद जिन्हे पर-ब्रह्म कहते है, वे उन्हे ही काली कहते है। मुसलमान जिन्हे अल्ला कहते हैं, ईसाई जिन्हे गॉड (God) कहते है, उन्हें ही वे काली कहते है। वे बहुतसे ईश्वर नही देखते, एक देखते है। पुराने ब्रह्मज्ञानी जिन्हे ब्रह्म कह गये है, योगी जिन्हे आत्मा कहते है, भक्त जिन्हे भगवान कहते है, श्रीरामकृष्णदेव उन्ही को काली कहते है।

"उनसे मैने सुना है, एक आदमी के पास एक गमला था, उसमे रग घोला हुआ था। किसी को अगर कपड़ा रँगाने की जरूरत होती थी, तो वह उसके पास जाता था। रँगनेवाला

पूछता था, 'तुम किस रग मे कपडा रंगाना चाहता हो?' रंगानेवाला अगर कहता, 'हरे रग मे,' तो वह गमले मे डुवाकर कपड़ा निकाल लेता और कहता था, 'यह लो अपना हरे रंग का कपड़ा।' अगर कोई कहता, 'मेरी धोती लाल रंग से रंगो,' तो भी यह उसी गमले मे डुवाकर निकाल लेता और कहता था, 'यह लो तुम्हारी धोती लाल रंग से रंग गयी।' इस एक ही गमले के रंग से वह लाल, पीला, हरा, आसमानी, सव रंगो के कपड़े रंगा करता था। यह विचित्र तमाशा देखकर एक ने कहा, 'भाई, मुझे तो वही रंग चाहिए जो तुमने इस गमले मे घोल रखा है।' उसी तरह श्रीरामकृष्णदेव के भीतर सव भाव है,—सव धर्मो और सव सम्प्रदायों के आदमी उनके पास शान्ति और आनन्द पाते हैं। उनका खास भाव क्या है, वे कितने गहरे है, यह भला कौन समझ सकता है?"

डाक्टर— 'सव मनुष्यो के लिए सव चीजे।' यह मुझे अच्छा नही लगता, यद्यपि सेन्ट पॉल ऐसा ही कहते है।

मास्टर— श्रीरामकृष्णदेव की अवस्था कौन समझेगा? उनके श्रीमुख से मैने सुना है, सूत का व्यवसाय विना किये, कौन सूत ४० नम्वर का है और कौन ४१ नम्वर का, यह समझ में नही आता। चित्रकार हुए विना चित्रकार की कुशलता समझ मे नही आती। महापुरुषो का भाव गम्भीर होता है। ईशु की तरह विना हुए, ईशु के सारे भाव समझ में नही आते। श्रीरामकृष्णदेव का यह गम्भीर भाव, वहुत सम्भव है, वही है जो ईशु ने कहा था— 'अपने स्वर्गस्थ पिता की तरह पवित्र होओ।'

डाक्टर— अच्छा, उनकी वीमारी मे तुम लोग किस तरह उनकी सेवा और देख-भाल करते हो?

मास्टर– जिनकी उम्र अधिक है, सेवा करने का भार उन्हीं पर रहता है। किसी दिन गिरीशवाबू परिदर्शक रहते है, किसी दिन रामवाबू, किसी दिन वलराम, किसी दिन सूरेशवावू, किसी दिन नवगोपाल, और किसी दिन कालीवावू, इस तरह।

(३)

पाण्डित्य तथा विवेक-वैराग्य

इस तरह वाते करते हुए, श्रीरामकृष्ण जिस मकान मे रहते थे उसके सामने आकर गाड़ी खड़ी हुई। दिन के एक वजे का समय होगा। श्रीरामकृष्ण दुमँजलेवाले कमरे में वैठे हुए है। वहुत से भक्त सामने वैठे है। उनमे श्रीयुत गिरीश घोप, छोटे नरेन्द्र, शरद आदि भी है। सव की दृष्टि उस महायोगी सदानन्द महापुरुप की ओर लगी हुई है।

डाक्टर को देखकर हँसते हुए श्रीरामकृष्ण कह रहे है, 'आज वहुत अच्छी है तवीयत।'

धीरे धीरे भक्तो के साथ ईश्वरीय चर्चा होने लगी।

श्रीरामकृष्ण– सिर्फ पाण्डित्य से क्या लाभ, अगर उसमे विवेक और वैराग्य न हो? ईश्वर के पादपद्मो की चिन्ता करते हुए मेरी एक ऐसी अवस्था होती है कि कमर से धोती खुल जाती है, पैरो से सिर तक न जाने क्या सरसराता हुआ चढ जाता है। तव सव लोग तृण के समान जान पड़ते है। उन पण्डितो को जिनमे विवेक, वैराग्य और ईश्वर प्रेम नही है, मै घास-फूस की तरह देखता हूँ।

"रामनारायण डाक्टर ने मेरे साथ तर्क किया था। एकाएक मुझे वही अवस्था हो गयी। तव मैने कहा, 'तुम क्या कहते हो? उन्हे तर्क करके क्या खाक समझोगे? उनकी सृष्टि भी

क्या समझोगे ? तुम्हारी तो यह बड़ी हीन बुद्धि है !' मेरी अवस्था देखकर वह रोने लगा, और मेरे पैर दबाने लगा।"

डाक्टर– रामनारायण डाक्टर हिन्दू हैं न ! और फूल-चन्दन भी धारण करता है ! सच्चा हिन्दू है !

श्रीरामकृष्ण– बंकिम* तुम लोगों के दल का एक पण्डित है। बंकिम के साथ मुलाकात हुई थी। मैंने पूछा, 'आदमी का कर्तव्य क्या है ?' तब उसने कहा, 'आहार, निद्रा और मैथुन।' इस तरह की बातें सुनकर मुझे घृणा हो गयी। मैंने कहा, 'तुम्हारी ये कैसी बातें है ? तुम तो बड़े छिछोड़े हो ! तुम दिन-रात जैसी चिन्ताएं किया करते हो, वही मुँह से भी निकल रहा है ! मूली खाने से मूली ही की डकार आती है।' फिर बहुत सी ईश्वरीय बातें हुई। कमरे मे संकीर्तन हुआ। मै नाचा भी। तब उसने कहा, 'महाराज, एक बार हमारे यहाँ भी पधारियेगा।' मैंने कहा, 'देखो, ईश्वर की इच्छा।' तब उसने कहा, 'हमारे यहाँ भी भक्त है, आप देखियेगा।' मैंने हंसते हुए कहा, 'किस तरह के भक्त हैं जी ? गोपाल-गोपाल जिन लोगों ने कहा था, वैसे ?'

डाक्टर– 'गोपाल-गोपाल' क्या है ?

श्रीरामकृष्ण– (सहास्य)– एक सुनार की दूकान थी। उस दूकान के सब लोग बड़े भक्त दिखते थे— परम वैष्णव। गले मे माला, माथे मे तिलक, हाथ में सुमिरनी, लोग विश्वास करके उन्ही की दूकान मे आते थे। वे सोचते थे, ये परम भक्त है, कभी ठग नही सकते। खरीददारों का एक दल जब वहाँ पहुँचता तो सुनता कि कोई कारीगर 'केशव-केशव' कह रहा है, क दूसरा कुछ देर बाद 'गोपाल-गोपाल' रट रहा है, फिर

---

* बंकिमचन्द्र चटर्जी– बंगाल प्रान्त के एक प्रसिद्ध लेखक।

थोड़ी देर बाद कोई 'हरि-हरि' बोल रहा है, फिर कुछ देर में कोई 'हर-हर' आदि आदि। ईश्वर के इतने नाम एक साथ सुनकर खरीददार सहज ही सोचते थे, इस घराने के सुनार बड़े अच्छे है। परन्तु इसका असल मतलब क्या था, जानते हो? जिसने 'केशव-केशव' कहा था, उसका मतलब यह पूछने का था कि ये सब कौन है? जिसने कहा था 'गोपाल-गोपाल', उसका अर्थ यह है कि मै समझ गया, ये सब गौओं के दल (पाल) है। (हास्य) जिसने कहा 'हरि-हरि', उसका अर्थ यह है—अगर ये गौओं के दल है तो क्या हम इनका हरण करें? (हास्य) जिसने कहा 'हर-हर', उसने इशारा किया कि हाँ, हरण करो; हाँ, हरण करो; यह तो गौओं का दल ही है। (हास्य)

"मथुरबाबू के साथ मै एक जगह और गया था। कितने ही पण्डित मेरे साथ विचार करने के लिए आये थे। मै तो मूर्ख हूँ ही। (सब हंसते है।) उन लोगों ने मेरी वह अवस्था देखी, और मेरे साथ बातचीत होने पर उन लोगों ने कहा, 'महाराज! पहले जो कुछ हमने पढ़ा है, तुम्हारे साथ बातचीत करने पर उस सारी विद्या से जी हट गया। अब समझ में आया, उनकी कृपा होने पर ज्ञान का अभाव नहीं रह जाता। मूर्ख भी विद्वान् हो जाता है, मूक मे भी बोलने की शक्ति आ जाती है।' इसीलिए कह रहा हूं, पुस्तकें पढने से ही कोई पण्डित नही हो जाता।

"हाँ, उनकी कृपा होने पर फिर ज्ञान की कमी नही रह जाती। देखो न, मै तो मूर्ख हूं, कुछ भी नही जानता, परन्तु ये सब बातें कौन कहता है? फिर इस ज्ञान का भाण्डार अक्षय है। उस देश (कामारपुकुर) में लोग जब धान नापते है, तो 'राम-

राम राम-राम' कहते जाते हैं। एक आदमी नापता है और एक दूसरा आदमी राशि पूरी करता जाता है। उसका काम यही है कि जब राशि घट जाय तब पूरी करता रहे। मैं भी जो बातें कह जाता हूँ, जब वे घटने पर आ जाती हैं, तब माँ अपने अक्षय ज्ञान-भाण्डार से राशि पूरी कर देती हैं।

"जब मैं बच्चा था, उस समय मेरे भीतर उनका आविर्भाव हुआ था। उम्र ग्यारह साल की थी। मैदान में एक विचित्र तरह का दर्शन हुआ। सब कहते थे, मैं उस समय बेहोश हो गया था। कोई भी अंग हिलता-डुलता न था। उसी दिन से मैं एक दूसरी तरह का हो गया। अपने भीतर एक दूसरे व्यक्ति को देखने लगा। जब श्रीठाकुरजी की पूजा करने के लिए जाता था, तब हाथ बहुधा ठाकुरजी की ओर न जाकर अपनी ही ओर आता था, और मैं अपने ही सिर पर फूल चढ़ा लेता था! जो लड़का मेरे पास रहता था, वह मेरे पास न आता था। कहता था, 'तुम्हारे मुख पर एक न जाने कैसी ज्योति देख रहा हूँ! तुम्हारे पास अधिक जाते भय उत्पन्न होता है।'"

(४)

ईश्वरेच्छा तथा स्वाधीन इच्छा

श्रीरामकृष्ण— मैं तो मूर्ख हूँ, कुछ जानता ही नही, तो यह सब कहता कौन है? मैं कहता हूँ, 'माँ, मैं यन्त्र हूँ, तुम यन्त्री हो; मैं गृह हूँ, तुम गृहस्वामिनी हो; मैं रथ हूँ, तुम रथी हो; तुम जैसा कराती हो, मैं वैसा ही करता हूँ; जैसा चलाती हो वैसा ही चलता हूँ; नाहम्-नाहम्, तुम हो, तुम हो।' उन्ही की जय है, मैं तो केवल यन्त्र मात्र हूँ। श्रीमती जब सहस्र छेदवाला घट लेकर जा रही थीं, तब उसमें से जरा भी पानी नही गिरा। यह

देखकर सब लोग उनकी प्रशंसा करने लगे, कहा, 'ऐसी सती दूसरी न होगी।' तब श्रीमती ने कहा, 'तुम लोग मेरी जय क्यों मनाते हो? कहो, कृष्ण की जय हो। मैं तो उनकी एक दासी मात्र हूँ।' एक दिन ऐसी ही भाव की अवस्था में विजय की छाती पर मैंने एक पैर रख दिया। इधर तो विजय पर मेरी श्रद्धा है, परन्तु उस अवस्था मे उस पर पैर रख दिया, इसके लिए भला क्या किया जाय!

डाक्टर– उसके बाद से सावधान रहना चाहिए।

श्रीरामकृष्ण– (हाथ जोड़कर)– मै क्या करूँ? उस अवस्था के आने पर बेहोश हो जाता हूँ। क्या करता हूँ, कुछ समझ मे नही आता।

डाक्टर–सावधान रहना चाहिए। हाथ जोड़ने से क्या होगा?

श्रीरामकृष्ण– तब मुझमे करने-धरने की शक्ति थोड़े ही रह जाती है!—परन्तु मेरी अवस्था के सम्बन्ध मे क्या सोचते हो? यदि इसे ढोंग समझते हो तो मै कहूँगा, तुम्हारी साइन्स-वाइन्स सब खाक है।

डाक्टर–महाराज, यदि मै ढोंग समझता तो क्या कभी इस तरह आया करता? देखो न, सब काम छोड़कर यहाँ आता हूँ। कितने ही रोगियो के यहाँ जा नही पाता। यहाँ आकर छः-सात घण्टे तक रह जाता हूँ।

श्रीरामकृष्ण– मथुरबाबू से मैंने कहा था, 'तुम यह न सोचना कि तुम एक बड़े आदमी हो, मुझे मानते हो, इसलिए मै कृतार्थ हो गया। तुम मानो या न मानो।' परन्तु एक बात है, आदमी क्या कर सकता है, वे (ईश्वर) स्वयं आकर मनायेंगे। ईश्वरीय शक्ति के सामने मनुष्य घास-फूस की तरह है।

डाक्टर—क्या आप यह सोचते हैं कि अमुक मछुआ * आपको मानता था इसलिए मैं भी मानूँगा ? . . . परन्तु हाँ, आपका सम्मान जरूर करता हूँ, आपके प्रति भक्ति करता हूँ, परन्तु वैसी ही, जैसी मनुष्य के प्रति की जाती है—

श्रीरामकृष्ण—अजी, क्या मै मानने के लिए कह रहा हूँ ?

गिरीश घोष—क्या वे आपको मानने के लिए कह रहे है ?

डाक्टर—(श्रीरामकृष्ण से)—आप क्या कहते हैं ? ईश्वर की इच्छा ?

श्रीरामकृष्ण—और नहीं तो क्या कह रहा हूँ ? ईश्वरीय शक्ति के निकट मनुष्य क्या कर सकता है ? कुरुक्षेत्र मे अर्जुन ने कहा, 'लड़ाई मुझसे न होगी, अपने ही भाइयों का वध मैं न कर सकूँगा ।' श्रीकृष्ण ने कहा, 'अर्जुन, तुम्हें लड़ना ही होगा । तुम्हारा स्वभाव तुमसे युद्ध करायेगा ।' श्रीकृष्ण ने सब दिखला दिया कि ये सब आदमी मरे हुए है । ठाकुरवाड़ी मे कुछ सिक्ख आये थे । उनके मत से पीपल का पत्ता भी ईश्वर की इच्छा से डोलता है— विना उनकी इच्छा के पीपल का पत्ता तक नही डोल सकता ।

डाक्टर—यदि ईश्वर की ही सब इच्छा है तो आप बातचीत क्यों करते है ? लोगों को ज्ञान देने के लिए इतनी बाते क्यो कहते हैं ?

श्रीरामकृष्ण—कहलवाते है, इसलिए कहता हूँ । मै यन्त्र हूँ, वे यन्त्री है ।

डाक्टर—आप अपने को यन्त्र कह रहे है । यह ठीक है । या

* यहाँ पर डाक्टर मथुरबाबू के सम्बन्ध मे कह रहे है, क्योकि मथुरबाबू मछुआ जाति के थे ।

चुप ही रहिये, क्योंकि सब कुछ तो ईश्वर ही है।

गिरीश–(डाक्टर के प्रति)–महाशय, आप कुछ भी सोचे, परन्तु वे कराते है इसीलिए हम लोग करते है। क्या उस सर्वशक्तिमान ईश्वर की इच्छा के प्रतिकूल कोई एक पग भी चल सकता है?

डाक्टर– स्वाधीन इच्छा भी तो उन्होंने दी है। मै यदि चाहूँ तो ईश्वर-चिन्ता कर भी सकता हूँ, और न चाहूँ तो नही भी कर सकता।

गिरीश– आप ईश्वर की चिन्ता या सत्कर्म इसलिए करते है कि वह आपको अच्छा लगता है। अतएव वह कर्म आप स्वयं नही करते, वह अच्छा लगना ही आपसे करवाता है।

डाक्टर– क्यों, मै कर्तव्य समझकर करता हूँ–––

गिरीश– वह भी इसलिए कि मन कर्तव्य कर्म करना पसन्द करता है–––

डाक्टर–सोचो कि एक लड़का जला जा रहा है। उसे बचाने के लिए जाना कर्तव्य के विचार से ही तो होता है।

गिरीश– बच्चे को बचाते हुए आपको आनन्द मिलता है, इसलिए आप आग में कूद पड़ते है, आनन्द आपको खीच ले जाता है। मिठाई का मजा लेने के लिए जैसे पहले अफीम खाना। (सब हंसते है।)

श्रीरामकृष्ण– कर्म करने के पहले उस पर विश्वास चाहिए, उसके साथ वस्तु की याद करने पर आनन्द होता है, तभी काम करने मे उस आदमी की प्रवृत्ति होती है। मिट्टी के नीचे एक घड़े में अशर्फियाँ भरी है, यह ज्ञान––यह विश्वास पहले होना चाहिए। घड़े को सोचने से ही आनन्द मिलता है–– फिर खोदा जाता है। खोदते हुए घड़े में कुदाल के लगने पर जब ठनकार

होती है, तव आनन्द और भी बढ़ जाता है। फिर जब घड़े की कोर दीख पड़ती है तव आनन्द और बढ़ता है। इसी तरह आनन्द बढता ही जाता है। मैने स्वय ठाकुरवाड़ी के वरामदे मे खड़े होकर देखा है—साधुओ ने गाँजा मलकर तैयार किया कि चिलम पर चढ़ाते चढाते उनका आनन्द उमडने लगा।

डाक्टर— परन्तु आग गरमी भी पहुँचाती है और प्रकाश भी। प्रकाश से पदार्थ दीख तो पडते है, परन्तु गरमी देह को जलाती है। कर्तव्य करते हुए आनन्द ही आनन्द मिलता हो सो वात नही, कष्ट भी होता है।

मास्टर—(गिरीश से)— पेट मे दाना पडता है तो मार सहने के लिए पीठ भी मजबूत रहती है। कष्ट में भी आनन्द है।

गिरीश—(डाक्टर से)— कर्तव्य रूखा है।

डाक्टर— क्यो ?

गिरीश— तो सरस सही ! (सब हंसते है)

मास्टर— फिर हम उसी वात पर आ गये— मिठाई के लाभ से अफीम खाना !

गिरीश—(डाक्टर से)— कर्तव्य सरस है, अन्यथा आप वह करते क्यों है ?

डाक्टर— मन की गति उसी ओर है।

मास्टर—(गिरीश से)—अभागा स्वभाव खीचता है। (हास्य) अगर एक ही ओर मन का झुकाव रहा तो स्वाधीन इच्छा फिर कहाँ रही ?

डाक्टर— मै विलकुल स्वाधीन नही कहता। गौ खूँटी से वंधी है, रस्सी की पहुँच जहाँ तक है, वही तक स्वाधीन है। परन्तु जहाँ उसे रस्सी का खिचाव लगा तो—

श्रीरामकृष्ण– यह उपमा यदु मल्लिक ने भी दी थी। (छोटे नरेन्द्र से) क्या यह अंग्रेजी मे है ?

(डाक्टर से)– "देखो, ईश्वर ही सब कुछ कर रहे है। 'वे यन्त्री है, मै यन्त्र हूँ,' अगर किसी मे यह विश्वास आ जाय, तब तो वह जीवन्मुक्त हो गया। 'हे ईश्वर, अपना काम तुम खुद करते हो, परन्तु लोग कहते है मै करता हूँ।' यह किस तरह, जानते हो ? वेदान्त मे एक उपमा है,—एक हण्डी मे तुमने चावल चढाये, आलू और भटे उसमे छोड़ दिये। कुछ देर बाद आलू, भटे और चावल उछलने लगते है, मानो अभिमान कर रहे हो कि 'मैं उछलता हूँ—मै कूदता हूँ।' छोटे बच्चे आलू और परवरों को उछलते हुए देखकर उन्हे जीवित समझ लेते है। किन्तु जो जानते है वे समझा देते है कि आलू, भटे और परवरों मे जान नही है, वे खुद नही उछल रहे; हण्डी के नीचे आग जल रही है, इसलिए वे उछल रहे है; अगर लकड़ी निकाल ली जाय, तो फिर वे नहीं हिलते। उसी तरह जीवो का यह अभिमान कि 'मै कर्ता हूँ,' अज्ञान से होता है। ईश्वर की ही शक्ति से सब मे शक्ति है। जलती हुई लकड़ी निकाल लेने पर सब चुप है! कठपुतलियाँ बाजीगर के हाथ से खूब नाचती है; किन्तु हाथ से छोड़ देने पर वे हिलती-डुलती तक नही!

"जब तक ईश्वर के दर्शन न हों, जब तक उस पारसमणि का स्पर्श न किया जाय, तब तक 'मै कर्ता हूँ' यह भ्रम रहेगा ही; 'मै सत् कार्य कर रहा हूँ, मै असत् कर्म कर रहा हूँ,' इस तरह की भूले होगी ही। यह भेद-बोध उन्ही की माया है; और इस मिथ्या संसार को चलाने के लिए इस माया का प्रयोजन है। किन्तु विद्यामाया का आश्रय लेने पर, सत्-मार्ग को पकड़ लेने

पर लोग उन्हे प्राप्त कर सकते हैं। जो ईश्वर को प्राप्त कर लेता है, जो उनके दर्शन करता है वही माया को पार कर सकता है। 'वे ही एकमात्र कर्ता है, मै अकर्ता हूँ' यह विश्वास जिसे है, वही जीवन्मुक्त है। यह बात मैंने केशव सेन से कही थी।"

गिरीश–(डाक्टर से)–स्वाधीन इच्छा का ज्ञान आपको कैसे हुआ ?

डाक्टर–यह युक्ति के द्वारा नही जानी गयी—मै इसका अनुभव कर रहा हूँ।

गिरीश–हम तथा दूसरे लोग बिलकुल इसके विपरीत भाव का अनुभव करते है, अर्थात् यह कि हम परतन्त्र है। (सब हंसते है)

डाक्टर–कर्तव्य मे दो बाते है। एक तो कर्तव्य के विचार से उसे करने के लिए जाना, और दूसरा बाद में आनन्द का होना। परन्तु आरम्भिक अवस्था मे ही आनन्द होगा यह सोचकर हम कर्म करने नही जाते। मुझे स्मरण है कि जब मै छोटा था तब भोग की मिठाई मे चीटियों को देखकर पुरोहित महाराज को बड़ी चिन्ता हो जाती थी। उन्हें पहले से ही मिठाइयों को देखकर आनन्द नही होता था। (हास्य) पहले तो उन्हें चिन्ता ही होती थी।

मास्टर–(स्वगत)–बाद में आनन्द मिलता है या साथ-साथ, यह कहना कठिन है। आनन्द के बल से यदि कार्य होता रहा तो स्वाधीन इच्छा फिर कहाँ रह गयी ?

(५)

अहैतुकी भक्ति। श्रीरामकृष्ण का दास्य-भाव

श्रीरामकृष्ण–ये (डाक्टर) जो कुछ कह रहे है, इसका नाम

है अहैतुकी भक्ति। महेन्द्र सरकार से मैं कुछ चाहता नही—कोई और आवश्यकता भी नही है; महेन्द्र सरकार को देखकर ही मुझे आनन्द होता है, यही अहैतुकी भक्ति है। जरा आनन्द मिलता है तो क्या करूँ ?

"अहल्या ने कहा था, 'हे राम ! यदि शूकर-योनि मे मेरा जन्म हो तो उसके लिए भी कोई चिन्ता नही, परन्तु ऐसा करना कि तुम्हारे पादपद्मों मे मेरी शुद्धा भक्ति बनी रहे। मैं और कुछ नही चाहती।'

"रावण को मारने की बात याद दिलाने के लिए नारद अयोध्या मे श्रीरामचन्द्र से मिले थे। सीता और राम के दर्शन कर वे स्तुति करने लगे। उनकी स्तुति से सन्तुष्ट होकर श्रीरामचन्द्र ने कहा, 'नारद, तुम्हारी स्तुति से मैं प्रसन्न हूँ, अब कोई वर की प्रार्थना करो।' नारद ने कहा, 'राम, यदि मुझे वर दोगे ही तो यही वर दो कि तुम्हारे पादपद्मों मे मेरी शुद्धा भक्ति बनी रहे, और ऐसा करो कि फिर कभी तुम्हारी भुवन-मोहनी माया में मुग्ध न हो जाऊँ।' राम ने कहा, 'और कोई वर लो।' नारद ने कहा, 'मै और कुछ भी नही चाहता, मुझे केवल तुम्हारे चरण-कमलों मे शुद्धा भक्ति चाहिए।'

"इनका भी वही हाल है, जैसे ईश्वर को ही देखने की प्रार्थना करते है; देह-सुख, धन और मान यह कुछ नही चाहते। इसी का नाम शुद्धा भक्ति है।

"आनन्द कुछ होता है जरूर, परन्तु वह विषय का आनन्द नहीं है। वह भक्ति और प्रेम का आनन्द है। शम्भु ने कहा था, 'आप मेरे यहाँ अक्सर आते है, और यदि असल मे देखा जाय तो आप इसीलिए आते है कि आपको मुझसे बातचीत करने मे आनन्द

आता है।' हाँ, इतना आनन्द तो है ही।

"परन्तु इससे वढकर एक और अवस्था है। तव साधक वालक की तरह इधर-उधर घूमता है--इसका कोई कारण नही। कभी एक पतिगे को ही पकड़ने लगता है।

(भक्तो से) "इनके (डाक्टर के) मन का भाव क्या है, तुमने समझा? वह है ईश्वर से यह प्रार्थना कि 'हे ईश्वर, सत्कर्म में मेरी मति हो, असत् कर्म से वचा रहूँ।'

"मेरी भी वही अवस्था थी। इसे दास्य-भाव कहते है। मै 'माँ, माँ' कहकर इतना रोता था कि लोग खड़े हो जाते थे। मेरी इस अवस्था के वाद मुझे विगाड़ने के लिए और मेरा पागलपन अच्छा कर देने के विचार से एक आदमी मेरे कमरे मे एक वेश्या ले आया-- वह सुन्दरी थी, आँखें वड़ी वड़ी थीं। मै 'माँ, माँ' कहता हुआ कमरे से निकल आया और हलधारी को पुकारकर कहा, 'दादा, आओ देखो तो, मेरे कमरे मे कोई है!' हलधारी तथा अन्य लोगो से मैंने कह दिया। इस अवस्था में 'माँ, माँ' कहकर मै रोता था और कहता था, 'माँ! मुझे वचा; माँ, मुझे निर्दोष कर दे; सत् को छोड़ असत् मे मेरा मन न जाय।' तुम्हारा यह भाव तो अच्छा है-- सच्चा भक्ति-भाव है दास-भाव।

"यदि किसी मे शुद्ध सत्त्व आता है, तो वस वह ईश्वर की ही चिन्ता करता रहता है, उसे फिर और कुछ अच्छा नही लगता। कोई कोई प्रारव्ध के वल से जन्म के आरम्भ से ही सत्त्व गुण पाते है। कामनाशून्य होकर यदि कर्म करने का यत्न किया जाय, तो अन्त मे शुद्ध सत्त्व का लाभ होता है।

"रजोमिश्रित सत्त्व गुण रहने से मन भिन्न भिन्न वस्तुओं की

ओर खिच जाता है। तब 'मै संसार का उपकार करूँगा' यह अभिमान उत्पन्न होता है। मनुष्य जैसे क्षुद्र प्राणी के लिए संसार का उपकार करना वहुत ही कठिन है, परन्तु निष्काम भाव से परहित करने मे दोष नही। यही निष्काम कर्म कहलाता है। उस तरह के कर्म करने की चेष्टा करना बहुत अच्छा है। परन्तु सव लोग नहीं कर सकते, वड़ा कठिन है। सभी को कार्य करना ही होगा, दो-एक आदमी ही कर्मो को छोड सकते है। दो-एक आदमियो मे ही शुद्ध सत्त्व देखने को मिलता है। यह निष्काम कर्म करते करते रज से मिला हुआ सत्त्व गुण क्रमशः शुद्धसत्त्व हो जाता है।

"शुद्धसत्त्व होने पर उनकी कृपा से ईश्वर-प्राप्ति भी होती है।

"साधारण आदमी शुद्धसत्त्व की यह अवस्था नही समझ सकते। हेम ने मुझसे कहा था, 'क्यो भट्टाचार्य महाशय, संसार मे सम्मान की प्राप्ति ही मनुष्य-जीवन का मुख्य उद्देश्य है—क्यो ?' "

परिच्छेद २२

ज्ञान-विज्ञान विचार

(१)

श्रीरामकृष्ण तथा नरेन्द्र

नरेन्द्र आदि भक्तों के साथ श्रीरामकृष्ण श्यामपुकुरवाले मकान में बैठे हुए है। दिन के दस वजे का समय होगा— २७ अक्टूबर १८८५, मंगलवार, आश्विन कृष्ण चतुर्थी।

श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र तथा मणि आदि से वातचीत कर रहे है।

नरेन्द्र— डाक्टर कल कैसी कैसी वातें कर गया !

एक भक्त— मछली कॉटे मे पड़ गयी थी, पर डोर तोड़कर निकल गयी।

श्रीरामकृष्ण— (सहास्य)— नहीं, तोड़ते समय कॉटा उसके मुँह में रह गया। इसलिए वह लापता नही हो सकती; देखो मरकर, अभी उतरायेगी।

नरेन्द्र जरा वाहर गये, फिर आयगे। श्रीरामकृष्ण मणि के साथ पूर्ण के सम्बन्ध में वातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण— भक्त स्वयं को प्रकृति तथा भगवान को पुरुष मानकर उसे गले लगाने तथा चुम्बन करने की इच्छा करता है। पर यह तुम्हीं से कह रहा हूँ, सामान्य जीवों के सुनने की यह वात नही।

मणि— ईश्वर अनेक तरह से लीलाएँ करते हैं— आपका रोग भी लीला ही है। इस रोग के होने के कारण यहाँ नये नये भक्त आ रहे है।

श्रीरामकृष्ण— (सहास्य)— भूपति कहता है, 'अगर आपको

रोग न होता और किराये से मकान लेकर सिर्फ यहाँ रहते होते तो लोग क्या कहते ?'—अच्छा, डाक्टर की क्या खबर है ?

मणि–इधर दास्य-भाव मानता भी है—'तुम प्रभु हो, मैं दास हूँ,' उधर यह भी कहता है कि आदमी के लिए ईश्वर की उपमा क्यों ले आते हो ?

श्रीरामकृष्ण–खैर, क्या आज भी तुम उसके पास जा सकोगे ?

मणि–खबर देने की अगर आवश्यकता होगी तो जाऊँगा ।

श्रीरामकृष्ण–भला बंकिम कैसा लड़का है ? यहाँ अगर वह न आ सके तो तुम्हीं उसे कुछ बता देना। उससे उनका आध्यात्मिक ज्ञान जागृत होगा ।

नरेन्द्र पास आकर बैठे। नरेन्द्र के पिता का स्वर्गवास हो जाने के कारण नरेन्द्र बड़ी चिन्ता मे पड़ गये है। माँ और छोटे भाई हैं, उनके भरण-पोषण की चिन्ता रहती है। नरेन्द्र कानून की परीक्षा के लिए तैयारी कर रहे है। इधर कुछ दिन विद्यासागर के बहूबाजारवाले स्कूल में अध्यापक रह चुके हैं। घर का कोई प्रबन्ध करके निश्चित होने की चेष्टा मे लगे हुए हैं। श्रीरामकृष्ण को सब कुछ मालूम है। वे नरेन्द्र की ओर स्नेह की दृष्टि से देख रहे है ।

श्रीरामकृष्ण–(मास्टर से)–अच्छा, केशव सेन से मैंने कहा, 'यदृच्छालाभ' (जो कुछ मिल जाय)। जो बड़े घराने का लड़का है, उसे भोजन की चिन्ता नहीं रहती—वह हर महीना जेब-खर्च पाता ही रहता है; परन्तु नरेन्द्र इतने ऊँचे घराने का है, उसके लिए कोई व्यवस्था क्यों नहीं हो जाती ? ईश्वर को मन दे देने पर वे सब व्यवस्था कर देते है।

मास्टर–जी हाँ, कर देंगे। अभी सब समय बीता भी तो नही।

श्रीरामकृष्ण– परन्तु तीव्र वैराग्य होने पर यह सब हिसाब नही रहता। 'घर का कुल प्रबन्ध करके तब साधना करूँगा'— तीव्र वैराग्य के होने पर इस तरह की बात पर ध्यान नहीं जाता। (सहास्य) गोसाई ने लेक्चर दिया था। उसने कहा, 'दस हजार रुपये हो तो इतने से भोजन-वस्त्र का प्रबन्ध आनन्द से हो सकता है और तब निश्चिन्त होकर ईश्वर का चिन्तन किया जा सकता है।'

"केशव सेन ने भी ऐसा ही इशारा किया था। उसने पूछा था—'महाराज, कोई कुछ पूँजी जोड़कर अगर ईश्वर की उपासना करे तो क्या वह कर सकता है या नहीं? और इससे क्या किसी तरह का पाप-स्पर्श हो सकता है?'

"मैने कहा, तीव्र वैराग्य होने पर संसार कुआँ और आत्मीय साँप की तरह जान पड़ते है। तब 'रुपये इकट्ठा करूँगा,' 'विषय सचय करूँगा' यह हिसाब नही रह जाता। ईश्वर ही वस्तु है और सब अवस्तु। ईश्वर को छोड़कर विषय की चिन्ता!

"एक स्त्री के ऊपर कोई बड़ा शोक आ पड़ा। पहले उसने अपनी नथ नाक से उतारकर सावधानी से कपड़े मे लपेटकर बाँध ली, और फिर लगी रोने 'अरी मेरी मैया—मुझे यह क्या हुआ?'—और यह कहकर पछाड़ खाकर गिर पड़ी,—परन्तु वह भी सावधानी से कि कहीं बँधी हुई नथ टूट न जाय!"

सब हँस रहे है। नरेन्द्र पर ये बातें तीर की तरह चोट करने लगी—वे एक ओर लेट रहे। उनके मन की अवस्था समझकर मास्टर ने हँसकर कहा, 'लेट क्यो रहे हो?'

श्रीरामकृष्ण– (मास्टर से, सहास्य)– यहाँ मुझे उस स्त्री की याद आती है जो अपने बहनोई के साथ रहने मे लाज के कारण

मरी जाती थी। उसे यह समझ मे ही नहीं आता था कि जब उसे इतनी शरम है तो अन्य स्त्रियो को, जो पर-पुरुषों के साथ रहती है, कैसे शरम नही लगती। वह कहती थी, 'आखिर बहनोई तो अपने ही घर का आदमी है, परन्तु फिर भी तो मैं शरम से मरी जाती हूँ।— और इन औरतो की हिम्मत कैसे पड़ती है कि ये दूसरे आदमियों के साथ रहें !'

मास्टर खुद संसार में हैं, उसके लिए उन्हें लज्जित होना चाहिए। वैसा न होकर वे नरेन्द्र पर हँस रहे है। अपना दोष कोई नहीं देखता, दूसरों के दोष देखने के लिए सब दौड़ पड़ते है, यही बात श्रीरामकृष्ण के वाक्य से सूचित हो रही है। इसीलिए उन्होंने उस स्त्री की बात चलायी जिसने दूसरी स्त्रियों के तो दोष देखे थे, यद्यपि वह स्वयं अपने बहनोई के साथ रहकर चरित्र-भ्रष्ट हो गयी थी।

नीचे एक वैष्णव गा रहा था। गाना सुनकर श्रीरामकृष्ण को बड़ी प्रसन्नता हुई। उन्होंने वैष्णव को कुछ पैसे देने के लिए कहा। एक भक्त नीचे गया। बाद में श्रीरामकृष्ण ने पूछा, 'कितने पैसे दिये ?' उन्हें जब मालूम हुआ कि उस भक्त ने सिर्फ दो ही पैसे दिये तो वे बोले, "दो ही पैसे ? हाँ, ठीक है। बड़ी मेहनत के रुपये हैं— मालिक की कितनी खुशामद करके उसने कमाया होगा !— अरे, मैंने सोचा था, कम से कम चार आने तो देगा !"

छोटे नरेन्द्र ने श्रीरामकृष्ण से कहा था, "मै यन्त्र लाकर आपको दिखलाऊँगा, विद्युत्-प्रवाह कैसा होता है।" आज वह यन्त्र लाकर उन्होंने दिखाया।

दिन के दो बजे होगे। श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ बैठे हुए है। अतुल एक मित्र मुनसिफ को ले आये है। शिकदारपारा के प्रसिद्ध

चित्रकार वागची आये हुए है। उन्होने श्रीरामकृष्ण को कई चित्र भेंट किये।

श्रीरामकृष्ण आनन्दपूर्वक चित्र देख रहे है। षड्भुजा मूर्ति देखकर भक्तों से कह रहे है--'देखो, देखो, कैसा है यह चित्र!' भक्तों ने फिर से देखने के लिए अहल्या-पापाणी का चित्र ले आने के लिए कहा। चित्र मे श्रीरामचन्द्र को देखकर सव लोग प्रसन्न हो रहे है।

श्रीयुत वागची के केश स्त्रियों की तरह लम्वे हैं। श्रीरामकृष्ण कह रहे है, "वहुत दिन हो गये, दक्षिणेश्वर में एक सन्यासी को मैंने देखा था। उसके वाल नौ हाथ लम्वे थे। संन्यासी 'राधे-राधे' जपता था, कोई ढोंग उसमे न था।"

कुछ देर वाद नरेन्द्र गाने लगे। गाने वैराग्य के भावों से ओत-प्रोत है। श्रीरामकृष्ण के श्रीमुख से तीव्र वैराग्य और संन्यास की वाते सुनकर नरेन्द्र को मानो उद्दीपन हो गया है। नरेन्द्र गा रहे हैं--

गाना-- क्या मेरे दिन विफल ही वीत जायेगे?...

गाना-- ऐ अन्तर्यामिनी माँ, तू अन्तर मे सदा ही जाग रही है।..

गाना-- हे दयामय, हे नाथ, यदि तुम्हारे चरण-सरोजों मे मेरा मन-मधुप चिरकाल के लिए मग्न न हुआ तो मेरे जीवन मे सुख ही क्या है?...

(२)

भजनानन्द में

साढ़े पाँच वजे का समय है। नरेन्द्र, श्याम वसु, गिरीश, डाक्टर दोकड़ी, छोटे नरेन्द्र, राखाल, मास्टर आदि वहुतसे भक्त उपस्थित हैं। डाक्टर सरकार ने आकर नाड़ी देखी और औपधि

की व्यवस्था की।

पीड़ा-सम्बन्धी बातो के पश्चात्, श्रीरामकृष्ण के औषधि-सेवन के बाद डाक्टर सरकार ने कहा— 'अब आप श्यामबाबू से बात-चीत कीजिये, मै अब चलूँ।' श्रीरामकृष्ण और एक भक्त बोल उठे, 'गाना सुनियेगा ?'

डाक्टर सरकार– आप गाते गाते जो नाचने लगते है वह भाव दबाना होगा।

डाक्टर फिर बैठ गये। नरेन्द्र मधुर कण्ठ से गा रहे है। साथ ही तानपूरा और मृदग बज रहे है।

गाना– तुम्हारी रचना अपार चमत्कारो से भरी हुई है। यह विश्व-ससार शोभा का आगार हो रहा है।...

गाना– माँ ! घोर अन्धकार मे तुम्हारी अरूपराशि चमक रही है।...

डाक्टर मास्टर से कह रहे है— 'यह गाना उनके (श्रीरामकृष्ण के) लिए खतरनाक है।'

श्रीरामकृष्ण ने मास्टर से पूछा— 'ये क्या कह रहे है ?' मास्टर ने कहा, 'डाक्टर को भय हो रहा है कि कही आपको भाव-समाधि न हो जाय।'

कहते ही कहते श्रीरामकृष्ण भावस्थ हो रहे है। डाक्टर के मुँह की ओर हेर हाथ जोड़कर कह रहे है— 'नही, नही, क्यों भाव होगा ?' परन्तु कहते ही कहते वे गम्भीर भावसमाधि मे मग्न हो गये। शरीर निश्चल और नेत्र स्थिर हो गये ! काठ के पुतले की तरह निर्वाक् बैठे हुए है ! बाह्य जगत् का ज्ञान लेश मात्र नही है। मन, बुद्धि, चित्त और अहकार, सब अन्तर्मुख है। अब ये पहलेवाले मनुष्य नही दीख पड़ते। नरेन्द्र मधुर कण्ठ से

गा रहे है--

गाना– यह कैसी सुन्दर शोभा है ! तुम्हारा कैसा मुन्दर मुख देख रहा हूं ! आज मेरे घर मे हृदयनाथ आये है, प्रेम का फुहारा छूट रहा है।...

गाना–हे दयामय, हे नाथ, यदि तुम्हारे चरण-सरोजों मे मेरा मन-मधुप चिरकाल के लिए मग्न न हुआ तो मेरे जीवन में सुख ही क्या है ?...

इस गीत को सुनकर डाक्टर मुग्ध हो अश्रुपुर्ण लोचनों से बोल उठे, 'अहा ! अहा !' नरेन्द्र ने पुनः गाया—

गाना– वह शुभ प्रभात कब आयेगा जब मेरे हृदय में उस प्रेम का संचार होगा, जब मेरी कामनाएँ पूर्ण हो जायेंगी, मैं मधुर हरिनाम करता रहूंगा और आँखों से प्रेमाश्रु-धारा बह चलेगी ?...

(३)

ज्ञान-विज्ञान विचार। ब्रह्मदर्शन

श्रीरामकृष्ण को अब बाहरी संसार का ज्ञान हो गया है। गाना भी समाप्त हो गया। पण्डित, मूर्ख तथा आबाल-वृद्ध-वनिता सभी के मन को मुग्ध करनेवाली उनकी बातचीत फिर होने लगी। सभी मनुष्य स्तब्ध है। सब लोग उस मुख की ओर एकटक देख रहे हैं। अब वह कठिन पीड़ा कहाँ है ? मुख अभी भी खिले हुए अरविन्द के समान प्रफुल्ल है— मुख से मानो ईश्वरी ज्योति निकल रही है।

श्रीरामकृष्ण डाक्टर से कहने लगे— "लज्जा छोड़ो, ईश्वर का नाम लोगे, इसमें लज्जा क्या है ? लज्जा, घृणा और भय, इन तीनों के रहते ईश्वर नहीं मिलते। 'मैं इतना बड़ा आदमी,

और ईश्वर नाम लेकर नाचूँ ? यह वात जव वड़े वड़े आदमी सुनेंगे, तव मुझे क्या कहेंगे ? अगर वे कहें, अजी, डाक्टर तो अव ईश्वर का नाम लेकर नाचने लगा, तो यह मेरे लिए वड़ी ही लज्जा की वात होगी।' इन सव भावों को छोड़ो।"

डाक्टर– मैं उस तरह का आदमी नहीं हूँ। लोग क्या कहेंगे, इसकी मुझे रत्ती भर परवाह नही।

श्रीरामकृष्ण– इतना तो तुममे खूव है। (सव हसते है)

"देखो, ज्ञान और अज्ञान के पार हो जाओ, तव उन्हें समझोगे। वहुत कुछ जानने का नाम है अज्ञान। पाण्डित्य का अहंकार भी अज्ञान है। एक ईश्वर ही सर्वभूतो मे है, इस निश्चयात्मिका वुद्धि का नाम है ज्ञान। उन्हे विशेष रूप से जानने का नाम है विज्ञान। पैर मे काँटा गड़ गया है, उसको निकालने के लिए एक दूसरे काँटे की जरूरत होती है। काँटे को काँटे से निकालकर फिर दोनों काँटे फेंक दिये जाते है। पहले अज्ञानरूपी काँटे को दूर करने के लिए ज्ञानरूपी काँटे को लाना होता है। इसके वाद ज्ञान और अज्ञान दोनों को ही फेक देना पड़ता है; क्योकि वे ज्ञान और अज्ञान से परे हैं। लक्ष्मण ने कहा था, 'राम, यह कैसा आश्चर्य है! इतने वड़े ज्ञानी वशिष्ठ देव भी पुत्रो के शोक से विह्वल होकर रो रहे थे!' राम ने कहा, 'भाई, जिसे ज्ञान है, उसे अज्ञान भी है; जिसे एक वस्तु का ज्ञान है, उसे अनेक वस्तुओ का भी ज्ञान है। जिसे उजाले का अनुभव है; उसे अँधेरे का भी है। ब्रह्म ज्ञान तथा अज्ञान से परे है; पाप और पुण्य, शुचिता और अशुचिता से परे है।'"

यह कहकर श्रीरामकृष्ण रामप्रसाद के गाने की आवृत्ति करके कहने लगे—

"आ मन ! चल टहलने चले। काली-कल्पतरु के नीचे तुझे चारों फल पड़े मिल जायेंगे . . .।"

श्याम वसु—दोनों काँटों के फेंक देने पर फिर क्या रह जागया ?

श्रीरामकृष्ण—नित्यशुद्धबोधरूपम्। यह तुम्हें भला कैसे समझाऊँ ? अगर कोई पूछे कि तुमने जो घी खाया वह कैसा था, तो उसे किस तरह समझाया जाय ? अधिक से अधिक इतना ही कह सकते हो कि घी जैसा होता है, वस वैसा ही था।

"एक स्त्री से उसकी एक सखी ने पूछा था, 'क्यों सखि, तेरा तो पति आया है, भला बता तो सही, पति के आने पर कैसा आनन्द मिलता है ?' उस स्त्री ने कहा, 'यह तो तू तभी समझेगी जब तेरे भी स्वामी होगा; इस समय मैं तुझे भला कैसे समझाऊँ !' पुराण मे है, भगवती जब हिमालय के यहाँ पैदा हुई तब माता ने गिरिराज को अनेक रूपो से दर्शन दिया। गिरीन्द्र ने सब रूपो के दर्शन करके भगवती से कहा, 'बेटी, वेद मे जिस ब्रह्म की बात है, अब मुझे उस ब्रह्म के दर्शन हों।' तब भगवती ने कहा, 'पिताजी, अगर ब्रह्म के दर्शन करना चाहते हो तो साधुओं का संग करो।' ब्रह्म क्या वस्तु है यह मुख से नही कहा जा सकता। एक ने कहा था, 'सब जूठा हो गया है, पर ब्रह्म जूठा नही हुआ।' इसका अर्थ यह है कि वेदो, पुराणो, तन्त्रों और शास्त्रों का मुख से उच्चारण करने के कारण वे सब जूठे हो गये हैं ऐसा कहा जा सकता है, परन्तु ब्रह्म क्या वस्तु है, यह कोई अभी तक मुख से नही कह सका। इसीलिए ब्रह्म अभी तक जूठे नही हुए। सच्चिदानन्द के साथ क्रीड़ा और रमण कितने आनन्दपूर्ण है, यह मुख से नही कहा जा सकता। जिसे यह सौभाग्य मिला है, वही जानता है।"

(४)

पण्डित का अहंकार। पाप तथा पुण्य

श्रीरामकृष्ण ने डाक्टर से फिर कहा– "देखो, अहंकार के विना गये ज्ञान नहीं होता। मनुष्य मुक्त तभी होता है जव 'मैं' दूर हो जाता है। 'मैं' और 'मेरा'— यही अज्ञान है। 'तुम' और 'तुम्हारा'— यही ज्ञान है। जो सच्चा भक्त है, वह कहता है, 'हे ईश्वर! तुम्हीं कर्ता हो, तुम्ही सब कुछ कर रहे हो, मैं तो वस यन्त्र ही हूँ। मुझसे जैसा कराते हो, मै वैसा ही करता हूँ। यह सब धन तुम्हारा है, ऐश्वर्य तुम्हारा है, संसार तुम्हारा है। तुम्हारा ही घर-परिवार है, मेरा कुछ भी नही, मै दास हूँ। तुम्हारी जैसी आज्ञा होगी, उसी के अनुसार सेवा करने का मेरा अधिकार है।'

"जिन लोगों ने थोड़ीसी पुस्तके पढ़ी है, उनमे अहकार समा जाता है। कालीकृष्ण ठाकुर के साथ ईश्वरीय वाते हुई थी। उसने कहा, 'वह सव मुझे मालूम है।' मैंने कहा, 'जो दिल्ली हो आया है, क्या वह कहता फिरता है कि मै दिल्ली हो आया— मैं दिल्ली हो आया?— क्या उसे इसके लिए घमण्ड हो सकता है? जो वावू है, क्या वह कहता फिरता है, मै वावू हूँ?'"

श्याम वसु– वे (कालीकृष्ण ठाकुर) आपको वहुत मानते है।

श्रीरामकृष्ण– अजी क्या कहूँ, दक्षिणेश्वर कालीमन्दिर की एक भंगिन को क्या ही अहंकार था! उसकी देह मे दो-एक गहने थे। वह जिस रास्ते से आ रही थी, उसी रास्ते से दो-एक आदमी उसकी वगल से निकल रहे थे। भंगिन ने उनसे कहा, 'ए, हट जा।' तव फिर दूसरे आदमियों के अहकार की वात क्या कहूँ!

श्याम वसु– महाराज, जव ईश्वर ही सव कुछ कर रहे है तो फिर पाप का दण्ड कैसा?

श्रीरामकृष्ण– तुम्हारी तो सुनार की-सी बुद्धि है !

नरेन्द्र– सुनार की बुद्धि अर्थात् calculating (बनियाई) बुद्धि।

श्रीरामकृष्ण– अरे भाई, तू आम खा ले और प्रसन्न हो जा। बगीचे में कितने सौ पेड़ हैं, कितने हजार डालियाँ हैं, कितने कोटि पत्ते है, इन सब के हिसाब से तुझे क्या काम ? तू आम खाने के लिए आया है, आम खा जा। (श्याम वसु से) तुम्हें इस संसार मे मनुष्य का शरीर ईश्वरप्राप्ति की साधना करने के लिए मिला है। ईश्वर के पाद-पद्मो मे किस तरह भक्ति हो उसी की चेष्टा करो। तुम्हें इन सब वृथा बातों से क्या मतलब ? फिलॉसफी (दर्शन-शास्त्र) लेकर विचार करने से तुम्हारा क्या होगा ? देखो, आध पाव शराब से ही तुम्हें नशा होता है, फिर शराबवाले की दूकान मे कितने मन शराब है, इसका हिसाब लगाकर क्या करोगे ?

डाक्टर– और ईश्वर की शराब अनन्त है। कुछ पता ही नही कि कितनी है !

श्रीरामकृष्ण– (श्याम वसु से)– ईश्वर को आममुख्तारी क्यों नही दे देते ? उस पर सारा भार छोड़ दो। अच्छे आदमी को अगर कोई भार दे दे, तो क्या वह कभी अन्याय कर सकता है ? पाप का दण्ड वे देंगे या नहीं यह वे जानें।

डाक्टर– उनके मन मे क्या है, यह वे जानें। आदमी हिसाब लगाकर क्या कहेगा ? वे हिसाब से परे है।

श्रीरामकृष्ण– (श्याम वसु से)– तुम कलकत्तेवाले बस यही एक राग अलापते हो। तुम लोग यही कहा करते हो, 'ईश्वर मे पक्षपात है,' क्योंकि एक को उन्होने सुख मे रखा है, और दूसरे को दुःख मे। ये मूर्ख खुद जैसे हैं, उनके स्वयं के भीतर जैसा है,

वैसा ही ये ईश्वर के भीतर भी देखते हैं।

"हेम दक्षिणेश्वर जाया करता था। मुलाकात होने पर ही मुझसे कहता था, 'क्यों भट्टाचार्य महाशय, संसार में एक ही वस्तु है---मान---क्यों ?' मनुष्य जीवन का उद्देश्य ईश्वर-लाभ है, यह इने-गिने लोग ही कहते है।"

(५)

स्थूल, सूक्ष्म, कारण तथा महाकारण

श्याम वसु- क्या कोई सुक्ष्म शरीर को दिखला सकता है ? क्या कोई यह दिखला सकता है कि वह शरीर बाहर चला जाता है ?

श्रीरामकृष्ण- जो सच्चे भक्त है, उन्हे क्या गरज कि वे तुम्हें यह सब दिखलाये ? कोई साला माने या न माने, उनका इससे क्या वनता-विगड़ता है ! उनमे इस तरह की इच्छा नही रहती कि कोई वड़ा आदमी उन्हें माने।

श्याम वसु-अच्छा, स्थूल देह, सूक्ष्म देह, इन सब मे भेद क्या है ?

श्रीरामकृष्ण-पंचभूत को लेकर जो देह है, वही 'स्थूल देह' है। मन, वुद्धि, अहंकार और चित्त को लेकर 'सूक्ष्म शरीर' है। जिस शरीर से ईश्वर का आनन्द मिलता है और ईश्वर से सम्भोग किया जाता है, वह 'कारण शरीर' है। तन्त्रों मे उसे 'भगवती तनु' कहा है। सब से अतीत है 'महाकारण' (तुरीय), यह मुख से नही कहा जा सकता।

"केवल सुनने से क्या होगा ? कुछ करो भी।

"भंग-भग रटने से क्या होगा ? उससे क्या कभी नशा हो सकता है?

"भंग को कूटकर देह में लनाने से भी नशा नहीं होता। कुछ खाना चाहिए ! कौनसा सूत चालीस नम्बर का है, और कौनसा

इकतालीस नम्बर का, यह सब सूत का व्यवसाय बिना किये क्या कभी कहा जा सकता है? जिनका सूत का व्यवसाय है उनके लिए सूत की पहचान करना कोई कठिन बात नहीं। इसीलिए कहता हूँ, कुछ साधना करो, तब स्थूल, सूक्ष्म, कारण और महाकारण किसे कहते हैं, यह समझ सकोगे। जब ईश्वर से प्रार्थना करोगे तब उनके पादपद्मों में केवल भक्ति की प्रार्थना करना।

"अहल्या के शापमोचन के बाद श्रीरामचन्द्र ने उससे कहा, 'तुम मुझसे कोई वर-याचना करो।' अहल्या ने कहा, 'राम, यदि वर देना ही है, तो यही वर दो कि चाहे शूकर-योनि में भी मेरा जन्म क्यों न हो, फिर भी तुम्हारे पादपद्मों में मेरा मन लगा रहे।'

"मैंने माता के पास एकमात्र भक्ति की प्रार्थना की थी। श्री माता के पादपद्मों में फूल चढ़ाकर हाथ जोड़ मैंने कहा था—'माँ, यह लो तुम अपना ज्ञान और यह लो अज्ञान, मुझे शुद्धा भक्ति दो। यह लो अपनी शुचिता और यह लो अपनी अशुचिता, मुझे शुद्धा भक्ति दो; यह लो अपना पाप और यह लो अपना पुण्य; यह लो अपना भला और यह लो अपना बुरा, मुझे शुद्धा भक्ति दो। यह लो अपना धर्म और यह लो अपना अधर्म, मुझे शुद्धा भक्ति दो।'

"धर्म अर्थात् दानादि कर्म; धर्म को लेने ही से अधर्म को लेना होगा, पुण्य को लेने ही से पाप को लेना होगा, ज्ञान को लेने ही से अज्ञान को लेना होगा, शुचिता को लेने ही से अशुचिता को भी लेना होगा। जैसे, जिसे उजाले का ज्ञान है, उसे अंधेरे का भी ज्ञान है। जिसे एक का ज्ञान है, उसे अनेक का भी ज्ञान है। जिसे भले का विचार है, उसे बुरे का भी है।

"यदि शूकर का माँस खाकर भी ईश्वर के पादपद्मों मे किसी की भक्ति हो, तो वह पुरुष धन्य है। और यदि हविष्य भोजन करके भी संसार में आसक्ति रही—"

डाक्टर– तो वह अधम है। यहाँ एक वात कहता हूँ। वुद्ध ने शूकर-माँस खाया था। शूकर-माँस खाया नही कि पेट मे शूल होने लगा! इस वीमारी मे वुद्ध अफीम का सेवन करते थे! निर्वाण-सिर्वाण जानते हो क्या है?— बस अफीम खाकर पीनक मे पड़े रहते थे— वाह्य संसार का कुछ ज्ञान नही रहता था,— यही निर्वाण हो गया!

वुद्धदेव के निर्वाण की यह अनोखी व्याख्या सुनकर सब लोग हँसने लगे। फिर दूसरी वातचीत होने लगी।

(६)

गृहस्थ तथा निष्काम कर्म। थियॉसफी

श्रीरामकृष्ण– (श्याम वसु से)– संसार-धर्म मे दोष नही; परन्तु ईश्वर के पाद-पद्मों मे मन रखकर, कामनारहित होकर कर्म करना चाहिए। देखो न, अगर किसी की पीठ में एक फोड़ा हो जाता है तो सव के साथ वह बातचीत भी करता है और घर के काम-काज भी देखता है, परन्तु उसका मन फोड़े पर ही लगा रहता है; इसी तरह, घर का कार्य करते हुए भी ईश्वर की ओर मन को लगाये रखना चाहिए।

"संसार में वदचलन औरत की तरह रहो। उसका मन तो यार पर लगा रहता है, पर वह घर का सव काम-काज सम्भालती रहती है। (डाक्टर से) समझे?"

डाक्टर– वह भाव अगर न रहे तो कैसे समझूंगा?

श्याम वसु– कुछ तो अवश्य ही समझते हो! (सव हँसते हैं),

श्रीरामकृष्ण— (हँसते हुए)— और यह व्यवसाय (समझने का) वे वहुत दिनो से कर रहे हैं! क्यों जी? (सव हँसते है)

श्याम वसु— महाराज! थियॉसफी का क्या मत है?

श्रीरामकृष्ण— असल वात यह है कि जो लोग चेला वनाते फिरते हैं, वे हलके दर्जे के है। और जो लोग सिद्धि अर्थात् अनेक तरह की शक्तियाँ चाहते है, वे भी हलके दर्जे के है। जैसे, पैदल गगा पार कर जाना, यह सिद्धि है। दूसरे देश मे एक आदमी क्या वातचीत कर रहा है, यह कह सकना एक सिद्धि है। इन सव आदमियों के लिए ईश्वर पर भक्ति होना वहुत कठिन है।

श्याम वसु— परन्तु वे लोग (थियॉसफी सम्प्रदायवाले) हिन्दू धर्म को फिर से स्थापित करने की चेष्टा कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण— मुझे उनके सम्वन्ध मे काफी ज्ञान नहीं है।

श्याम वसु— मृत्यु के वाद जीवात्मा कहाँ जाता है—चन्द्रलोक मे, नक्षत्रलोक मे या अन्य किसी लोक मे—ये सव वातें थियॉसफी से समझ मे आ जाती है।

श्रीरामकृष्ण— होगा! मेरा भाव कैसा है, जानते हो? हनुमान से एक आदमी ने पूछा था, 'आज कौनसी तिथि है?' हनुमान ने कहा, 'मै वार, तिथि, नक्षत्र, यह कुछ नही जानता, मैं तो वस श्रीरामचन्द्रजी का स्मरण किया करता हूँ।' मेरा भी ठीक ऐसा ही भाव है।

श्याम वसु— उन लोगो का 'महात्माओ' के अस्तित्व में विश्वास है। क्या आपका भी है?

श्रीरामकृष्ण— यदि तुम मेरी वात पर विश्वास करो तो हाँ, मुझे है। परन्तु ये सव वातें इस समय रहने दो। मेरी वीमारी कुछ अच्छी होने पर फिर आना। यदि तुम्हें मुझ पर विश्वास

है तो तुम्हारे लिए ऐसा कोई मार्ग निकल आयगा जिससे तुम्हें मन की शान्ति प्राप्त हो जायगी। तुम तो देखते ही हो कि मैं धन या वस्त्र की कोई भेट स्वीकार नहीं करता। यहाँ कोई अन्य भेट भी नहीं देनी पड़ती, इसलिए यहाँ इतने लोग आया करते है! (सब हँसते है)

(डाक्टर से) "यदि तुम बुरा मत मानो तो तुमसे एक बात कहूँ।—यह सब तो बहुत किया—रुपया, मान, लेक्चर; अब थोड़ासा मन ईश्वर पर भी लगाओ। और यहाँ कभी कभी आया करो। ईश्वर की बातें सुनकर उद्दीपन होगा।"

कुछ देर बाद डाक्टर चलने के लिए उठे। इसी समय श्रीयुत गिरीशचन्द्र घोष आ गये और उन्होने श्रीरामकृष्ण के चरणों की धूलि धारण कर आसन ग्रहण किया। उन्हें देखकर डाक्टर को प्रसन्नता हुई, वे फिर बैठ गये।

डाक्टर– मेरे रहते रहते ये नही आयेंगे! ज्योंही चलने का समय आया कि आकर हाजिर हो गये! (सब हँसते है)

गिरीश के साथ डाक्टर की विज्ञान-सभा (Science Association)-सम्बन्धी बातें होने लगीं।

श्रीरामकृष्ण– मुझे एक दिन वहाँ ले चलोगे?

डाक्टर– आप अगर वहाँ जायेंगे तो ईश्वर की आश्चर्यपूर्ण कारीगरी देखकर बेहोश हो जायेंगे।

श्रीरामकृष्ण– हूं?

डाक्टर– (गिरीश से)–और चाहे सब काम करो, पर ईश्वर समझकर इनकी पूजा न किया करो। ऐसे भले आदमी को क्यों बिगाड़ रहे हो?

गिरीश– क्या करूं महाशय? जिन्होने इस संसार-समुद्र और

सन्देह-सागर से मुझे पार किया, उन्हें और क्या मानूँ बतलाइये। उनमे ऐसी एक भी चीज नही है जिसे मैं पवित्र न मानूँ। उनकी विष्ठा तक को तो मै गन्दी नही मानता।

डाक्टर– मै विष्ठा के लिए नहीं कहता; मुझे भी उससे घृणा नहीं है। एक दिन एक दूकानदार अपने बच्चे को दिखाने मेरे पास आया था। उस बच्चे ने वही टट्टी कर डाली। सब लोग कपड़े से नाक ढकने लगे। मैं वहीं बाजू से आध घण्टे बैठा रहा, पर नाक मे कपड़ा तक न लगाया। फिर, जब मेहतर मैले की टोकरी लिये मेरे पास से निकल जाता है, तब भी मैं अपना नाक नहीं ढकता। मैं जानता हूँ, वह जो है मैं भी वही हूँ— मुझमें और उसमे कोई अन्तर नहीं। तब फिर उस पर क्यों घृणा करूँ? क्या मै इनके पैरों की धूलि नहीं ले सकता!— यह देखो— (श्रीरामकृष्ण की पद-धूलि धारण करते हैं।)

गिरीश– इस शुभ मुहूर्त पर देवदूत भी बधाई दे रहे है!

डाक्टर– तो पैरों की धूल लेने में इतना आश्चर्य क्या है? मैं तो सब के पैरों की धूल ले सकता हूँ। दीजिये, दीजिये— (सब के पैरों की धूलि लेते है।)

नरेन्द्र– (डाक्टर से)– इन्हें हम लोग ईश्वर की तरह मानते हैं। जैसे उद्भिद् और जीव-जन्तुओं के बीच में कुछ ऐसे जीवधारी होते है जिन्हे उद्भिद् या जन्तु बतलाना मुश्किल है, उसी तरह नर-लोक और देव-लोक के बीच मे एक ऐसा स्थल है जहाँ यह बतलाना कठिन है कि यह व्यक्ति मनुष्य है या ईश्वर।

डाक्टर– अजी, ईश्वर की बात पर उपमा नहीं काम करती।

नरेन्द्र– मैं ईश्वर तो कह नहीं रहा, ईश्वर-तुल्य मनुष्य कह रहा हूँ।

डाक्टर– अपने इस तरह के भावों को दबा रखना चाहिए, खोलना अच्छा नहीं। मेरा भाव किसी ने नही समझा। मेरे परम मित्र मुझे घोर निर्दयी समझते है। और तुम्ही लोग शायद एक दिन मुझे जूतों से मारकर भगा दोगे।

श्रीरामकृष्ण– (डाक्टर से)– यह क्या कहते हो ? ऐसा मत कहो। ये लोग तुम्हे कितना प्यार करते है! नववधु जिस उत्सुकता से शयन-गृह मे पति की प्रतीक्षा करती है, उसी उत्सुकता से ये लोग तुम्हारे आने की वाट जोहते रहते है!

गिरीश– (डाक्टर से)– सब लोगो की आप पर अत्यन्त श्रद्धा है।

डाक्टर– मेरा लड़का, यहाँ तक कि मेरी स्त्री भी मुझे निष्ठुर हृदय का मनुष्य समझती है। मेरा दोप केवल इतना ही है कि मैं किसी के पास अपने भाव प्रकट नही होने देता।

गिरीश– तव तो महाशय, आपके लिए यह अच्छा है कि आप अपने हृदय के कपाट खोल दे—– कम से कम अपने मित्रों पर कृपा करके—– यह सोचकर कि वे आपकी थाह नही पा रहे है।

डाक्टर– अजी कहूँ क्या, तुम्हारे से भी मेरा भाव अधिक उमड़ चलता है। (नरेन्द्र से) मै एकान्त में आँसू वहाया करता हूँ।

(श्रीरामकृष्ण से) "अच्छा, भाव के आवेश में तुम दूसरों की देह पर पैर रख देते हो, यह अच्छा नही।"

श्रीरामकृष्ण– मुझे यह ज्ञान थोड़े ही रहता है कि मै किसी की देह पर पैर रख रहा हूं!

डाक्टर– वह अच्छा नही, इतना तो वोध होता होगा ?

श्रीरामकृष्ण– भावावेश में मुझे क्या होता है, यह तुमसे कैसे

कहूँ ? उस अवस्था के बाद सोचता हूँ कि शायद इसीलिए मुझे रोग हो रहा है। ईश्वर के भावावेश मे मुझे उन्माद हो जाता है। उन्माद में इस तरह हो जाता है, मैं क्या करूँ ?

डाक्टर– ये (श्रीरामकृष्ण) मान गये। अपने कार्य के लिए ये पश्चात्ताप कर रहे हैं। यह कार्य अन्यायपूर्ण है, यह ज्ञान भी इन्हे है।

श्रीरामकृष्ण– (नरेन्द्र से)– तू तो बड़ा चण्ट है, इसका अर्थ इन्हें समझा क्यों नहीं देता ?

गिरीश– (डाक्टर से)– महाशय, आपने समझने में भूल की है। उन्हें इस बात का दुःख नही है कि उन्होंने समाधि-अवस्था में भक्तों के शरीर को स्पर्श किया। उनका स्वयं का शरीर नितान्त शुद्ध तथा पापरहित है। वे जो दूसरों को इस प्रकार छूते हैं, यह उन्हीं लोगों के कल्याणार्थ है। कभी कभी उनके मन में यह बात उठती है कि शायद उन लोगों के पाप अपने ऊपर ले लेने के कारण ही उन्हें यह शारीरिक कष्ट हुआ हो।

"आप अपनी ही बात सोचिये। एक बार आप को उदरशूल हुआ था। उस समय क्या आप दुःखित नही होते थे कि रात को इतनी इतनी देर तक जगकर क्यों पढ़ा ? परन्तु इसका अर्थ क्या यह हुआ कि रात को देर तक पढ़ना कोई बुरी बात है ? इसी प्रकार वे (श्रीरामकृष्ण) भी, सम्भव है, दुःखित हों कि वे रुग्ण हैं। परन्तु उससे उनके मन में यह भाव नहीं आता कि दूसरों के कल्याण के लिए उन्होने उन लोगों को जो स्पर्श किया वह ठीक न था।"

डाक्टर कुछ लज्जित से हुए और गिरीश से कहा, 'मैं तुमसे हार गया, अपनी चरण-धूलि मुझे लेने दो।' (गिरीश के पैरों की

धूल लेते है) (नरेन्द्र से) 'कोई कुछ भी कहे, गिरीश की बुद्धि-मत्ता को मानना पड़ता है।'

नरेन्द्र– (डाक्टर से)–एक वात और देखिये। एक वैज्ञानिक आविष्कार के लिए आप अपने जीवन का उत्सर्ग कर सकते हैं, उस समय-अपने शरीर और सुख:दुख पर ध्यान भी न देगे परन्तु ईश्वर-सम्वन्धी विज्ञान सव विज्ञानो मे बड़ा है। तव क्या यह उनके (श्रीरामकृष्ण के) लिए स्वाभाविक नही है कि वे ईश्वर की प्राप्ति के लिए अपना शरीर और स्वास्थ्य भी लगा दे ?

डाक्टर– जितने भी धर्माचार्य हुए है—ईशू, चैतन्य, वुद्ध, मुहम्मद इन सब में अन्त अन्त में अहंकार आ गया था—कहा—'जो कुछ मैं कहता हूँ, वही ठीक है।' कैसा आश्चर्यजनक !

गिरीश– (डाक्टर से)–महाशय, वही दोष आप पर भी लागू है। आप इन सब पर अहंकार का दोष लगा रहे है; आप उनमें बुराई देख रहे है। वस इसीलिए तो आप पर भी अहंकार का दोष लगाया जा सकता है।

डाक्टर चुप हो गये।

नरेन्द्र– (डाक्टर से)–इन्हें जो हम लोग पूजते है, वह पूजा मानो ईश्वर की ही पूजा है।

इन वातों को सुनकर श्रीरामकृष्ण वालक की तरह हंस रहे है।

परिच्छेद २३

संसारी लोगों के प्रति उपदेश

(१)

'आम खाओ'

आज वृहस्पतिवार है। आश्विन की कृष्णा षष्ठी, २९ अक्टूबर, १८८५। श्रीरामकृष्ण वीमार हैं। श्यामपुकुर मे हैं। डाक्टर सरकार चिकित्सा कर रहे है। उनका मकान शाँखारिटोला मे है। श्रीरामकृष्ण की हालत प्रति दिन कैसी रहती है, इसकी खबर लेकर डाक्टर के यहाँ रोज आदमी भेजा जाता है। दिन के दस वजे का समय होगा, कलकत्ते मे डा. सरकार के मकान पर मास्टर श्रीरामकृष्ण की हालत वताने के लिए आ पहुंचे।

डाक्टर—देखो, डा. विहारी भादुड़ी की एक धुन है! कहता है, गटे (एक विख्यात जर्मन लेखक) की 'स्पिरिट' (सूक्ष्म शरीर) निकल गयी और गटे स्वयं उसे देख रहा था! कितने आश्चर्य की वात है!

मास्टर—श्रीरामकृष्णदेव कहते हैं, इन सव वातों से हमे क्या मतलव? हम लोग संसार मे इसलिए आये हैं कि ईश्वर के पादपद्मों मे भक्ति हो। वे कहते है, एक आदमी एक वगीचे मे आम खाने के लिए गया था। वह एक कागज और पेन्सिल लेकर कितने पेड़ है, कितनी डालियाँ है, कितने पत्ते है, गिन-गिनकर लिखने लगा। वगीचे के एक आदमी से उसकी भेट हुई। उस आदमी ने पूछा, 'यह तुम क्या कर रहे हो?—और यहाँ तुम आये भी क्यों?' तव उसने कहा, 'यहाँ कितने पेड़ है, कितनी डालियाँ है, कितने पत्ते है, यही गिन रहा हूँ। यहाँ आम खाने

के लिए आया हूँ।' बगीचे के आदमी ने कहा, 'आम खाने आये हो तो आम खा जाओ,—कितने पत्ते है, कितनी डालियाँ है, इन सब बातों से तुम्हे क्या काम ?'

डाक्टर—परमहंस ने सार पदार्थ ग्रहण किया है।

फिर डाक्टर अपने होमिओपैथिक अस्पताल के सम्बन्ध में बहुत-सी बाते कहने लगे। कितने रोगी रोज आते हैं उनकी तालिका दिखलायी, और कहा, 'पहले पहल डाक्टरो ने मुझे निरुत्साहित कर दिया था। वे लोग अनेक मासिक पत्रों मे भी मेरे विरोध मे लिखते थे'—आदि।

डाक्टर गाड़ी पर बैठे। साथ मास्टर भी चढे। डाक्टर रोगियो को देखते हुए जाने लगे। पहले चोरवागान, फिर माथाघसा गली, फिर पथरियाघट्टा, सब जगह के रोगियो को देखकर श्रीरामकृष्ण को देखने जायेंगे। डाक्टर पथरियाघट्टा मे ठाकुरों के एक मकान मे गये। वहाँ कुछ देर हो गयी। गाड़ी मे आकर फिर गप्प लड़ाने लगे।

डाक्टर—इस बाबू के साथ मेरी श्रीरामकृष्णदेव के बारे में बातचीत हुई, थियॉसफी की बातचीत हुई और फिर कर्नल अलकट की। इस बाबू से श्रीरामकृष्णदेव नाराज रहते है। इसका कारण जानते हो ? यह बाबू कहता है, 'मै सब जानता हूँ।'

मास्टर—नहीं, नाराज क्यो होंगे ? परन्तु इतना मैने भी सुना है कि एक बार भेट हुई थी। श्रीरामकृष्णदेव ईश्वर की बातचीत कर रहे थे। तब इन्होने कहा था, 'हॉ, यह सब मै जानता हूँ।'

डाक्टर—इस बाबू ने विज्ञान परिषद को ३२५००) का दान दिया है।

गाड़ी चलने लगी। बड़ाबाजार होकर लौट रही है। डाक्टर

श्रीरामकृष्ण की सेवा के सम्बन्ध में वातचीत करने लगे।

डाक्टर– तुम लोगों की क्या यह इच्छा है कि इन्हें दक्षिणेश्वर भेज दिया जाय ?

मास्टर– नहीं, इससे भक्तों को वड़ी असुविधा होगी। कलकत्ते मे रहने से हर समय आना-जाना लगा रह सकता है—देखने मे सुविधा होती है।

डाक्टर– यहाँ खर्च तो वहुत हो रहा होगा।

मास्टर– इसके लिए भक्तों को कोई कष्ट नही है। वे लोग जिस प्रकार भी सेवा हो सके यही चेष्टा कर रहे है। खर्च तो यहाँ भी है, वहाँ भी है। वहाँ जाने पर हम लोग हमेशा देख नहीं सकेगे, यही एक चिन्ता की बात है।

(२)

संसार का स्वरूप तथा ईश्वरलाभ का उपाय

डाक्टर और मास्टर श्यामपुकुर के दुमँजले मकान में गये। उस मकान के ऊपर वाहरवाले वारामदे में दो कमरे है। एक की लम्बाई पूर्व और पश्चिम की ओर है, दूसरे की उत्तर और दक्षिण की ओर। इनमे से पहलेवाले कमरे में जाकर उन्होंने देखा, श्रीरामकृष्ण प्रसन्नतापूर्वक वैठे हुए है। पास मे डाक्टर भादुड़ी तथा दूसरे भक्त है।

डाक्टर ने नाड़ी देखी। पीड़ा का सव हाल उन्होंने पूछकर मालूम किया।

क्रमशः ईश्वर के सम्वन्ध मे वातचीत होने लगी।

भादुड़ी– वात जानते हो, क्या है? सव स्वप्नवत्।

डाक्टर– सव कुछ भ्रम है। परन्तु किसको भ्रम है और क्यों भ्रम है? और सव लोग भ्रम जानकर भी फिर वातचीत क्यो

करते है ? 'ईश्वर सत्य है और उसकी सृष्टि मिथ्या है' इसमें मैं विश्वास नही कर सकता।

श्रीरामकृष्ण– 'तुम प्रभु हो, मैं दास हूँ' यह बड़ा सुन्दर भाव है। जव तक यह बोध है कि देह सत्य है, जव तक 'मैं' और 'तुम' का भाव बना हुआ है, तव तक सेव्य और सेवक भाव ही अच्छा है। 'मै वही हूँ' इस तरह की बुद्धि अच्छी नही।

"अच्छा, मै तुम्हें एक और वात वताऊँ ? किसी कमरे को चाहे तुम एक किनारे से देखो या कमरे के भीतर से देखो, कमरा वही है।"

भादुड़ी– (डाक्टर से)– ये सव वाते वेदान्त मे है। शास्त्र पढ़ो, तव समझोगे।

डाक्टर– क्यों ? क्या ये शास्त्रो को पढ़कर विद्वान् हुए है ? और यही वात तो ये भी कहते है। क्या बिना शास्त्रो को पढ़े हो नही सकता ?

श्रीरामकृष्ण– अजी, पर मैंने कितने शास्त्र सुने है !

डाक्टर– केवल सुनने से वहुतसी भूले रह सकती है। आपने केवल सुना ही नहीं !

फिर दूसरी वातचीत होने लगी।

श्रीरामकृष्ण– (डाक्टर से)– मैंने सुना है, तुम कहते हो कि मैं (श्रीरामकृष्ण) पागल हूँ। इसी से ये लोग (मास्टर आदि की ओर इशारा करके) तुम्हारे पास नही जाना चाहते।

डाक्टर– (मास्टर की ओर देखकर)– मैं इन्हे पागल क्यों कहने लगा ?

"परन्तु हाँ, इनके अहंकार की वात अवश्य कही थी। भला ये आदमियों को पैरो की धूल क्यों लेने देते है ?"

मास्टर– नहीं तो लोग रोने लगते है ।

डाक्टर– वह उनकी भूल है, उन्हें समझाना चाहिए ।

मास्टर– क्यों ? सर्वभूतों मे क्या नारायण नहीं हैं ?

डाक्टर– इसके लिए मुझे कोई आपत्ति नहीं । तो फिर तुम्हें सव के पैरों की धूल लेनी चाहिए ।

मास्टर– किसी किसी मनुष्य में उनका प्रकाश अधिक है । पानी सव जगह है, परन्तु तालाव में, नदी में, समुद्र में वह अधिक है । आप फैराडे को जितना मानियेगा, उतना ही क्या किसी नये 'वैचेलर ऑफ साइन्स' (Bachelor of Science) को भी मानियेगा ?

डाक्टर– हाँ, यह मैं मानता हूं । परन्तु ईश्वर को वीच में क्यो लाते हो ?

मास्टर– हम लोग एक दूसरे को नमस्कार इसलिए करते हैं कि सव के हृदय में ईश्वर का वास है । इन विषयों को आपने न तो अधिक पढ़ा है और न इन पर विचार ही किया है ।

श्रीरामकृष्ण–(डाक्टर से)– किसी किसी वस्तु में उनका प्रकाश अधिक है । तुमसे तो मैंने कहा, सूर्य की किरणें मिट्टी में गिरती है तो प्रकाश एक तरह का होता है, पेड़ों में और तरह का, फिर आईने मे एक दूसरा ही प्रकाश देखने को मिलता है । देखो न, प्रह्लाद आदि और ये लोग क्या वरावर हैं ? प्रह्लाद का जीवन और मन, सर्वस्व ही ईश्वर को अर्पित हो चुका था ।

डाक्टर चुप हो रहे । सब लोग चुप हैं ।

श्रीरामकृष्ण– (डाक्टर से)– देखो, यहाँ के लिए (स्वयं को इंगित करके) तुम्हारे हृदय मे कुछ प्रेम का आकर्पण है । तुमने मुझसे कहा था कि तुम मुझे चाहते हो ।

डाक्टर–तुम प्रकृति के शिशु हो, इसीलिए इतना कहता हूँ। लोग पैरो पर हाथ रखकर नमस्कार करते है, इससे मुझे कष्ट होता है। मैं सोचता हूँ, ऐसे भले आदमी को भी ये लोग बिगाड रहे है। केशव सेन को उसके चेलो ने ऐसे ही बिगाड़ा था। तुम्हे यह बतलाता हूँ, सुनो––

श्रीरामकृष्ण–तुम्हारी बात मैं क्या सुनूँ ? तुम लोभी, कामी और अहंकारी हो।

भादुड़ी–(डाक्टर से)–अर्थात् तुममे जीवत्व है। जीवो का धर्म यही है––रुपया-पैसा, मान-मर्यादा का लोभ, काम और अहकार। सब जीवों का यही धर्म है।

डाक्टर–ऐसा अगर कहो तो बस तुम्हारे गले की बीमारी देखकर चला जाया करूँगा। दूसरी बातो की आवश्यकता न रह जायगी। तर्क अगर करना होगा तो ठीक ही ठीक कहूँगा।

सब चुप है। कुछ देर बाद श्रीरामकृष्ण फिर भादुड़ी से बातचीत कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण–बात यह है कि ये (डा. सरकार) इस समय नेति-नेति करके अनुलोम मे जा रहे है। जब विलोम मे आयेंगे तब सब मानेंगे।

"केले के खोल निकालते रहने से उसका माझा मिलता है।

"खोल एक अलग चीज है और माझा एक अलग चीज। न माझा को कोई खोल कह सकता है और न खोल को माझा, परन्तु अन्त मे आदमी देखता है, खोल का ही माझा है और माझे का ही खोल। चौबीसो तत्त्व वे ही हुए है और मनुष्य भी वे ही हुए है। (डाक्टर से) भक्त तीन तरह के है––अधम भक्त, मध्यम भक्त और उत्तम भक्त। अधम भक्त कहता है, 'ईश्वर वहाँ दूर है;

सृष्टि अलग है, ईश्वर अलग है।' मध्यम भक्त कहता है, 'वे अन्तर्यामी है, वे हृदय मे है।' वह हृदय के भीतर ईश्वर को देखता है। उत्तम भक्त देखता है, वे ही यह सब हुए है, चौवीसों तत्त्व वे ही हुए है। वह देखता है, ईश्वर ऊर्ध्व और अधोभाग मे पूर्ण रूप से विराजमान हैं।

"तुम गीता, भागवत, वेदान्त आदि पढ़ो तो सब समझ सकोगे।

"क्या ईश्वर इस सृष्टि मे नहीं हैं?"

डाक्टर– नहीं, वे सब जगह है, और इसीलिए उनकी खोज हो नहीं सकती।

कुछ देर वाद दूसरी वातें होने लगीं। श्रीरामकृष्ण को सदा ही ईश्वरभाव हुआ करता है, इससे वीमारी के वढ़ने की सम्भावना है।

डाक्टर– (श्रीरामकृष्ण से) –भाव को दवा रखिये। मुझे भी वहुत भाव होता है। तुमसे भी अधिक नाच सकता हूँ।

छोटे नरेन्द्र– (हँसकर)– भाव अगर कुछ और बढ़ जाय तव आप क्या करेंगे?

डाक्टर– उसके दवाने की मेरी शक्ति भी साथ ही वढ़ती जायगी।

श्रीरामकृष्ण तथा मास्टर– अभी आप वैसा कह सकते है।

मास्टर– भाव होने पर क्या आप कह सकते है?

कुछ देर बाद रुपये-पैसे की वातचीत होने लगी।

श्रीरामकृष्ण– (डाक्टर से)– मैं तो इसके वारे में सोचता ही नहीं हूँ; और यह वात तुम भी जानते हो। क्यों ठीक है न? यह ढोंग नहीं है।

डाक्टर– मेरा भी यही हाल है। आपकी वात तो अलग।

मेरा रुपयों का सन्दूक तो खुला ही पड़ा रहता है।

श्रीरामकृष्ण– यदु मल्लिक भी इसी तरह दूसरे ख्याल में पड़ा रहता है। जब भोजन करने बैठता है, उस समय भी इतना अन्यमनस्क रहता है कि भला-बुरा जो कुछ सामने आया वही खा लेता है। किसी ने अगर कहा, 'इसे मत खाना, यह अच्छी नही लगती,' तब कहता है, 'क्या ? यह तरकारी अच्छी नही ? हाँ, सच ही तो है।'

क्या श्रीरामकृष्ण यह सूचित कर रहे हैं कि ईश्वर-चिन्तन से होनेवाली अन्यमनस्कता तथा विषय-चिन्तन से होनेवाली अन्यमनस्कता मे बहुत अन्तर है ?

फिर भक्तों की ओर देख श्रीरामकृष्ण डाक्टर की ओर इशारा करके कह रहे है–– "देखो, सिद्ध होने पर चीज नरम हो जाती है। पहले ये बड़े कड़े थे, अभी भीतर से नरम हो रहे है।"

डाक्टर– सिद्ध होने पर चीज ऊपर से ही नरम होती है, परन्तु इस जीवन मे मेरे लिए यह बात नहीं होने की ! (सब हँसते है)

डाक्टर विदा होनेवाले है। श्रीरामकृष्ण से कह रहे है––

"पैरों की धूल लोग लेते है, उन्हे क्या तुम मना नहीं कर सकते ?"

श्रीरामकृष्ण– क्या सब लोग अखण्ड सच्चिदानन्द को पकड़ सकते है ?

डाक्टर– इसलिए क्या जो मत ठीक है वह आप लोगो को नही बतलायेंगे ?

श्रीरामकृष्ण– लोगों की अलग अलग रुचि होती है। और फिर आध्यात्मिक जीवन के लिए सब लोग एक समान अधिकारी

नही होते।

डाक्टर– वह किस प्रकार ?

श्रीरामकृष्ण– रुचि-भेद किस तरह का है, जानते हो ? जिसे जो भोजन रुचता है तथा सह्य है, उसी प्रकार का भोजन वह करता है। कोई मछली का शोरवा पसन्द करता है, तो किसी को तली हुई मछलियाँ अच्छी लगती है, कोई उनकी तरकारी वनाकर खाता है, तो कोई पुलावा वनाकर। उसी तरह अधिकारी-भेद भी है। मै कहता हूँ, पहले केले के पेड़ मे निशाना साधो, फिर दीपक की लौ पर, वाद में उड़ती हुई चिड़िया पर।

शाम हो गयी। श्रीरामकृष्ण ईश्वर-चिन्तन मे मग्न हुए। इतनी पीड़ा है, परन्तु वह मानो एक ओर पडी रही। दो-चार अन्तरंग भक्त पास बैठे हुए सव देख रहे है। श्रीरामकृष्ण वड़ी देर तक इसी अवस्था मे रहे।

श्रीरामकृष्ण प्राकृत अवस्था मे आये। मणि पास वैठे हुए है। उनसे एकान्त मे कह रहे है––"देखो, अखण्ड मे मन लीन हो गया था। इसके वाद जो कुछ देखा, उसके सम्वन्ध मे वहुतसी बातें है। डाक्टर को देखा, उसकी वन जायगी––कुछ दिन वाद। अव अधिक कुछ उससे कहने की आवश्यकता नही। एक आदमी को और देखा। मन मे यह उठा कि उसे भी ले लूँ। उसकी वात तुम्हे वाद मे वताऊँगा।"

श्रीयुत श्याम वसु, डा. दोकड़ी तथा और भी दो-एक आदमी आये हुए है। अव श्रीरामकृष्ण उन लोगो के साथ वातचीत कर रहे है।

श्याम वसु– अहा ! उस दिन वह बात जो आपने कही थी कितनी सुन्दर है !

श्रीरामकृष्ण– (हंसकर)–वह कौनसी बात है ?

श्याम वसु–वही, ज्ञान और अज्ञान से पार हो जाने पर क्या रहता है, इसके सम्बन्ध में आपने जो कुछ कहा था।

श्रीरामकृष्ण– (सहास्य)–वह विज्ञान है। और अनेक प्रकार के ज्ञान का नाम अज्ञान है। सर्वभूतों में ईश्वर का वास है, इसका नाम है ज्ञान। विशेष रूप से जानने का नाम है विज्ञान। ईश्वर के साथ आलाप, उनमें आत्मीयो जैसा भाव अगर हो तो वह विज्ञान है।

"लकड़ी मे आग है, अग्नितत्त्व है, इस बोध का नाम है ज्ञान। लकड़ी जलाकर रोटियाँ सेककर खाना और खाकर हृष्ट-पुष्ट होना यह है विज्ञान।"

श्याम वसु– (सहास्य)–और वह काँटो की बात !

श्रीरामकृष्ण– (सहास्य)–हाँ, जैसे पैर मे काँटा लग जाने से उसे निकालने के लिए एक और काँटा ले आया जाता है। फिर पैर मे गड़े हुए काँटे को निकालकर दोनों ही काँटे फेक दिये जाते है। उसी तरह अज्ञान-काँटे को निकालने के लिए ज्ञान-काँटे की खोज की जाती है। अज्ञान-नाश के बाद फिर ज्ञान और अज्ञान दोनो को फेक देना होता है। तब विज्ञान की अवस्था आती है।

श्रीरामकृष्ण श्याम वसु पर प्रसन्न हुए है। श्याम वसु की उम्र अधिक हो गयी है, अब उनकी इच्छा है, कुछ दिन ईश्वर-चिन्तन करे। श्रीरामकृष्णदेव का नाम सुनकर यहाँ आये हुए है। इसके पहले वे एक दिन और आये थे।

श्रीरामकृष्ण–(श्याम वसु से)–विषय-चर्चा बिलकुल छोड़ देना। ईश्वरीय बातचीत छोड़ और किसी विषय की बातचीत न करना।

विपयी आदमी को देखकर धीरे धीरे वहाँ से हट जाना। इतने दिन ससार करके तुमने देखा तो, सव खोखलापन है। ईश्वर ही वस्तु है, और सव अवस्तु। ईश्वर ही सत्य है, और सव दो दिन के लिए है। संसार मे है क्या ? वस गुठली चाटना ही है। उसे चाटने की इच्छा तो होती है, परन्तु गुठली में है क्या ?

श्याम वसु—जी हाँ, आप सच कहते है।

श्रीरामकृष्ण—वहुत दिनों तक लगातार तुम विपय-कार्य करते रहे हो, अतएव इस समय इस गुल-गपाड़े में ध्यान और ईश्वर की चिन्ता न होगी। जरा निर्जन में रहना चाहिए। निर्जन के विना मन स्थिर न होगा, इसीलिए घर से कुछ दूर पर ध्यान करने का स्थान तैयार करना चाहिए।

श्यामवावू कुछ देर के लिए चुप हो रहे, जैसे कुछ सोचते हो।

श्रीरामकृष्ण—(सहास्य)—और देखो, तुम्हारे दाँत भी सव गिर गये है, अव दुर्गा-पूजा के लिए इतना उत्साह क्यो ? (सव हँसते है)

"एक ने एक से पूछा, 'क्यों जी, तुम दुर्गा-पूजा अव क्यो नही करते ?' उस आदमी ने उत्तर देते हुए कहा, 'भाई, अव दाँत नही रह गये, माँस खाने की शक्ति अव नहीं रह गयी।'"

श्याम वसु—अहा ! वातो मे मानो मिश्री घुली हुई है !

श्रीरामकृष्ण—(सहास्य)—इस संसार मे वालू और शक्कर एक साथ मिले हुए है। चींटी की तरह वालू का त्याग करके चीनी को निकाल लेना चाहिए। जो चीनी ले सकता है, वही चतुर है। उनकी चिन्ता करने के लिए एक निर्जन स्थान ठीक करो—ध्यान करने की जगह। तुम एक वार करो तो। मै भी आऊँगा।

सब लोग कुछ देर के लिए चुप हैं।

श्याम वसु– महाराज, क्या जन्मान्तर है? क्या फिर जन्म लेना होगा?

श्रीरामकृष्ण– ईश्वर से कहो, अन्तर से उन्हें पुकारो, वे सुझा देते है, सुझा देंगे। यदु मल्लिक से बातचीत करो तो वह बता देगा कि उसके कितने मकान है और कितने रुपयों के कम्पनी के कागज है। पहले से इन सब बातों को जानने की चेष्टा करना ठीक नही। पहले ईश्वर को प्राप्त करो, फिर जो कुछ जानने की तुम्हारी इच्छा होगी, वे तुम्हे बतला देंगे।

श्याम वसु– महाराज, मनुष्य संसार मे रहकर न जाने कितने अन्याय, कितने पापकर्म करता है। क्या वह मनुष्य ईश्वर को पा सकता है?

श्रीरामकृष्ण– देह-त्याग से पहले अगर कोई ईश्वर-दर्शन के लिए साधना करे और साधना करते हुए, ईश्वर को पुकारते हुए यदि देह का त्याग हो, तो पाप उसे कब स्पर्श कर सकेगा? हाथी का स्वभाव है कि नहला देने के बाद भी वह देह पर धूल डालने लगता है, परन्तु महावत अगर नहलाकर उसे फीलखाने मे बाँध दे, तो फिर हाथी देह पर धूल नही डाल सकता।

खुद को कठिन पीड़ा होते हुए भी अहैतुक कृपासिन्धु श्रीरामकृष्ण जीवों के दुःख से कातर हो उठा करते है; दिवानिशि जीवों की मगल-कामना किया करते है। यह देखकर भक्तगण निर्वाक् है। श्रीरामकृष्ण श्याम वसु को हिम्मत बंधा रहे है— "ईश्वर को पुकारते हुए अगर देह का नाश हो तो फिर पाप स्पर्श नही कर सकता।"

परिच्छेद २४

योग तथा पाण्डित्य

(१)

श्यामपुकुर में भक्तो के संग में

आज शुक्रवार है, आश्विन की सप्तमी, ३० अक्टूबर १८८५। श्रीरामकृष्ण चिकित्सा के लिए श्यामपुकुर आये हुए है। दुमंजले के एक कमरे मे वैठे हुए हैं, दिन के नौ वजे का समय होगा, मास्टर से एकान्त मे वातचीत कर रहे है। मास्टर डाक्टर सरकार के यहाँ जाकर पीड़ा की खवर देगे और उन्हें साथ ले आयेगे। श्रीरामकृष्ण का शरीर इतना अस्वस्थ तो है, परन्तु इतने पर भी वे दिन-रात भक्तों की मंगल-कामना और उनके लिए चिन्ता किया करते हैं।

श्रीरामकृष्ण– (मास्टर से, सहास्य)– आज सवेरे पूर्ण आया था। वहुत अच्छा स्वभाव हो गया है। मणीन्द्र का प्रकृति-भाव है। कितने आश्चर्य की वात है! चैतन्य-चरित पढ़कर उसके मन मे गोपीभाव, सखीभाव की धारणा हो गयी है— यह भाव कि 'ईश्वर पुरुष है और मै मानो प्रकृति।'

मास्टर– जी हाँ।

पूर्णचन्द्र स्कूल मे पढ़ता है, उम्र १५-१६ साल की होगी। पूर्ण को देखने के लिए श्रीरामकृष्ण वहुत व्याकुल होते है। परन्तु घरवाले उसे आने नही देते। पहले-पहल एक रात को पूर्ण को देखने के लिए वे इतने व्याकुल हुए थे कि उसी समय वे दक्षिणेश्वर से एकाएक मास्टर के घर चले गये थे। मास्टर ने पूर्ण को घर से ले आकर साक्षात् करा दिया था। ईश्वर को किस

तरह पुकारना चाहिए आदि बातें उसके साथ करने के पश्चात् वे दक्षिणेश्वर लौटे थे।

मणीन्द्र की उम्र भी १५-१६ साल की होगी, भक्तगण उसे 'खोखा' कहकर पुकारते थे। वह बालक ईश्वर के नाम-संकीर्तन को सुनकर भावावेश मे नाचने लगता था।

(२)

डाक्टर तथा मास्टर

दिन के साढ़े दस बजे का समय है। मास्टर डाक्टर सरकार के घर आये हुए है। रास्ते पर दुमंजले के बैठकखाने का बरामदा है, वही वे डाक्टर के साथ बेंच पर बैठे हुए बातचीत कर रहे है। डाक्टर के सामने ग्लास-केस मे पानी है और उसमे लाल मछलियाँ क्रीड़ा कर रही है। डाक्टर रह-रहकर इलायची का छिलका पानी मे डाल रहे है और मैंदे की गोलियाँ बनाकर छत पर फेक रहे हैं, गौरैयों को चुगाने के लिए। मास्टर बैठे हुए देख रहे है।

डाक्टर– (मास्टर से, सहास्य)– यह देखो, ये (लाल मछलियाँ) मेरी ओर देख रही है, जैसे भक्त भगवान की ओर देख रहे हों; परन्तु इन्होंने यह नहीं देखा कि मैंने इधर इलायची का छिलका फेका है। इसीलिए कहता हूँ; केवल भक्ति से क्या होगा ? ज्ञान चाहिए। (मास्टर हँस रहे है) और वह देखो, गौरैये उड़ गये; उधर मैंने मैंदे की गोली फेंकी तो उन्हे इससे भय हो गया। उनमें भक्ति नही है, क्योकि उनमे ज्ञान नही। वे जानती नही कि यह उनके खाने की चीज है।

डाक्टर बैठकखाने मे आकर बैठे। चारों ओर आलमारी में ढेरों पुस्तके रखी है। डाक्टर जरा विश्राम कर रहे हैं। मास्टर

पुस्तक देख रहे हैं और एक एक पुस्तक लेकर पढ़ रहे है। अन्त मे कैनन-फैरर की लिखी ईशु की जीवनी थोड़ी देर पढ़ते रहे।

डाक्टर बीच-बीच मे गप्पे भी लड़ा रहे है। कितने कष्ट से होमियोपैथिक अस्पताल बना था, इस सम्बन्ध की चिट्ठियाँ और दूसरे दूसरे कागजात मास्टर से पढने के लिए कहा। और कहा, "ये सब चिट्ठियाँ १८७६ के 'कलकत्ता जरनल ऑफ मेडीसीन्' मे मिलेगी।" होमियोपैथी पर डाक्टर का बड़ा विश्वास है।

मास्टर ने एक और पुस्तक उठायी, मुँगर कृत 'नया धर्म' (Munger's New Theology)। डाक्टर ने उसे देखा।

डाक्टर– मुँगर के सिद्धान्त युक्तियों और तार्किक विचारों पर अवलम्बित है। इसमे ऐसा नहीं लिखा है कि चैतन्य, बुद्ध या ईशु ने अमुक बात कही है, अतएव इसे मानना चाहिए।

मास्टर– (हँसकर)– चैतन्य और बुद्ध की बाते नही, परन्तु मुँगर ने कही, इसलिए बात माननीय है!

डाक्टर– तुम्हारी इच्छा, चाहे जो कहो।

मास्टर– हाँ, किसी न किसी का नाम प्रमाण के लिए लेना ही पड़ता है, इसलिए मुँगर का ही नाम सही! (डाक्टर जोर से हँसते है)

डाक्टर गाड़ी पर बैठे, साथ साथ मास्टर भी। गाड़ी श्याम-पुकुर की ओर जा रही है। दोपहर का समय है। दोनो बातचीत करते हुए जा रहे है। डाक्टर भादुड़ी की चर्चा भी बीच-बीच में आती है, क्योंकि ये श्रीरामकृष्ण के पास कभी-कभी आते है।

मास्टर– (सहास्य)– आपके लिए भादुड़ी ने कहा है कि ईंट और पत्थर से जन्म फिर शुरू करना होगा।

डाक्टर– वह कैसा ?

मास्टर– आप महात्मा, सूक्ष्म शरीर आदि बाते तो मानते नहीं। भादुड़ी महाशय, जान पड़ता है, थियोसफिस्ट है; इसके अतिरिक्त आप अवतार-लीला भी नहीं मानते। इसीलिए उन्होने शायद हँसी मे कहा था कि अब की बार मरने पर आपका मनुष्य के घर जन्म तो होगा ही नहीं, कोई जीव-जन्तु, पेड-पौधा भी आप न होंगे। आपको कंकड़-पत्थर से ही श्रीगणेश करना होगा! फिर बहुत से जन्मो के बाद आदमी हो तो हो।

डाक्टर– अरे बाप रे!

मास्टर– और यह भी कहा है कि साइन्स के सहारे आपका जो ज्ञान है, वह मिथ्या है; क्योकि वह अभी अभी है और अभी अभी नही। उन्होने उपमा भी दी है। जैसे दो कुएँ है। एक में नीचे स्रोत है, उसी से पानी आता है। दूसरे में स्त्रोत नही है, वह बरसात के पानी से भर गया है। वह पानी अधिक दिन रुक नही सकता। आपका साइन्स का ज्ञान भी बरसात के पानी की तरह है, वह सूख जायेगा।

डाक्टर– (जरा हँसकर)– अच्छा, यह बात!—

गाड़ी कार्नवालिस स्ट्रीट पर आयी। डाक्टर सरकार ने डाक्टर प्रताप मुजुमदार को गाड़ी मे बिठा लिया। डा. प्रताप कल श्रीरामकृष्ण को देखने गये थे। वे सब श्यामपुकुर आ पहुँचे।

(३)

ज्ञानी का ध्यान। जीवन का उद्देश्य

श्रीरामकृष्ण उसी दुमँजले के कमरे में बैठे हुए है। पास कई भक्त भी है। डाक्टर और प्रताप के साथ बातचीत हो रही है।

डाक्टर– (श्रीरामकृष्ण से)– फिर खाँसी * हुई? (सहास्य)

*बंगला मे खाँसी को 'काशी' कहते है, और काशी बनारस का भी नाम है।

काशी जाना अच्छा भी तो है ! (सब हँसते है)

श्रीरामकृष्ण– (सहास्य)– उससे तो मुक्ति होती है। मैं मुक्ति नही चाहता, मै तो भक्ति चाहता हूँ। (डाक्टर और भक्तगण हँस रहे है)

श्रीयुत प्रताप डाक्टर भादुड़ी के जामाता हैं। श्रीरामकृष्ण प्रताप को देखकर भादुड़ी के गुणो का वर्णन कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण– (प्रताप से)– अहा ! वे कैसे सुन्दर आदमी हो गये है ! ईश्वर-चिन्ता, शुद्धाचार और निराकार-साकार सब भावों को उन्होने ग्रहण कर लिया है।

मास्टर की वड़ी इच्छा है कि कंकड़ और पत्थरों की वात फिर हो। छोटे नरेन्द्र से धीरे धीरे कह रहे हैं, 'कंकड़-पत्थरों की कौनसी वात भादुड़ी ने कही थी, तुम्हें याद है ?' मास्टर ने इस ढंग से कहा जिससे श्रीरामकृष्ण भी सुन सकें।

श्रीरामकृष्ण– (सहास्य, डाक्टर से)– और तुम्हारे लिए उन्होंने (डा. भादुड़ी ने) क्या कहा है, जानते हो ? उन्होने कहा कि तुम यह सब विश्वास नही करते इसलिए अगले कल्प मे कंकड़-पत्थर के रूप मे जन्म लेकर तुम्हें आरम्भ करना होगा। (सब लोग हँसते है)

डाक्टर– (सहास्य)– अच्छा, मान लीजिये कि कंकड़-पत्थर से ही आरम्भ कर कितने ही जन्मों के वाद मै मनुष्य हो जाऊँ, पर यहाँ (श्रीरामकृष्ण के पास) आने से तो मुझे फिर एक वार कंकड़-पत्थर से ही शुरू करना होगा ! (डाक्टर और सव लोग हँसते है)

श्रीरामकृष्ण इतने अस्वस्थ है, फिर भी उन्हें ईश्वरीय भावों का आवेश होता है। वे सदा ईश्वरीय चर्चा किया करते है।

इसी सम्बन्ध मे बातचीत हो रही है।

प्रताप– कल मै देख गया, आपकी भाव की अवस्था थी।

श्रीरामकृष्ण– वह आप ही आप हो गयी थी, प्रबल नहीं थी।

डाक्टर– बातचीत करना और भावावेश होना, ये इस समय आपके लिए अच्छे नहीं।

श्रीरामकृष्ण– (डाक्टर से)–कल जो भावावस्था हुई थी, उसमे मैने तुम्हें देखा। देखा, ज्ञान का आकर है, परन्तु भीतर एकदम सूखा हुआ—आनन्द-रस नहीं मिला। (प्रताप से) ये (डाक्टर) यदि एक बार आनन्द पा जायँ तो अधः-ऊर्ध्व सब आनन्द से पूर्ण देखेगे। फिर 'मैं जो कुछ कहता हूँ वही ठीक है, और दूसरे जो कुछ कहते हैं वह ठीक नही,' आदि बातें फिर ये बिलकुल ही न कहेंगे—और फिर इनकी लट्ठमार बातें भी छूट जायेंगी।

भक्तगण चुप हैं। एकाएक श्रीरामकृष्ण भावावेश में डाक्टर सरकार से कह रहे हैं—

"महीन्द्रबाबू, तुम क्या रुपया-रुपया कर रहे हो!—बीबी-बीबी!—मान-मान! ये सब इस समय छोड़कर एकचित्त हो ईश्वर में मन लगाओ और ईश्वर के आनन्द का उपभोग करो!"

डाक्टर सरकार चुप है। सब लोग चुप है।

श्रीरामकृष्ण– न्यांगटा ज्ञानी के ध्यान की बात कहता था। पानी ही पानी है, अधः-ऊर्ध्व उसी से पूर्ण है। जीव मानो मीन है, उस पानी मे आनन्द से तैर रहा है। यथार्थ ध्यान होने पर इसे प्रत्यक्ष रूप से देख सकोगे।

"अनन्त समुद्र है, पानी का कही अन्त नहीं। उसके भीतर मानो एक घट है। उसके बाहर भी पानी है और भीतर भी।

ज्ञानी देखता है, भीतर और वाहर वे ही परमात्मा है। तो फिर वह घट क्या वस्तु है ? घट के रहने के कारण पानी के दो भाग जान पड़ते है। अन्दर और वाहर का बोध हो रहा है। 'मै'-रूपी घट के रहते ऐसा ही बोध होता है। वह 'मै' अगर मिट जाय, तो फिर जो कुछ है, वही रहेगा, मुख से वह कहा नहीं जा सकता।

"ज्ञानी का ध्यान और किस तरह का है, जानते हो ? अनन्त आकाश है, उसमे आनन्द से पंख फैलाये हुए पक्षी उड़ रहा है। चिदाकाश में आत्मा-पक्षी इसी तरह विहार कर रहा है। वह पिंजड़े में नही है, चिदाकाश मे उड़ रहा है। आनन्द इतना है कि समाता ही नही।"

भक्तगण निर्वाक् होकर ध्यान-योग की वातें सुन रहे है। कुछ देर वाद प्रताप ने फिर वातचीत शुरू की।

प्रताप– (सरकार से)– सोचा जाय तो सव छाया ही छाया जान पड़ती है।

डाक्टर– छाया अगर कहते हो तो तीन चीजों की आवश्यकता है। सूर्य, वस्तु और छाया। विना वस्तु के क्या छाया होती है ? इधर कह रहे हो, ईश्वर सत्य है, और फिर सृष्टि को असत्य वतलाते हो ! नहीं, सृष्टि भी सत्य है।

प्रताप– आईने मे जैसे तुम प्रतिविम्व देखते हो उसी तरह मनरूपी आईने मे यह संसार भासित हो रहा है।

डाक्टर– एक वस्तु के अस्तित्व के विना क्या कोई प्रतिविम्व हो सकता है ?

नरेन्द्र– क्यों, ईश्वर तो वस्तु है।

डाक्टर चुप हो रहे।

श्रीरामकृष्ण– (डाक्टर से)– एक वात तुमने वहुत अच्छी कही।

भावावस्था ईश्वर के साथ मन के संयोग से होती है, यह बात केवल तुमने ही कही और किसी ने नही कही।

"शिवनाथ ने कहा था, 'अधिक ईश्वर-चिन्तन करने पर मनुष्य का मस्तिष्क बिगड़ जाता है।' कहता है, संसार मे जो चेतन-स्वरूप है, उनके चिन्तन से अचेतन हो जाता है! जो बोधस्वरूप है, जिनके बोध से संसार को बोध हो रहा है, उनकी चिन्ता करके अबोध हो जाना!!

"और तुम्हारी साइन्स क्या कहती है? बस यही न कि इससे यह मिल जाय या उससे वह मिल जाय तो अमुक तैयार हो जाता है, आदि आदि। इन सब बातों की चिन्ता करके—जड़ वस्तुओं मे पड़कर तो मनुष्य के और भी बोधहीन हो जाने की सम्भावना रहती है।"

डाक्टर–उन जड़ वस्तुओ मे मनुष्य ईश्वर का दर्शन कर सकता है।

मणि–परन्तु मनुष्य मे यह दर्शन और भी स्पष्ट हो सकता है, और महापुरुषों में और भी अधिक स्पष्ट। महापुरुषों में उनका प्रकाश अधिक है।

डाक्टर–हाँ, मनुष्य मे दर्शन अवश्य हो सकता है।

श्रीरामकृष्ण–जिनके चैतन्य से जड़ भी चेतन हो रहे है,—हाथ, पैर और शरीर हिल रहे है, उनके चिन्तन से क्या कोई कभी अचेतन हो सकता है? लोग कहते हैं, 'शरीर हिल रहा है,' परन्तु वे हिला रहे है, यह ज्ञान नही है। लोग कहते है, 'पानी से हाथ जल गया,' पर पानी से कभी कुछ नही जलता। पानी के भीतर जो ताप है, जो अग्नि है, उसी से हाथ जल गया।

"हण्डी में चावल उबल रहे है। आलू और भटे उछल रहे

है। छोटे लड़के कहते है, 'आलू और भटे अपने आप उछल रहे है।' वे यह नही जानते कि नीचे आग है। मनुष्य कहते हैं, 'इन्द्रियाँ आप ही आप काम कर रही है;' भीतर जो चैतन्य-स्वरूप है, उनकी बात नही सोचते।"

डाक्टर सरकार उठे। अब विदा होगे। श्रीरामकृष्ण उठकर खड़े हो गये।

डाक्टर–लोगों पर जब कष्ट पड़ता है तब वे ईश्वर का स्मरण करते है। और नही तो क्या लोग केवल साध ही साध में 'हे ईश्वर, तू ही, तू ही' करते रहते है? गले में वह (घाव) हुआ है, इसलिए आप ईश्वर की चर्चा करते हैं। अब आप खुद धुनिये के हाथ मे पड़ गये है, अब उसी से कहिये। यह मै आप ही की कही हुई बात कह रहा हूँ।

श्रीरामकृष्ण–और क्या कहूँगा!

डाक्टर–क्यो, कहेंगे क्यों नही? हम उनकी गोद में है, उनकी गोद में खाते-पीते है, बीमारी होने पर उनसे नही कहेगे तो किससे कहेंगे?

श्रीरामकृष्ण–ठीक है, कभी कभी कहता हूँ। परन्तु कही कुछ होता नही।

डाक्टर–और कहना भी क्यों, क्या वे जानते नही?

योगी के लक्षण। बिल्वमंगल

श्रीरामकृष्ण–(सहास्य)–एक मुसलमान नमाज पढ़ते समय 'हो अल्ला, हो अल्ला' कहकर अजान दे रहा था। उससे एक आदमी ने कहा, 'तू अल्ला को पुकार रहा है तो इतना चिल्लाता क्यों है? क्या तुझे नही मालूम कि उन्हे चीटी के पैरों के नूपुरों की भी आहट मिल जाती है?'

"जब उनमे मन लीन हो जाता है, तब मनुष्य ईश्वर को वहुत समीप देखता है। हृदय मे देखता है।

"परन्तु एक वात है। जितना ही यह योग होगा, उतना ही वाहर की चीजों से मन हटता जायगा। 'भक्तमाल' मे बिल्व-मंगल नामक एक भक्त की वात लिखी हुई है। वह वेश्या के घर जाया करता था। एक दिन बहुत रात हो गयी थी, और वह वेश्या के घर जा रहा था। घर मे माँ-वाप का श्राद्ध था, इसलिए देर हो गयी थी। श्राद्ध की पूड़ियाँ वेश्या को खिलाने के लिए ले जा रहा था। वेश्या पर उसका इतना मन था कि किसके ऊपर से और कहाँ से होकर वह जा रहा था, उसे कुछ भी ज्ञान न था, कुछ होश ही न था। रास्ते मे एक योगी आँखे बन्द किये ईश्वर का ध्यान कर रहा था, उसे भी बेहोशी की हालत में वह लात मारकर निकल गया। योगी गुस्से मे आकर बोल उठा, 'क्या तू देखता नही ? मै ईश्वर-चिन्तन कर रहा हूँ और तू लात मारकर चला जा रहा है!' तब उस आदमी ने कहा, 'मुझे क्षमा कीजिये; परन्तु मै आपसे एक बात पूछता हूँ, वेश्या की चिन्ता करके तो मुझे होश नही, और आप ईश्वर की चिन्ता कर रहे है, फिर भी आपको वाहरी दुनिया का होश है ! यह कैसी ईश्वर-चिन्ता है ?' वह भक्त अन्त में संसार का त्याग करके ईश्वर की आराधना करने चला गया। वेश्या से उसने कहा था, 'तुम मेरी ज्ञानदात्री हो, तुम्ही ने मुझे सिखलाया कि ईश्वर पर किस तरह अनुराग किया जाता है।' वेश्या को माता कहकर उसने उसका त्याग किया था।"

डाक्टर—यह तान्त्रिक उपासना है, इसके अनुसार स्त्री को माता कहकर सम्बोधन किया जाता है।

श्रीरामकृष्ण— देखो, एक कहानी सुनो। एक राजा था। एक पण्डित के पास वह नित्य भागवत सुनता था। रोज भागवतपाठ के बाद पण्डित राजा से कहता था, 'राजा, तुम समझे ?' राजा भी रोज कहता था, 'पहले तुम समझो।' भागवती पण्डित घर जाकर रोज सोचता था, 'राजा इस तरह क्यों कहता है ? मैं रोज इतना समझाता हूँ और राजा उल्टा कहता है—तुम पहले समझो। यह क्या है ?' पण्डित भजन-साधन भी करता था। कुछ दिनो बाद उसमे जागृति हुई, तब उसने समझा, ईश्वर ही वस्तु है और शेष सब—घर-द्वार, कुटुम्ब-परिवार, मान-मर्यादा—अवस्तु है। संसार मे सब विषय मिथ्या प्रतीत होने के कारण उसने संसार छोड़ दिया। जाते समय वह केवल एक आदमी से कह गया—'राजा से कहना, अब मैं समझ गया हूँ।'

"एक कहानी और सुनो। एक आदमी को भागवत के एक पण्डित की जरूरत पड़ी, जो रोज जाकर उसे भागवत सुना सके। इधर भागवती पण्डित मिल नही रहा था। बहुत खोजने के बाद एक आदमी ने आकर कहा, 'भाई, एक बहुत अच्छा भागवती पण्डित मिला है।' उसने कहा, 'फिर तो काम बन गया। उसे ले आओ।' आदमी ने कहा, 'परन्तु जरा कठिनाई है। उसके कुछ हल और बैल हैं; उन्ही को लेकर वह दिन-रात काम मे लगा रहता है, काश्तकारी सम्हालनी पड़ती है, उसे बिलकुल अवकाश नही मिलता।' तब जिसे पण्डित की जरूरत थी, उसने कहा, 'अजी, जिसे हल और बैलों के पीछे पड़ा रहना पड़ता है, उस तरह का पण्डित मैं नही चाहता। मैं तो ऐसा पण्डित चाहता हूँ जिसे अवकाश हो और जो मुझे भागवत सुना सके।' (डाक्टर से) समझे ? (डाक्टर चुप है)

"परन्तु केवल पाण्डित्य से क्या होगा ? पण्डित लोग जानते तो वहुत है—वेदों, पुराणों और तन्त्र की वातें। परन्तु कोरे पाण्डित्य से होता क्या है ? विवेक और वैराग्य अगर किसी में हो तो उसकी वातें सुनी जा सकती हैं। पर जिसने संसार को ही सार समझ लिया है, उसकी बातो को सुनकर क्या होगा ?

"गीता के पाठ से क्या होता है ?—वही, जो दस वार 'गीता' 'गीता' उच्चारण करने से। 'गीता' 'गीता' कहते रहने से 'तागी' (त्यागी) 'तागी' (त्यागी) निकलता है। संसार में जिसकी कामिनी और काचन पर आसक्ति छूट गयी है, जो ईश्वर पर सोलहों आने भक्ति कर सका है, उसी ने गीता का मर्म समझा है। गीता को पूरा पढने की आवश्यकता नहीं। 'त्यागी, त्यागी' कह सकने ही से हुआ—त्यागी वन सकने से ही हुआ।"

डाक्टर– 'त्यागी' कहने के लिए एक 'य' अधिक जोड़ना पड़ता है।

मणि– परन्तु 'य' के विना भी काम चल जाता है। जव ये (श्रीरामकृष्ण) टेनेटी में महोत्सव देखने गये थे, तव वहाँ नव-द्वीप के गोस्वामी से इन्होने गीता की यह वात कही थी। यह सुनकर गोस्वामी ने कहा था, "तग् धातु मे घञ प्रत्यय के लगने से 'ताग' होता है; फिर उसमे 'इन्' लगाने से 'तागी' वनता है; इस तरह 'त्यागी' और 'तागी' का अर्थ एक ही होता है।"

डाक्टर—मुझे एक ने राधा शब्द का अर्थ वतलाया था। कहा राधा का अर्थ क्या है, जानते हो ? इस शब्द को उलट लो, अर्थात् 'धारा-धारा'। (सव हंसते है) (सहास्य) आज 'धारा' तक ही रहा।

(४)

ऐहिक ज्ञान अर्थात् साइन्स

डाक्टर चले गये। श्रीरामकृष्ण के पास मास्टर बैठे हुए है। एकान्त मे बातचीत हो रही है। मास्टर डाक्टर के यहाँ गये थे, वही सब बात हो रही है।

मास्टर–(श्रीरामकृष्ण से)–लाल मछलियों को इलायची का छिलका दिया जा रहा था, और गौरैयों को मैदे की गोलियाँ। डाक्टर ने मुझसे कहा—'तुमने देखा, उन्होंने (मछलियों ने) इलायची का छिलका नहीं देखा, इसलिए चली गयीं! पहले ज्ञान चाहिए, फिर भक्ति। दो-एक गौरैयाँ भी मैदे की गोलियों को फेंकते हुए देखकर उड़ गयी। उन्हें ज्ञान नहीं है, इसलिए भक्ति नहीं हुई।'

श्रीरामकृष्ण–(हँसकर)–उस ज्ञान का अर्थ है ऐहिक ज्ञान—साइन्स का ज्ञान।

मास्टर–उन्होने फिर कहा, 'चैतन्य कह गये है, बुद्ध कह गये हैं या ईशु कह गये हैं, क्या इसलिए विश्वास करूँ?—यह ठीक नही।'

"उनके नाती हुआ है। नाती का मुँह देखकर वे अपनी पुत्र-वधू की प्रशंसा करने लगे। कहा—'घर मे इस तरह रहती है कि मुझे कही आहट भी नहीं मिलती। इतनी शान्त और लजीली है,—' "

श्रीरामकृष्ण–यहाँ की बाते ज्यों ज्यों सोच रहा है, त्यों त्यों उसमें श्रद्धा आ रही है। एकदम क्या कभी अहंकार जाता है? उसमे इतनी विद्या है, मान है, धन है, परन्तु यहाँ की (स्वयं को इंगित करके) बातों से अश्रद्धा नही करता।

(५)

श्रीरामकृष्ण की उच्च अवस्था

दिन के पाँच बजे का समय है। श्रीरामकृष्ण उसी दुमंजले के कमरे में बैठे हुए है। चारों ओर भक्तगण चुपचाप बैठे है। बहुत से बाहर के आदमी उन्हें देखने के लिए आये है। कोई बात नही हो रही है।

मास्टर पास ही बैठे हुए है। उनके साथ एकान्त मे बातचीत हो रही है। श्रीरामकृष्ण कुर्ता पहनेंगे। मास्टर ने कुर्ता पहना दिया।

श्रीरामकृष्ण– (मास्टर से)–देखो, अब विशेष ध्यान आदि मुझे नही करना पड़ता। अखण्ड का एकदम ही बोध हो जाता है। ब्रह्मदर्शन निरन्तर ही चलता रहता है।

मास्टर चुप है। कमरा भी निस्तब्ध है।

कुछ देर बाद श्रीरामकृष्ण उनसे फिर एक बात कह रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण– अच्छा, ये सब लोग एक ही आसन जमाकर चुपचाप बैठे हुए है और मुझे देख रहे है—न बोलते है, न गाना होता है; इस तरह ये मुझमे क्या देखते हैं ?

श्रीरामकृष्ण क्या इंगित कर रहे हैं कि साक्षात् ईश्वर की शक्ति अवतीर्ण हुई है ! इसीलिए इतने लोगों का आकर्षण है, इसीलिए भक्त लोग अवाक् होकर उनकी ओर एकटक दृष्टि से निहारते रहते है !

मास्टर ने कहा, "महाराज, ये लोग आपकी बात बहुत पहले ही सुन चुके है। ये लोग वह चीज देखते है जो कभी इन्हें देखने को नहीं मिल सकती। देखते है, सदा ही आनन्द में मग्न रहने-वाले, निरहंकार, बालस्वभाव, ईश्वर के प्रेम में मग्न रहनेवाले

महापुरुप को। उस दिन आप ईशान मुखर्जी के यहाँ गये हुए थे। आप वाहर के कमरे मे टहल रहे थे, हम लोग भी गये हुए थे। एक ने आपसे आकर कहा, 'इस तरह का सदानन्द पुरुप हमने कभी देखा नही।' "

मास्टर फिर चुप हो रहे। कमरा फिर निस्तव्ध है। कुछ देर वाद धीमे स्वर मे मास्टर से श्रीरामकृष्ण ने फिर कहा—

"अच्छा, डाक्टर का क्या हो रहा है? क्या यहाँ की सव वातो को वह ग्रहण करता है?"

मास्टर– यह अमोघ वीज कहाँ जायगा? किसी न किसी तरफ से कभी न कभी निकलेगा ही। उस दिन की एक-एक वात पर हँसी आ रही है।

श्रीरामकृष्ण– कौनसी वात?

मास्टर– आपने उस दिन कहा था, यदु मल्लिक यह नहीं समझ सकता कि किस तरकारी मे नमक अधिक है, कौन तरकारी कैसी हुई। वह इतना अन्यमनस्क रहता है! जव कोई कह देता है कि अमुक व्यंजन मे नमक नही पड़ा, तव 'आयँ आयँ' करके कहता है, 'हाँ, ठीक तो है, नमक नही पड़ा।' डाक्टर को यह वात आप सुना रहे थे। उन्होने कहा था न, कि वे वहुत ही अन्यमनस्क हो जाया करते है। आप समझा रहे थे कि वे विपय की चिन्ता करके अन्यमनस्क होते है, ईश्वर की चिन्ता करके नही।

श्रीरामकृष्ण– क्या इन वातों को वह न सोचेगा?

मास्टर– सोचेंगे क्यों नही? परन्तु उन्हें वहुत से काम रहते हैं, इसलिए भूल भी जाते है। आज भी उन्होंने क्या ही अच्छा कहा कि स्त्री को मातृरूप देखना तान्त्रिकों की एक उपासना है।

श्रीरामकृष्ण– मैंने क्या कहा ?

मास्टर– आपने बैलोंवाले भागवती पण्डित की बात कही थी। (श्रीरामकृष्ण हँसते है) और आपने कही थी उस राजा की बात, जिसने कहा था, 'तुम पहले समझो।' (श्रीरामकृष्ण हँसते है)

"फिर आपने गीता की बात कही थी। गीता का सार तत्त्व है कामिनी और कांचन का त्याग—– कामिनी और कांचन पर आसक्ति का त्याग। आपने डाक्टर से कहा, 'संसारी होकर कोई क्या शिक्षा देगा ?' यह बात शायद वे समझ नही सके। अन्त मे 'धारा-धारा' कहकर बात को दबा गये।"

श्रीरामकृष्ण भक्तों के कल्याण के लिए सोच रहे है,—– पूर्ण और मणीन्द्र दोनों उनके बालक भक्तों में से है। श्रीरामकृष्ण ने मणीन्द्र को पूर्ण से मिलने के लिए भेजा।

(६)

श्रीराधाकृष्ण-तत्त्व। नित्य-लीला

सन्ध्या हो गयी है। श्रीरामकृष्ण के कमरे मे दीपक जल रहा है। कई भक्त जो श्रीरामकृष्ण को देखने के लिए आये है, उसी कमरे में कुछ दूर पर बैठे हुए है। श्रीरामकृष्ण का मन अन्तर्मुख हो रहा है, इस समय बातचीत बन्द है। कमरे में जो लोग है, वे भी ईश्वर की चिन्ता करते हुए मौन हो रहे है।

कुछ देर बाद नरेन्द्र अपने एक मित्र को साथ लेकर आये। नरेन्द्र ने कहा, "ये मेरे मित्र हैं, इन्होंने कई ग्रन्थों की रचना की है। ये 'किरणमयी' लिख रहे है।" किरणमयी के लेखक ने प्रणाम करके आसन ग्रहण किया। श्रीरामकृष्ण के साथ बात-चीत करेंगे।

नरेन्द्र– इन्होंने राधाकृष्ण के सम्बन्ध में भी लिखा है।

श्रीरामकृष्ण– (लेखक से) –क्यों जी, क्या लिखा है? जरा कहो तो।

लेखक– राधाकृष्ण ही परब्रह्म हैं, ओंकार के विन्दुस्वरूप हैं। उसी राधाकृष्ण—परब्रह्म—से महाविष्णु की सृष्टि हुई, महाविष्णु से पुरुष और प्रकृति, शिव और दुर्गा की।

श्रीरामकृष्ण– वाह! नन्दघोष ने नित्यराधा को देखा था। प्रेम-राधा ने वृन्दावन में लीलाएँ की थी, काम-राधा चन्द्रावली हैं।

"काम-राधा और प्रेम-राधा। और भी बढ़ जाने पर है नित्य-राधा। प्याज के छिलके निकालते रहने पर पहले लाल छिलका निकलता है, फिर जो छिलके निकलते हैं उनमें ललाई नाम मात्र की रहती है, फिर विलकुल सफेद छिलके निकलते है। ऐसा ही नित्य-राधा का स्वरूप है— वहाँ 'नेति, नेति' का विचार रुक जाता है।

"नित्य-राधाकृष्ण, और लीला-राधाकृष्ण— जैसे सूर्य और उसकी किरणें। नित्य की तुलना सूर्य से की जा सकती है और लीला की, रश्मियों से।

"शुद्ध भक्त कभी 'नित्य' में रहता है और कभी 'लीला' में। जिनकी नित्यता है, लीला भी उन्ही की है। वे केवल एक ही है— दो या अनेक नहीं।"

लेखक– जी, वृन्दावन के कृष्ण और मथुरा के कृष्ण, इस तरह दो कृष्ण क्यों कहे जाते हैं?

श्रीरामकृष्ण– वह गोस्वामियों का मत है। पश्चिम के पण्डित लोग ऐसा नहीं कहते। उनके मत मे कृष्ण एक ही हैं, राधा हैं ही नहीं। द्वारका के कृष्ण भी वैसे ही हैं।

लेखक– जी, राधाकृष्ण ही परब्रह्म है।

श्रीरामकृष्ण– वाह! परन्तु उनके द्वारा सब कुछ सम्भव है। वे ही निराकार है और वे ही साकार। वे ही स्वराट् है और वे ही विराट्। वे ही ब्रह्म है और वे ही शक्ति।

"उनकी इति नहीं हो सकती— उनका अन्त नही है, उनमें सब कुछ सम्भव है। चील या गीध चाहे जितना ऊपर चढ़े, पर आकाश को उसकी पीठ कभी छू नही सकती। अगर पूछो कि ब्रह्म कैसा है, तो यह कहा नहीं जा सकता। साक्षात्कार होने पर भी मुख से नही कहा जाता। अगर कोई पूछे कि घी कैसा है, तो इसका उत्तर है कि घी घी के सदृश ही है। ब्रह्म की उपमा ब्रह्म ही है, और कोई उपमा नही।

परिच्छेद २५

सर्वधर्म-समन्वय

(१)

वलराम के लिए चिन्ता । श्री हरिवल्लभ वसु

श्रीरामकृष्ण श्यामपुकुरवाले मकान मे चिकित्सा के लिए भक्तों के साथ ठहरे हुए है। आज शनिवार है, आश्विन की कृष्णा अष्टमी, ३१ अक्टूबर १८८५। दिन के नौ वजे का समय होगा।

यहाँ दिन-रात भक्तगण रहा करते है, श्रीरामकृष्ण की सेवा के लिए। अभी किसी ने संसार का त्याग नहीं किया है।

वलराम सपरिवार श्रीरामकृष्ण के सेवक है। उन्होने जिस वंश मे जन्म लिया है, वह वड़ा ही भक्त-वंश है। इनके पिता वृद्ध होकर अव श्रीवृन्दावन मे अपने ही प्रतिष्ठित श्रीश्यामसुन्दर कुंज मे रहा करते है। उनके चचेरे भाई श्रीयुत हरिवल्लभ वसु और घर के दूसरे सव लोग वैष्णव है।

हरिवल्लभ कटक के सव से वड़े वकील हैं। उन्होंने जव यह सुना कि वलराम श्रीरामकृष्णदेव के पास आया-जाया करते है और विशेपकर स्त्रियो को ले जाते है, तव वे वहुत नाराज हुए। उनसे मिलने पर वलराम ने कहा था, 'तुम पहले एक वार उनके दर्शन करो, फिर जो जी मे आये मुझे कहना।'

अतएव आज हरिवल्लभ आये है। उन्होने श्रीरामकृष्ण को वड़े भक्तिभाव से प्रणाम किया।

श्रीरामकृष्ण– किस तरह वीमारी अच्छी होगी ? आपकी राय मे क्या यह कोई कठिन वीमारी है ?

हरिवल्लभ—जी, यह तो डाक्टर ही कह सकेंगे।

श्रीरामकृष्ण—स्त्रियाँ जब मेरे पैरों की धूलि लेती है तब यही सोचता हूँ कि भीतर तो वे ही है, वे उन्हीं को प्रणाम कर रही है। इसी दृष्टि से मै देखता हूँ।

हरिवल्लभ—आप साधु है, आपको सब लोग प्रणाम करेंगे, इसमे दोष क्या है?

श्रीरामकृष्ण—हाँ, वह हो सकता था अगर ध्रुव, प्रह्लाद, नारद, कपिल, ये कोई होते; पर मै क्या हूँ? अच्छा आप फिर आइयेगा।

हरिवल्लभ—जी, हम लोग आप ही खिचकर आयेंगे, आप कहते क्यों है?

हरिवल्लभ विदा होंगे, प्रणाम कर रहे है। पैरो की धूलि लेने जा रहे है, श्रीरामकृष्ण ने पैर हटा लिये। परन्तु हरिवल्लभ ने छोड़ा नही, जबरदस्ती उन्होंने पैरों की धूलि ली।

हरिवल्लभ उठे। श्रीरामकृष्ण उनकी खातिर करने के लिए उठकर खड़े हो गये। कह रहे है, "बलराम बहुत दुःख करता है। मैने सोचा, एक दिन जाऊँ, जाकर तुम लोगो से मिलूँ। परन्तु भय भी होता है कि तुम लोग कहीं यह न कहो कि इसे कौन यहाँ लाया!"

हरिवल्लभ—इस तरह की बाते कहीं किसने? आप कुछ सोचियेगा नहीं।

हरिवल्लभ चले गये।

श्रीरामकृष्ण—(मास्टर से)—उसमे भक्ति है; नही तो जबरदस्ती पैरो की धूलि क्यों लेता?

"वह बात जो तुमसे मैने कही थी कि भाव में मैंने डाक्टर

को देखा था तथा एक आदमी और था— यह वही है ! इसीलिए देखो आया !"

मास्टर– जी, सचमुच वह भक्त है।

श्रीरामकृष्ण– कितना सरल है !

श्रीरामकृष्ण की वीमारी का हाल लेकर मास्टर डाक्टर सरकार के पास शाँकारिटोला आये हुए है। डाक्टर आज फिर श्रीरामकृष्ण को देखने जायेंगे।

डाक्टर श्रीरामकृष्ण और महिमाचरण आदि की वाते कह रहे है।

डाक्टर– महिमाचरण वह पुस्तक तो नहीं लाये जिसे उन्होने दिखाने के लिए कहा था। उन्होने कहा, 'भूल गया।' हो सकता है। मै भी प्राय: इसी तरह भूल जाता हूँ।

मास्टर– उनका अध्ययन वहुत अच्छा है।

डाक्टर– तो फिर उनकी ऐसी दशा क्यों है ?

श्रीरामकृष्ण के सम्वन्ध मे डाक्टर कह रहे हैं—"केवल भक्ति लेकर क्या होगा, अगर ज्ञान न रहा ?"

मास्टर– श्रीरामकृष्ण तो कहते है, ज्ञान के वाद भक्ति है; परन्तु उनके ज्ञान और भक्ति से आप लोगों के ज्ञान और भक्ति में वड़ा अन्तर है।

"वे जव कहते है, ज्ञान के वाद भक्ति है तो उसका अर्थ यह है कि पहले तत्त्वज्ञान होता है और वाद में भक्ति; पहले ब्रह्मज्ञान और वाद मे भक्ति; पहले भगवान का ज्ञान, फिर उनके प्रति प्रेम। आप लोगो के ज्ञान का अर्थ है, इन्द्रियजन्य ज्ञान। श्रीरामकृष्ण जिस ज्ञान की चर्चा करते है, उसकी परख हमारे मापदण्ड द्वारा नही हो सकती। परन्तु आपका ज्ञान तो

इन्द्रियजन्य है, उसकी परख हो सकती है।"

डाक्टर कुछ देर चुप रहे, फिर अवतार के सम्बन्ध में बातचीत करने लगे।

डाक्टर-- अवतार क्या है? और पैरों की धूलि लेना, यह क्या है?

मास्टर-- क्यों? आपही तो कहते हैं कि अपनी साइन्स की प्रयोगशाला में अन्वेषण करते समय ईश्वर की सृष्टि के बारे में सोचने से आपको भावावस्था हो जाती है, और फिर आदमी को देखने से भी आपमें उसी भाव का उद्रेक होता है। अगर यह ठीक है तो ईश्वर को फिर हम सिर क्यों न झुकावें? मनुष्य के हृदय मे ईश्वर है।

"हिन्दू धर्म के अनुसार सर्वभूतो में ईश्वर का वास है। यह विषय आपको अच्छी तरह मालूम नहीं है। सर्वभूतों में जब ईश्वर है तो मनुष्य को प्रणाम करने में क्या बुराई है?

"श्रीरामकृष्णदेव कहते है किसी किसी वस्तु मे उनका प्रकाश अधिक है। सूर्य का प्रकाश पानी में, आईने मे अधिक है। पानी सब जगह है, परन्तु नदी और सरोवर में अधिक है। नमस्कार ईश्वर को ही किया जाता है, मनुष्य को नहीं। God is God—not, man is God. (ईश्वर ही ईश्वर है, मनुष्य ईश्वर नहीं।)

"ईश्वर को कोई साधारण विचार द्वारा समझ ही नहीं सकता। सब विश्वास पर अवलम्बित है। ये ही सब बातें श्रीरामकृष्ण कहते है।"

आज डाक्टर ने मास्टर को अपनी लिखी पुस्तक 'मनोविज्ञान शारीरक' (Physiological Basis of Psychology) की एक प्रति उपहार-स्वरूप दी।

(२)

श्रीरामकृष्ण तथा ईशु

श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ बैठे हुए हैं। दिन के ग्यारह बजे का समय होगा। मिश्र नाम के एक ईसाई भक्त के साथ बात-चीत हो रही है। मिश्र की आयु पैंतीस वर्ष की होगी। इनका जन्म ईसाई वंश मे हुआ है। बाहर से तो ये साहबी वेश-भूषा धारण किये हुए है, परन्तु भीतर गेरुआ वस्त्र पहने हैं। इस समय इन्होंने संसार का त्याग कर दिया है। इनका जन्म-स्थान पश्चिम है। इनके एक भाई के विवाह के दिन इनके दूसरे दो भाइयों की मृत्यु हो गयी थी, तब से मिश्र ने संसार का त्याग कर दिया है। ये Quaker (क्वेकर) सम्प्रदाय के है।

मिश्र– 'वही राम घट-घट मे लेटा।'

श्रीरामकृष्ण छोटे नरेन्द्र से धीरे-धीरे कह रहे हैं, परन्तु इस ढंग से कि मिश्र भी सुनें—

"राम एक ही हैं, परन्तु उनके नाम हजारों हैं।

"ईसाई जिन्हें गाड (God) कहते हैं, हिन्दू उन्हें ही राम, कृष्ण और ईश्वर कहकर पुकारते है। तालाव में वहुत से घाट हैं। हिन्दू एक घाट में पानी पीते हैं, कहतें है 'जल'; ईसाई दूसरे घाट मे पानी पीते हैं, कहते है 'वाटर' (Water); मुसलमान तीसरे घाट में पानी पीते हैं, कहते है 'पानी'।

"इसी प्रकार जो ईसाइयों का 'गाड' (God) है, वही मुसलमानो का 'अल्ला' है।"

मिश्र– ईशु मेरी का लड़का नहीं है, ईशु साक्षात् ईश्वर है। (भक्तों से) "ये (श्रीरामकृष्ण) अभी तो ऐसे दिखते हैं, पर ये साक्षात् ईश्वर हैं। आप लोगों ने इन्हे पहचाना नहीं। मैं

पहले ही इनके दर्शन ध्यान में कर चुका हूँ—अब इस समय इन्हें साक्षात् देख रहा हूँ। मैने देखा था, एक बगीचा है, ये ऊँचे आसन पर बैठे हुए है; जमीन पर एक व्यक्ति और बैठे हुए है,— वे उतने पहुँचे हुए नहीं थे।

"इस देश में ईश्वर के चार द्वारपाल हैं। बम्बई प्राप्त मे तुकाराम, काश्मीर में रॉवर्ट माइकेल (Robert Michael), यहाँ ये, और पूर्व बंगाल मे एक और है।"

श्रीरामकृष्ण– क्या तुम्हें कुछ दर्शन होता है?

मिश्र– जी, जब मैं घर पर था, तब ज्योति-दर्शन होता था। इसके वाद ईशु को मैने देखा। उस रूप की बात अब क्या कहूँ!— उस सौन्दर्य के सामने स्त्री का सौन्दर्य खाक है!

कुछ देर बाद भक्तों के साथ बातचीत करते हुए मिश्र ने कोट और पतलून खोलकर भीतर गेरुए की कौपीन दिखलायी।

श्रीरामकृष्ण वरामदे से आकर कह रहे है—"इसे (मिश्र को) देखा, वीर की तरह खड़ा है।"

यह कहते हुए श्रीरामकृष्ण समाधिमग्न हो रहे हैं। पश्चिम की ओर मुंह करके खड़े हुए वे समाधिमग्न हो गये।

कुछ प्रकृतिस्थ होने पर मिश्र पर दृष्टि लगाकर हँस रहे हैं। अब भी खड़े है। भावावेश में मिश्र से हाथ मिलाते हुए हंस रहे हैं। हाथ पकड़कर कह रहे है, 'तुम जो चाहते हो, वह प्राप्त हो जायगा।'

श्रीरामकृष्ण ईशु के भाव मे है।

मिश्र– (हाथ जोड़कर)– उस दिन से मैंने अपना मन, अपने प्राण, अपना शरीर, सब कुछ आपको समर्पित कर दिया है।

श्रीरामकृष्ण भावावस्था में अब भी हंस रहे है। वे बैठे।

मिश्र भक्तों से अपने सांसारिक जीवन का वर्णन कर रहे है। उन्होंने वताया कि किस प्रकार विवाह के समय शामियाना के नीचे गिर जाने से उनके दो भाइयों की मृत्यु हो गयी।

श्रीरामकृष्ण ने भक्तो से मिश्र की खातिर करने को कहा।

डाक्टर सरकार आये। डाक्टर को देखकर श्रीरामकृष्ण समाधिमग्न हो गये। भाव का कुछ उपशम होने पर श्रीरामकृष्ण कह रहे है—"कारणानन्द के बाद है सच्चिदानन्द !—कारण का कारण !"

डाक्टर कह रहे है—"जी, हाँ।"

श्रीरामकृष्ण—मैं वेहोश नही हूँ।

डाक्टर समझ गये कि श्रीरामकृष्ण को ईश्वरावेश है। इसीलिए उत्तर में कहा—"हाँ, आप खूब होश मे है !"

श्रीरामकृष्ण हँसकर गाने लगे—"मैं सुरा-पान नही करता, किन्तु 'जय काली' कह-कहकर सुधापान करता हूँ। इससे मेरा मन मतवाला हो जाता है, पर लोग बोलते हैं कि मै सुरा-पान करके मत्त हो गया हूँ ! गुरुप्रदत्त रस को लेकर, उसमे प्रवृत्ति-रूपी मसाला छोड़कर, ज्ञान-कलार शराव बनाकर भाँड़े में छान लेता है। मूलमन्त्ररूपी बोतल से ढालकर मैं 'तारा-तारा' कहकर उसे शुद्ध कर लेता हूँ; और मेरा मन उसका पान कर मतवाला हो जाता है। प्रसाद कहता है, ऐसी सुरा का पान करने से चारों फलों की प्राप्ति होती है।"

गाना सुनकर डाक्टर को भावावेश-सा हो गया। श्रीरामकृष्ण को भी पुनः भावावेश हो गया। उसी आवेश में उन्होंने डाक्टर की गोद मे एक पैर वढ़ाकर रख दिया। कुछ देर बाद भाव का उपशम हुआ। तव पैर खींचकर उन्होने डाक्टर से कहा—"अहा,

तुमने कैसी सुन्दर बात कही है ! 'उन्हीं की गोद में बैठा हुआ हूं। बीमारी की बात उनसे नही कहूंगा तो और किससे कहूंगा ?' ——बुलाने की आवश्यकता होगी तो उन्हें ही बुलाऊँगा।"

यह कहते हुए श्रीरामकृष्ण की आँखे आँसुओं से भर गयी। वे फिर भावाविष्ट हो गये। उसी अवस्था में डाक्टर से कह रहे है—"तुम खूब शुद्ध हो। नही तो मै पैर न रख सकता !" फिर कह रहे हैं——" 'शान्त वही है जो रामरस चखे।'

"विषय है क्या ?——उसमें क्या है ?——रुपया, पैसा, मान, शरीर-सुख इनमें क्या रखा है ? 'ऐ दिल, जिसने राम को नही पहचाना, उसने फिर पहचाना ही क्या ?' "

बीमारी की इस अवस्था मे श्रीरामकृष्ण को भावावेश में रहते देखकर भक्तों को चिन्ता हो रही है। श्रीरामकृष्ण कह रहे है——" उस गाने के हो जाने पर में रुक जाऊँगा——'हरि-रस-मदिरा——'।" नरेन्द्र एक दूसरे कमरे मे थे, बुलाये गये। गन्धर्वोपम कण्ठ से नरेन्द्र गाने लगे——(भावार्थ)——"ऐ मेरे मन हरि-रस-मदिरा का पान करके तुम मस्त हो जाओ। मधुर हरि-नाम करते हुए धरती पर लोटो और रोओ। हरि-नाम के गम्भीर निनाद से गगन को छा दो। 'हरि-हरि' कहते हुए दोनों हाथ ऊपर उठाकर नाचो, और सब मे इस मधुर हरि-नाम का वितरण कर दो। ऐ मन, हरि के प्रेमानन्द-रसरूपी समुद्र मे रात्रन्दिवा तैरते रहो। हरि का पावन नाम ले-लेकर नीच वासना का नाश कर दो और पूर्णकाम बन जाओ।"

श्रीरामकृष्ण—और वह गाना, 'चिदानन्द-सागर मे . . . ?'

नरेन्द्र गा रहे हैं——(भावार्थ)——"चिदानन्द-सागर में आनन्द और प्रेम की तरंगें उठ रही है; उस महाभाव और रासलीला

की कैसी सुन्दर माधुरी है!..."

डाक्टर सरकार ने गानों को ध्यानपूर्वक सुना। जब गाना समाप्त हो गया तो उन्होंने कहा, "यह गाना अच्छा है—'चिदानन्द-सागर में ......'"

डाक्टर को इस प्रकार प्रसन्न देखकर श्रीरामकृष्ण ने कहा, "लड़के ने बाप से कहा, 'पिताजी, आप थोड़ीसी शराब चख लीजिये और उसके बाद यदि मुझसे कहेंगे कि मैं शराब पीना छोड़ दूँ, तो छोड़ दूँगा।' शराब चखने के बाद बाप ने कहा, 'बेटा, तुम चाहो तो शराब छोड़ दो, मुझे इसमें कोई आपत्ति नही है, परन्तु मै स्वयं तो अब निश्चय ही न छोड़ूँगा!'

(डाक्टर तथा अन्य सब हंसते हैं)

"उस दिन माँ ने मुझे दो व्यक्ति दिखाये थे। उनमें से एक तुम (डाक्टर) थे। उन्होंने यह भी दिखाया कि तुम्हें बहुत ज्ञान होगा, पर वह शुष्क ज्ञान रहेगा। (डाक्टर के प्रति मुस्कराते हुए) पर धीरे-धीरे तुम नरम हो जाओगे।"

डाक्टर सरकार चुप रहे।

परिच्छेद २६

कालीपूजा तथा श्रीरामकृष्ण

(१)

कालीपूजा के दिन भक्तों के संग में

श्रीरामकृष्ण श्यामपुकुरवाले मकान के ऊपर दक्षिण के कमरे मे खड़े हुए है। दिन के ९ बजे का समय होगा। आप शुद्ध वस्त्र पहने ललाट में चन्दन की बिन्दी लगाये हुए हैं। मास्टर आपकी आज्ञा पाकर सिद्धेश्वरी काली का प्रसाद ले आये हैं। प्रसाद को हाथ मे ले, बड़े भक्ति-भाव से श्रीरामकृष्ण खड़े हुए उसका कुछ अंश ग्रहण कर रहे है और कुछ मस्तक पर धारण कर रहे हैं। प्रसाद ग्रहण करते समय आपने पादुकाओं को पैरों से उतार दिया। मास्टर से कह रहे हैं—"वहुत अच्छा प्रसाद है।" आज शुक्रवार है, आश्विन की अमावस्या, ६ नवम्बर १८८५। आज कालीपूजा का दिन है।

श्रीरामकृष्ण ने मास्टर को आदेश दिया था ठनठनिया की सिद्धेश्वरी काली मूर्ति की पुष्प, नारियल, शक्कर और सन्देश चढ़ाकर पूजा करने के लिए। मास्टर स्नान करके नंगे पैर सवेरे पूजा समाप्त करके नंगे पैर ही श्रीरामकृष्ण के लिए प्रसाद लेकर आये है।

श्रीरामकृष्ण ने मास्टर को रामप्रसाद और कमलाकान्त की संगीत-पुस्तकें खरीद लाने के लिए कहा था। वे डाक्टर सरकार को ये पुस्तकें देना चाहते थे।

मास्टर कह रहे हैं—"ये पुस्तकें भी लाया हूँ—रामप्रसाद और कमलाकान्त के गाने की पुस्तकें।" श्रीरामकृष्ण ने कहा,

"डाक्टर के भीतर इन गीतों का भाव संचारित कर देना होगा।"

गाना– ऐ मेरे मन ! ईश्वर का स्वरूप जानने के लिए तुम यह कैसी चेष्टा कर रहे हो ? तुम तो अंधेरे कमरे में वन्द पागल की तरह भटक रहे हो . . . ।

गाना– कौन कह सकता है कि काली कैसी है ? षड्दर्शनों को भी जिसके दर्शन नहीं हो पाते . . . ।

गाना– ऐ मन ! तू खेती करना नहीं जानता । यह मनुष्य-जन्म परती जमीन की तरह पड़ा रह गया ! अगर तू खेती करता तो इसमे सोना फल सकता था ! . . .

गाना– आ मन, चल, टहलने चलें । काली-कल्पतरु के नीचे तुझे चारों फल पड़े मिल जायेंगे । . . .

मास्टर ने कहा, 'जी हाँ ।' श्रीरामकृष्ण मास्टर के साथ कमरे में टहल रहे है—पैरों मे चट्टी-जूता है । इस तरह की कठिन वीमारी, परन्तु फिर भी श्रीरामकृष्ण सदा ही प्रसन्न रहते हैं ।

श्रीरामकृष्ण– और वह गाना भी अच्छा है । 'यह संसार धोखे की टट्टी है ।'

मास्टर– जी हाँ ।

श्रीरामकृष्ण एकाएक चौक पड़े । पादुकाओं को निकालकर वे स्थिर भाव से खड़े हो गये और गम्भीर समाधि मे मग्न हो गये । आज जगन्माता की पूजा का दिन है, शायद इसीलिए वारम्वार उन्हें रोमांच हो रहा है और समाधि में मग्न हो रहे है । वड़ी देर वाद एक लम्वी साँस छोड़ मानो वड़े कष्ट से उन्होंने अपना भाव संवरण किया ।

(२)

भजनानन्द में

श्रीरामकृष्ण उसी ऊपरवाले कमरे में भक्तों के साथ बैठे हुए है। दिन के दस बजे का समय होगा। बिस्तरे पर तकिये के सहारे बैठे हुए है, चारो ओर भक्तगण है। राम, राखाल, निरंजन, कालीपद, मास्टर आदि बहुतसे भक्त है। श्रीरामकृष्ण के भाँजे हृदय मुखर्जी की बात चल रही है।

श्रीरामकृष्ण– (राम आदि से)– हृदय अभी भी जमीन-जमीन रट रहा है ! जब वह दक्षिणेश्वर मे था, तब उसने कहा था, 'दुशाला दो, नहीं तो मै नालिश कर दूंगा।'

"माँ ने उसे दक्षिणेश्वर से हटा दिया। आदमी जब आते थे, तब बस रुपया-रुपया करता था। वह अगर रहता तो ये सब आदमी न आते। इसीलिए माँ ने उसे हटा दिया।

"गो० भी पहले पहले उसी तरह किया करता था। नाक-भौं सिकोड़ता था। मेरे साथ गाड़ी में कही जाना पड़ता था तो देर करने लगता था। दूसरे लड़के अगर मेरे पास आते, तो उसे रंज होता था। उन्हें देखने के लिए अगर मैं कलकत्ते जाता था, तो मुझसे कहता था, 'क्या वे संसार छोड़कर आयेगे जो उन्हें देखने के लिए जाइयेगा ?' उन लड़कों को मिठाई आदि देने से पहले मे उससे डरकर कहता था, 'तू भी खा और उन्हें भी दे।' अन्त में मालूम हो गया कि वह यहाँ न रहेगा।

"तब मैने माँ से कहा, 'माँ, उसे हृदय की तरह बिलकुल न हटा देना।' फिर मैने सुना वह वृन्दावन जायेगा।

"गो० अगर रहता तो इन सब लड़कों का कुछ न होता। वह वृन्दावन चला गया, इसीलिए वे सब लड़के आने-जाने लगे।"

गो०– (विनयपूर्वक)– पर वैसी कोई वात मेरे मन में नहीं थी, आप सच जानिये।

राम दत्त– तुम्हारे मन के सम्वन्ध में वे जितना समझेंगे, उतना क्या तुम समझ सकोगे ?

गो० चुप हो रहे।

श्रीरामकृष्ण– (गो० से)– तू क्यों ऐसा सोचता है ?— मैं तुझे पुत्र से भी अधिक प्यार करता हूँ ! . . .

"अव तू चुप रह। . . . अव तुझमें वह भाव नहीं रह गया।"

भक्तों के साथ वातचीत होने के पश्चात्, उन लोगों के दूसरे कमरे में चले जाने पर, श्रीरामकृष्ण ने गो० को वुलवाया और पूछा— 'तूने कुछ और तो नहीं सोच लिया ?' गो० ने कहा— 'जी नहीं।'

श्रीरामकृष्ण ने मास्टर से कहा, 'आज कालीपूजा है, पूजा के लिए कुछ आयोजन किया जाय तो अच्छा हो। उन लोगों से एक वार कह आओ।'

मास्टर ने वैठकखाने मे जाकर भक्तों से कहा। कालीपद तथा दूसरे भक्त पूजा के लिए प्रवन्ध करने लगे।

दिन के दो वजे के लगभग डाक्टर श्रीरामकृष्ण को देखने आये; साथ में अध्यापक नीलमणि भी हैं। श्रीरामकृष्ण के पास वहुत से भक्त वैठे हुए हैं। गिरीश, कालीपद, निरंजन, राखाल, खोका (मणीन्द्र), लाटू, मास्टर, आदि वहुतसे भक्त है। श्रीरामकृष्ण प्रसन्नतापूर्वक वैठे हुए है। डाक्टर से पहले वीमारी और दवा की वातें हो जाने पर श्रीरामकृष्ण ने कहा, 'तुम्हारे लिए ये पुस्तकें मंगवायी गयी हैं।' डाक्टर को मास्टर ने दोनों पुस्तकें दे

दीं। डाक्टर ने गाना सुनना चाहा। श्रीरामकृष्ण की आज्ञा पा मास्टर और एक भक्त रामप्रसाद का गाना गा रहे है—

गाना– ऐ मेरे मन ! ईश्वर का स्वरूप जानने के लिए तुम यह कैसी चेष्टा कर रहे हो ! तुम तो अंधेरे कमरे मे बन्द पागल की तरह भटक रहे हो . . . ।

गाना– कौन जानता है कि काली कैसी है ? षड्दर्शनों को भी जिनके दर्शन नही हो पाते। . . .

गाना– ऐ मन, तू खेती करना नही जानता। . . .

गाना– आ मन, चल घूमने चलें। . . .

डाक्टर गिरीश से कह रहे है— 'तुम्हारा वह गाना बड़ा सुन्दर है–– वीणावाला–– बुद्धचरित का गाना।' श्रीरामकृष्ण का इशारा पाकर गिरीश और काली दोनों मिलकर गाना सुना रहे हैं—

गाना– मेरी यह बड़ी ही साध की वीणा है, बड़े यत्नपूर्वक इसके तारों का हार गूँथा गया है। . . .

गाना–में शान्ति के लिए व्याकुल हूँ, पर वह मिलती कहाँ है ? न जाने कहाँ से आकर कहाँ बहा जा रहा हूँ। . . .

गाना– ऐ निताई, मुझे पकड़ो ! मेरे प्राणो मे आज न जाने यह क्या हो रहा है ! . . .

गाना– आओ, आओ, ऐ जगाई-माधाई, प्राण भरकर, आओ, हरि का नाम लें ! . . .

गाना– यदि तुझे किशोरी राधा का प्रेम लेना है तो चला आ, प्रेम की ज्वार बही जा रही है। . . .

गाना सुनते सुनते दो-तीन भक्तों को भावावेश हो गया। गाना हो जाने पर श्रीरामकृष्ण के साथ डाक्टर फिर बातचीत

करने लगे। कल डा. प्रताप मजूमदार ने श्रीरामकृष्ण को नक्स वोमिका (Nux Vomica) दी थी। डाक्टर सरकार को यह सुनकर क्षोभ हो रहा है।

डाक्टर– मैं मर तो गया नहीं था! फिर नक्स वोमिका कैसे दी गयी!

श्रीरामकृष्ण– (सहास्य)– तुम क्यों मरोगे? तुम्हारी अविद्या की मृत्यु हो!

डाक्टर– मेरे किसी समय अविद्या नहीं थी!

डाक्टर ने अविद्या का अर्थ भ्रष्ट-स्त्री समझ लिया था।

श्रीरामकृष्ण– (सहास्य)– नही जी, संन्यासी की अविद्या-माँ मर जाती है, और विवेक-पुत्र हो जाता है। अविद्या-माँ के मर जाने पर अशौच होता है, इसीलिए कहते है— संन्यासी को छूना नहीं चाहिए।

हरिवल्लभ आये हुए हैं। श्रीरामकृष्ण कह रहे है, 'तुम्हें देखकर आनन्द होता है।' हरिवल्लभ बड़े विनयशील हैं। चटाई से अलग जमीन पर बैठे हुए श्रीरामकृष्ण को पंखा झल रहे है। हरिवल्लभ कटक के सब से बड़े वकील है।

पास ही अध्यापक नीलमणि बैठे हुए है। श्रीरामकृष्ण उनकी मान-रक्षा करते हुए कह रहे हैं, 'आज मेरा शुभ दिन है।' कुछ देर बाद डाक्टर और उनके मित्र नीलमणि विदा हो गये। हरिवल्लभ भी उठे। चलते समय उन्होने कहा, 'मैं फिर आऊँगा।'

(३)

श्रीकालीपूजा

शरद् ऋतु की अमावस्या है,— रात के आठ बजे होंगे। उसी ऊपरवाले कमरे मे पूजा का सारा प्रबन्ध किया गया है। अनेक

प्रकार के पुष्प, चन्दन, बिल्वपत्र, जवापुष्प, खीर तथा अनेक प्रकार की मिठाइयाँ भक्तगण ले आये है। श्रीरामकृष्ण बैठे हुए है। चारों ओर से भक्त-मण्डली घेरे हुए बैठी है। शरद, राम, गिरीश, चुन्नीलाल, मास्टर, राखाल, निरंजन, छोटे नरेन्द्र, बिहारी आदि बहुतसे भक्त है।

श्रीरामकृष्ण ने कहा— 'धूना ले आओ।' कुछ देर बाद श्रीरामकृष्ण ने जगन्माता को सब कुछ निवेदित कर दिया। मास्टर पास बैठे हुए है। मास्टर की ओर देखकर श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं— 'सब लोग थोड़ी देर ध्यान करो।' भक्तगण ध्यान करने लगे।

पहले गिरीश ने श्रीरामकृष्ण के श्रीचरणों में माला चढ़ायी, फिर मास्टर ने गन्ध-पुष्प चढ़ाये। तत्पश्चात् राखाल ने, फिर राम ने। इसी तरह सब भक्त श्रीचरणों में पुष्प-दल चढ़ाने लगे।

श्रीचरणों में फूल चढ़ाकर निरंजन 'ब्रह्ममयी' कहकर भूमिष्ठ हो प्रणाम करने लगे। भक्तगण 'जय माँ, जय माँ' कह रहे है।

देखते ही देखते श्रीरामकृष्ण समाधिमग्न हो गये। भक्तों की आँखों के सामने ही श्रीरामकृष्ण में एक आश्चर्यजनक परिवर्तन हो गया। उन लोगों ने उनके मुख-मण्डल पर दैवी ज्योति का अवलोकन किया। उनके दोनों हाथ इस प्रकार उठे हुए थे जैसे कि वे भक्तों को वरदान तथा अभय-दान दे रहे हों। उनका शरीर निश्चल है, बाह्य संसार का उन्हे बिलकुल ज्ञान नही। वे उत्तर की ओर मुँह किये हुए बैठे है। क्या इनके भीतर साक्षात् जगन्माता आविर्भूत हुई है? सभी अवाक् हो, एकटक दृष्टि से इस अद्भुत वराभयदायिनी जगन्माता की जीवन्त मूर्ति का दर्शन कर रहे है।

भक्तगण स्तुतिपाठ कर रहे हैं। पहले एक भक्त गाता है, उसके पीछे सब एक ही स्वर में उसी पद की आवृत्ति करते है।

गिरीश गा रहे है—

(भावार्थ)– देवताओं के बीच वह कौन रमणी चमक रही है, जिसके घने काले केश मेघ-श्रेणी के समान जान पड़ते है? वह कौन है, जिसके रक्तोत्पल युगलचरण शिव की छाती पर विराजमान है? वह कौन है, जिसके नखों में रजनीकर का वास है और जिसके पैरों की दीप्ति सूर्य को भी मात कर रही है? वह कौन है, जिसके मुख पर मधुर हास्य शोभायमान है ओर जिसका विकट अट्टहास रह-रहकर दसों दिशाओं को गुँजा दे रहा है?

उन्होने फिर गाया—

गाना – दीनतारिणी, दुरितहारिणी, सत्त्व-रजस्तम-त्रिगुण-धारिणी।

सृजन-पालन-निधन-कारिणी, सगुणा निर्गुण सर्वस्वरूपिणी।...

बिहारी गा रहे है –(भावार्थ)–

"ऐ श्यामा! शवारूढ़ा माँ! सुनो, मै तुम्हारे पास अपने हृदय की आन्तरिक कामना व्यक्त करता हूं। जब मेरी अन्तिम साँस इस देह को छोड़ चलेगी तब, ऐ शिवे, तुम मेरे हृदय में प्रकाशित होना। उस समय, माँ, मै मन-मन वन-वन घूमकर सुन्दर जवा-कुसुम चुनकर ले आऊँगा, और उसमे भक्ति-चन्दन मिलाकर तुम्हारे श्रीचरणों मे पुष्पांजलि दूँगा।"

भक्तों के साथ मणि गा रहे है– (भावार्थ)–

"ओ माँ! सब कुछ तुम्हारी ही इच्छा से होता है। ऐ तारा! तुम इच्छामयी हो! तुम अपने कर्म आप ही करती हो, पर लोग बोलते है 'मैं करता हूँ।' माँ, तुम हाथी को कीचड़ में फँसा देती

हो, पंगु को गिरि लाँघने में समर्थ कर देती हो, किसी को तुम इन्द्रत्वपद दे देती हो, तो किसी को अधोगामी बना देती हो। अम्बे ! मैं यन्त्र हूँ, तुम यन्त्री हो; मैं गृह हूँ, तुम गृहिणी हो; मैं रथ हूँ, तुम रथी हो। माँ, तुम मुझे जैसा चलाती हो, वैसा ही चलता हूँ।"

पुनः—

"ऐ माँ, तुम्हारी करुणा से सभी कुछ सम्भव हो सकता है। अलंघ्य पर्वत के समान विघ्न-बाधा भी तुम्हारी कृपा से दूर हो जाती है। तुम मंगलनिधान हो, तुम सभी का मगल करती हो—सभी को सुख और शान्ति प्रदान करती हो। तो फिर माँ, अपने फलाफल की चिन्ता करके मै ही क्यों व्यर्थ जला जा रहा हूँ ?"

पुनः—

"ओ माँ आनन्दमयी, मुझे निरानन्द न कर देना !..."

पुनः—

"निविड़ अंधकार मे, ऐ माँ, तेरी अरूप-राशि चमक उठती है।..."

श्रीरामकृष्ण अब प्रकृतिस्थ हो गये है। उन्होने इस गीत को गाने को कहा—"ऐ श्यामा ! सुधातरंगिणी ! नहीं मालूम, तुम कब किस रंग मे रहती हो।"

इस गाने के समाप्त होने पर श्रीरामकृष्ण 'शिव के साथ सदा ही रंग मे रँगी हुई तुम आनन्द मे मग्न हो' इस गीत को गाने के लिए आदेश कर रहे हैं।

भक्तों के आनन्द के लिए श्रीरामकृष्ण कुछ खीर अपने मुख में लगा रहे है, परन्तु उसी समय भाव मे विभोर हो बिलकुल

बाह्य संज्ञाशून्य हो गये।

कुछ देर बाद भक्तगण श्रीरामकृष्ण को प्रणाम करके प्रसाद लेकर बैठकखाने मे चले गये। सब एक साथ आनन्दपूर्वक प्रसाद पाने लगे।

रात के नौ बजे का समय होगा। श्रीरामकृष्ण ने कहला भेजा, 'रात हो गयी है, सुरेन्द्र के यहाँ आज कालीपूजा है, तुम लोगों का न्योता है, तुम लोग जाओ।'

भक्तगण आनन्द करते हुए सिमला मे सुरेन्द्र के यहाँ पहुँचे। सुरेन्द्र ने आदरपूर्वक उन्हें ऊपरवाले बैठकखाने मे ले जाकर बैठाया। घर मे उत्सव है, सब लोग गीत और वाद्य के द्वारा आनन्द मना रहे है।

सुरेन्द्र के यहाँ से प्रसाद पाकर लौटते हुए भक्तों को आधी रात से अधिक हो गयी।

परिच्छेद २७

काशीपुर मे श्रीरामकृष्ण

(१)

कृपासिन्धु श्रीरामकृष्ण

श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ काशीपुर मे रहते है। शुक्रवार, ११ दिसम्बर १८८५ को श्यामपुकुर का मकान छोड़कर उन्हे यहाँ ले आया गया। यहाँ आये आज बारह दिन हो गये। इतनी कठिन वीमारी होते हुए भी उन्हे यही चिन्ता रहती है कि किस तरह भक्तो का कल्याण हो। दिन-रात किसी-न-किसी भक्त के सम्बन्ध मे चिन्ता किया करते है।

श्रीरामकृष्ण की सेवा के लिए बालक भक्त क्रमशः काशीपुर में आकर रह रहे है। अभी भी बहुतेरे भक्त अपने घर आया-जाया करते है। गृही भक्त प्रायः रोज आकर देख जाया करते है, कभी कभी रात को भी रह जाते है।

इस समय तक लगभग सभी भक्त एकत्रित हो गये है। १८८१ ई. से भक्तो का समागम होने लगा था। अन्त के प्रायः सभी भक्त आ गये है। १८८४ ई. के अन्तिम भाग में शरद और शशी ने श्रीरामकृष्ण का प्रथम दर्शन किया था। कालेज की परीक्षा के वाद, १८८५ ई. की मई-जून से वे सदा ही उनके पास आया-जाया करते है। गिरीश घोष ने श्रीरामकृष्ण का सर्वप्रथम दर्शन १८८४ ई. के सितम्बर मास में स्टार थिएटर मे किया था, शारदा ने १८८४ दिसम्बर के अन्त में, तथा सुबोध और क्षीरोद ने १८८५ अगस्त मे।

आज बुधवार है, २३ दिसम्बर १८८५। आज सुबह से प्रेम

की मानो लूट मची हुई है। श्रीरामकृष्ण निरंजन से कह रहे हैं, 'तू मेरा बाप है, मैं तेरी गोद मे बैठूँगा।' कालीपद की छाती पर हाथ रखकर वे कह रहे हैं, 'चैतन्य हो,' और उनकी ठुड्डी पकड़कर उनका दुलार कर रहे है। कह रहे है, 'जिसने हृदय से ईश्वर को पुकारा होगा, जिसने सन्ध्योपासना की होगी, उसे यहाँ आना ही होगा।' आज प्रात:काल दो भक्त-स्त्रियो पर भी कृपादृष्टि हो गयी। समाधिस्थ होकर उन्होने अपने पैर से उनका स्पर्श किया। उस समय उन स्त्रियों की आँखों में आँसू आ गये। एक ने रोते हुए कहा, 'आपकी इतनी कृपा!' सचमुच ही, आज श्रीरामकृष्ण ने प्रेम की लूट मचा रखी है। सीती के गोपाल पर कृपा करने की इच्छा है, इसलिए कह रहे है, 'उसे बुला ले आओ।'

सन्ध्या हो गयी है। श्रीरामकृष्ण जगन्माता की चिन्ता कर रहे है।

कुछ देर बाद बड़े ही धीमे स्वर मे दो-एक भक्तों के साथ श्रीरामकृष्ण बातचीत कर रहे है! कमरे में काली, चुन्नीलाल, मास्टर, नवगोपाल, शशी, निरंजन आदि भक्त है।

श्रीरामकृष्ण– एक स्टूल खरीद लाना—यहाँ के लिए। कितना लगेगा?

मास्टर– जी, दो-तीन रुपये के भीतर आ जायगा।

श्रीरामकृष्ण– नहाने की चौकी जब बारह आने में मिलती है तो उसकी कीमत इतनी क्यों होगी?

मास्टर– कीमत ज्यादा न होगी—उतने के ही भीतर हो जायगा।

श्रीरामकृष्ण– अच्छा, कल तो बृहस्पतिवार है—तीसरा पहर

अशुभ होगा। क्या तुम तीन बजे से पहले न आ सकोगे ?

मास्टर–जी हाँ, आऊँगा।

श्रीरामकृष्ण–अच्छा, यह बीमारी कितने दिनों में अच्छी होगी ?

मास्टर–जरा बढ़ गयी है, कुछ दिन लगेंगे।

श्रीरामकृष्ण–कितने दिन ?

मास्टर–पाँच-छः महीने लग सकते हैं।

यह सुनकर श्रीरामकृष्ण बालक की तरह अधीर हो गये। कहते है— "कहते क्या हो ?"

मास्टर–जी, मैने जड़-समेत अच्छी होने के लिए इतने दिन वतलाये है।

श्रीरामकृष्ण–यह कहो। अच्छा, ईश्वरी रूपो के इतने दर्शन होते हैं, भाव और समाधि होती है, फिर ऐसी बीमारी क्यों हुई ?

मास्टर–जी, आपको कष्ट तो वहुत हो रहा है, परन्तु इसका उद्देश्य हैं।

श्रीरामकृष्ण–क्या उद्देश्य है ?

मास्टर–आपकी अवस्था मे परिवर्तन हो रहा है। निराकार की ओर झुकाव हो रहा है। आपका 'विद्या का मैं' भी नष्ट हुआ जा रहा है।

श्रीरामकृष्ण–हाँ, लोक-शिक्षा वन्द हो रही है। अव और नहीं कहा जाता। सब राममय देख रहा हूँ। कभी कभी मन में आता है, किससे कहूँ ? देखो न, यह मकान किराये पर लिया गया, इससे कितने प्रकार के भक्त आ रहे है।

"कृष्णप्रसन्न सेन या शशधर की तरह साइन-वोर्ड तो न लटकाया जायगा कि इतने समय से इतने समय तक लेक्चर होगा !" (श्रीरामकृष्ण और मास्टर हँसते है)

मास्टर—एक उद्देश्य और है, भक्तों का चुनना। पाँच साल तक तपस्या करके जो कुछ न होता, वह इन्ही कुछ दिनो मे भक्तो को हो गया। उनका प्रेम, उनकी भक्ति आपाढ की वाढ़ के समान वढ़ती जा रही है।

श्रीरामकृष्ण—हाँ, यह तो हुआ। अभी निरंजन घर गया था। (निरजन से) "तू वता, तुझे क्या मालूम पड़ता है ?"

निरजन—जी, पहले प्यार ही था, परन्तु अव छोड़कर नही रहा जाता।

मास्टर—मैने एक दिन देखा था, ये लोग कितना वढ़े-चढ़े हैं।

श्रीरामकृष्ण—कहाँ ?

मास्टर—एक तरफ खड़ा हुआ श्यामपुकुरवाले मकान मे देखा था। जान पड़ा, ये लोग कितनी वड़ी वाधाओ को हटाकर वहाँ सेवा के लिए आकर वैठे हुए है।

यह वात सुनते ही श्रीरामकृष्ण को भावावेश हो रहा है। कुछ देर तक वे स्तव्ध रहे, फिर समाधिस्थ हो गये।

भाव का उपशम होने पर मास्टर से कह रहे है—"मैने देखा, साकार से सव निराकार मे जा रहे है। और सव वाते कहने की इच्छा हो रही है, परन्तु कहने की शक्ति नही है।

"अच्छा, यह निराकार की ओर का सुझाव केवल लीन होने के लिए है न ?"

नास्टर—(आवाक् होकर)—जी, ऐसा ही होगा।

श्रीरामकृष्ण—अव भी देख रहा हूं, निराकार अखण्ड सच्चिदानन्द—ठीक इसी तरह ... परन्तु वड़े कष्ट से मुझे भाव-संवरण करना पड़ रहा है।

"तुमने जो भक्तों के चुनने की वात कही, वह ठीक है। इस

वीमारी में यह समझ मे आ रहा है कि कौन अन्तरंग है और कौन वहिरंग। जो लोग संसार को छोड़कर यहाँ पर है, वे अतरंग है। और जो लोग एक वार आकर केवल पूछ जाते है, 'कैसे है, आप, महाशय ?' वे वरिरंग है।

"भवनाथ को तुमने देखा नही ? श्यामपुकुर में दूल्हा-सा सजकर आया और पूछा— 'कैसे हैं आप ?' वस तव से फिर उसने इधर का नाम तक नही लिया। नरेन्द्र के कारण ही मैं उसका इतना ख्याल करता हूँ, परन्तु अव उस पर मेरा मन नही है।"

(२)

श्रीमुखकथित चरितामृत

श्रीरामकृष्ण– (मणि से)–जव ईश्वर भक्तों के लिए शरीर धारण करके आते है, तव उनके साथ साथ भक्त भी आते है। उनमे कोई अन्तरंग होते है, कोई वहिरंग, और कोई रसददार (आवश्यकताओ को पूरी करनेवाले) होते है।

"दस-ग्यारह साल की उम्र में विशालाक्षी के दर्शन करने के लिए जव मै गया था, तव मैदान में मेरी पहली भावावस्था हुई थी। कितनी सुन्दर अवस्था थी वह ! मै विलकुल व्राह्यज्ञान-शून्य हो गया था।

"जव वाईस-तेईस साल की उम्र थी तव उसने (जगन्माता ने) मुझसे कालीघर (दक्षिणेश्वर) मे पूछा— 'क्या तू अक्षर होना चाहता है ?' मै अक्षर का अर्थ जानता ही न था। पूछने पर हलधारी ने वतलाया, 'क्षर का अर्थ है जीव और अक्षर का अर्थ है परमात्मा।'

"जव आरती होती थी, तव मै कोठी के ऊपर से चिल्लाता

था, 'अरे भक्तो, तुम सब कहाँ हो ? आओ, जल्दी आओ। सांसारिक मनुष्यों के बीच मे मेरे प्राण निकले जा रहे हैं।' इंग्लिशमैनों (अंग्रेजी पढ़े आदमियो) से अपना हाल कहा तो उन्होने बतलाया, 'यह सब मन की भूल है।' तब, अपने मन में यह कहकर 'शायद ऐसा ही हो' मैं चुप हो गया। परन्तु अब तो वह सब ठीक उतर रहा है।—अब भक्त आकर एकत्रित हो रहे हैं।

"फिर माँ ने दिखलाया, पाँच आदमी सेवा करनेवाले है। पहला मथुरबाबू है। फिर शम्भु मल्लिक, उसे पहले मैंने कभी नही देखा था। भावावेश मे मैंने देखा, गोरे रंग का आदमी, सिर पर टोपी पहने हुए। जब बहुत दिनो बाद शम्भु को देखा, तब याद आ गया कि इसी को मैंने भावावस्था मे देखा था। सेवा करनेवाले और तीन आदमी अभी ठीक नही हुए; परन्तु सब गोरे रंग के है। सुरेन्द्र बहुत करके रसददार की तरह जान पड़ता है। यह अवस्था जब हुई, तब ठीक मेरी तरह का एक आदमी आकर मेरी इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना नाड़ियों को खूब हिला गया। षड्चक्रों के एक-एक पद्म के साथ जिह्वा के द्वारा रमण करता था, ऐसा करने से ही वे अधोमुख पद्म ऊर्ध्वमुख हो गये। अन्त मे सहस्रार पद्म विकसित हो गया।

"कब किस तरह का आदमी आयेगा, यह पहले ही से माँ मुझे दिखा देती थी। इन्ही आँखों से मै देखा करता था—भावावेश मे नहीं। मैंने देखा, चैतन्यदेव का संकीर्तन बकुल वृक्ष से वट वृक्ष की ओर जा रहा है। उसमे मैंने बलराम को देखा था और शायद तुम्हें भी देखा था। मेरे पास बार बार आने से तुममे और चुन्नी में आध्यात्मिक जागृति हुई है।

"शशी और शरद को देखा था, ये ईशु के दल में थे।

"वट वृक्ष के नीचे एक वच्चे को देखा था। हृदय ने कहा, 'तव तो तुम्हारे एक लड़का होगा?' मैंने कहा, 'मेरे लिए तो सव मातृयोनि है, मेरे लडका कैसे होगा?' वह लड़का राखाल है।

"मैंने कहा, 'माँ, जव तुमने मेरी ऐसी ही अवस्था कर दी है तव एक वड़ा आदमी भी मिला दो।' इसीलिए मथुरवावू ने चौदह वर्ष तक सेवा की। और उसने कितना किया!—साधुओं की सेवा के लिए अलग भण्डार कर दिया; गाड़ी, पालकी, जो वस्तु जिसे देने के लिए मै कहता था, वह तुरन्त दे देता था! ब्राह्मणी उसे प्रताप रुद्र* कहती थी।

"विजय ने इस रूप के (अपनी ओर इगित कर) दर्शन किये थे। अच्छा, यह क्या है?—वह कहता है, तुम्हे इस समय छूने पर जैसा अनुभव होता है, वैसा ही मुझे उस समय हुआ था।

"लाटू ने गिना, इकतीस भक्त है। इतने तो वहुत नही हुए। पर हाँ, कुछ भक्त विजय तथा केदार के द्वारा भी वन रहे हैं।

"भावावेश मे माँ ने दिखलाया, अन्तिम दिनो मे मुझे पायस खाकर ही रहना होगा।

"इस वीमारी मे वह (श्रीरामकृष्ण की धर्मपत्नी) मुझे एक दिन पायस खिला रही थी। तव यह कहकर मै रोने लगा, 'क्या यही मेरा अन्तिम दिनों का पायस खाना है, और इतने कष्टपूर्वक!'"

---

*प्रताप रुद्र उड़ीसा के राजा तथा श्रीचैतन्य महाप्रभु के भक्त थे। उन्होने श्रीचैतन्य देव की अत्यन्त श्रद्धा तथा भक्ति के साथ सेवा की थी।

परिच्छेद २८

भक्तों का तीव्र वैराग्य

(१)

ईश्वर के लिए नरेन्द्र की व्याकुलता

श्रीरामकृष्ण काशीपुर के वगीचे में, मकान के ऊपरवाले मँजले मे वैठे हुए है। दक्षिणेश्वर के कालीमन्दिर से श्रीयुत राम चटर्जी उनका कुशल-समाचार लेने के लिए आये थे।

श्रीरामकृष्ण मणि के साथ इसी सम्वन्ध मे वातचीत करते हुए पूछ रहे है—'क्या इस समय वहाँ (दक्षिणेश्वर मे) ठण्डक ज्यादा है ?'

आज पौप कृष्णा चतुर्दशी, सोमवार है, ४ जनवरी, १८८६। दिन के चार वजे का समय होगा।

नरेन्द्र आये और आसन ग्रहण किया। श्रीरामकृष्ण उन्हें रह-रहकर देख रहे है और मुस्करा रहे है— मानो उनका स्नेह उछला जा रहा हो। श्रीरामकृष्ण ने मणि से इशारे से कहा कि नरेन्द्र रोये थे। फिर वे चुप हो गये। इसके वाद उन्होने फिर इशारा किया कि नरेन्द्र घर से रास्ते भर रोते हुए आये थे।

सब लोग चुप है। अव नरेन्द्र वातचीत कर रहे है।

नरेन्द्र– सोच रहा हूँ, आज वहाँ चला जाऊँ।

श्रीरामकृष्ण–;कहाँ ?

नरेन्द्र– दक्षिणेश्वर के वेलतल्ले मे,— वहाँ रात को धूनि जलाऊँगा।

श्रीरामकृष्ण– नही, वे लोग (पड़ोस मे 'मैगनीज' के पदाधिकारी) जलाने नहीं देगे। पंचवटी वहुत अच्छी जगह

है, --बहुत से साधुओं ने वहाँ जप-ध्यान किया है।

"परन्तु बहुत ठण्डा है, और अँधेरा भी है।"

सब लोग चुप है। श्रीरामकृष्ण फिर बोले।

श्रीरामकृष्ण– (नरेन्द्र से, सहास्य)–तू पढेगा नही ?

नरेन्द्र –(श्रीरामकृष्ण और मणि की ओर देखकर)–एक दवा पाऊँ तो जी मे जी आये, --वह दवा ऐसी कि उससे जो कुछ मैने पढा है, सब भूल जाऊँ।

श्रीयुत गोपाल भी बैठे हुए है। उन्होने कहा-- 'साथ मै भी चलूँगा।' श्रीयुत कालीपद घोष श्रीरामकृष्ण के लिए अगूर लाये है। अंगूरो का डब्बा श्रीरामकृष्ण के पास ही रखा था। श्रीरामकृष्ण भक्तों को अंगूर दे रहे है। नरेन्द्र को पहले दिया। फिर प्रसादी बताशों की तरह सब अंगूर लुटा दिये। भक्तो ने, जिसने जहाँ पाया, बीन लिया।

(२)

नरेन्द्र का तीव्र वैराग्य

शाम हो गयी है, नरेन्द्र नीचे बैठे हुए एकान्त में मणि से अपने प्राणों की विकलता के सम्बन्ध मे बातें कर रहे है।

नरेन्द्र– (मणि से)–गत शनिवार को मै यहाँ ध्यान कर रहा था, एकाएक छाती के भीतर न जाने कैसा होने लगा।

मणि– कुण्डलिनी का जागरण हुआ होगा।

नरेन्द्र– सम्भव है, वही हो। इड़ा और पिगला का बिलकुल स्पष्ट अनुभव हुआ। हाजरा से मैने कहा, छाती पर हाथ रखकर देखने के लिए। कल रविवार था, ऊपर जाकर मै इनसे (श्रीरामकृष्ण से) मिला और सब बातें उन्हे कह सुनायी।

मैने कहा, "सब की तो बन गयी, कुछ मुझे भी दीजिये। सब

का तो काम हो गया और मेरा क्या न होगा ?"

मणि– उन्होंने तुमसे क्या कहा ?

नरेन्द्र– उन्होंने कहा, 'तू घर का कोई प्रवन्ध करके आ, सव हो जायगा। तू क्या चाहता है ?'

मैंने कहा, 'मेरी इच्छा है, लगातार तीन-चार दिन तक समाधि-लीन रहा करूँ। कभी कभी वस भोजन भर के लिए उठूँ !'

उन्होंने कहा, 'तू तो वड़ी नीच बुद्धि का है। उस अवस्था से भी ऊँची अवस्था है। तू गाता भी तो है— जो कुछ है, सो तू ही है।'

मणि– हाँ, वे तो सदा ही कहते है कि समाधि से उतरकर मन देखता है कि वे ही जीव और जगत् हुए है। यह अवस्था ईश्वरकोटि की हो सकती है। वे कहते है, जीवकोटि समाधि-अवस्था को प्राप्त करते है, परन्तु फिर वे वहाँ से उतर नही सकते।

नरेन्द्र– उन्होने कहा, 'तू घर के लिए कोई व्यवस्था करके आ। समाधिलाभ की अवस्था से भी ऊँची अवस्था हो सकेगी।'

"आज सवेरे मैं घर गया तो सव लोग डाँटने लगे और कहा, 'तुम क्या इधर-उधर घूमते रहते हो ! कानून की परीक्षा सिर पर आ गयी और तुम्हें न पढ़ना न लिखना— आवारा घूमते फिरते हो !' "

मणि– तुम्हारी माँ ने भी कुछ कहा ?

नरेन्द्र– नहीं, वे मुझे खिलाने के लिए व्यस्त हो रही थी।

मणि– फिर ?

नरेन्द्र– दीदी के घर में, उसी पढनेवाले कमरे मे मैं पढ़ने लगा। पर पढ़ने वैठा तो हृदय मे एक वहुत वड़ा आतंक छा गया,

जैसे पढ़ना एक भय का विषय हो ! छाती धड़कने लगी !—इस तरह मै और कभी नहीं रोया ।

"फिर पुस्तके फेंककर भागा !—रास्ते से होकर भागता गया । जूते रास्ते मे न जाने कहाँ पड़े रह गये ! धान के पयाल के ढेर के पास से होकर भाग रहा था । देह भर में पयाल लिपट गया । मैं काशीपुर के रास्ते की ओर भाग रहा था ।"

नरेन्द्र कुछ देर चुप रहे । फिर कहने लगे— "विवेकचूड़ामणि सुनकर मन और बिगड़ गया है । शंकराचार्य लिखते है— इन तीन सयोगों को बड़ी ही तपस्या का फल समझना चाहिए, ये बड़े भाग्य से मिलते है,—मनुष्यत्वं मुमुक्षुत्वं महापुरुष संश्रयः ।

"मैने सोचा, मेरे लिए तीनों का संयोग हो गया है । बड़ी तपस्या का फल तो यह है कि मनुष्य-जन्म हुआ है, बड़ी तपस्या से मुक्ति की इच्छा हुई है, और सब से बड़ी तपस्या का फल यह है कि ऐसे महापुरुष का संग प्राप्त हुआ है !"

मणि— अहा !

नरेन्द्र— संसार अब अच्छा नही लगता । संसार मे जो लोग है, उनसे भी जी हट गया है । दो-एक भक्तों को छोड़कर और कुछ अच्छा नही लगता ।

नरेन्द्र फिर चुप हो रहे । नरेन्द्र के भीतर तीव्र वैराग्य है । इस समय भी प्राणो में उथल-पुथल मची हुई है । नरेन्द्र फिर बातचीत कर रहे है ।

नरेन्द्र— (मणि के प्रति)—आप लोगों को तो शान्ति मिल गयी है, परन्तु मेरे प्राण अस्थिर हो रहे है । आप ही लोग धन्य है ।

मणि ने कोई उत्तर नही दिया । चुप है । सोच रहे है—श्रीरामकृष्ण ने कहा था, ईश्वर के लिए व्याकुल होना चाहिए,

तव उनके दर्शन होते है। सन्ध्या के वाद ही मणि ऊपरवाले कमरे में गये। देखा, श्रीरामकृष्ण सो रहे हैं।

रात के नौ वजे का समय है। श्रीरामकृष्ण के पास निरंजन और शशी है। श्रीरामकृष्ण जागे। रह-रहकर वे नरेन्द्र की ही वाते कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण— नरेन्द्र की अवस्था कितने आश्चर्य की है! देखो, यही नरेन्द्र पहले साकार नही मानता था। अव इसके प्राणों मे कैसी खलवली मची हुई है, तुमने देखा? जैसा उस कहानी मे है— किसी ने पूछा था, 'ईश्वर किस तरह मिल सकेगे?' तव गुरु ने कहा, 'मेरे साथ चलो, मै तुम्हें दिखलाता हूँ कि किस तरह की अवस्था मे ईश्वर मिलते है।' यह कहकर गुरु ने एक तालाव मे उसे ले जाकर डुवो दिया और ऊपर से दवाकर रखा, फिर कुछ देर वाद उसे छोड़कर गुरु ने पूछा— 'कहो तुम्हारे प्राण कैसे हो रहे थे?' उसने कहा, 'प्राण छटपटा रहे थे— मानो अव निकलते ही हो।'

"ईश्वर के लिए प्राणों के छटपटाते रहने पर समझना कि अव दर्शन मे देर नही है। अरुणोदय होने पर, पूर्व मे लाली छा जाने पर समझ पड़ता है कि अव सूर्योदय होगा।"

आज श्रीरामकृष्ण की वीमारी वढ़ गयी है। शरीर को इतना कष्ट है, फिर भी नरेन्द्र के सम्वन्ध मे ये सव वातें संकेत द्वारा भक्तों को वतला रहे है।

आज रात को नरेन्द्र दक्षिणेश्वर चले गये। अमावस्या की रात्रि, घोर अन्धकारमयी हो रही है। नरेन्द्र के साथ दो-एक भक्त भी गये। रात को मणि वगीचे मे ही है। स्वप्न में देख रहे हैं, वे संन्यासियों की मण्डली के वीच मे वैठे हुए हैं।

(३)

भक्तों का तीव्र वैराग्य

दूसरे दिन मंगलवार है, ५ जनवरी। दिन के चार बजे का समय होगा। श्रीरामकृष्ण शय्या पर बैठे हुए मणि से बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण—क्षीरोद अगर गंगासागर जाय, तो उसे एक कम्बल खरीद देना।

मणि—जी महाराज, जो आज्ञा।

श्रीरामकृष्ण—अच्छा, इन लड़कों को भला यह क्या हो रहा है ? कोई पुरी भाग रहा है तो कोई गंगासागर जा रहा है !

"सब घर छोड़-छोड़कर आ रहे है ! देखो न नरेन्द्र को। तीव्र वैराग्य के होने पर संसार कुआँ तथा आत्मीय काले साँप जैसे जान पड़ते है।"

मणि—जी, ससार में बड़ा कष्ट है।

श्रीरामकृष्ण—जन्म से ही नरक-यन्त्रणा होती है। देख रहे हो न, बीबी और बच्चों को लेकर कितना कष्ट होता है !

मणि—जी हाँ, और आपने कहा था, उनको (बालक भक्तों को) न किसी से लेना है, न देना; इस लेने-देने के लिए ही अटका रहना पड़ता है।

श्रीरामकृष्ण—देखते हो न निरंजन को ! उसका भाव है—'यह ले अपना और इधर ला मेरा।' बस, और कोई सम्बन्ध नही, और कोई खिचाव नही।

"कामिनी-कांचन, यही संसार है। देखो न, धन होता है तो तुम्हें उसे भविष्य के लिए सुरक्षित रख छोड़ने की सूझती है।"

यह सुनकर मणि ठहाका मारकर हंसने लगे। श्रीरामकृष्ण

भी हँसे।

मणि–रुपया निकालते हुए बड़ा हिसाब पैदा होता है। (दोनों हँस पड़े) आपने दक्षिणेश्वर में कहा था, त्रिगुणातीत होकर अगर कोई संसार मे रह सके तो हो सकता है।

श्रीरामकृष्ण–हाँ, बालक की तरह।

मणि–जी, परन्तु है बड़ा कठिन, बड़ी शक्ति चाहिए।

श्रीरामकृष्ण कुछ चुप हैं।

मणि–कल वे लोग दक्षिणेश्वर में ध्यान करने के लिए गये। मैंने स्वप्न देखा।

श्रीरामकृष्ण–क्या देखा ?

मणि–देखा, नरेन्द्र आदि संन्यासी हो गये हैं, धूनी जलाकर बैठे हुए है। उनके बीच में मैं भी बैठा हुआ हूँ।

श्रीरामकृष्ण–मन से त्याग होने से ही हुआ; अगर ऐसा कोई कर सका तो वह भी संन्यासी है।

श्रीरामकृष्ण चुप है। फिर बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण–परन्तु वासना मे आग लगाओ, तब होगा।

मणि–बड़ाबाजार मे मारवाड़ियो के पण्डित से आपने कहा था, 'मुझमे भक्ति की कामना है,'—भक्ति की कामना की गणना शायद कामनाओ मे नहीं होती।

श्रीरामकृष्ण–जैसे 'हिंचे' का साग सागों मे नही गिना जाता, क्योंकि उससे पित्त का दमन होता है।

"अच्छा, इतना आनन्द-भाव था, वह सब कहाँ गया ?"

मणि–गीता मे जो त्रिगुणातीत अवस्था लिखी है, वही हुई होगी। सत्त्व, रज और तमोगुण आप ही आप काम कर रहे हैं, आप स्वयं निर्लिप्त है—सत्त्वगुण से भी आप निर्लिप्त हैं।

श्रीरामकृष्ण– हाँ, जगन्माता ने मुझे बालक की अवस्था में रखा है।

"क्या अबकी बार देह न रहेगी ?"

श्रीरामकृष्ण और मणि चुप हैं। नरेन्द्र नीचे से आये। एक बार घर जायेंगे। वहाँ की व्यवस्था करके आयेंगे।

पिता के स्वर्गवास के बाद से नरेन्द्र की माँ और भाई बड़े कष्ट मे हैं। कभी कभी फाके भी हो जाते है। नरेन्द्र ही उनका एकमात्र भरोसा है कि वे रोजगार करके उन्हें खिलायेंगे। परन्तु कानून की परीक्षा नरेन्द्र दे नहीं सके। इस समय उन्हें तीव्र वैराग्य है। इसीलिए आज का प्रबन्ध करने के लिए वे जा रहे है। एक मित्र ने उन्हें सौ रुपया कर्ज देने के लिए कहा है। उन्ही रुपयो से घर के लिए तीन महीने तक के भोजन का प्रबन्ध करके आयेंगे।

नरेन्द्र– जरा घर जाता हूँ एक बार। (मणि से) महिम चक्रवर्ती के घर से होकर जाऊँगा, क्या आप चलेगे ?

मणि की जाने की इच्छा नहीं है। श्रीरामकृष्ण ने उनकी ओर देखकर नरेन्द्र से पूछा—'क्यो ?'

नरेन्द्र– उसी रास्ते से जा रहा हूँ, उनके साथ जरा बातें करता।

श्रीरामकृष्ण एकदृष्टि से नरेन्द्र को देख रहे है।

नरेन्द्र– यहाँ के एक मित्र ने सौ रुपये उधार देने के लिए कहा है। उन्ही रुपयों से घर का तीन महीने के लिए प्रबन्ध करके आऊँगा।

श्रीरामकृष्ण चुप है। मणि की ओर उन्होंने देखा।

मणि– (नरेन्द्र से)– नही, तुम लोग चलो, मैं बाद में आऊँगा।

लगे—"ये सब भक्तों के लक्षण हैं। ज्ञानियों के लक्षण और हैं—मुखाकृति मे रूखापन रहता है।

"ज्ञान लाभ करने के बाद भी ज्ञानी विद्या-माया को लेकर रह सकता है—भक्ति, दया, वैराग्य, इन सब को लेकर रह सकता है। इसके दो उद्देश्य हैं। पहला, इससे लोक-शिक्षा होती है; दूसरा, रसास्वादन के लिए।

"ज्ञानी अगर समाधि लगाकर चुप हो जाय, तो लोक-शिक्षा नही होती। इसीलिए शंकराचार्य ने 'विद्या का मैं' रखा था।

"और ईश्वरानन्द का भोग करने के लिए भक्त भक्ति लेकर रहता है।

"इस 'विद्या के मैं' मे या 'भक्ति के मैं' मे दोष नही है। दोष तो 'बदमाश मैं' मे है। उनके दर्शन करने के बाद बालक-जैसा स्वभाव हो जाता है। 'बालक के मैं' में कोई दोष नही है, जैसे आईने का प्रतिबिम्ब। वह लोगों को गालियाँ नहीं दे सकता। जली रस्सी देखने ही मे रस्सी की तरह है। फूँकने से वह उड़ जाती है। इसी तरह ज्ञानी और भक्त का अहंकार ज्ञानाग्नि में जल गया है। अब वह किसी की क्षति नहीं कर सकता। वह 'मै' नाममात्र के लिए है।

"नित्य में पहुँचकर फिर लीला मे रहना। जैसे उस पार जाकर फिर इस पार लौटना। लोक-शिक्षा और विलास के लिए —उनकी लीला मे सहयोग देने के लिए।"

श्रीरामकृष्ण बड़े धीमे स्वर में वार्तालाप कर रहे हैं। वे कुछ देर चुप ही रहे। भक्तों से फिर कहने लगे—

"शरीर को यह रोग है, परन्तु उसने (माता ने) अविद्या-माया नही रखी। देखो न, रामलाल, घर या स्त्री, इनकी मुझे

याद भी नहीं आती। हाँ, यदि कोई चिन्ता है तो उसी पूर्ण नामक कायस्थ बालक की—उसी के लिए सोच रहा हूँ। औरों के बारे में तो मुझे कोई चिन्ता नही।

"विद्या-माया उन्हीं ने रख दी है—लोगों के लिए, भक्तों के लिए।

"परन्तु विद्या-माया के रहते फिर आना पड़ता है। अवतार आदि विद्या-माया रख छोड़ते है। जरासी वासना के रहने पर फिर आना पड़ता है—बार बार आना पड़ता है। सब वासनाओं के मिट जाने पर मुक्ति होती है। भक्त मुक्ति नहीं चाहता।

"यदि काशी मे किसी का देहान्त हो तो मुक्ति होती है; फिर उसे आना नहीं पड़ता। ज्ञानियों का लक्ष्य मुक्ति है।"

नरेन्द्र—उस दिन हम लोग महिम चक्रवर्ती के यहाँ गये थे।

श्रीरामकृष्ण—(हंसकर)—फिर ?

नरेन्द्र—उसकी तरह का शुष्क ज्ञानी मैंने नहीं देखा।

श्रीरामकृष्ण—(सहास्य)—क्या हुआ ?

नरेन्द्र—हम लोगों से गाने के लिए कहा। गंगाधर ने गाया—कृष्णगीत। गाना सुनकर उसने कहा, 'इस तरह का गाना क्यों गाते हो ? प्रेम-प्रेम अच्छा नहीं लगता। इसके अलावा बीबी-बच्चों को लेकर यहाँ रहता हूं, यहाँ इस तरह के गाने क्यों ?'

श्रीरामकृष्ण—(मास्टर से)—देखा, उसे कितना भय है !

(२)

श्रीरामकृष्ण के देह-धारण का अर्थ

श्रीरामकृष्ण काशीपुर के बगीचे में हैं। शाम हो गयी है, वे अस्वस्थ है। ऊपरवाले बड़े कमरे में उत्तर की ओर मुँह किये बैठे है। नरेन्द्र और राखाल दोनों पैर दबा रहे है। पास ही मणि

बैठे हैं। श्रीरामकृष्ण ने इशारे से उन्हें पैर दवाने के लिए कहा। मणि चरण-सेवा करने लगे।

आज रविवार है, १४ मार्च १८८६, फागुन की शुक्ला नवमी। गत रविवार को श्रीरामकृष्ण की जन्म-तिथि की पूजा वगीचे में हो गयी है। गत वर्ष दक्षिणेश्वर के कालीमन्दिर में वड़े समारोह के साथ जन्म-महोत्सव मनाया गया था। इस वर्ष वे अस्वस्थ हैं। भक्तों के हृदय मे विपाद छाया है। इसलिए पूजा और उत्सव नाममात्र के लिए हुए।

भक्तगण सदा ही वगीचे में उपस्थित रहकर श्रीरामकृष्ण की सेवा किया करते हैं। श्रीमाताजी दिनरात उनकी सेवा में लगी रहती हैं। किशोर भक्तों में से वहुतेरे सदा ही वहाँ उपस्थित रहते हैं—नरेन्द्र, राखाल, निरंजन, शरद, शशि, वावूराम, योगीन, काली, लाटू आदि।

जो कुछ अधिक उम्रवाले भक्त हैं, वे प्राय: नित्य आकर श्रीरामकृष्ण के दर्शन कर जाते है। कभी कभी वे रह भी जाते हैं। तारक, सीती के गोपाल भी वहाँ हर समय रहते है तथा छोटे गोपाल भी।

श्रीरामकृष्ण आज वहुत अस्वस्थ हैं। आधी रात का समय है। ऊपर के हाल मे श्रीरामकृष्ण लेटे हुए है। तवीयत वहुत खराव हैं— आँख नही लगती। दो-एक भक्त चुपचाप पास वैठे हुए है— इसलिए कि कव कैसी जरूरत हो। एक आध वार झपकी आती है, और श्रीरामकृष्ण सोते हुए से जान पड़ते है।

मास्टर पास वैठे हैं। श्रीरामकृष्ण इशारा करके और भी पास आने के लिए कह रहे हैं। उन्हें इतना कष्ट है कि पत्थर का हृदय भी पानी-पानी हो जाय। वे धीरे धीरे वड़े कष्ट के

साथ मास्टर से कह रहे हैं—"तुम लोग रोओगे, इसलिए इतना दु:ख-भोग कर रहा हूँ। सब लोग अगर कहो कि इतने कष्ट से तो देह का नाश हो जाना ही अच्छा है, तो देह नष्ट हो जाय।"

श्रीरामकृष्ण की इन बातों को सुनकर भक्तो का हृदय टूक-टूक हो रहा है। वे भक्तों के माता-पिता और रक्षक है। वे ऐसी बातें कह रहे हैं! सब लोग चुप हो रहे।

गम्भीर रात्रि है। श्रीरामकृष्ण की बीमारी मानो और बढ रही है। अब क्या किया जाय? बहुत सोचकर, भक्तों ने एक आदमी को कलकत्ता भेजा। उसी गम्भीर रात्रि मे श्रीयुत उपेन्द्र डाक्टर तथा श्रीयुत नवगोपाल कविराज को लेकर गिरीश काशीपुर के घर में आये।

भक्तगण पास बैठे हैं। श्रीरामकृष्ण जरा स्वस्थ हो रहे हैं—कह रहे हैं—"देह अस्वस्थ है, पंचभूतों से बना शरीर,—ऐसा तो होगा ही!"

गिरीश की ओर देखकर कह रहे हैं, "बहुत से ईश्वरीय रूपों को देख रहा हूँ। उनमे एक यह रूप भी (अपने रूप को) देख रहा हूँ।"

(३)

श्रीरामकृष्ण के दर्शन

आज चैत्र तृतीया है, सोमवार, १५ मार्च १८८६। सबेरे ७-८ बजे का समय होगा। श्रीरामकृष्ण कुछ अच्छे है, भक्तों के साथ धीरे-धीरे, कभी इशारे से, बातचीत कर रहे है। पास मे नरेन्द्र, राखाल, मास्टर, लाटू, सीती के गोपाल आदि बैठे हुए है।

भक्तमण्डली मौन है। पिछली रात की अवस्था सोचकर भक्तों के चेहरे पर विषाद की गम्भीरता छायी हुई है। सब चुप-

चाप बैठे हैं।

श्रीरामकृष्ण– (मास्टर की ओर देखकर, भक्तों से)– क्या देख रहा हूं ?——सुनो, सब वे ही हुए हैं। मनुष्य और जिस-जिस जीव को मै देख रहा हूं, मानो सब चमड़े के बने हुए है, उनके भीतर से वे ही हाथ, पैर और सिर हिला रहे हैं। जैसा एक बार मैंने देखा था—मोम का मकान, बगीचा, रास्ता, आदमी, बैल—सब मोम के—सब एक ही चीज के बने हुए थे।

"देखता हूं, वे ही बलि हैं, वे ही बलि देनेवाले हैं तथा वे ही बलि का खम्भा है।"

यह कहते कहते श्रीरामकृष्ण भाव मे विभोर हो रहे है। वे ईश्वर की उस व्यापकता का अनुभव करते हुए कह रहे हैं— 'अहा ! अहा !'

फिर वही भावावस्था हो गयी। श्रीरामकृष्ण का बाह्य ज्ञान चला जा रहा है। भक्तगण किंकर्तव्यविमूढ़ हो चुपचाप बैठे हुए हैं।

श्रीरामकृष्ण प्रकृतिस्थ होकर कह रहे हैं— "अब मुझे कोई कष्ट नही है। बिलकुल पहले जैसी अवस्था है।"

श्रीरामकृष्ण की इस दुःख और सुख से अतीत अवस्था को देखकर भक्तों को आश्चर्य हो रहा है। लाटू की ओर देखकर श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं—"यह लाटू है। सिर पर हाथ रखे बैठा है। मै देख रहा हूं, वे ही (ईश्वर ही) सिर पर हाथ रखे बैठे हुए हैं।"

श्रीरामकृष्ण भक्तों की ओर देख रहे हैं और स्नेहार्द्र हो रहे हैं। शिशु को जिस तरह प्यार किया जाता है, उसी तरह वे राखाल और नरेन्द्र के प्रति स्नेह-भाव दिखला रहे है—उनके मुख पर हाथ फेर रहे है।

कुछ देर बाद मास्टर से कहते है—"शरीर अगर कुछ दिन और रहता तो बहुतसे लोगों में आध्यात्मिकता की जागृति हो जाती।" इतना कहकर वे चुप हो रहे।

श्रीरामकृष्ण फिर कह रहे है—"पर अब यह न होगा—अब यह शरीर नहीं रहेगा।" भक्त सोच रहे है कि श्रीरामकृष्ण और क्या कहेंगे।

श्रीरामकृष्ण—इस शरीर को अब वे (ईश्वर) न रहने देंगे, इसलिए कि मुझे सरल और मूर्ख समझकर कही सब लोग घेर न लें, और मै सरल और मूर्ख कही सभी को सब कुछ दे न डालूं। कलिकाल मे लोग तो ध्यान और जप से घृणा करते है।

राखाल—(सस्नेह)—आप उनसे कहिये जिससे आपका शरीर रहे।

श्रीरामकृष्ण—वह ईश्वर की इच्छा।

नरेन्द्र—आपकी इच्छा और ईश्वर की इच्छा दोनों एक हो गयी है।

श्रीरामकृष्ण कुछ देर चुप है, मानो कुछ सोच रहे है।

श्रीरामकृष्ण—(नरेन्द्र और राखाल आदि से)—और कहने से भी क्या होगा ?

"अब देखता हूं, एक हो गया है। ननद के भय से राधिका ने श्रीकृष्ण से कहा, 'तुम हृदय के भीतर रहो।' जब फिर व्याकुल होकर श्रीकृष्ण को उन्होंने देखना चाहा—ऐसी व्याकुलता कि कलेजे में जैसे बिल्ली खरोंच रही हो—तब श्रीकृष्ण हृदय से बाहर निकले ही नही !"

राखाल—(भक्तों से, धीमे स्वर से)—यह बात इन्होंने श्रीगौरांगवतार के सम्बन्ध में कही है।

(४)

गुह्यकथा । श्रीरामकृष्ण कौन हैं

भक्तगण चुपचाप बैठे हुए है। श्रीरामकृष्ण भक्तों को स्नेह-भरी दृष्टि से देख रहे है। कुछ कहने के लिए उन्होंने अपनी छाती पर हाथ रखा।

श्रीरामकृष्ण– (नरेन्द्रादि से)– इसके भीतर दो व्यक्ति हैं। एक है जगन्माता––

भक्त उनकी ओर उत्सुक होकर देख रहे हैं, सोच रहे हैं, अब वे क्या कहेंगे।

श्रीरामकृष्ण– हाँ, एक वे है, और दूसरा है उनका भक्त, जिसका हाथ टूट गया था। वही अब बीमार है। समझे ?

भक्तगण चुपचाप सुन रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण– किससे कहूं, और समझेगा भी कौन ?

कुछ देर बाद फिर बोले––

"वे मनुष्य का आकार धारण करके, अवतार लेकर, भक्तों के साथ आया करते हैं। उन्ही के साथ फिर भक्तगण चले भी जाते है।"

राखाल– इसीलिए कहता हूं आप हम लोगों को छोड़कर चले मत जाइयेगा।

श्रीरामकृष्ण मुस्करा रहे है, कहते है––"बाउलों का दल एकाएक आया, नाच-कूदकर गाया-बजाया और एकाएक चला गया। आया और गया, परन्तु किसी ने पहचाना नही।"

श्रीरामकृष्ण और दूसरे भक्त मन्द मन्द मुस्करा रहे है।

कुछ देर चुप रहकर श्रीरामकृष्ण फिर कह रहे है––

"देह-धारण करने पर कष्ट तो है ही।

"कभी कभी कहता हूँ, अब जैसे इस संसार में न आना पड़े।

"परन्तु एक बात है— निमन्त्रण मे भोजन करते करते अब घर की बनी मटर की दाल अच्छी नही लगती, न घर के चावल ही अच्छे लगते है।

"और देह-धारण भक्तों के लिए है।"

श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र को स्नेह-भरी दृष्टि से देख रहे है।

श्रीरामकृष्ण– (नरेन्द्र से)– चाण्डाल माँस का भार लिये हुए जा रहा था। उधर से नहा-धोकर शंकराचार्य आ रहे थे, वे उसके पास से होकर निकले। एकाएक चाण्डाल ने उन्हें छ लिया। शंकर ने विरक्ति-भाव से कहा—'तूने मुझे छू लिया!' उसने कहा, 'भगवन्, न मैंने आपको छुआ और न आपने मुझे। विचार कीजिये, विचार कीजिये, क्या आप देह है, मन है या बुद्धि है? आप क्या है—विचार कीजिये। शुद्ध आत्मा निर्लिप्त है—सत्त्व, रज और तम इन तीनों गुणो मे से किसी में लिप्त नहीं है।'

"ब्रह्म कैसा है, जानता है?—जैसे वायु। वायु मे सुगन्ध और दुर्गन्ध दोनों है, परन्तु वायु निर्लिप्त है।"

नरेन्द्र– जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण– वे गुणातीत है, माया से परे है। अविद्या-माया और विद्या-माया इन दोनो से परे है। कामिनी और कांचन अविद्या है; ज्ञान, भक्ति, वैराग्य ये सब विद्या के ऐश्वर्य है। शंकराचार्य ने विद्या या ऐश्वर्य रखा था। तुम सब लोग जो मेरे लिए सोच रहे हो, यह चिन्ता विद्या-माया है।

"विद्या-माया के सहारे चलते रहने पर ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति होती है। जैसे ऊपरवाली सीढी, उसके बाद ही छत। कोई कोई

छत पर पहुंचने के वाद भी सीढ़ियों से चढ़ते-उतरते रहते हैं——ज्ञानप्राप्ति के बाद भी 'विद्या का मैं' रख छोड़ते है——लोकशिक्षा के लिए और भक्ति का स्वाद लेने तथा भक्तों के साथ विलास करने के लिए भी।"

नरेन्द्र– त्याग करने की बात चलाने से कोई कोई मुझसे नाराज हो जाते है।

श्रीरामकृष्ण– (धीमे स्वर से)– त्याग आवश्यक है।

श्रीरामकृष्ण अपने शरीर के अंगों को दिखलाकर कह रहे है—–"एक वस्तु के ऊपर अगर दूसरी वस्तु हो, तो एक को विना हटाये दूसरी वस्तु कैसे मिल सकती है ?"

नरेन्द्र– जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण– (नरेन्द्र से, धीमे स्वर में)– ईश्वरमय देखते रहने पर क्या फिर कोई दूसरी चीज दिखलायी पड़ सकती है ?

नरेन्द्र—संसार का त्याग करना ही होगा ?

श्रीरामकृष्ण– जैसा मैंने अभी कहा, ईश्वरमय देखते रहने पर फिर क्या दूसरी वस्तु दीख पड़ती है ? संसार आदि क्या कुछ दिखलायी पड़ सकता है ?

"परन्तु त्याग मन से होना चाहिए। यहाँ जो लोग आते हैं, उनमें संसारी कोई नहीं है। किसी किसी की इच्छा थी——स्त्री के साथ रहने की—– (राखाल और मास्टर का हंसना) वह भी पूरी हो गयी।"

श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र को स्नेहपूर्ण दृष्टि से देख रहे है। देखते ही देखते मानो आनन्द से पूर्ण हो गये। भक्तों की ओर देखकर कहने लगे—– "खूव हुआ।" नरेन्द्र ने हंसकर पूछा —"क्या खूव हुआ ?"

श्रीरामकृष्ण— (मुस्कराते हुए) —मैं देख रहा हूं कि महान् त्याग के लिए तैयारी हो रही है।

नरेन्द्र और भक्तगण चुप है। सब के सब श्रीरामकृष्ण को देख रहे है।

अब राखाल बातचीत करने लगे।

राखाल– (श्रीरामकृष्ण से, सहास्य)– नरेन्द्र ने आपको खूब समझ लिया है।

श्रीरामकृष्ण हँसकर कह रहे है— "हाँ। और देखता हूँ, बहुतों ने समझ लिया है। (मास्टर से) क्यो जी ?"

मास्टर– जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र और मणि को देख रहे हैं और हाथ के इशारे राखाल आदि भक्तों को दिखा रहे है। पहले नरेन्द्र की ओर इशारा करके दिखलाया, फिर मास्टर की ओर। राखाल श्रीरामकृष्ण का इशारा समझ गये। उन्होंने कहा—"आप कहते है, नरेन्द्र का वीर-भाव है और इनका (मास्टर का) सखी-भाव।" (श्रीरामकृष्ण हंस रहे है)

नरेन्द्र– (सहास्य)– ये अधिक बोलते नही, और स्वभाव के लजीले है। शायद इसीलिए आप ऐसा कहते है।

श्रीरामकृष्ण– (नरेन्द्र से, हँसकर)– अच्छा, मेरा क्या भाव है ?

नरेन्द्र– वीरभाव, सखीभाव—सब भाव।

यह सुनकर मानो श्रीरामकृष्ण को भावावेश हो गया। हृदय पर हाथ रखकर कुछ कहनेवाले है।

श्रीरामकृष्ण– (नरेन्द्रादि भक्तों से)– देखता हूँ, जो कुछ है, सब इसी के भीतर से आया है।

नरेन्द्र से इशारा करके श्रीरामकृष्ण पूछ रहे है, "क्या समझे ?"

नरेन्द्र—जो कुछ है, अर्थात् सृष्टि मे जो कुछ पदार्थ हैं, सब आपके भीतर से ही आये है।

श्रीरामकृष्ण—(राखाल से, आनन्दपूर्वक)—देखा ?

श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र से जरा गाने के लिए कह रहे हैं। नरेन्द्र स्वर अलापकर गा रहे है। नरेन्द्र का त्याग-भाव है। वे गा रहे है—

"नलिनीदलगतजलमतितरलम्।
तद्वज्जीवनमतिशयचपलम्॥
क्षणमिह सज्जनसंगतिरेका।
भवति भवार्णवतरणे नौका॥" . . .

दो-एक पद गाने के बाद ही श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र से इशारे से कह रहे हैं, "यह क्या है ? यह तो बहुत छोटा भाव है !"

नरेन्द्र अब सखी-भाव का एक सुन्दर गीत गा रहे हैं— (भावार्थ)—"अरी सखि ! जीवन और मृत्यु का यह कैसा विधान है ! ब्रज-किशोर कहाँ भाग गये ? इस ब्रज-गोपी के तो प्राणों पर आ गयी है। सखि, माधव तो सुन्दर कन्याओं के प्रेम मे बंधे हुए हैं। हाय ! इस रूपविहीन गोप-कन्या को उन्होंने भुला दिया है। अरी, कौन जानता था कि वे रसमय प्रेमिक रूप के भिखारी होंगे ? मै मूर्ख थी जो पहले मैंने यह नहीं समझा; रूप देखकर भूल गयी, और उनके युगलचरणों को हृदय में स्थापित किया। री सखि, अब तो जी यह चाहता है कि यमुना में डूबकर मर जाऊँ या जहर लाकर खा लूँ, अथवा कुंजों की लताओं से गला फाँसकर किसी नये तमाल मे लटककर प्राण दे दूँ, या श्याम-श्याम जपते-जपते इस अधम शरीर का नाश कर डालूँ।"

गाना सुनकर श्रीरामकृष्ण और भक्तगण मुग्ध हो गये। श्रीरामकृष्ण और राखाल की आँखों से आँसू बह चले। नरेन्द्र व्रज की गोपियों के भाव मे मस्त होकर फिर गा रहे है—(भावार्थ)—

"हे कृष्ण ! प्रियतम ! तुम मेरे हो। तुमसे मैं क्या कहूँ, मेरे नाथ, तुमसे मैं क्या बोलूँ ? मैं नारी हूँ, अभागिनी हूँ, समझ नहीं पा रही हूँ कि मै तुमसे क्या कहूँ। तुम मेरे हाथ के दर्पण हो, सिर के फूल हो। सखे, मैं तुम्हें फूल बनाकर केशों में खोंच लूँगी और खोपे में छिपा रखूँगी। श्याम-फूल खोंचने से तुम्हें कोई देख न पायेगा। तुम मेरी आँखों के अंजन हो, मुख के ताम्बूल हो। हे श्याम ! हे कृष्ण ! तुम्हें अंजन बनाकर आँखों मे लगा लूँगी। श्याम-अंजन होने के कारण तुम्हें वहाँ कोई देख न सकेगा। तुम अंग की कस्तूरी हो, गले के हार हो। सखे, शरीर मे श्याम-चन्दन लेपकर मै अपने प्राण शीतल करूँगी। प्रियतम, तुम्हें मैं हार बनाकर कण्ठ में पहनूँगी। तुम देह के सर्वस्व हो, गेह के सार हो। पक्षी के लिए जिस तरह पंख है, और मछली के लिए जिस तरह पानी है, उसी तरह, हे नाथ, तुम मेरे लिए हो।"

परिच्छेद ३०

श्रीरामकृष्ण तथा श्रीबुद्धदेव

(१)

क्या बुद्धदेव नास्तिक थे

श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ काशीपुर के बगीचे में हैं। आज शुक्रवार, शाम के पाँच बजे का समय होगा, चैत की शुक्ल पंचमी है, ९ अप्रैल, १८८६।

नरेन्द्र, काली, निरंजन और मास्टर नीचे बैठें हुए बातचीत कर रहे है।

निरंजन– (मास्टर से)—सुना है, विद्यासागर का एक नया स्कूल होनेवाला है। नरेन्द्र को इसमे अगर कोई काम—

नरेन्द्र– अब विद्यासागर के पास नौकरी करने की जरूरत नहीं है।

नरेन्द्र बुद्ध-गया से अभी ही लौटे है। वहाँ वे बुद्ध की मूर्ति के दर्शन कर उसके सामने गम्भीर ध्यान मे मग्न हो गये थे। जिस पेड़ के नीचे तपस्या करके बुद्ध ने निर्वाण प्राप्त किया था, उस पेड़ की जगह एक दूसरा पेड़ उगा है, इसे भी उन्होंने देखा है। काली ने कहा, 'एक दिन गया के उमेशबाबू के यहाँ नरेन्द्र का गाना हुआ, मृदंग के साथ— ख्याल, ध्रुपद आदि।'

श्रीरामकृष्ण बड़े कमरे मे बिस्तरे पर बैठे हुए है। सन्ध्या का समय है। मणि अकेले पखा झल रहे है। लाटू भी वही आकर बैठे।

श्रीरामकृष्ण –(मणि से)–एक चद्दर और एक जोड़ा जूता लेते आना।

मणि– जी, बहुत अच्छा।

श्रीरामकृष्ण–(लाटू से)–चद्दर तो दस आने की हुई, और जूतो को मिलाकर कितने दाम होंगे ?

लाटू–एक रुपया दस आने।

श्रीरामकृष्ण ने मणि की ओर दामों की बात सुन लेने के लिए इशारा किया।

नरेन्द्र भी आकर बैठे। शशि, राखाल तथा दो-एक भक्त और आये।

श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र से पैरों पर हाथ फेरने के लिए कह रहे है।

इशारे से श्रीरामकृष्ण ने नरेन्द्र से पूछा–तूने कुछ खाया ?

श्रीरामकृष्ण–(मास्टर से, सहास्य)–यह वहाँ (बुद्ध-गया) गया था।

मास्टर–(नरेन्द्र से)–बुद्धदेव का क्या मत है ?

नरेन्द्र–तपस्या करके उन्होने जो कुछ पाया था, वह मुख से नहीं कह सके। इसीलिए सब लोग उन्हे नास्तिक कहते है।

श्रीरामकृष्ण–(इशारा करके)–नास्तिक क्यों, नास्तिक नहीं मुख से अपनी अवस्था का हाल वे नही कह सके। बुद्ध क्या है, जानते हो ? बोधस्वरूप की चिन्ता करके वही हो जाना—बोध-स्वरूप बन जाना।

नरेन्द्र–जी हाँ, इनके तीन दर्जे है, बुद्ध, अर्हत् और बोधिसत्त्व।

श्रीरामकृष्ण–यह उन्हीं की क्रीड़ा है, एक नयी लीला।

"नास्तिक वे क्यों होने लगे ? जहाँ स्वरूप का बोध होता हैं, वहाँ अस्ति और नास्ति की बीचवाली अवस्था है।"

नरेन्द्र–(मास्टर से)–यह वह अवस्था है, जिसमें विरोधी भावों का एकीकरण होता है। जिस हाईड्रोजन (Hydrogen) और ऑक्सीजन (Oxygen) से ठण्डा पानी तैयार होता है, उसी

हाईड्रोजन और ऑक्सीजन से उष्ण अग्नि-शिखाएँ भी (Oxy-hydrogen blow-pipe) उत्पन्न होती है।

"जिस अवस्था में कर्म और कर्मों का त्याग दोनों हो जाते है, अर्थात् निष्काम कर्म होता है, बुद्ध की वही अवस्था थी।

"जो लोग संसारी है, इन्द्रियों के विषयों को लेकर हैं, वे कहते है, सब 'अस्ति' है; उधर मायावादी कहते हैं—सब 'नास्ति' है; बुद्ध की अवस्था इस 'अस्ति' और 'नास्ति' से परे की है।"

श्रीरामकृष्ण– ये 'अस्ति' और 'नास्ति' प्रकृति के गुण है। जहाँ यथार्थ बोध है, वह 'अस्ति' और 'नास्ति' से परे की अवस्था है।

श्रीबुद्धदेव की दया तथा वैराग्य और नरेन्द्र

भक्तगण कुछ देर तक चुप है। श्रीरामकृष्ण फिर बातचीत करने लगे।

श्रीरामकृष्ण– (नरेन्द्र से)– उनका (बुद्ध का) क्या मत है ?

नरेन्द्र– ईश्वर है या नहीं, ये बातें बुद्ध नहीं कहते थे। परन्तु वे दया लेकर थे।

"एक बाज एक पक्षी को पकड़कर उसे खाना चाहता था। बुद्ध ने उस पक्षी के प्राणों को बचाने के लिए अपने शरीर का माँस काटकर बाज को खिला दिया था।"

श्रीरामकृष्ण चुप है। नरेन्द्र उत्साह के साथ बुद्ध की और और बाते कह रहे है।

नरेन्द्र– उन्हें वैराग्य भी कितना था! राजपुत्र होकर भी उन्होने सर्वस्व का त्याग किया! जिनके कुछ नहीं है, कोई

ऐश्वर्य नहीं है, वे और क्या त्याग करेंगे ?

"जब बुद्ध होकर, निर्वाण प्राप्त करके एक बार वे घर आये तब उन्होने अपनी स्त्री को, पुत्र को और राजवंश के बहुतसे लोगों को वैराग्य धारण करने के लिए कहा। कैसा तीव्र वैराग्य था ! परन्तु व्यास को देखो। उन्होंने अपने पुत्र शुकदेव को संसार-त्याग करने से मना किया और कहा, 'वत्स, धर्म का पालन गृहस्थ वने रहकर ही करो।' "

श्रीरामकृष्ण चुप रहे, अब तक उन्होंने एक शब्द भी न कहा।

नरेन्द्र– बुद्ध ने शक्ति अथवा अन्य किसी उस प्रकार की चीज की कभी परवाह नही की। वे तो केवल निर्वाण के ही इच्छुक थे। कैसा तीव्र उनका वैराग्य था ! जब वे बोधि-वृक्ष के नीचे तपस्या करने के लिए बैठे तो कहा, 'इहैव शुष्यतु मे शरीरम्।' —अर्थात् अगर निर्वाण की प्राप्ति मैं न कर सकूँ तो मेरा शरीर यहीं शुष्क हो जाय—ऐसी दृढ़ प्रतिज्ञा !

"शरीर ही तो बदमाश है !—उसे काबू में बिना किये क्या कुछ हो सकता है ?"

कुछ देर बाद श्रीरामकृष्ण फिर वार्तालाप करने लगे। उन्होने इशारे से फिर बुद्धदेव की वात पूछी।

श्रीरामकृष्ण– बुद्धदेव के सिर मे क्या बड़े बड़े वाल थे ?

नरेन्द्र– जी नही। बहुतसी रुद्राक्षों की मालाएं एकत्र करने पर जैसा होता है, मालूम होता है, उनके सिर में वैसे ही वाल थे।

श्रीरामकृष्ण– और आँखें ?

नरेन्द्र– आँखे समाधिलीन।

श्रीरामकृष्ण चुप है। नरेन्द्र तथा अन्य भक्त उन्हे एकदृष्टि से देख रहे है। एकाएक जरा मुस्कराकर वे फिर नरेन्द्र से

बातचीत करने लगे। मणि पंखा झल रहे है।

श्रीरामकृष्ण– (नरेन्द्र से)–अच्छा, यहाँ तो सब कुछ है न? मसूर और चने की दाल, और इमली तक।

नरेन्द्र–उन सब अवस्थाओं का भोग करके आप कुछ नीचे की अवस्था में रहते है।

मणि– (स्वगत) –उन सब उच्च अवस्थाओं का भोग करके भक्त की अवस्था मे हैं।

श्रीरामकृष्ण– किसी ने मानो नीचे खीच रखा है।

यह कहकर श्रीरामकृष्ण ने मणि के हाथ से पंखा खींच लिया और कहने लगे––

"जैसे सामने यह पंखा देख रहा हूँ, प्रत्यक्ष रूप से, ठीक इसी तरह मैंने ईश्वर को प्रत्यक्ष देखा है। और देखा है––"

यह कहकर श्रीरामकृष्ण ने अपने हृदय पर हाथ रखा, और इशारे से नरेन्द्र से पूछा–– "बताओ, भला मैंने क्या कहा?"

नरेन्द्र– मै समझ गया।

श्रीरामकृष्ण– कहो तो सही?

नरेन्द्र– अच्छी तरह मैने नही सुना।

श्रीरामकृष्ण फिर इंगित कर रहे हैं–– "मैंने देखा, वे (ईश्वर) और हृदय में जो है, दोनो एक ही व्यक्ति हैं।"

नरेन्द्र– हाँ, हाँ, सोऽहम्।

श्रीरामकृष्ण– केवल एक रेखा मात्र है ('भक्त का मैं' है)–– सम्भोग के लिए।

नरेन्द्र– (मास्टर से)– महापुरुष स्वयं पार होकर जीवों को पार करने के लिए रहते है, इसीलिए वे अहंकार और शरीर के सुख-दु:खों को लेकर रहते हैं।

"जैसे कुलीगिरी— मजदूरी। हम लोग कुलीगिरी बाध्य होकर करते है, परन्तु महापुरुष तो कुलीगिरी अपने शौक से करते है।"

श्रीरामकृष्ण तथा गुरु-कृपा

श्रीरामकृष्ण– (नरेन्द्रादि भक्तों से) –छत दीख तो पड़ती है, परन्तु छत पर चढ़ना जरा कठिन काम है !

नरेन्द्र– जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण– परन्तु अगर कोई चढ़ा हो तो रस्सी डालकर वह दूसरे को भी चढ़ा ले सकता है।

"हृषीकेश का एक साधु आया था। उसने मुझसे कहा —यह बड़े आश्चर्य की बात है, तुममें पाँच तरह की समाधि मैंने देखी।

"कभी तो कपिवत्,—देहरूपी वृक्ष पर बन्दर की तरह महावायु मानो इस डाल से उस डाल पर उछल-उछलकर चढ़ती है। और तब समाधि होती है।

"कभी मीनवत्—अर्थात् जिस प्रकार मछली पानी के भीतर फुर्ती से निकल जाती है और आनन्द से विहार करती रहती है, उसी तरह वायु भी देह के भीतर चलती रहती है और समाधि होती है।

"कभी पक्षीवत्,—देह-वृक्ष के भीतर महावायु पक्षी की तरह कभी इस डाल पर और कभी उस डाल पर फुदकते हुए चढ़ती है।

"कभी पिपीलिकावत्,—चींटी की तरह धीरे-धीरे महावायु ऊपर चढ़ती रहती है। सहस्रार में चढ़ने पर समाधि होती है।

"और कभी तिर्यग्वत्,—अर्थात् महावायु की गति सर्प की तरह वक्र होती है, फिर सहस्रार मे पहुँचकर समाधि होती है।"

राखाल– (भक्तों से)—अब वातचीत रहने दीजिये। बहुत देर हो गयी। उनकी बीमारी बढ़ जायगी।

परिच्छेद ३१

श्रीरामकृष्ण तथा कर्मफल

(१)

भक्तों के संग में

श्रीरामकृष्ण काशीपुर के उद्यान-भवन के उसी ऊपरवाले कमरे में बैठे हुए है। भीतर शशि और मणि हैं। श्रीरामकृष्ण मणि को इशारे से पंखा झलने के लिए कह रहे है। मणि पंखा झलने लगे।

शाम के पाँच-छः बजे का समय होगा। सोमवार, शुक्ल अष्टमी, १२ अप्रैल १८८६।

उस मुहल्ले मे संक्रान्ति का मेला भरा हुआ है। श्रीरामकृष्ण ने एक भक्त को मेले से कुछ चीजें खरीद लाने के लिए भेजा है। भक्त के लौटने पर श्रीरामकृष्ण ने उससे सामान के बारे में पूछा कि वह क्या क्या लाया।

भक्त–पाँच पैसे के बताशे, दो पैसे का एक चम्मच और दो पैसे का एक तरकारी काटनेवाला चाकू।

श्रीरामकृष्ण– और कलम बनानेवाला चाकू ?

भक्त– वह दो पैसे में नहीं मिला।

श्रीरामकृष्ण– (जल्दी से)– नही, नही, जा ले आ।

मास्टर नीचे बगीचे में टहल रहे है। नरेन्द्र और तारक कलकत्ते से लौटे। वे गिरीश घोष के यहाँ तथा कुछ अन्य जगह भी गये थे।

तारक– आज तो भोजन बहुत हुआ।

नरेन्द्र– हाँ, हम लोगों का मन बहुत कुछ नीचे आ गया है। आओ, अब हम तपस्या करें।

(मास्टर से) "क्या शरीर और मन की दासता की जाय ? बिलकुल जैसे गुलाम की-सी अवस्था हो रही है, शरीर और मन मानो हमारे नहीं, किसी और के है।"

शाम हो गयी है। ऊपर के कमरे में और अन्य स्थानों में दीये जलाये गये। श्रीरामकृष्ण बिस्तर पर उत्तरास्य बैठे हुए हैं। जगन्माता की चिन्ता कर रहे हैं। कुछ देर बाद फकीर उनके सामने अपराध-भंजन स्तव पढ़ने लगे। फकीर बलराम के पुरोहित-वंश के है।

"प्राग्देहस्थो यदासं तव चरणयुगं नाश्रितो नार्चितोऽहम् ।
तेनाद्येऽकीर्तिवर्गैर्जठरजदहनैर्बाध्यमानो बलिष्ठैः ॥
स्थित्वा जन्मान्तरे नो पुनरिह भविता क्वाश्रयः क्वापि सेवा ।
क्षन्तव्यो मेऽपराधः प्रकटितरदने कामरूपे कराले ॥" इत्यादि ।

कमरे में शशि, मणि तथा दो-एक भक्त और है। स्तवपाठ समाप्त हो गया। श्रीरामकृष्ण बड़े भक्ति-भाव से हाथ जोड़कर नमस्कार कर रहे हैं।

मणि पंखा झल रहे है। श्रीरामकृष्ण इशारा करके उनसे कह रहे है, "एक कूँड़ी ले आना। (यह कहकर कूँड़ी की गढ़न उंगलियों से लकीर खीचकर बता रहे है।) इसमें क्या एक पाव दूध आ जायगा ? पत्थर सफ़ेद हो।"

मणि—जी हाँ।

(२)

ईश्वर-कोटि तथा जीव-कोटि

दूसरे दिन मंगलवार है, रामनवमी, १३ अप्रैल, १८८६। सुबह का समय है; श्रीरामकृष्ण ऊपरवाले कमरे में छोटे तखत पर बैठे हुए है। दिन के आठ-नौ बजे का समय हुआ होगा। मणि रात

को यही थे। सवेरे गंगा-स्नान करके आये और श्रीरामकृष्ण को भूमिष्ठ हो प्रणाम किया। राम दत्त भी आज सुबह आ गये हैं, उन्होने भी श्रीरामकृष्ण को प्रणाम कर आसन ग्रहण किया। राम फूलों की एक माला ले आये है, श्रीरामकृष्ण की सेवा में उसका समर्पण कर दिया। अधिकांश भक्त नीचे के कमरे में बैठे हुए है, श्रीरामकृष्ण के कमरे में दो ही एक है। राम श्रीरामकृष्ण-देव से वार्तालाप कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण– (राम से)– किस तरह देख रहे हो?

राम– आप मे सब कुछ है। अब आपके रोग की चर्चा उठने ही वाली है।

श्रीरामकृष्ण जरा मुस्कराये। फिर राम ही से उन्होने संकेत करके पूछा— "क्या रोग की बात भी उठेगी?"

श्रीरामकृष्ण के जो जूते है, वे अब पैरो मे गड़ने लगे हैं। डाक्टर राजेन्द्र दत्त ने पैर की नाप माँगी है— आर्डर देकर वे जूते बनवा देना चाहते है। पैर की नाप ली गयी। (इस समय बेलुड़ मठ में इन्ही पादुकाओं की पूजा हो रही है।)

श्रीरामकृष्ण मणि से संकेत से पूछ रहे हैं कि कूँड़ी कहाँ है। मणि कलकत्ते से कूँड़ी ले आने के लिए उसी समय उठकर खड़े हो गये। श्रीरामकृष्ण ने उस समय उन्हें रोका।

मणि– जी नही, ये लोग जा रहे है, इनके साथ मै भी चला जाऊंगा।

मणि ने जोड़ासाखों की एक दूकान से एक सफेद कूँड़ी खरीदी। दोपहर के समय वे काशीपुर लौट आये और श्रीरामकृष्ण को प्रणाम करके कूँड़ी उनके सामने रखी। श्रीरामकृष्ण सफेद कूँड़ी हाथ मे लेकर देख रहे है। डाक्टर राजेन्द्र दत्त, हाथ मे गीता

लिए हुए डाक्टर श्रीनाथ, श्रीयुत राखाल हालदार तथा अन्य भी कई सज्जन आये है। कमरे में राखाल, शशि आदि कई भक्त है। डाक्टरो ने श्रीरामकृष्ण से पीड़ा के सम्बन्ध की कुल बातें सुनीं।

डाक्टर श्रीनाथ– (मित्रो से)– सब लोग प्रकृति के अधीन हैं। कर्मफल से किसी का छुटकारा नही है। प्रारब्ध।

श्रीरामकृष्ण– क्यों, उनका नाम लेने पर, उनकी चिन्ता करने पर, उनकी शरण में जाने पर,—

श्रीनाथ– जी, प्रारब्ध कहाँ जायेगा ?— पिछले जन्मों के कर्म ?

श्रीरामकृष्ण– कुछ कर्म भोग होता तो है, परन्तु उनके नाम के गुण से बहुतसा कर्मपाश कट जाता है। एक मनुष्य को पिछले जन्म के कर्मो के लिए सात बार अन्धा होना पड़ता, परन्तु उसने गंगास्नान किया। गंगास्नान से मुक्ति होती है। इसलिए उस जन्म के लिए तो वह जैसे का वैसा ही अन्धा बना रहा, परन्तु अगले छः जन्मों के-लिए न तो उसे जन्म लेना पड़ा और न अन्धा होना पड़ा।

श्रीनाथ– जी, शास्त्रों में तो है कि कर्मफल से किसी का छुटकारा नहीं हो सकता।

डाक्टर श्रीनाथ तर्क करने के लिए तुल गये।

श्रीरामकृष्ण– (मणि से)– कहो न जरा, ईश्वर-कोटि और जीव-कोटि में बड़ा अन्तर है। ईश्वर-कोटि कभी पाप नहीं कर सकते— कहो।

मणि चुप है। वे राखाल से कह रहे है— तुम कहो।

कुछ देर बाद डाक्टर चले गये। श्रीरामकृष्ण श्रीयुत राखाल हालदार के साथ बातचीत कर रहे है।

हालदार– डाक्टर श्रीनाथ वेदान्तचर्चा किया करता है—योग-वाशिष्ठ पढ़ता है।

श्रीरामकृष्ण– संसारी होकर 'सब स्वप्नवत् है' यह मत अच्छा नहीं।

एक भक्त– कालिदास नाम का वह जो आदमी है, वह भी वेदान्तचर्चा किया करता है। परन्तु मुकदमेबाजी में घर की लुटिया तक उसने बेच डाली!

श्रीरामकृष्ण– (सहास्य)– सब माया भी है और उधर मुकदमेबाजी भी होती है! (राखाल से) जनाईवाले मुकर्जियों ने पहले बड़ी लम्बी-लम्बी बातें की थीं, फिर अन्त में खूब समझ गये। मैं अगर अच्छा रहता तो उनसे कुछ देर और बातचीत करता। क्या 'ज्ञान-ज्ञान' की डींग मारने से ही ज्ञान हो जाता है?

हालदार– ज्ञान बहुत देखा है। कुछ भक्ति हो तो जी में जी आये। उस दिन मैं एक बात सोचकर आया था। उसकी आपने मीमांसा कर दी।

श्रीरामकृष्ण– (आग्रह से)– वह क्या है?

हालदार– जी, यह बच्चा आया तो आपने कहा कि यह जितेन्द्रिय है।

श्रीरामकृष्ण– हाँ, हाँ, उसके (छोटे नरेन्द्र के) भीतर विषय-बुद्धि का लेशमात्र भी नहीं है। वह कहता है, 'मुझे नहीं मालूम कि काम किसे कहते हैं।'

(मणि से) "हाथ लगाकर देखो, मुझे रोमांच हो रहा है।"

काम नहीं है, इस शुद्ध अवस्था की याद करके श्रीरामकृष्ण को रोमांच हो रहा है।

राखाल हालदार बिदा हो गये। श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ अब भी बैठे हुए है। एक पगली उन्हें देखने के लिए बड़ा उपद्रव मचाया करती है। वह मधुरभाव की उपासना करती है। बगीचे में प्रायः आया करती है। आकर एकाएक श्रीरामकृष्ण के कमरे में घुस आती है। भक्तगण मारते भी है, परन्तु इससे भी वह मौका नही चूकती।

शशि— अबकी बार अगर पगली दीख पड़ी तो धक्के मारकर हटा दूँगा।

श्रीरामकृष्ण— (करुणापूर्ण स्वर से)— नही, नहीं, आयगी तो फिर चली जायगी।

राखाल— पहले-पहल इनके पास अगर और पाँच आदमी आते थे तो मुझे एक तरह की ईर्ष्या होती थी। उन्होने कृपा करके अब मुझे समझा दिया है कि वे मेरे भी गुरु है और संसार के भी गुरु है। वे केवल हमारे लिए थोड़े ही आये हुए है?

शशि— माना कि हमारे लिए ही नही आये, परन्तु बीमारी के समय आकर उपद्रव मचाना, यह क्या बात है?

राखाल— उपद्रव तो सभी करते है। क्या सभी उनके पास सच्चे भाव से आये हुए है? क्या हम लोगो ने उन्हें कष्ट नहीं दिया? नरेन्द्र आदि, सब पहले कैसे थे? —कितना तर्क करते थे?

शशि— नरेन्द्र मुख से जो कुछ कहता था, उसे कार्य द्वारा पूरा भी उतार देता था।

राखाल— डाक्टर सरकार ने उन्हें न जाने कितनी बातें कही है! — देखा जाय तो दूध का धोया कोई नही है।

श्रीरामकृष्ण— (राखाल से सस्नेह)— तू कुछ खायगा?

राखाल– नहीं, फिर खा लूँगा।

श्रीरामकृष्ण मणि की ओर संकेत कर रहे है कि वे आज यहीं प्रसाद पाये।

राखाल– पाइये न, जब वे कह रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण पंचवर्षीय बालक की तरह दिगम्बर होकर भक्तों के बीच मे बैठे हुए है। ठीक इसी समय पगली जीने से ऊपर चढ़कर कमरे के द्वार के पास आकर खड़ी हो गयी।

मणि– (शशि से, धीरे-धीरे)– नमस्कार करके जाने के लिए कहो, कुछ और कहने की आवश्यकता नहीं है।

शशि ने पगली को नीचे उतार दिया।

आज नये वर्ष का पहला दिन है। बहुतसी भक्त स्त्रियाँ आयी हुई है। उन्होने श्रीरामकृष्ण और माताजी को प्रणाम कर आशीर्वाद ग्रहण किया। श्रीयुत बलराम की स्त्री, मणिमोहन की स्त्री, बागबाजार की ब्राह्मणी तथा अन्य बहुतसी स्त्रियाँ आयी हुई है।

वे सब की सब श्रीरामकृष्ण को प्रणाम करने के लिए ऊपर-वाले कमरे में गयी। किसी किसी ने श्रीरामकृष्ण के पादपद्मों में अबीर और पुष्प चढ़ाये। भक्तों की दो लड़कियाँ—नौ-नौ दस-दस साल की—श्रीरामकृष्ण को गाना सुना रही हैं।

लड़कियों ने दो-तीन गाने सुनाये। श्रीरामकृष्ण ने संकेत द्वारा उन्हें बधाई दी।

ब्राह्मणी का स्वभाव बच्चों जैसा है। श्रीरामकृष्ण हंसकर राखाल की ओर संकेत कर रहे हैं। तात्पर्य यह कि वह उसे भी कुछ गाने के लिए कहे। ब्राह्मणी गा रही हैं।

गाना–हे कृष्ण, आज तुम्हारे साथ खेलने को जी चाहता है,

आज तुम मधुवन मे अकेले मिल गये हो।...

स्त्रियाँ ऊपरवाले कमरे से नीचे चली आयी। दिन का पिछला पहर है। श्रीरामकृष्ण के पास मणि तथा दो-एक और भक्त बैठे हुए है। नरेन्द्र भी कमरे मे आये। श्रीरामकृष्ण ठीक ही कहते है कि नरेन्द्र मानो म्यान से तलवार निकालकर घूम रहा है।

संन्यासी के कठिन नियम तथा नरेन्द्र

नरेन्द्र श्रीरामकृष्ण के पास आकर बैठे। श्रीरामकृष्ण को सुनाकर स्त्रियों के सम्बन्ध मे नरेन्द्र बहुत ही विरक्ति-भाव प्रकाशित कर रहे है। कहते है, 'स्त्रियो के साथ रहकर ईश्वर की प्राप्ति में घोर विघ्न है।'

श्रीरामकृष्ण कुछ कहते नही, केवल सुन रहे है।

नरेन्द्र फिर कह रहे है, 'मैं शान्ति चाहता हूं, मैं ईश्वर को भी नही चाहता।' श्रीरामकृष्ण एकदृष्टि से नरेन्द्र को देख रहे है। मुख मे कोई शब्द नही है। नरेन्द्र बीच बीच में स्वर के साथ कह रहे हैं, 'सत्य ज्ञानमनन्तम्।'

रात के आठ बजे का समय है। श्रीरामकृष्ण छोटे तखत पर बैठे हुए है। सामने दो-एक भक्त भी बैठे है। ऑफिस का काम समाप्त करके सुरेन्द्र श्रीरामकृष्ण को देखने के लिए आये है। हाथ मे चार सन्तरे है और फूल की दो मालाएं। सुरेन्द्र एक-एक बार भक्तों की ओर तथा एक-एक बार श्रीरामकृष्ण की ओर देख रहे है, और अपने हृदय की सारी बाते कहते जा रहे है।

सुरेन्द्र– (मणि आदि की ओर देखकर)– ऑफिस का कुल काम समाप्त करके आया। मैंने सोचा, दो नावों पर पैर रखकर क्या होगा? अतएव काम समाप्त करके जाना ही ठीक है। आज

एक तो पहला वैशाख है, दूसरे, मंगल का दिन; कालीघाट जाना नहीं हुआ। मैंने सोचा, काली की चिन्ता करके स्वयं ही जो काली बन गये है, अब चलकर उन्हीं के दर्शन करूँ; इसी से हो जायगा।

श्रीरामकृष्ण मुस्करा रहे है।

सुरेन्द्र–मैंने सुना है, गुरु और साधु के दर्शन करने के लिए कोई जाय तो उसे कुछ फल-फूल लेकर जाना चाहिए। इसीलिए फल-फूल मैं ले आया। (श्रीरामकृष्ण से) आपके लिए यह सब खर्च,—ईश्वर ही मेरा मन जानते हैं। किसी को एक पैसा खर्च करते हुए भी कष्ट होता है, पर कुछ लोग लाखों रुपये विना किसी हिचकिचाहट के खर्च कर डालते है। ईश्वर तो हृदय की भक्ति देखते है, तब ग्रहण करते हैं।

श्रीरामकृष्ण सिर हिलाकर संकेत कर रहे है कि तुमने ठीक ही कहा। सुरेन्द्र फिर कह रहे हैं—"कल संक्रान्ति थी, मैं यहाँ तो नहीं आ सका, परन्तु घर मे फूलों से आपके चित्र को खूब सुसज्जित किया।"

श्रीरामकृष्ण सुरेन्द्र की भक्ति की बात मणि को संकेत करके सूचित कर रहे हैं।

सुरेन्द्र–आते हुए ये दो मालाएँ ले ली, चार आने की।

अधिकांश भक्त चले गये। श्रीरामकृष्ण मणि से पैरों पर हाथ फेरने और पखा झलने के लिए कह रहे है।

परिच्छेद ३२

ईश्वर-लाभ के उपाय

(१)

गिरीश तथा मास्टर

काशीपुर के वगीचे के पूर्व की ओर तालाव है, जिसमें पक्का घाट बंधा हुआ है। उद्यान, पथ और तरु-लताएं चाँदनी की उज्ज्वल छटा में खूब चमक रही है। तालाव के पश्चिम की ओर दुमंजले मकान में दीपक जल रहा है। कमरे में श्रीरामकृष्ण छोटे तखत पर बैठे हुए हैं। दो-एक भक्त भी कमरे मे चुपचाप बैठे है। कोई कोई इस कमरे से उस कमरे में आ-जा रहे हैं। घाट से नीचे के कमरों का उजाला भी दिखायी पड़ रहा है। एक कमरे मे भक्तगंण रहते है। यह कमरा दक्षिण की ओर है। मकान के बीच से जो प्रकाश आ रहा है, वह श्रीमाताजी के कमरे का है। श्रीमाताजी श्रीरामकृष्ण की सेवा के लिए आयी हुई है। तीसरा प्रकाश भोजनगृह से आ रहा है। यह कमरा मकान के उत्तर की ओर है। उद्यान के भीतर से पूर्व की ओर घाट तक एक रास्ता गया है। रास्ते के दोनों ओर, विशेपकर, दक्षिण की ओर फूलों के वहुतसे पेड़ है।

तालाव के घाट पर गिरीश, मास्टर, लाटू तथा दो-एक भक्त और वैठे हुए है। श्रीरामकृष्ण के सम्वन्ध मे वातचीत हो रही है। आज शुक्रवार है, १६ अप्रैल, १८८६, चैत्र शुक्ल त्रयोदशी।

कुछ देर वाद गिरीश और मास्टर उस रास्ते पर टहल रहे हैं और वीच वीच में वार्तालाप कर रहे है।

मास्टर– कैसी सुन्दर चाँदनी है! कितने अनन्त काल से

प्रकृति के ये नियम चले आ रहे हैं !

गिरीश–तुम्हें कैसे मालूम हुआ ?

मास्टर–प्रकृति के नियमों मे परिवर्तन नहीं होता। विलायत के पण्डित टेलिस्कोप (Telescope) से नये नये नक्षत्र देख रहे है। उन्होंने देखा है, चन्द्रलोक मे वड़े वड़े पहाड़ है।

गिरीश–यह कहना कठिन है, उनकी वातो पर विश्वास नहीं होता।

मास्टर–क्यों ? टेलिस्कोप से तो सव विलकुल ठीक ठीक दीख पड़ता है।

गिरीश–पर तुम कैसे कह सकते हो कि पहाड़ आदि सव ठीक-ठीक ही देखे गये है। मान लो, पृथ्वी और चन्द्रमा के वीच में कुछ और चीजे हों, तो उनमें से प्रकाश आने पर सम्भव है ऐसा दिखता हो।

किशोर भक्त-मण्डली सदा ही वगीचे मे रहती है, श्रीरम-कृष्ण की सेवा के लिए,—नरेन्द्र, राखाल, निरंजन, शरद, शशि, वावूराम, काली, योगिन, लाटू आदि। जो संसारी भक्त हैं, उनमे से कोई कोई रोज आते है और रात मे भी कभी कभी रह जाते है। उनमे से कोई कभी कभी आया करते है। आज नरेन्द्र, काली और तारक दक्षिणेश्वर कालीमन्दिर के वगीचे में गये हुए है। नरेन्द्र वहाँ पंचवटी के नीचे वैठकर तपस्या और साधना करेगे। इसीलिए दो-एक गुरुभाइयों को भी साथ लेते गये है।

(२)

श्रीरामकृष्ण का भक्तों के प्रति स्नेह

गिरीश, लाटू और मास्टर ने ऊपर जाकर देखा, श्रीरामकृष्ण

छोटे तखत पर बैठे हुए है। शशि और दो-एक भक्त उसी कमरे मे श्रीरामकृष्ण की सेवा के लिए थे। क्रमशः बाबूराम, निरंजन और राखाल भी आ गये।

कमरा बड़ा है। श्रीरामकृष्ण की शय्या के पास औषधि तथा अन्य आवश्यक वस्तुएँ रखी हुई है। कमरे के उत्तर की ओर एक दरवाजा है, जीने से चढकर उस कमरे में प्रवेश किया जाता है। उस द्वार के सामनेवाले कमरे के दक्षिण की ओर एक और द्वार है। इस द्वार से दक्षिण की छोटी छत पर चढ़ सकते है। छत पर खड़े होने पर बगीचे के पेड़-पौधे, चाँदनी और पास का राजपथ भी दीख पड़ता है।

भक्तों को रात मे जागना पड़ता है। वे बारी बारी से जागते है। मसहरी लगाकर, श्रीरामकृष्ण को शयन कराने के पश्चात् जो भक्त कमरे मे रहते है, वे कमरे के पूर्व की ओर चटाई बिछाकर कभी बैठे रहते है और कभी लेटे। अस्वस्थता के कारण श्रीरामकृष्ण की आँख नहीं लगती। इसलिए जो रहते है, उन्हें कई घण्टे जागते ही रहना पड़ता है।

आज श्रीरामकृष्ण की बीमारी कुछ कम है। भक्तों ने आकर भूमिष्ठ हो प्रणाम किया, फिर सब के सब जमीन पर श्रीरामकृष्ण के सामने बैठ गये।

श्रीरामकृष्ण ने मास्टर से दीपक जरा नजदीक ले आने के लिए कहा।

श्रीरामकृष्ण गिरीश से आनन्दपूर्वक बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण–(गिरीश से)–कहो, अच्छे हो न? (लाटू से), इन्हें तम्बाकू पिला और पान दे।

कुछ क्षण के बाद बोले, 'इन्हें कुछ मिठाई दे।'

लाटू–पान दे दिया है। दूकान से मिठाई लेने के लिए आदमी भेजा है।

श्रीरामकृष्ण बैठे है। एक भक्त ने कई मालाएं लाकर श्रीरामकृष्ण को अर्पण कर दी। श्रीरामकृष्ण ने मालाओं को लेकर गले में धारण कर लिया। फिर उनमें से दो मालाएं निकालकर गिरीश को दे दी।

बीच-बीच मे जलपान की मिठाई के सम्बन्ध मे श्रीरामकृष्ण पूछ रहे है—'क्या मिठाई आयी ?'

मणि श्रीरामकृष्ण को पंखा झल रहे हैं। श्रीरामकृष्ण के पास किसी भक्त का दिया हुआ चन्दन की लकड़ी का एक पंखा था। श्रीरामकृष्ण ने उसे मणि के हाथ मे दिया। उसी पंखे को लेकर मणि हवा कर रहे है। गले से दो मालाएं निकालकर श्रीरामकृष्ण ने मणि को भी दीं।

लाटू श्रीरामकृष्ण से एक भक्त की बात कह रहे हैं। उनका एक सात-आठ साल का लड़का आज डेढ़ साल हुए गुजर गया है। उस लड़के ने भक्तों के बीच में श्रीरामकृष्ण को कई बार देखा था।

लाटू–(श्रीरामकृष्ण से)–ये अपने लड़के की पुस्तक देखकर कल रात को बहुत रोये थे। इनकी स्त्री भी बच्चे के शोक से पागल-सी हो गयी है। अपने दूसरे बच्चों को मारती है और उठाकर पटक देती है। ये कभी कभी यहाँ रहते है, इसलिए बड़ा हल्ला मचाती है।

श्रीरामकृष्ण उस शोक-समाचार को सुनकर मानो चिन्तित हो चुप हो रहे।

गिरीश–अर्जुन ने इतनी गीता पढ़ी परन्तु वे भी पुत्र के शोक

से मूर्च्छित हो गये, तो इनके शोक के लिए आश्चर्य प्रकट करने की कोई वात नही।

संसार में ईश्वर-लाभ किस प्रकार होता है

गिरीश के जलपान के लिए मिठाई आयी है। फागू की दूकान की गर्म कचौड़ियाँ, पूड़ियाँ और दूसरी मिठाइयाँ। फागू की दूकान वराहनगर मे है। श्रीरामकृष्ण ने अपने सामने वह सव सामान रखकर प्रसाद कर दिया। फिर स्वयं उठाकर मिष्टान्न और पूड़ियों का दोना गिरीश को दिया। कहा, 'कचौड़ियाँ वहुत अच्छी है।' गिरीश सामने बैठकर खा रहे हैं। गिरीश को पीने के लिए पानी देना है। श्रीरामकृष्ण के पलंग के पश्चिम की ओर सुराही में पानी है। गरमी का समय है, वैशाख का महीना। श्रीरामकृष्ण ने कहा, 'यहाँ वड़ा अच्छा पानी है।'

श्रीरामकृष्ण बहुत ही अस्वस्थ है। खड़े होने की शक्ति तक नही रह गयी है। भक्तगण आश्चर्यचकित होकर देख रहे है—श्रीरामकृष्ण की कमर में वस्त्र नही है, दिगम्वर हो रहे है। वालक की तरह पलंग पर वैठे सरक-सरककर वढ़ रहे है—इच्छा है, खुद पानी दे दे। श्रीरामकृष्ण की वह अवस्था देखकर भक्तों की साँस मानो रुक गयी। श्रीरामकृष्ण ने गिलास में पानी ढाला। गिलास से थोड़ासा पानी हाथ मे लेकर देख रहे है कि पानी ठण्डा है या नही। उन्होने देखा, पानी अधिक ठण्डा नही है। अन्त में यह सोचकर कि दूसरा अच्छा पानी यहाँ मिल नही सकता, श्रीरामकृष्ण ने इच्छा न होते हुए भी गिरीश को वही पानी पीने के लिए दिया।

गिरीश मिठाइयाँ खा रहे है। चारो ओर भक्तगण वैठे हुए है। मणि श्रीरामकृष्ण को पंखे से हवा कर रहे है।

गिरीश– (श्रीरामकृष्ण से)–देवेन्द्रबाबू संसार का त्याग करेंगे।

श्रीरामकृष्ण सब समय बातचीत नहीं कर सकते, बड़ा कष्ट होता है। अपने ओंठों मे उँगली छुलाकर उन्होंने इशारे से पूछा, 'फिर उनके घरवालों के भरण-पोषण की क्या व्यवस्था होगी,— संसार कैसे चल सकेगा?'

गिरीश– मुझे नहीं मालूम कि वे क्या करेंगे।

सब लोग चुप है। गिरीश खाते-खाते फिर बातचीत करने लगे।

गिरीश– अच्छा महाराज, कौनसा ठीक है?—कष्ट में संसार का त्याग करना या संसार में रहकर उन्हें पुकारना?

श्रीरामकृष्ण– (मास्टर से)– क्या गीता में तुमने नहीं देखा? अनासक्त हो संसार में रहकर कर्म करते रहने पर, सब मिथ्या समझकर ज्ञानलाभ के पश्चात् संसार मे रहने पर अवश्य ही ईश्वर-प्राप्ति होती है।

"कष्ट में पड़कर जो लोग संसार का त्याग करते है, वे निम्न कोटि के मनुष्य है।

"संसार मे रहनेवाला ज्ञानी कैसा है— जानते हो?—जैसे काँच के घर मे रहनेवाला मनुष्य,— वह भीतर-बाहर सब देखता है।"

सब लोग चुप है।

श्रीरामकृष्ण– (मास्टर से)—कचौड़ियाँ गर्म हैं, बहुत ही अच्छी हैं।

मास्टर– (गिरीश से)— फागू की दूकान की कचौड़ियाँ प्रसिद्ध है।

श्रीरामकृष्ण– हाँ, प्रसिद्ध है।

गिरीश– (खाते ही खाते, सहास्य)–जी, बहुत ही अच्छी हैं।

श्रीरामकृष्ण–पूड़ियाँ रहने दो, कचौड़ियाँ खाओ। (मास्टर से) परन्तु कचौड़ी रजोगुणी भोजन है।

गिरीश– (श्रीरामकृष्ण से)–अच्छा महाराज, मन अभी इतनी उच्च भूमि पर है, फिर नीचे भला क्यों गिर जाता है?

श्रीरामकृष्ण– संसार मे रहने से ऐसा होता ही है। कभी मन ऊँचे चढ़ जाता है, कभी गिर जाता है? कभी बहुत अच्छी भक्ति होती है, कभी भक्ति की मात्रा घट जाती है। कामिनी और कांचन लेकर रहना पड़ता है न, इसीलिए ऐसा होता है। संसार मे रहकर भक्त कभी ईश्वर-चिन्ता करता है, कभी उनका स्मरण-कीर्तन करता है, कभी वही मन कामिनी और कांचन की ओर लगा देता है। जैसे साधारण मक्खी— कभी बर्फियों पर बैठती है, और कभी सड़े घाव और विष्ठा पर भी बैठती है।

"त्यागियों की बात और है। वे लोग कामिनी और कांचन से मन को हटाकर केवल ईश्वर मे ही लगाते है। वे केवल हरि-रस का ही पान करते है। जो यथार्थ त्यागी है, उन्हें ईश्वर के सिवा और कोई वस्तु अच्छी नही लगती। विषय-चर्चा होने पर वे वहाँ से उठ जाते है। ईश्वरीय प्रसंग वे ध्यान से सुनते हैं। जो यथार्थ त्यागी है, वह ईश्वर की बात छोड़ और दूसरी चर्चा करता ही नहीं।

"मधुमक्खी फूल पर ही बैठती है— मधु पीने के लिए। और कोई चीज उसे अच्छी नहीं लगती।"

गिरीश दक्षिण की छोटी छत पर हाथ धोने के लिए गये।

अवतार वेद-विधि के परे हैं

गिरीश फिर कमरे मे श्रीरामकृष्ण के सामने आकर वैठे, पान खा रहे है।

श्रीरामकृष्ण– (गिरीश से)– राखाल आदि ने अव समझा है कि कौनसा अच्छा है और कौनसा बुरा, क्या सत्य है और क्या मिथ्या। ये लोग जो संसार में जाकर रहते हैं, जान-वूझकर ऐसा करते हैं। स्त्री है, लड़का भी हो गया है, परन्तु समझ में आ गया है कि यह सव मिथ्या है, अनित्य है। राखाल आदि जितने हैं ये संसार मे लिप्त न होगे।

"जैसे 'पाँकाल' मछली। वह रहती तो पंक (कीच) के भीतर है, परन्तु उसकी देह में कीच कहीं छू भी नही जाता।"

गिरीश– महाराज, यह सव मेरी समझ में नहीं आता। आप चाहें तो सव को निर्लिप्त और शुद्ध कर दे सकते है। संसारी हो या त्यागी, सव को आप शुद्ध कर सकते हैं। मेरा विश्वास है, मलयानिल के प्रवाहित होने पर सव काठ चन्दन वन जाते हैं।

श्रीरामकृष्ण– सार वस्तु के विना रहे चन्दन नहीं वनता। सेमर तथा इसी तरह के कुछ अन्य पेड़ चन्दन नहीं वनते।

गिरीश– यह मैं नहीं मानता।

श्रीरामकृष्ण– किन्तु नियम तो ऐसा ही है।

गिरीश –आपका सव कुछ नियम के वाहर है।

भक्तगण निर्वाक् होकर सुन रहे है। मणि का हाथ पंखा झलते हुए कभी कभी रुक जाता है।

श्रीरामकृष्ण– हाँ, हो सकता है। भक्ति-नदी के उमड़ने पर चारों ओर वाँसभर पानी चढ़ जाता है।

"जव भक्ति-उन्माद होता है, तव वेद-विधि नहीं रह जाती।

दूर्वादल तोड़कर भक्त फिर चुनता नहीं। हाथ में जो कुछ आ जाता है, वही ले लेता है। तुलसी-दल लेते समय उसकी डाल तक तोड़ लेता है। अहा, कैसी अवस्था बीत चुकी है!

(मास्टर से) "भक्ति के होने पर और कुछ नहीं चाहता।"

मास्टर– जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण– किसी एक भाव का आश्रय लेना पड़ता है। रामावतार मे शान्त, दास्य, वात्सल्य, सख्य, ये सब भाव थे; कृष्णावतार मे ये सब तो थे ही, मधुरभाव एक ज्यादा था।

"श्रीमती (राधा) के मधुरभाव मे प्रणय है। सीता में वह बात नही है, उसका शुद्ध सतीत्व है।

"उन्ही की लीला है। जब जैसा भाव उचित हो, उसे धारण करते है।"

विजय गोस्वामी के साथ दक्षिणेश्वर कालीमन्दिर में एक पगली-सी स्त्री श्रीरामकृष्ण को गाना सुनाने के लिए जाया करती थी। वह काली-संगीत और ब्रह्मगीत गाती थी। सब लोग उसे पगली कहते थे। वह काशीपुर के बगीचे मे भी प्रायः आया करती है और श्रीरामकृष्ण के पास जाने के लिए बड़ा उपद्रव मचाती है। भक्तों को इसीलिए सदा सतर्क रहना पड़ता है।

श्रीरामकृष्ण– (गिरीश से)– पगली का मधुरभाव है। दक्षिणेश्वर में एक दिन गयी थी, एकाएक रोने लगी। मैंने पूछा, 'तू क्यो रोती है?' उसने कहा, 'सिर मे दर्द हो रहा है।' (सब लोग हंसते है)

"एक दिन और गयी थी। मै भोजन करने के लिए बैठा था। एकाएक उसने कहा, 'आपकी कृपा नहीं हुई?' मै भोजन कर रहा था, उसके मन में क्या था मुझे मालूम नहीं। उसने कहा

'आपने मुझे मन से उतार क्यों दिया ?' मैंने पूछा, 'तेरा भाव क्या है ?' उसने कहा, 'मधुरभाव।' मैंने कहा, 'अरे, मेरी मातृयोनि है। मेरे लिए सब स्त्रियाँ माताएं है।' तब उसने कहा, 'यह मै कुछ नही जानती।' तव मैने रामलाल को पुकारकर कहा, 'रामलाल, जरा सुन तो, 'मन से उतारने' का प्रयोग यह किस अर्थ मे कर रही है ?' उसमें वही भाव अब भी है।"

गिरीश– वह पगली धन्य है ! चाहे वह पगली हो, और चाहें भक्तों द्वारा मारी भी जाय, परन्तु आठों पहर वह करती तो आप ही की चिन्ता है।— वह चाहे जिस भाव से करे, उसका अनिष्ट कभी हो ही नहीं सकता।

"महाराज, क्या कहूं, पहले मै क्या था और आपको सोचकर क्या हो गया ! पहले आलस्य था, इस समय वह आलस्य ईश्वर-निर्भरता मे परिणत हो गया। पहले पापी था, परन्तु अब निरहंकार हो गया हूं। और क्या क्या कहूं !"

भक्तगण चुप है। राखाल पगली की बातें कहते हुए दुःख प्रकट कर रहे है। उन्होने कहा, 'क्या कहें, दुःख होता है, वह उपद्रव करती है, इसीलिए उसे बहुत कुछ कष्ट भी मिलता है।'

निरंजन– (राखाल से)– तेरे बीबी है, इसीलिए तेरा मन इस तरह छटपटाता है। हम लोग तो उसे लेकर बलि चढ़ा सकते हैं !

राखाल– (विरक्ति से)– बड़ी वहादुरी करोगे ! उनके (श्रीरामकृष्ण के) सामने ये सब बातें कर रहे हो !

रुपये में आसक्ति। सद्व्यवहार

श्रीरामकृष्ण– (गिरीश से)– कामिनी और कांचन, यही संसार है। बहुतसे लोग ऐसे है, जो रुपये को अपनी देह के खून

के बराबर समझते हैं। रुपये पर कितना भी प्यार क्यों न करो, परन्तु एक दिन वह अपने प्यार करनेवाले को सदा के लिए छोड़कर निकल जायगा।

"हमारे देश मे खेतों पर मेड़ बाँधते है। मेड़ जानते हो? जो लोग बड़े प्रयत्न से चारो ओर मेड़ बाँधते है, उनकी मेड़े पानी के तेज बहाव से ढह जाती है, और जो लोग एक ओर घास जमा देते है, उनकी मेड़े मजबूत हो जाती है और पानी के रुकने के कारण खूब धान पैदा होता है।

"जो लोग रुपये का सद्व्यवहार करते है—श्रीठाकुरजी और साधुओं की सेवा मे, दान आदि सत्कर्मों मे खर्च करते है, वास्तव मे उन्ही का धनोपार्जन सफल होता है। उन्ही की खेती तैयार होती है।

"डाक्टर और कविराजो की चीजे मै नही खा सकता। जो लोग दूसरो के शारीरिक रोग-दुःखों का व्यापार करते है और उसी से अर्थोपार्जन करते है, उनका धन मानो खून और पीब है।"

यह कहकर श्रीरामकृष्ण ने दो चिकित्सकों के नाम लिये।

गिरीश– राजेन्द्र दत्त बहुत ही श्रेष्ठ मनुष्य है। किसी से एक पैसा भी नहीं लेता। वह दान भी करता है।

परिच्छेद २२

नरेन्द्र के प्रति उपदेश

(१)

नरेन्द्र आदि भक्तों के संग में

श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ काशीपुर के बगीचे मे है। शरीर वहुत ही अस्वस्थ है, परन्तु सदा ही व्याकुल भाव से ईश्वर के निकट भक्तों की कल्याणकामना किया करते है। आज शनिवार है, चैत्र की शुक्ला चतुर्दशी, १७ अप्रैल १८८६। पूर्णिमा लग गयी है।

कुछ दिनों से नरेन्द्र लगातार दक्षिणेश्वर जा रहे हैं। वहाँ पंचवटी में ईश्वर-चिन्तन, ध्यान-साधना आदि किया करते हैं। आज शाम को वे लौटे, साथ में श्रीयुत तारक और काली भी है।

रात के आठ बजे का समय होगा। चाँदनी और दक्षिणी वायु ने उद्यान को और भी मनोहर वना दिया है। भक्तो में से कितने ही नीचे के कमरे में बैठे हुए ध्यान कर रहे हैं। नरेन्द्र मणि से कह रहे हैं—'ये लोग अब छूट रहे है' (अर्थात् ध्यान करते हुए उपाधियों से मुक्त हो रहे हैं)।

कुछ देर बाद मणि ऊपरवाले कमरे में श्रीरामकृष्ण के पास जाकर बैठे। श्रीरामकृष्ण ने उनसे पीकदान और अंगौछा धो लाने के लिए कहा। वे पश्चिमवाले तालाव से चन्द्रमा के प्रकाश मे सव धोकर ले आये।

दूसरे दिन सवेरे श्रीरामकृष्ण ने मणि को बुला भेजा। गंगा-स्नान करके श्रीरामकृष्ण के दर्शन करने के पश्चात् वे छत पर गये हुए थे।

उनकी स्त्री पुत्र के शोक से पागल हो रही है। श्रीरामकृष्ण ने उसे बगीचे मे आकर प्रसाद पाने के लिए कहा।

श्रीरामकृष्ण इशारे से वतला रहे है—"उसे यहाँ आने के लिए कहना। गोद में जो लड़का है, उसे भी ले आवे,—और यहाँ आकर भोजन करे।"

मणि—जी। ईश्वर पर उसकी भक्ति हो तो बहुत अच्छा है।

श्रीरामकृष्ण इशारा करके बतला रहे है—"नही, शोक भक्ति को हटा देता है। और इतना बड़ा लड़का था!

"कृष्णकिशोर के भवनाथ की तरह दो लड़के थे, युनिवर्सिटी की दो-दो परीक्षाएं पास की थी। जब उनका देहान्त हुआ, तब कृष्णकिशोर इतना बड़ा ज्ञानी, परन्तु फिर भी सम्हल न सका! मुझे ईश्वर ही ने नहीं दिया, मेरा भाग्य!

"अर्जुन इतना बड़ा ज्ञानी था, साथ कृष्ण थे। फिर भी अभिमन्यु के शोक से बिलकुल अधीर हो गया।

"किशोरी भला क्यो नही आता?"

एक भक्त—वह रोज गंगा नहाने जाया करता है।

श्रीरामकृष्ण—यहाँ क्यो नही आता?

भक्त—जी, आने के लिए कहूँगा।

श्रीरामकृष्ण—(लाटू से)—हरीश क्यो नहीं आता?

मास्टर के घर की ९—१० साल की दो लड़कियाँ श्रीरामकृष्ण को गाना सुना रही है। इन लड़कियों ने उस समय भी श्रीरामकृष्ण को गाना सुनाया था, जब श्रीरामकृष्ण मास्टर के श्यामपुकुर के तेलीपारावाले मकान में पधारे थे। श्रीरामकृष्ण उनका गाना सुनकर बहुत ही सन्तुष्ट हुए थे। श्रीरामकृष्ण के पास गाना हो जाने पर भक्तों ने लड़कियों को नीचे बुलाकर

फिर गवाया ।

श्रीरामकृष्ण– (मास्टर से)–अपनी लड़कियों को अव गाना मत सिखाना। आप ही आप ये गावें तो और वात है। जिस-तिस के पास गाने से लज्जा जाती रहेगी। स्त्रियों के लिए लज्जा वड़ी आवश्यक है।

श्रीरामकृष्ण के सामने पुष्पपात्र में फूल-चन्दन लाकर रखा गया। श्रीरामकृष्ण पलंग पर वैठे हुए हैं। फूल-चन्दन से वे अपनी ही पूजा कर रहे है। सचन्दन पुष्प कभी मस्तक पर धारण कर रहे है, कभी कण्ठ में, कभी हृदय में और कभी नाभिस्थल में।

मनोमोहन कोन्नगर से आये। श्रीरामकृष्ण को प्रणाम कर आसन ग्रहण किया। श्रीरामकृष्ण अव भी अपनी पूजा कर रहे हैं। अपने गले में उन्होने फूलो की माला डाल ली।

कुछ देर वाद मानो प्रसन्न होकर मनोमोहन को निर्माल्य प्रदान किया। मणि को भी एक फूल दिया।

(२)

नरेन्द्र के प्रति उपदेश

दिन के नौ वजे का समय है। श्रीरामकृष्ण मास्टर के साथ वार्तालाप कर रहे है। कमरे मे शशि भी हैं।

श्रीरामकृष्ण– (मास्टर से)–नरेन्द्र और शशि ये दोनों क्या कह रहे थे? क्या विचार कर रहे थे?

मास्टर– (शशि से)–क्या वातें हो रही थीं, जी?

शशि– शायद निरंजन ने कहा है?

श्रीरामकृष्ण– ईश्वर नास्ति-अस्ति, ये सव क्या वातें हो रही थी?

शशि– (सहास्य)–नरेन्द्र को वुलाऊं?

श्रीरामकृष्ण– बुला।

नरेन्द्र आकर बैठे।

श्रीरामकृष्ण– (मास्टर से)– तुम भी कुछ पूछो। क्या बातें हो रही थी ?—वता।

नरेन्द्र– पेट कुछ ठीक नहीं है। उन बातों को अब और क्या कहूँ ?

श्रीरामकृष्ण– पेट अच्छा हो जायगा।

मास्टर– (सहास्य)–बुद्ध की अवस्था कैसी है ?

नरेन्द्र– क्या मुझे वह अवस्था हुई है जो मै बतलाऊँ ?

मास्टर– ईश्वर है, इस सम्वन्ध में वे क्या कहते हैं ?

नरेन्द्र– ईश्वर है, यह बात कैसे कह सकते हो ? तुम्हीं इस संसार की सृष्टि कर रहे हो। बर्कले ने क्या कहा है, जानते हो ?

मास्टर– हाँ, उन्होने कहा है, 'Esse is percipi' (बाह्य वस्तुओं का अस्तित्व उनके अनुभव होने पर ही निर्भर है)। जब तक इन्द्रियों का काम चल रहा है, तभी तक ससार है।

श्रीरामकृष्ण– न्यांगटा कहता था, मन ही से संसार की उत्पत्ति है और मन ही मे उनका लय भी होता है।

"परन्तु जब तक 'मैं' है तब तक सेव्य-सेवक का भाव ही अच्छा है।"

नरेन्द्र– (मास्टर से)– विचार अगर करो, तो ईश्वर है यह कैसे कह सकते हो ? और विश्वास पर अगर जाओ तो सेव्य-सेवक मानना ही होगा। यह अगर मानो—और मानना ही होगा—तो दयामय भी कहना होगा।

"तुमने केवल दुःख को ही सोच रखा है। उन्होंने जो इतना सुख दिया है, इसे क्यों भूल जाते हो ? उनकी कितनी कृपा है !

उन्होंने हमें बड़ी बड़ी चीजें दी है— मनुष्य-जन्म, ईश्वर को जानने की व्याकुलता और महापुरुप का संग। 'मनुष्यत्वं मुमुक्षुत्वं महापुरुप-संश्रयः।' " (सब लोग चुप हैं)

श्रीरामकृष्ण– (नरेन्द्र से)– परन्तु मुझे बहुत साफ अनुभव होता है कि भीतर कोई एक है।

राजेन्द्रलाल दत्त आकर बैठे। वे होमिओपैथिक मत से श्रीरामकृष्ण की चिकित्सा कर रहे हैं। औषधि आदि की बातें हो जाने पर, श्रीरामकृष्ण मनोमोहन की ओर उंगली के इशारे से बतला रहे है।

डाक्टर राजेन्द्र– ये मेरे ममेरे भाई के लड़के हैं।

नरेन्द्र नीचे आये है। आप ही आप गा रहे हैं– (भावार्थ)– "प्रभो, तुमने दर्शन देकर मेरा समस्त दुःख दूर कर दिया है और मेरे प्राणों को मोह लिया है। तुम्हें पाकर सप्त लोक अपना दारुण शोक भूल जाते हैं, फिर, नाथ, मुझ अति दीन-हीन की बात ही क्या? . . ."

नरेन्द्र को पेट की कुछ शिकायत है, मास्टर से कह रहे है— 'प्रेम और भक्ति के मार्ग मे रहने पर देह की ओर मन आता है। नही तो मैं हूं कौन? मै न मनुष्य हूं, न देवता हूं; न मेरे सुख है, न दुःख हैं।'

रात के नौ बजे का समय हुआ। सुरेन्द्र आदि भक्तों ने श्रीरामकृष्ण को फूलों की माला लाकर समर्पण की। कमरे में बाबूराम, सुरेन्द्र, लाटू, मास्टर आदि है। श्रीरामकृष्ण ने सुरेन्द्र की माला स्वयं अपने गले मे धारण कर ली। सब लोग चुपचाप बैठे हैं।

श्रीरामकृष्ण एकाएक सुरेन्द्र को इशारे से बुला रहे है। सुरेन्द्र

जब पलंग के पास आये, तब उस प्रसादी माला को लेकर श्रीरामकृष्ण ने सुरेन्द्र को पहना दिया।

माला पाकर सुरेन्द्र ने प्रणाम किया। श्रीरामकृष्ण फिर उन्हें इशारा करके पैरों पर हाथ फेरने के लिए कह रहे है। कुछ देर तक सुरेन्द्र ने उनके पैर दबाये।

श्रीरामकृष्ण जिस कमरे में है, उसकी पश्चिम-ओर एक पुष्करिणी (तालाब) है। इस तालाब के घाट मे कई भक्त खोल-करताल लेकर गा रहे है। श्रीरामकृष्ण ने लाटू से कहला भेजा, 'तुम लोग कुछ देर हरिनाम-कीर्तन करो।'

मास्टर और बाबूराम आदि अभी भी श्रीरामकृष्ण के पास बैठे है। वे वही से भक्तो का गाना सुन रहे है।

श्रीरामकृष्ण गाना सुनते सुनते बाबूराम और मास्टर से कह रहे है, 'तुम लोग नीचे जाओ। उनके साथ मिलकर गाना और नाचना।' वे लोग भी नीचे आकर कीर्तनवालों के साथ गाने लगे।

कुछ देर बाद श्रीरामकृष्ण ने फिर आदमी भेजा। उससे उन्होंने कीर्तन के खास-खास पद गवाने के लिए कह दिया।

कीर्तन समाप्त हो गया। सुरेन्द्र भावावेश मे आकर गा रहे हैं। गाना शंकर के सम्बन्ध मे है।

(३)

नरेन्द्र तथा ईश्वर का अस्तित्व

श्रीरामकृष्ण के दर्शन कर हीरानन्द गाड़ी पर चढ़ रहे है। गाड़ी के पास नरेन्द्र और राखाल खड़े हुए उनसे साधारण कुशल-प्रश्न-सम्बन्धी बातचीत कर रहे है। दिन के दस बजे का समय होगा। हीरानन्द कल फिर आयेंगे।

आज बुधवार है, चैत्र की कृष्णा तृतीया। २१ अप्रैल, १८८६।

नरेन्द्र वगीचे में टहलते हुए मणि से वार्तालाप कर रहे है। घर में उनकी माता और भाइयो को वड़ा कष्ट है। अभी भी वे कोई उत्तम प्रवन्ध नही कर सके। इसके लिए उन्हे चिन्ता रहती है।

नरेन्द्र—विद्यासागर के स्कूल का काम मुझे नहीं चाहिए। मैं गया जाने की सोच रहा हूं। वहाँ एक जमीदार के मैनेजर की जगह है, एक आदमी ने उसके सम्वन्ध में कहा था। ईश्वर-फीश्वर कहीं कुछ नही है।

मणि—(हंसकर)—तुम इस समय तो कहते हो, परन्तु वाद में फिर नही कहोगे। संशय भी ईश्वर-प्राप्ति के मार्ग की एक अवस्था है, इन सव अवस्थाओं को पार कर जाने पर, और भी आगे वढ जाने पर ईश्वर मिलते हैं—ऐमा श्रीरामकृष्णदेव कहते हैं।

नरेन्द्र—जिस तरह इस पेड़ को देख रहा हूं, इसी तरह क्या किसी ने ईश्वर को देखा है?

मणि—हाँ, श्रीरामकृष्ण ने देखा है।

नरेन्द्र—वह मन की भूल हो सकती है।

मणि—जो जिस अवस्था में जैसा दर्शन करता है, उस अवस्था के लिए वही सत्य होता है। जव स्वप्न देख रहे हो कि तुम किसी के वगीचे में गये हुए हो, तव वह वगीचा तुम्हारे लिए सत्य है, परन्तु तुम्हारी उस अवस्था के वदलने पर—अर्थात् जाग्रत अवस्था मे—तुम्हें वह वात भ्रम मालूम होगी। जिस अवस्था में ईश्वर के दर्शन होते है, उस अवस्था के होने पर ईश्वर सत्य ही मालूम होंगे।

नरेन्द्र—मै सत्य चाहता हूं। उस दिन श्रीरामकृष्णदेव के साथ ही मैंने घोर तर्क किया।

मणि—(सहास्य)—क्या हुआ था?

नरेन्द्र–उन्होंने मुझसे कहा था, 'मुझे कोई कोई ईश्वर कहते है।' मैंने कहा, 'दूसरे चाहे लाख कहें, परन्तु जब तक मुझे वह बात सच नही जंचेगी, तब तक मैं कदापि न कहूँगा।'

"उन्होंने कहा, 'अधिकतर लोग जो कुछ कहेंगे, वही तो सत्य है—वही तो धर्म है !'

"मैने कहा, 'मै स्वयं जब तक अच्छी तरह समझ न लूँगा, तब तक मै दूसरो की बातें नही मान सकता।' "

मणि–(सहास्य)—तुम्हारा भाव कोपरनिकस, बर्कले आदि की तरह का है। संसार के आदमी कहते है, 'सूर्य ही चलता है,' पर कोपरनिकस ने उनकी बातों पर ध्यान नही दिया। संसार के आदमी कहते हैं, 'बाह्य संसार है,' पर बर्कले ने यह बात नहीं मानी। इसलिए लीविस कहते है, 'क्यों, बर्कले क्या एक दार्शनिक कोपरनिकस नही था ?'

नरेन्द्र–एक History of Philosophy (दर्शन का इतिहास) आप दे सकेंगे ?

मणि–क्या लीविस का लिखा हुआ ?

नरेन्द्र–नही उहबरवेग का,—मै जर्मन लेखक की पुस्तक पढ़ूँगा।

मणि–तुम कहते तो हो कि सामने के पेड की तरह क्या किसी ने ईश्वर को देखा है, परन्तु ईश्वर अगर आदमी बनकर तुम्हारे सामने आयें और कहे कि मै ईश्वर हूँ, तो क्या तुम विश्वास करोगे ? तुम लेजरस की कहानी जानते हो न ? जब लेजरस ने परलोक मे एब्राहम से जाकर कहा कि अपने आत्मीयों और मित्रों से कह आऊँ कि परलोक वास्तव मे है, तब एब्राहम ने कहा, 'तुम्हारे जाकर कहने से वे लोग क्या विश्वास करेंगे ? वे

कहेंगे, यह एक झूठा यहाँ आकर वेसिर-पैर की उड़ा रहा है।'

"श्रीरामकृष्ण ने कहा है, उन्हे विचार करके कोई जान नहीं सकता। विश्वास से ही सव कुछ होता है—ज्ञान और विज्ञान, दर्शन और आलाप, सव कुछ।"

भवनाथ ने विवाह किया है। उन्हे अव भोजन-वस्त्र की चिन्ता हो रही है। वे मास्टर के पास आकर कहते हैं, 'विद्यासागर का नया स्कूल खुलनेवाला है, मुझे भी तो भोजन-वस्त्र का प्रवन्ध करना है। अगर स्कूल का कोई काम कर लूं तो क्या वुरा है?'

दिन के तीन-चार वजे का समय है। श्रीरामकृष्ण लेटे हुए हैं। रामलाल पैर दवा रहे हैं, कमरे में सींती के गोपाल और मणि भी है। रामलाल दक्षिणेश्वर से आज श्रीरामकृष्ण को देखने के लिए आये हुए है।

श्रीरामकृष्ण मणि से खिड़कियाँ वन्द कर देने और पैरों पर हाथ फेरने के लिए कह रहे है।

श्रीयुत पूर्ण को किराये की गाड़ी करके काशीपुर के वगीचे में ले आने के लिए श्रीरामकृष्ण ने कहा था। वे आकर दर्शन कर गये। गाड़ी का किराया मणि देंगे। श्रीरामकृष्ण गोपाल को इशारा करके पूछ रहे है, 'इनके पास से मिला?'

गोपाल—जी हाँ।

रात के नौ वजे का समय है। सुरेन्द्र, राम आदि कलकत्ता लौट जाने का प्रवन्ध कर रहे है।

वैशाख की धूप—दिन के समय श्रीरामकृष्ण का कमरा वहुत ही तप जाता है। सुरेन्द्र इसीलिए खस की टट्टियाँ ले आये हैं। इन्हें खिड़कियों मे लगा देने से कमरा खूव ठण्डा रहता है।

सुरेन्द्र—खस की टट्टी अभी तक किसी ने नहीं लगायी,—

मालूम होता है कोई ध्यान ही नहीं देता।

एक भक्त–(सहास्य)–भक्तों को इस समय ब्रह्मज्ञान की अवस्था है। इस समय सब 'सोऽहम्' है––संसार मिथ्या हो रहा है। फिर जब 'तुम प्रभु हो, मैं दास हूं' यह भाव आयगा, तब यह सब सेवा होगी।

(सब हंसते हैं।)

परिच्छेद ३४

श्रीरामकृष्ण का भक्तों के प्रति प्रेम

(१)

राखाल, शशि आदि भक्तों के संग में

काशीपुर के बगीचे मे शाम को राखाल, शशि और मास्टर टहल रहे हैं। श्रीरामकृष्ण बीमार है, बगीचे में चिकित्सा कराने के लिए आये हुए है। वे ऊपर के कमरे में हैं। भक्तगण उनकी सेवा कर रहे है। आज बृहस्पतिवार है, २२ अप्रैल, १८८६।

मास्टर– वे तो तीनो गुणों से परे एक बालक हैं।

शशि और राखाल– श्रीरामकृष्ण ने वैसा ही कहा है।

राखाल– जैसे एक ऊँची मीनार। वहाँ बैठने पर सब समाचार मिलता रहता है, सब कुछ देख सकते है, परन्तु वहाँ कोई पहुंच नहीं सकता।

मास्टर– उन्होंने कहा है, 'इस अवस्था मे सदा ईश्वर के दर्शन हो सकते है।' विषयरूपी रस के न रहने के कारण सूखी लकड़ी आग जल्दी पकड़ती है।

शशि– बुद्धि मे कितने भेद है, यह वे चारु को बतला रहे थे। जिस बुद्धि से ईश्वर की प्राप्ति होती है, वही बुद्धि ठीक है। जिस बुद्धि से रुपया मिलता है, घर बनता है, डिप्टी मैजिस्ट्रेट या वकील होता है, वह बुद्धि नाममात्र की है। वह पतले दही की तरह है, जिसमे पानी का भाग अधिक है। उसमें सिर्फ चिउड़ा भीग सकता है। वह जमे दही की तरह अच्छा दही नहीं है। जिस बुद्धि से ईश्वर की प्राप्ति होती है, वही बुद्धि जमे दही की तरह उत्कृष्ट कहलाती है।

मास्टर– अहा ! कैसी सुन्दर बात है !

शशि– काली तपस्वी ने श्रीरामकृष्ण से कहा था, "आनन्द क्या होगा ? आनन्द तो भीलों के भी है। जंगली लोग भी 'हो हो' करके नाचते और गाते है।"

राखाल– उन्होने (श्रीरामकृष्ण ने) कहा, 'यह क्या ? ब्रह्मानन्द और विषयानन्द क्या एक है ? जीव विषयानन्द लेकर है। सम्पूर्ण विषयासक्ति के बिना गये ब्रह्मानन्द कभी मिल नही सकता। एक ओर रुपये और इन्द्रिय-सुख का आनन्द है और दूसरी ओर है ईश्वर-प्राप्ति का आनन्द। क्या ये दो कभी समान हो सकते है ? ऋषियों ने इस ब्रह्मानन्द का भोग किया था।'

मास्टर– काली इस समय बुद्धदेव की चिन्ता करते है न; इसलिए आनन्द के उस पार की बातें कह रहे हैं।

राखाल– श्रीरामकृष्ण के पास भी बुद्धदेव की बातचीत काली ने उठायी थी। श्रीरामकृष्णदेव ने कहा, 'बुद्धदेव अवतार-पुरुष हैं। उनके साथ किसी की क्या तुलना ? बड़े घर की बड़ी बातें।' काली ने कहा, 'ईश्वर की शक्ति ही तो सब कुछ है। उसी शक्ति से ईश्वर का आनन्द मिलता है, और उसी से विषय का भी।'

मास्टर– फिर उन्होने क्या कहा ?

राखाल– उन्होंने कहा 'यह कैसा ?— सन्तानोत्पत्ति करने की शक्ति और ईश्वर-प्राप्ति की शक्ति दोनों क्या एक है ?'

वगीचे के दुमंजले कमरे में भक्तों के साथ श्रीरामकृष्ण बैठे हुए है। शरीर अधिकाधिक अस्वस्थ होता जा रहा है। आज फिर डाक्टर महेन्द्र सरकार और डाक्टर राजेन्द्र दत्त देखने के लिए आये है। कमरे में राखाल, नरेन्द्र, शशि, मास्टर, सुरेन्द्र,

भवनाथ तथा अन्य बहुतसे भक्त बैठे है।

बगीचा पाकपाड़ा के बाबुओं का है। किराये से है, ६०-६५ रुपये देने पड़ते हैं। भक्तों में जो कम उम्र के हैं, वे बगीचे में ही रहते है। दिन-रात श्रीरामकृष्ण की सेवा वहीं किया करते हैं। गृही भक्त भी बीचबीच में आते हैं और उनकी सेवा किया करते हैं। वहीं रहकर श्रीरामकृष्ण की सेवा करने की इच्छा उन्हें भी है, परन्तु अपने-अपने कार्य मे ल ` रहने के कारण सदा वहाँ रहकर वे उनकी सेवा नहीं कर सकते। बगीचे का खर्च चलाने के लिए अपनी-अपनी शक्ति के अनुसार वे आर्थिक सहायता देते हैं। अधिकांश खर्च सुरेन्द्र ही देते हैं। उन्हीं के नाम से किराये पर बगीचे की लिखा-पढ़ी हुई है। एक रसोइया और दासी, ये दो नौकर भी सदा वहीं रहते हैं।

श्रीरामकृष्ण तथा कामिनी-कांचन

श्रीरामकृष्ण– (डाक्टर सरकार आदि से)–बड़ा खर्च हो रहा है।

डाक्टर– (भक्तों की ओर इशारा करके)– ये सब लोग तैयार भी तो है। बगीचे का सम्पूर्ण खर्च देते हुए भी इन्हें कोई कष्ट नहीं है। (श्रीरामकृष्ण से) अब देखो, कांचन की आवश्यकता आ पड़ी।

श्रीरामकृष्ण– (नरेन्द्र से)– बोल न।

श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र को उत्तर देने की आज्ञा दे रहे हैं। नरेन्द्र चुप हैं। डाक्टर फिर बातचीत कर रहे हैं।

डाक्टर– कांचन चाहिए। और फिर कामिनी भी चाहिए।

राजेन्द्र डाक्टर– इनकी स्त्री इनके लिए खाना पका दिया करती है।

डाक्टर सरकार– (श्रीरामकृष्ण से)– देखा ?

श्रीरामकृष्ण– (जरा मुस्कराकर)– है लेकिन वड़ा झंझट।

डाक्टर सरकार– झंझट न रहती, तो सब लोग परमहंस हो गये होते।

श्रीरामकृष्ण– स्त्री छू जाती है, तो तबीयत अस्वस्थ हो जाती है। और जिस जगह छू जाती है, वहाँ बड़ी देर तक सीगी मछली के काँटे के चुभ जाने के समान पीड़ा होती रहती है।

डाक्टर– यह विश्वास तो होता है, परन्तु अपनी ओर से देखता हूँ तो कामिनी और कांचन के बिना काम ही नहीं चलता।

श्रीरामकृष्ण– रुपया हाथ में लेता हूँ तो हाथ टेढ़ा हो जाता है—साँस रुक जाती है। रुपये से अगर कोई विद्या का संसार चला सके, ईश्वर और साधुओं की सेवा कर सके, तो उसमें दोष नही रह जाता।

"स्त्री लेकर माया का संसार करने से मनुष्य ईश्वर को भूल जाता है। जो संसार की माँ हैं, उन्हीं ने इस माया का रूप–– स्त्री का रूप धारण किया है। इसका यथार्थ ज्ञान हो जाने पर फिर माया के संसार पर जी नही लगता। सव स्त्रियों पर मातृज्ञान के होने पर मनुष्य विद्या का संसार कर सकता है। ईश्वर के दर्शन हुए बिना स्त्री क्या वस्तु है, यह समझ में नहीं आता।"

होमियोपैथिक दवा का सेवन करके श्रीरामकृष्ण कुछ दिनों से जरा अच्छे रहते हैं।

राजेन्द्र– अच्छे होकर आपको स्वयं होमियोपैथिक डाक्टरी करनी चाहिए, नही तो फिर इस मानव-जीवन का क्या उपयोग होगा ? (सव हंसते है।)

नरेन्द्र– जो मोची का काम करता है, वह कहता है कि इस संसार में चमड़े से बढ़कर और कोई चीज नहीं है! (सब हँसे)

कुछ देर बाद दोनों डाक्टर चले गये।

(२)

श्रीरामकृष्ण की उच्च अवस्था

श्रीरामकृष्ण मास्टर से बातचीत कर रहे है। कामिनी के सम्बन्ध मे अपनी अवस्था बतला रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण– (मास्टर से)– ये लोग कहते हैं, कामिनी और कांचन के बिना चल नही सकता। मेरी क्या अवस्था है, यह ये लोग नही जानते।

"स्त्रियों की देह में हाथ लग जाता है तो ऐंठ जाता है, वहाँ पीड़ा होने लगती है।

"यदि आत्मीयता के विचार से किसी के पास जाकर बातचीत करने लगता हूँ तो बीच में एक न जाने किस तरह का पर्दा-सा पड़ा रहता है; उसके उस तरफ जाया ही नही जाता।

"कमरे मे अकेला बैठा हुआ हूँ, ऐसे समय अगर कोई स्त्री आये तो एकदम बालक की-सी अवस्था हो जाती है और उसे माता की दृष्टि से देखता हूँ।"

मास्टर निर्वाक् होकर श्रीरामकृष्ण के पास बैठे हुए ये सब बातें सुन रहे है। कुछ दूर भवनाथ के साथ नरेन्द्र बातचीत कर रहे है। भवनाथ ने विवाह किया है, अब नौकरी की खोज में है। काशीपुर के बगीचे मे श्रीरामकृष्ण को देखने के लिए अधिक नही आ सकते। श्रीरामकृष्ण भवनाथ के लिए बड़ी चिन्ता किया करते है। कारण, भवनाथ संसार में फँस गये है। भवनाथ की उम्र २३-२४ वर्ष की होगी।

श्रीरामकृष्ण– (नरेन्द्र से)– उसे खूब हिम्मत वंधाते रहना।

नरेन्द्र और भवनाथ श्रीरामकृष्ण की ओर देखकर मुस्कराने लगे। श्रीरामकृष्ण इशारा करके फिर भवनाथ से कह रहे है—"खूब वीर बनो। घूंघट के भीतर अपनी स्त्री के आँसू देखकर अपने को भूल न जाना। ओह! औरतें कितना रोती है!— वे तो नाक छिनकने मे भी रोती है!

(नरेन्द्र, भवनाथ और मास्टर हंसते है।)

"ईश्वर मे मन को अटल भाव से स्थापित रखना। वीर वह है, जो स्त्री के साथ रहने पर भी उससे प्रसंग नही करता। स्त्री के साथ केवल ईश्वरीय वातें करते रहना।"

कुछ देर बाद श्रीरामकृष्ण फिर इशारा करके भवनाथ से कह रहे हैं— "आज यही भोजन करना।"

भवनाथ– जी, वहुत अच्छा। आप मेरी चिन्ता विलकुल न कीजिये।

सुरेन्द्र आकर बैठे। महीना वैशाख का है। भक्तगण सन्ध्या के बाद रोज श्रीरामकृष्ण को मालाएँ पहनाया करते है। सुरेन्द्र चुपचाप वैठे हुए है। श्रीरामकृष्ण ने प्रसन्न होकर उन्हें दो मालाएँ दीं। सुरेन्द्र ने प्रणाम करके मालाओ को पहले सिर पर धारण किया, फिर गले मे डाल लिया।

सब लोग चुपचाप वैठे हुए श्रीरामकृष्ण को देख रहे है। सुरेन्द्र उन्हें प्रणाम करके खड़े हो गये। वे चलनेवाले है। जाते समय भवनाथ को वुलाकर उन्होने कहा, 'खस की टट्टी लगा देना।'

(३)

श्रीरामकृष्ण तथा हीरानन्द

श्रीरामकृष्ण ऊपरवाले कमरे में वैठे है। सामने हीरानन्द,

मास्टर तथा दो-एक भक्त और हैं। हीरानन्द के साथ दो-एक मित्र भी आये है। हीरानन्द सिन्ध में रहते हैं। कलकत्ते के कॉलेज में अध्ययन समाप्त करके देश चले गये थे, अव तक वहीं थे। श्रीरामकृष्ण की वीमारी का समाचार पाकर उन्हें देखने के लिए आये है। सिन्ध देश कलकत्ते से कोई वाईस सौ मील होगा। हीरानन्द को देखने लिए श्रीरामकृष्ण भी उत्सुक रहते थे।

श्रीरामकृष्ण हीरानन्द की ओर उंगली उठाकर मास्टर को इशारा कर रहे हैं। मानो कह रहे हैं— 'यह वड़ा अच्छा लड़का है।'

श्रीरामकृष्ण— क्या तुमसे परिचय है ?

मास्टर—जी हाँ, है।

श्रीरामकृष्ण— (हीरानन्द और मास्टर से)— तुम लोग जरा वातचीत करो, मैं सुनूं।

मास्टर को चुप रहते हुए देखकर श्रीरामकृष्ण ने पूछा— "क्या नरेन्द्र है ? उसे वुला लाओ।"

नरेन्द्र ऊपर श्रीरामकृष्ण के पास आकर वैठे।

श्रीरामकृष्ण— (नरेन्द्र और हीरानन्द से)— तुम दोनों जरा वातचीत तो करो।

हीरानन्द चुप हैं। वड़ी देर तक टाल-मटोल करके उन्होंने वातचीत करना आरम्भ किया।

हीरानन्द— (नरेन्द्र से)— अच्छा, भक्त को दुःख क्यों मिलता है ?

हीरानन्द की वातें वड़ी ही मधुर है। जिन-जिन लोगों ने उनकी वातें सुनी, उन सव को यह जान पड़ा कि इनका हृदय प्रेम से भरा है।

नरेन्द्र— इस संसार का प्रबन्ध देखकर यह जान पड़ता है कि इसकी रचना किसी शैतान ने की है। मैं इससे अच्छे संसार की सृष्टि कर सकता था।

हीरानन्द— दुःख के बिना क्या कभी सुख का अनुभव होता है?

नरेन्द्र— मैं यह नही कहता कि संसार की सृष्टि किस उपादान से की जाय, किन्तु मेरा मतलव यह है कि संसार का अभी जो प्रबन्ध दीख पड़ रहा है, वह अच्छा नहीं।

"परन्तु एक बात पर विश्वास करने पर सब निपटारा हो जायगा। सब ईश्वर है, यह विश्वास किया जाय तो उलझन सुलझ जायेगी। ईश्वर ही सब कुछ कर रहे है।"

हीरानन्द— यह कहना सहज है।

नरेन्द्र मधुर स्वर से निर्वाणषट्क कह रहे है—

ॐ मनोबुद्ध्यहंकारचित्तानि नाहं
न च श्रोत्रजिह्वे न च घ्राणनेत्रे।
न च व्योम भूमिर्न तेजो न वायु-
श्चिदानन्दरूप: शिवोऽहं शिवोऽहम् ॥ १ ॥
न च प्राणसंज्ञो न वै पंचवायु-
र्न वा सप्तधातुर्न वा पंचकोष:।
न वाक्पाणिपादं न चोपस्थपायु-
श्चिदानन्दरूप: शिवोऽहं शिवोऽहम् ॥ २ ॥
न मे द्वेपरागौ न मे लोभमोहौ
मदो नैव मे नैव मात्सर्यभाव:।
न धर्मो न चार्थो न कामो न मोक्ष-
श्चिदानन्दरूप: शिवोऽहं शिवोऽहम् ॥ ३ ॥

न पुण्यं न पापं न सौख्यं न दुःखं
न मन्त्रो न तीर्थो न वेदा न यज्ञाः ।
अहं भोजनं नैव भोज्यं न भोक्ता-
श्चिदानन्दरूपः शिवोऽहं शिवोऽहम् ॥ ४ ॥
न मृत्युर्न शंका न मे जातिभेदः
पिता नैव मे नैव माता न जन्म ।
न बन्धुर्न मित्रं गुरुर्नैव शिष्य-
श्चिदानन्दरूपः शिवोऽहं शिवोऽहम् ॥ ५ ॥
अहं निर्विकल्पो निराकाररूपो
विभुत्वाच्च सर्वत्र सर्वेन्द्रियाणाम् ।
न चासंगतं नैव मुक्तिर्न मेय-
श्चिदानन्दरूपः शिवोऽहं शिवोऽहम् ॥ ६ ॥

हीरानन्द—वाह !

श्रीरामकृष्ण ने हीरानन्द को इसका उत्तर देने के लिए कहा।

हीरानन्द—एक कोने से घर को देखना जैसा है, वैसा ही घर के बीच में रहकर भी देखना है। 'हे ईश्वर ! मै तुम्हारा दास हूँ' —इससे भी ईश्वर का अनुभव होता है और 'मैं वही हूँ, सोऽहम्' —इससे भी ईश्वर का अनुभव होता है। एक द्वार से भी कमरे में जाया जाता है और अनेक द्वारों से भी जाया जाता है।

सब लोग चुप है। हीरानन्द ने नरेन्द्र से गाने के लिए अनुरोध किया। नरेन्द्र कौपीनपंचक गा रहे हैं—

वेदान्तवाक्येषु सदा रमन्तो
भिक्षान्नमात्रेण च तुष्टिमन्तः ।
अशोकमन्तःकरणे चरन्तः
कौपीनवन्तः खलु भाग्यवन्तः ॥ १ ॥

मूलं तरो: केवलमाश्रयन्त:
पाणिद्वय भोक्तुममन्त्रयन्त ।
कन्थामिव श्रीमपि कुत्सयन्त:
कौपीनवन्त: खलु भाग्यवन्त: ।। २ ।।
स्वानन्दभावे परितुष्टिमन्त:
सुशान्तसर्वेन्द्रियवृत्तिमन्त: ।
अहर्निशं ब्रह्मणि ये रमन्त:
कौपीनवन्त: खलु भाग्यवन्त: ।। ३ ।।

श्रीरामकृष्ण ने ज्योंही सुना—'अहर्निशं ब्रह्मणि ये रमन्त:' कि धीरे धीरे कहने लगे—'अहा !' और इशारा करके बतलाने लगे कि यही योगियो का लक्षण है।

नरेन्द्र कौपीनपचक समाप्त करने लगे—

देहादिभावं परिवर्तयन्त:
स्वात्मानमात्मन्यवलोकयन्त: ।
नान्तं न मध्यं न बहि: स्मरन्त:
कौपीनवन्त: खलु भाग्यवन्त: ।। ४ ।।
ब्रह्माक्षरं पावनमुच्चरन्त:
ब्रह्माहमस्मीति विभावयन्त: ।
भिक्षाशिनो दिक्षु परिभ्रमन्त:
कौपीनवन्त: खलु भाग्यवन्त: ।। ५ ।।

नरेन्द्र फिर गा रहे है—"परिपूर्णमानन्दम् ।
अंगविहीनं स्मर जगन्निधानम् ।
श्रोत्रस्य श्रोत्रं मनसो मनो यद्वाचो ह वाचम् ।
वागतीतं प्राणस्य प्राणं परं वरेण्यम् ।"

नरेन्द्र ने एक गाना और गाया ।

इस गाने में कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार की है:—

"तुझसे हमने दिल है लगाया,
जो कुछ है सो तू ही है।
हरएक के दिल में तू ही समाया,
जो कुछ है सो तू ही है।
जहाँ देखा नजर तू ही आया,
जो कुछ है सो तू ही है।"

'हरएक के दिल में' यह सुनकर श्रीरामकृष्ण इशारा करके कह रहे हैं कि वे हरएक के हृदय में हैं, वे अन्तर्यामी हैं।

'जहाँ देखा नजर तू ही आया' यह सुनकर हीरानन्द नरेन्द्र से कह रहे हैं, "सब तू ही है, अब 'तुम तुम' हो रहा है। मैं नहीं, तुम।"

नरेन्द्र–तुम मुझे एक दो, मैं तुम्हें एक लाख दूंगा। (अर्थात्, एक के मिलने पर आगे शून्य रखकर एक लाख कर दूंगा।) तुम ही मैं; मैं ही तुम, मेरे सिवा और कोई नही है।

यह कहकर नरेन्द्र अष्टावक्रसंहिता से कुछ श्लोकों की आवृत्ति करने लगे। सब लोग चुपचाप बैठे हैं।

श्रीरामकृष्ण– (हीरानन्द से, नरेन्द्र की ओर संकेत करके)— मानो म्यान से तलवार निकालकर घूम रहा है।

(मास्टर से, हीरानन्द की ओर सकेत करके) "कितना शान्त है! संपेरे के पास विषधर साँप जैसे फन फैलाकर चुपचाप पड़ा हो!"

(४)

गुह्य कथा

श्रीरामकृष्ण अर्न्तर्मुख है। पास ही हीरानन्द और मास्टर बैठे

हैं। कमरे में सन्नाटा छाया हुआ है। श्रीरामकृष्ण की देह में घोर पीड़ा हो रही है। भक्तगण जब एक-एक बार देखते है, तब उनका हृदय विदीर्ण हो जाता है। परन्तु श्रीरामकृष्ण ने सब को दूसरी बातों में डालकर उधर से मन हटा रखा है। बैठे हुए हैं, श्रीमुख से प्रसन्नता टपक रही है।

भक्तों ने फूल और माला लाकर समर्पण किया है। फूल लेकर कभी सिर पर चढ़ाते हैं, कभी हृदय से लगाते हैं, जैसे पाँच वर्ष का बालक फूल लेकर क्रीड़ा कर रहा हो।

जब ईश्वरी भाव का आवेश होता है, तब श्रीरामकृष्ण कहा करते है कि शरीर मे महावायु ऊर्ध्वगामी हो रही है। महावायु के चढने पर ईश्वरानुभव होता है। यह बात सदा वे कहा करते हैं। अब श्रीरामकृष्ण मास्टर से बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण– (मास्टर से)– वायु कब चढ़ गयी, मुझे मालूम भी नही हुआ।

"इस समय बालकभाव है; इसीलिए फूल लेकर इस तरह किया करता हूं। क्या देख रहा हूं, जानते हो? शरीर मानो बाँस की कमानियो का बनाया हुआ है और ऊपर से कपड़ा लपेट दिया गया है। वही मानो हिल रहा है। भीतर कोई है इसीलिए हिल रहा है।

"जैसे बिना बीज और गूदे का कद्दू। भीतर कामादि आसक्तियाँ नही है, सब साफ है। और––"

श्रीरामकृष्ण को बातचीत करते हुए कष्ट हो रहा है। बहुत ही दुर्बल हो गये है। वे क्या कहने जा रहे है इसका अनुमान लगाकर मास्टर शीघ्र ही कह उठ ––"और भीतर आप ईश्वर को देख रहे है।

श्रीरामकृष्ण– भीतर बाहर दोनों जगह देख रहा हूँ—अखण्ड सच्चिदानन्द। सच्चिदानन्द इस शरीर का आश्रय लेकर, इसके भीतर भी है और बाहर भी। यही मैं देख रहा हूँ।

मास्टर और हीरानन्द यह ब्रह्मदर्शन की बात सुन रहे हैं। कुछ देर बाद श्रीरामकृष्ण उनकी ओर सस्नेह दृष्टि करके बात-चीत करने लगे।

श्रीरामकृष्ण तथा योगावस्था। अखण्ड दर्शन

श्रीरामकृष्ण– (मास्टर और हीरानन्द से)–तुम लोग आत्मीय जान पडते हो। कोई दूसरे नही मालूम पडते।

"सब को देख रहा हूँ, एक-एक गिलाफ के अन्दर रहकर सिर हिला रहे है।

"देख रहा हूँ, जब उनसे मन का संयोग हो जाता है तब कष्ट एक ओर पड़ा रहता है।

"इस समय केवल यही देख रहा हूँ कि अखण्ड सच्चिदानन्द ही इस त्वचा से ढका हुआ है और इसी मे एक ओर यह गले का घाव पड़ा है।"

श्रीरामकृष्ण चुप हो रहे। कुछ देर बाद फिर कहने लगे—"जड़ की सत्ता को चेतन समझ लिया जाता है और चेतन की सत्ता को जड़। इसीलिए शरीर मे रोग होने पर मनुष्य कहता है, 'मै बीमार हूँ।'"

इस बात को समझाने के लिए हीरानन्द ने आग्रह किया। मास्टर कहने लगे— "गर्म पानी में हाथ के जल जाने पर लोग कहते है, पानी मे हाथ जल गया; परन्तु बात ऐसी नही, वास्तव मे ताप से ही हाथ जला है।"

हीरानन्द– (श्रीरामकृष्ण से)– आप बतलाइये, भक्त को

कष्ट क्यों होता है ?

श्रीरामकृष्ण–कष्ट तो देह का है।

श्रीरामकृष्ण शायद कुछ और कहें इसलिए दोनों प्रतीक्षा कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण–समझे ?

मास्टर धीरे धीरे हीरानन्द से कुछ कह रहे हैं।

मास्टर–लोक-शिक्षा के लिए। उदाहरण सामने है कि इतने कष्ट के भीतर भी मन का संयोग सोलहों आने ईश्वर से हो रहा है।

हीरानन्द–हाँ, जैसे ईशू को सूली देना। परन्तु रहस्य की बात तो यह है कि इन्हें इतना कष्ट क्यो मिला ?

मास्टर–ये जैसा कहते है–माता की इच्छा। यहाँ उनकी ऐसी ही लीला हो रही है।

ये दोनों आपस मे धीरे धीरे बातचीत कर रहे है। श्रीरामकृष्ण इशारा करके हीरानन्द से पूछ रहे है। हीरानन्द इशारा समझ नही सके। इसलिए श्रीरामकृष्ण फिर इशारा करके पूछ रहे है, 'वह क्या कहता है ?'

हीरानन्द–ये कहते हैं कि आपकी बीमारी लोक-शिक्षा के लिए है।

श्रीरामकृष्ण–यह बात अनुमान की ही तो है।

(मास्टर और हीरानन्द से) "अवस्था बदल रही है। सोच रहा हूं, सब के लिए न कहूं कि चैतन्य हो। कलिकाल मे पाप अधिक है, वह सब पाप आ जाता है।"

मास्टर–(हीरानन्द से)–समय को बिना देखे हुए ये ऐसी बात न कहेगे। जिसके लिए चैतन्य होने का समय आया है, उसे

ही कहेंगे।

(५)

प्रवृत्ति या निवृत्ति ? हीरानन्द के प्रति उपदेश

हीरानन्द श्रीरामकृष्ण के पैरों पर हाथ फेर रहे हैं। पास ही मास्टर बैठे है। लाटू तथा अन्य दो-एक भक्त कमरे में आते-जाते हैं। आज शुक्रवार है, २३ अप्रैल, १८८६। दिन के १२-१ बजे का समय होगा। हीरानन्द ने आज यहीं भोजन किया है। श्रीरामकृष्ण की बड़ी इच्छा थी कि हीरानन्द यहीं रहें।

हीरानन्द श्रीरामकृष्ण के पैरों पर हाथ फेरते हुए उनसे वार्तालाप कर रहे है। वैसी ही मधुर बातें, मुख हास्य और प्रसन्नता से भरा हुआ,—जैसे बालक को समझा रहे हों। श्रीरामकृष्ण अस्वस्थ हैं, डाक्टर सदा ही उन्हें देख रहे है।

हीरानन्द–आप इतना सोचते क्यो है ? डाक्टर पर विश्वास करके निश्चिन्त हो जाइये। आप बालक तो है ही।

श्रीरामकृष्ण–(मास्टर से)–डाक्टर पर विश्वास कैसे होगा ? सरकार (डाक्टर) ने कहा है, बीमारी अच्छी न होगी।

हीरानन्द–तो इतनी चिन्ता क्यो करते है ? जो कुछ होना है, होगा।

मास्टर–(हीरानन्द से, एकान्त में)–ये अपने लिए कुछ नहीं सोच रहे है। इनकी शरीर-रक्षा भक्तों के लिए है।

गर्मी जोरों की हो रही है। और फिर दोपहर का समय। खस की टट्टी लगायी गयी है। हीरानन्द उठकर टट्टी ठीक कर रहे हैं। श्रीरामकृष्ण देख रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण–(हीरानन्द से)–तो पाजामा भेज देना।

हीरानन्द ने कहा है कि उसके देश का पाजामा पहनकर

श्रीरामकृष्ण को आराम होगा। इसीलिए श्रीरामकृष्ण उन्हें पाजामा भेज देने की याद दिला रहे है।

हीरानन्द का भोजन ठीक नही हुआ। चावल अच्छी तरह पके नही थे। श्रीरामकृष्ण को सुनकर बड़ा दु:ख हुआ। बार बार उनसे जलपान करने के लिए कह रहे है। इतना कष्ट है कि बोल भी नहीं सकते, परन्तु फिर भी बार बार पूछ रहे है।

फिर लाटू से पूछ रहे है, 'क्या तुम लोगों को भी वही चावल दिया गया था ?'

श्रीरामकृष्ण कमर मे कपड़ा नही सम्हाल सकते। प्राय: बालक की तरह दिगम्बर होकर ही रहते है। हीरानन्द के साथ दो ब्राह्म भक्त आये हुए है; इसीलिए एक-आध बार श्रीरामकृष्ण धोती को कमर की ओर खीच रहे है।

श्रीरामकृष्ण–(हीरानन्द से)–धोती के खुल जाने पर क्या तुम लोग असभ्य कहते हो ?

हीरानन्द–आपको इससे क्या ? आप तो बालक हैं।

श्रीरामकृष्ण–(एक ब्राह्म भक्त प्रियनाथ की ओर उंगली उठाकर)–वे ऐसा कहते है।

हीरानन्द अब विदा होंगे। दो-एक रोज कलकत्ते मे रहकर वे फिर सिन्ध देश जायेंगे। वे वही काम करते है। दो अखबारों के सम्पादक हैं। १८८४ ई से लगातार चार साल तक उन्होंने सम्पादन-कार्य किया था। उनके पत्रों के नाम थे––सिन्ध टाइम्स (Sind Times) और सिन्ध-सुधार (Sind Sudhar)। हीरानन्द ने १८८३ ई. मे बी. ए. की उपाधि प्राप्त की थी।

श्रीरामकृष्ण–(हीरानन्द से)–वहाँ न जाओ तो ?

हीरानन्द–(सहास्य)–वहाँ और कोई मेरा काम करनेवाला

नहीं है। मुझे तो वहाँ नौकरी करनी पड़ती है।

श्रीरामकृष्ण– क्या वेतन पाते हो?

हीरानन्द– इन सब कामों में वेतन कम है।

श्रीरामकृष्ण– कितना?

हीरानन्द हंस रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण– यहीं रहो न।

हीरानन्द चुप हैं।

श्रीरामकृष्ण– काम करके क्या होगा?

हीरानन्द चुप है।

थोड़ी देर और बातचीत करके हीरानन्द विदा हुए।

श्रीरामकृष्ण– कब आओगे?

हीरानन्द– परसों सोमवार को देश जाऊंगा। सोमवार को सुबह आकर दर्शन करूंगा।

(६)

मास्टर, नरेन्द्र आदि के संग में

मास्टर श्रीरामकृष्ण के पास बैठे हुए हैं। हीरानन्द को गये अभी कुछ ही समय हुआ होगा।

श्रीरामकृष्ण– (मास्टर से)– बहुत अच्छा है, न?

मास्टर– जी हाँ, स्वभाव बड़ा मधुर है।

श्रीरामकृष्ण– उसने बतलाया २२ सौ मील— इतनी दूर से देखने आया है!

मास्टर– जी हाँ, बिना अधिक प्रेम के ऐसी बात नहीं होती।

श्रीरामकृष्ण– मेरी बड़ी इच्छा है कि मुझे भी उस देश में कोई ले जाय।

मास्टर– जाते हुए बड़ा कष्ट होगा, चार-पाँच दिन तक रेल

पर बैठे रहना होगा।

श्रीरामकृष्ण– तीन पास कर चुका है। (युनिवर्सिटी की तीन उपाधियाँ है।)

मास्टर– जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण कुछ शान्त है, विश्राम करेंगे।

श्रीरामकृष्ण– (मास्टर से)– खिड़की की झंझरियों को खोल दो और चटाई बिछा दो।

मास्टर पंखा झल रहे है। श्रीरामकृष्ण को नींद आ रही है।

श्रीरामकृष्ण– (जरा सोकर, मास्टर से)– क्या मेरी आँख लगी थी ?

मास्टर– जी हाँ, कुछ लगी थी।

नरेन्द्र, शरद, और मास्टर नीचे हॉल (Hall) के पूर्व ओर बातचीत कर रहे हैं।

नरेन्द्र– कितने आश्चर्य की बात है ! इतने साल तक पढ़ने पर भी विद्या नहीं होती ! फिर किस तरह लोग कहते हैं कि 'मैंने दो-तीन दिन साधना की; अब क्या, अब ईश्वर मिलेंगे !' ईश्वर-प्राप्ति क्या इतनी सीधी है ? (शरद से) तुझे शान्ति मिली है, मास्टर महाशय को भी शान्ति मिली है, परन्तु मुझे अभी तक शान्ति नहीं मिली।

(७)

केदार, सुरेन्द्र आदि भक्तों के संग में

दिन का पिछला पहर है। ऊपरवाले हॉल में कई भक्त बैठे हुए हैं। नरेन्द्र, शरद, शशि, लाटू, नित्यगोपाल, गिरीश, राम, मास्टर और सुरेश आदि अनेक भक्त बैठे हुए है।

केदार आये। बहुत दिनों के बाद वे श्रीरामकृष्ण को देखने

आये हैं। वे अपने ऑफिस के कार्य के सम्बन्ध में ढाके में थे। वहाँ से श्रीरामकृष्ण की बीमारी का हाल पाकर आये हैं। केदार ने कमरे में प्रवेश करके श्रीरामकृष्ण की पदधूलि पहले अपने सिर पर धारण की, फिर आनन्दपूर्वक उसे औरों को भी देने लगे। भक्त-गण नतमस्तक होकर उसे ग्रहण कर रहे है। केदार शरद को भी देने के लिए बढ़े, परन्तु उन्होने स्वयं श्रीरामकृष्ण की धूलि लेकर मस्तक पर धारण की। यह देखकर मास्टर हंसने लगे। उनकी ओर देखकर श्रीरामकृष्ण भी हंसे। भक्तगण चुपचाप बैठे हुए है। इधर श्रीरामकृष्ण के भावावेश के पूर्वलक्षण प्रकट हो रहे है। रह-रहकर साँस छोड़ते हुए मानो वे भाव को दबाने की चेष्टा कर रहे हैं। अन्त मे गिरीष घोष के साथ तर्क करने के लिए केदार के प्रति इशारा करने लगे। गिरीश अपने कान ऐंठकर कह रहे है, "महाराज, कान पकड़ा। पहले मैं नहीं जानता था कि आप कौन है। उस समय जो मैंने तर्क किया, वह और बात थी।" (श्रीरामकृष्ण हंसते हैं)

श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र की ओर उंगली उठाकर इशारा करते हुए केदार से कह रहे हैं— "इसने सर्वस्व का त्याग कर दिया है। (भक्तों से) केदार ने नरेन्द्र से कहा था, 'अभी चाहे तर्क करो और विचार करो, परन्तु अन्त में ईश्वर का नाम लेकर धूलि में लोटना होगा।' (नरेन्द्र से) केदार के पैरों की धूलि लो।"

केदार– (नरेन्द्र से)– उनके पैरों की धूलि लो, इसी से हो जायगा।

सुरेन्द्र भक्तों के पीछे बैठे हुए हैं। श्रीरामकृष्ण ने जरा मुस्कराकर उनकी ओर देखा। केदार से कह रहे है, "अहा! कैसा स्वभाव है!" केदार श्रीरामकृष्ण का इशारा समझकर

सुरेन्द्र की ओर बढ़कर बैठे।

सुरेन्द्र जरा अभिमानी हैं। भक्तों मे से कुछ लोग बगीचे के खर्च के लिए बाहर के भक्तों के पास से अर्थ-संग्रह करने गये थे। इस पर सुरेन्द्र को बड़ा दुःख है। बगीचे का अधिकतर खर्च सुरेन्द्र ही देते है।

सुरेन्द्र– (केदार से)– इतने साधुओं के बीच मे क्या बैठूं! और कोई कोई (नरेन्द्र) तो कुछ दिन हुए, संन्यासी बनकर बुद्ध-गया गये हुए थे,— बड़े बड़े साधुओं के दर्शन करने।

श्रीरामकृष्ण सुरेन्द्र को शान्त कर रहे है। कह रहे है, "हाँ, वे अभी बच्चे है, अच्छी तरह समझ नहीं सकते।"

सुरेन्द्र– (केदार से)– क्या गुरुदेव जानते नही, किसका क्या भाव है? वे रुपये से नहीं, वे तो भाव लेकर सन्तुष्ट होते है।

श्रीरामकृष्ण सिर हिलाकर सुरेन्द्र की बाद का समर्थन कर रहे हैं। 'भाव लेकर सन्तुष्ट होते हैं' इस कथन को सुनकर केदार भी प्रसन्न हुए।

भक्तो ने मिठाइयाँ लाकर श्रीरामकृष्ण के सामने रखीं। उनमे से एक छोटासा टुकड़ा ग्रहण करके श्रीरामकृष्ण ने सुरेन्द्र के हाथ मे प्रसाद की थाली दी और कहा, 'दूसरे भक्तों को भी प्रसाद दे दो।'

सुरेन्द्र नीचे गये। प्रसाद नीचे ही दिया जायगा।

श्रीरामकृष्ण– (केदार से)– तुम समझा देना। जाओ बकझक करने की मनाही कर देना।

मणि पंखा झल रहे है। श्रीरामकृष्ण ने पूछा, 'क्या तुम नहीं खाओगे?' उन्होने प्रसाद पाने के लिए नीचे मणि को भी भेज दिया।

* * *

सन्ध्या हो रही है। गिरीश और श्री 'म' (मास्टर) तालाब के किनारे टहल रहे हैं।

गिरीश– क्यों जी, सुना है, तुमने श्रीरामकृष्ण के सम्बन्ध में कुछ लिखा है?

श्री 'म'– किसने कहा आपसे ?

गिरीश– मैंने सुना है। क्या मुझे दोगे— पढ़ने के लिए ?

श्री 'म'– नही, जब तक मै यह न समझ लूं कि किसी को देना उचित है, मैं न दूंगा। वह मैंने अपने लिए लिखा है, किसी दूसरे के लिए नही।

गिरीश– क्या बोलते हो ?

श्री 'म'– जब मेरा देहान्त हो जायगा तब पाओगे।

श्रीरामकृष्ण—अहेतुक कृपासिन्धु

सन्ध्या होने पर श्रीरामकृष्ण के कमरे मे दीपक जलाये गये। ब्राह्मभक्त श्रीयुत अमृत वसु उन्हें देखने के लिए आये हैं। श्रीरामकृष्ण उन्हें देखने के लिए पहले ही से उत्सुक थे। मास्टर तथा दो चार भक्त और बैठे हुए है। श्रीरामकृष्ण के सामने केले के पत्ते में बेला और जुही की मालाएं रखी हुई हैं। कमरे में सन्नाटा छाया है। एक महायोगी मानो चुपचाप योगयुक्त होकर बैठे है। श्रीरामकृष्ण एक-एक बार मालाओ को उठा रहे हैं। जैसे गले में डालना चाहते हों।

अमृत– (सस्नेह)– क्या मालाएं पहना दूं ?

मालाएं पहन लेने पर श्रीरामकृष्ण अमृत से बड़ी देर तक बातचीत करते रहे। अमृत अब चलनेवाले हैं।

श्रीरामकृष्ण– तुम फिर आना।

अमृत– जी, आने की तो बड़ी इच्छा है। बड़ी दूर से आना

पड़ता है, इसलिए हमेशा मैं नहीं आ सकता।

श्रीरामकृष्ण– तुम आना, यहाँ से बग्घी का किराया ले लिया करना।

अमृत के लिए श्रीरामकृष्ण का यह अकारण स्नेह देखकर भक्तगण आश्चर्यचकित हो गये।

दूसरे दिन शनिवार है, २४ अप्रैल। श्री 'म' अपनी स्त्री तथा सात साल के लड़के को लेकर श्रीरामकृष्ण के पास आये हैं। एक साल हुआ, उनके एक आठ वर्ष के लड़के का देहान्त हो गया है। उनकी स्त्री तभी से पागल की तरह हो गयी है। इसीलिए श्रीरामकृष्ण कभी कभी उसे आने के लिए कहते हैं।

रात को श्रीमाताजी ऊपरवाले कमरे में श्रीरामकृष्ण को भोजन कराने के लिए आयीं। श्री 'म' की स्त्री उनके साथ साथ दीपक लेकर गयी।

भोजन करते हुए श्रीरामकृष्ण उससे घर-गृहस्थी की बातें पूछने लगे। फिर उन्होंने कुछ दिन श्रीमाताजी के पास आकर रहने के लिए कहा; इसलिए कि इससे उसका शोक बहुत-कुछ घट जायगा। उसके एक छोटी लड़की थी। श्रीमाताजी उसे मानमयी कहकर पुकारती थीं। श्रीरामकृष्ण ने उसे भी ले आने के लिए कहा।

श्रीरामकृष्ण के भोजन के पश्चात् श्री 'म' की स्त्री ने उस जगह को साफ कर दिया। श्रीरामकृष्ण के साथ कुछ देर तक बातचीत हो जाने के बाद श्रीमाताजी जब नीचे के कमरे में गयीं, तब श्री 'म' की स्त्री भी उन्हें प्रणाम करके नीचे चली आयी।

रात के नौ बजे का समय हुआ। श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ उसी कमरे में बैठे हैं। गले में फूलों की माला पड़ी हुई है। श्री

'म' पंखा झल रहे है।

श्रीरामकृष्ण गले से माला हाथ में लेकर अपने-आप कुछ कह रहे हैं। उसके पश्चात् प्रसन्न होकर उन्होने श्री 'म' को वह माला दे दी।

परिशिष्ट

(क)

परिच्छेद १

केशव के साथ दक्षिणेश्वर मन्दिर में

(१)

श्रीरामकृष्ण तथा श्री केशवचन्द्र सेन

शनिवार, १ जनवरी, १८८१ ई.

ब्राह्मसमाज का माघोत्सव आनेवाला है। राम, मनोमोहन आदि अनेक व्यक्ति उपस्थित है।

ब्राह्म भक्तगण तथा अन्य लोग केशव के आने से पहले ही कालीबाड़ी में आ गये है और श्रीरामकृष्णदेव के पास बैठे हुए हैं। सभी बेचैन है, बार-बार दक्षिण की ओर देख रहे है कि कब केशव आयेंगे, कब केशव जहाज से आकर उतरेंगे।

प्रताप, त्रैलोक्य, जयगोपाल सेन आदि अनेक ब्राह्मभक्तों को साथ लेकर केशवचन्द्र सेन श्रीरामकृष्ण का दर्शन करने के लिए दक्षिणेश्वर के मन्दिर में आये। हाथ में दो बेल फल तथा फूल का एक गुच्छा है। उन्होंने श्रीरामकृष्ण के चरण स्पर्श कर उन चीजों को उनके पास रख दिया और भूमिष्ठ होकर प्रणाम किया। श्रीरामकृष्ण ने भी भूमिष्ठ होकर प्रति-नमस्कार किया।

श्रीरामकृष्ण आनन्द से हंस रहे है और केशव के साथ बात कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण—(केशव के प्रति, हंसते हुए)—केशव, तुम मुझे चाहते हो, परन्तु तुम्हारे चेले लोग मुझे नही चाहते। तुम्हारे

चेलों से कहा था, 'आओ, हम खंजन-मंजन करें, उसके वाद गोविन्द आ जायेंगे।'

(केशव के शिष्यों के प्रति) "वह देखो जी, तुम्हारे गोविन्द आ गये। मैं इतनी देर तक खंजन-मंजन कर रहा था, भला आयेंगे क्यों नहीं ? (सभी हँसे)

"गोविन्द का दर्शन सहज नहीं मिलता। कृष्ण-लीला में देखा होगा, नारद जव व्याकुल होकर व्रज में कहते हैं—'प्राण ! हे गोविन्द ! मम जीवन !'—उस समय गोपालों के साथ श्रीकृष्ण आते है, पीछे पीछे सखियाँ और गोपियाँ। व्याकुल हुए विना ईश्वर का दर्शन नहीं होता।

(केशव के प्रति) "केशव, तुम कुछ कहो; ये सब तुम्हारी वात सुनना चाहते हैं।"

केशव–(विनीत भाव से, हंसते हुए)–यहाँ पर वात करना लुहार के पास सूई बेचने की चेष्टा-जैसा होगा !

श्रीरामकृष्ण–(हंसते हुए)–वात क्या है, जानते हो ? भक्तों का स्वभाव गाँजा पीनेवालों-जैसा है। तुमने एक वार गाँजे की चिलम लेकर दम लगाया, और मैंने भी एक वार लगाया। (सभी हँसे)

दिन के चार वजे का समय है। कालीवाड़ी के नौवतखाने का वाद्य सुनायी दे रहा है।

श्रीरामकृष्ण–(केशव के प्रति)–देखा, कैसा सुन्दर वाद्य है ! लेकिन एक आदमी केवल एक राग—'पों'—निकाल रहा है और दूसरा अनेक सुरों की लहर उठाकर कितनी ही राग-रागिनियाँ निकाल रहा है। मेरा भी वही भाव है। मेरे सात सूराख रहते हुए फिर मैं क्यों केवल 'पों' निकालूँ—क्यों केवल 'सोऽहम्'

'सोऽहम्' करूँ ? मैं सात सूराखों से अनेक प्रकार की राग-रागिनियाँ बजाऊंगा। केवल 'ब्रह्म-ब्रह्म' ही क्यों करूँ ? शान्त, दास्य, वात्सल्य, सख्य, मधुर सभी भावों से उन्हें पुकारूँगा, आनन्द करूँगा, विलास करूँगा।

केशव अवाक् होकर इन बातों को सुन रहे है और कह रहे हैं, "ज्ञान और भक्ति की इस प्रकार अद्‌भुत और सुन्दर व्याख्या मैंने कभी नहीं सुनी।"

केशव– (श्रीरामकृष्ण के प्रति)–आप कितने दिन इस प्रकार गुप्त रूप मे रहेगे— धीरे धीरे यहाँ पर लोगों का मेला लग जायगा।

श्रीरामकृष्ण– तुम्हारी यह कैसी बात है ! मैं खाता-पीता रहता हूँ और उनका नाम लेता हूँ। लोगों का मेला लगाना मैं नहीं जानता। हनुमानजी ने कहा था, 'मै वार, तिथि, नक्षत्र यह सब कुछ नही जानता, केवल एक राम का चिन्तन करता हूँ।'

केशव–अच्छा, मैं लोगों का मेला लगाऊंगा, परन्तु आपके यहाँ सभी को आना पड़ेगा।

श्रीरामकृष्ण–मैं सभी के चरणों की धूलि की धूलि हूं। जो दया करके आयेगे, वे आवें !

केशव–आप जो भी कहें; आपका आगमन (अवतार-ग्रहण) व्यर्थ न होगा।

(२)

ईश्वर-दर्शन का उपाय

इधर कीर्तन का आयोजन हो रहा है। अनेक भक्त जुट गये हैं। पंचवटी से कीर्तन का दल दक्षिण की ओर आ रहा है। हृदय [illegible] रा है। गोपीदास मृदंग तथा [illegible] दो

करताल वजा रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण गाना गाने लगे—

संगीत– (भावार्थ)—

"रे मन ! यदि सुख से रहना चाहता है तो हरि का नाम ले। हरिनाम के गुण से सुख से रहेगा, वैकुण्ठ मे जायगा, सदा मोक्षफल प्राप्त करेगा। जिस नाम का जप शिवजी पंचमुखों से करते हैं, आज तुझे वही हरिनाम दूंगा।"

श्रीरामकृष्ण सिंह-वल से नृत्य कर रहे हैं। अव समाधिमग्न हो गये।

समाधि-भंग होने के वाद कमरे में वैठे हैं। केशव आदि के साथ वार्तालाप कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण– सभी पथो से उन्हे प्राप्त किया जा सकता है— जैसे, तुममे से कोई गाड़ी पर, कोई नौका पर, कोई जहाज पर सवार होकर और कोई पैदल आया है— जिसकी जिसमें सुविधा और जिसकी जैसी प्रकृति है, वह उसी के अनुसार आया है। उद्देश्य एक ही है। कोई पहले आया, कोई वाद में।

"उपाधि जितनी दूर रहेगी, उतना ही वे निकट अनुभूत होंगे। ऊँचे ढेर पर वर्षा का जल नही इकट्ठा होता, नीची जमीन में होता है। इसी प्रकार जहाँ अहंकार है, वहाँ पर उनका दयारूपी जल नही जमता। उनके पास दीनभाव ही अच्छा है।

"वहुत सावधान रहना चाहिए, यहाँ तक कि वस्त्र से भी अहंकार होता है। तिल्ली के रोगी को देखा, काली किनारवाली धोती पहनी है और साथ ही निधुवावू की गजल गा रहा है !

"किसी ने वूट पहना नही कि मुँह से अंग्रेजी वोली निकलने लगी ! यदि कोई छोटा आधार हो तो गेरुआ वस्त्र पहनने से

अहंकार होता है। उसके प्रति सम्मान प्रदर्शन करने में जरासी त्रुटि होने पर उसे क्रोध, अभिमान होता है।

"व्याकुल हुए विना उनका दर्शन नही किया जा सकता। यह व्याकुलता भोग का अन्त हुए विना नही होती। जो लोग कामिनी-कांचन के वीच मे है, जिनके भोग का अन्त नहीं हुआ, उनमें व्याकुलता नही आती।

"उस देश (कामारपुकुर) में जब मै था, हृदय का चार-पाँच वर्ष का लड़का सारा दिन मेरे पास रहता था, मेरे सामने इधर-उधर खेला करता था, एक तरह से भूला रहता था। पर ज्योंही सन्ध्या होती वह कहने लगता—'माँ के पास जाऊँगा।' मैं कितना कहता—'कबूतर दूँगा' आदि आदि, अनेक तरह से समझाता, पर वह भूलता न था, रो-रोकर कहता था—'माँ के पास जाऊँगा।' खेल, खिलौना कुछ भी उसे अच्छा नहीं लगता था। मै उसकी दशा देखकर रोता था।

"यही है वालक की तरह ईश्वर के लिए रोना! यही है व्याकुलता! फिर खेल, खाना-पीना कुछ भी अच्छा नही लगता। यह व्याकुलता तथा उनके लिए रोना, भोग के क्षय होने पर होता है।"

सव लोग विस्मित होकर इन वातों को सुन रहे है।

सायंकाल हो गया है, बत्तीवाला वत्ती जलाकर चला गया। केशव आदि व्राह्म भक्तगण जलपान करके जायेगे। जलपान का आयोजन हो रहा है।

केशव— (हंसते हुए)— आज भी क्या लाई-मुरमुरा है?

श्रीरामकृष्ण— (हंसते हुए)— हृदय जानता है।

पत्तल विछाये गये। पहले लाई-मुरमुरा, उसके वाद पूड़ी और

उसके वाद तरकारी। (सभी हँसते है) सव समाप्त होते होते रात के दस वज गये।

श्रीरामकृष्ण पंचवटी के नीचे ब्राह्म भक्तो के साथ फिर वात-चीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण– (हँसते हुए, केशव के प्रति)– ईश्वर को प्राप्त करने के वाद गृहस्थी में भलीभाँति रहा जा सकता है। वूढ़ी * (ढाई) को पहले छू लो, और फिर खेल करो।

"ईश्वर-प्राप्ति के वाद भक्त निर्लिप्त हो जाता है, जैसे कीचड़ की मछली— कीचड़ के वीच मे रहकर भी उसके वदन पर कीच नहीं लगता।"

लगभग ११ वजे रात का समय हुआ, सभी जाने की तैयारी में हैं। प्रताप ने कहा, 'आज रात को यहीं पर रह जाना ठीक होगा।'

श्रीरामकृष्ण केशव से कह रहे है, 'आज यही रहो न।'

केशव— (हँसते हुए)– काम-काज है, जाना होगा।

श्रीरामकृष्ण–क्यों जी, तुम्हें क्या मछली की टोकरी की गन्ध न होने से नीद न आयगी? एक मछलीवाली रात को एक वाग-वान के घर अतिथि वनी थी। उसे फूलवाले कमरे में सुलाया गया, पर उसे नींद न आयी। वह करवटें वदल रही थी, उसे देख वागवान की स्त्री ने आकर कहा, 'क्यों री, सो क्यों नहीं रही हो?' मछलीवाली वोली, 'क्या जानूँ वहन, शायद फूलों

* वच्चो के एक खेल में एक वालक 'चोर' वनता है, जो एक खूँटी के पास रहता है और अन्य वालक इधर-उधर रहते हैं। वह 'चोर' वालक जिस वालक को छुएगा, वही 'चोर' वनेगा। लेकिन जिसने उस खूँटी को छू लिया वह फिर 'चोर' नही वन सकता। उस खूँटी को वूढ़ी कहते हैं।

की गन्ध से नींद नहीं आ रही है। क्या तुम जरा मछली की टोकरी मँगा सकती हो?'

"तव मछलीवाली मछली की टोकरी पर जल छिड़ककर उसकी गन्ध सूँघती सो गयी!" (सभी हँसे)

बिदा के समय केशव ने श्रीरामकृष्ण के चरणों मे अपने द्वारा चढ़ाये हुए पुष्पो में से एक गुच्छा लिया और भूमि पर माथा लगाकर श्रीरामकृष्ण को प्रणाम करके भक्तों के साथ कहने लगे, 'विधान की जय हो।'

केशव ब्राह्मभक्त जयगोपाल सेन की गाड़ी में बैठे। वे कलकत्ता जायेंगे।

परिच्छेद २

सुरेन्द्र के मकान पर श्रीरामकृष्ण

(१)

राम, मनोमोहन, त्रैलोक्य तथा महेन्द्र गोस्वामी आदि के साथ

आज श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ सुरेन्द्र के घर पधारे हैं। १८८१ ई., आषाढ़ महीना है। सन्ध्या होनेवाली है।

श्रीरामकृष्ण ने इसके कुछ देर पहले श्री मनोमोहन के मकान पर थोड़ी देर विश्राम किया था।

सुरेन्द्र के दूसरे मंजले के बैठकघर मे अनेक भक्तगण बैठे हुए हैं। महेन्द्र गोस्वामी, भोलानाथ पाल आदि पड़ोसी भक्तगण उपस्थित है। श्री केशव सेन आनेवाले थे, परन्तु आ न सके। ब्राह्मसमाज के श्री त्रैलोक्य सान्याल तथा अन्य कुछ ब्राह्म भक्त आये है।

बैठकघर मे दरी और चद्दर बिछायी गयी है—उस पर एक सुन्दर गलीचा तथा तकिया भी है। श्रीरामकृष्ण को ले जाकर सुरेन्द्र ने उसी गलीचे पर बैठने के लिए अनुरोध किया।

श्रीरामकृष्ण कह रहे है, "यह तुम्हारी कैसी बात है ?" ऐसा कहकर महेन्द्र गोस्वामी के पास बैठ गये।

महेन्द्र गोस्वामी– (भक्तों के प्रति)–मै इनके (श्रीरामकृष्ण के) पास कई महीनों तक प्रायः सदा ही रहता था। ऐसा महान् व्यक्ति मैने कभी नहीं देखा। इनके भाव साधारण नहीं है।

श्रीरामकृष्ण– (गोस्वामी के प्रति)–यह सब तुम्हारी कैसी बात है ? मै छोटे से छोटा, दीन से भी दीन हूं। मैं प्रभु के दासों का दास हूं। कृष्ण ही महान् है।

"जो अखण्ड सच्चिदानन्द है, वे ही श्रीकृष्ण हैं। दूर से देखने

पर समुद्र नीला दिखता है, पर पास जाओ तो कोई रंग नहीं। जो सगुण है, वे ही निर्गुण है। जिनका नित्य है, उन्हीं की लीला है।

"श्रीकृष्ण त्रिभंग क्यों है ?— राधा के प्रेम से।

"जो ब्रह्म है, वे ही काली, आद्याशक्ति है, सृष्टि-स्थिति-प्रलय कर रहे है। जो कृष्ण है, वे ही काली है।

"मूल एक है— यह सब उन्ही का खेल है, उन्हीं की लीला है।

"उनका दर्शन किया जा सकता है। शुद्ध मन, शुद्ध बुद्धि से उनका दर्शन किया जा सकता है। कामिनी-कांचन मे आसक्ति रहने से मन मैला हो जाता है।

"मन पर ही सब कुछ निर्भर है। मन धोबी के यहाँ का धुला हुआ कपड़ा जैसा है; जिस रंग में रँगवाओगे उसी रंग का हो जायगा। मन से ही ज्ञानी, और मन से ही अज्ञानी है। जब तुम कहते हो कि अमुक आदमी खराव हो गया है, तो अर्थ यही है कि उस आदमी के मन में खराब रंग आ गया है।"

सुरेन्द्र माला लेकर श्रीरामकृष्ण को पहनाने आये। पर उन्होंने माला हाथ मे ले ली, और फेककर एक ओर रख दी। इससे सुरेन्द्र के अभिमान मे धक्का लगा और उनकी आँखे डबडबा गयीं।

सुरेन्द्र पश्चिम के बरामदे में जाकर बैठे— साथ राम तथा मनोमोहन आदि हैं। सुरेन्द्र प्रेमकोप करके कह रहे है, "मुझे क्रोध हुआ है; राढ़ देश का ब्राह्मण है, इन चीजों की कद्र क्या जाने ? कई रुपये खर्च करके यह माला लायी। मै गुस्से में आकर कह बैठा, 'और सब मालाएँ दूसरों के गले में डाल दो।'

"अब समझ रहा हूँ मेरा अपराध, भगवान पैसे से खरीदे नहीं जा सकते। वे अहंकारी के नहीं हैं। मै अहंकारी हूँ, मेरी पूजा क्यों लेने लगे ? मेरी अब जीने की इच्छा नही है।"

कहते कहते आँसू की धाराएं उनके गालों और छाती पर से बहती हुई नीचे गिरने लगीं।

इधर कमरे के अन्दर त्रैलोक्य गाना गा रहे है। श्रीरामकृष्ण मतवाले होकर नृत्य कर रहे है। जिस माला को उन्होने फेंक दिया था, उसी को उठाकर गले मे पहन लिया। वे एक हाथ से माला पकड़कर तथा दूसरे हाथ से उसे हिलाते हुए गाना गा रहे हैं और नृत्य कर रहे है।

सुरेन्द्र यह देखकर कि श्रीरामकृष्ण गले मे उसी माला को पहनकर नाच रहे है, आनन्द में विभोर हो गये। मन ही मन कह रहे है, 'भगवान गर्व का हरण करनेवाले है जरूर, परन्तु (दीनों के, निर्धनों के धन भी है) !'

श्रीरामकृष्ण अव स्वयं गाने लगे,—

गाना– (भावार्थ)–

"हरिनाम लेते हुए जिनकी आँखों से आँसू वहते हैं, वे दोनों भाई आये है !—वे, जो मार खाकर प्रेम देते हैं, जो स्वयं मतवाले वनकर जगत् को मतवाला बनाते है, जो चाण्डाल तक को गोद मे ले लेते है, जो दोनों व्रज के कन्हैया-वलराम है।"

अनेक भक्त श्रीरामकृष्ण के साथ-साथ नृत्य कर रहे है।

कीर्तन समाप्त होने पर सभी वैठ गये और ईश्वर की वातें करने लगे।

श्रीरामकृष्ण सुरेन्द्र से कह रहे हैं, "मुझे कुछ खिलाओगे नहीं ?"

यह कहकर वे उठकर घर के भीतर चले गये। स्त्रियों ने आकर भूमिष्ठ हो भक्तिभाव से उन्हें प्रणाम किया।

भोजन करने के वाद थोड़ी देर विश्राम करके वे दक्षिणेश्वर लौट आये।

परिच्छेद ३

श्रीरामकृष्ण मनोमोहन के घर पर

(१)

केशव सेन, राम, सुरेन्द्र आदि के संग म

श्री मनोमोहन का घर, २३ नं. सिमुलिया स्ट्रीट, सुरेन्द्र के मकान के पास है। आज है शनिवार, ३ दिसम्बर १८८१ ई.।

श्रीरामकृष्ण दिन के लगभग चार बजे मनोमोहन के घर पधारे है। मकान छोटासा है, दुमँजला, छोटासा आँगन भी है। श्रीरामकृष्ण नीचे मंजले के बैठकघर में बैठे हैं। यह कमरा गली से लगा हुआ ही है।

भवानीपुर के ईशान मुखर्जी के साथ श्रीरामकृष्ण बातचीत कर रहे हैं।

ईशान– आपने संसार क्यों छोड़ा? शास्त्रों में तो संसार-आश्रम को श्रेष्ठ कहा गया है।

श्रीरामकृष्ण– क्या भला है और क्या वुरा, यह मैं नहीं जानता। वे जो कुछ कराते है, वही करता हूं; जो कहलाते हैं, वही कहता हूं।

ईशान– सभी लोग यदि गृहस्थी को छोड़ दें, तो ईश्वर के विरुद्ध काम करना होता है।

श्रीरामकृष्ण– सभी लोग क्यों छोड़ेगे? और क्या उनकी यही इच्छा है कि सभी लोग पशुओं की तरह कामिनी-कांचन में मुंह डुवोकर रहें? क्या और कुछ भी उनकी इच्छा नहीं है? क्या तुम सव कुछ जानते हो कि क्या उनकी इच्छा है और क्या नही?

"तुम कहते तो हो कि उनकी इच्छा है गृहस्थी करना। जव

स्त्री-पुत्र मरते हैं, उस समय भगवान की इच्छा क्यों नहीं देख पाते? जब खाने को नहीं पाते, उस समय— दारिद्रय मे— भगवान की इच्छा क्यों नहीं देख पाते?

"माया जानने नही देती कि उनकी क्या इच्छा है। उनकी माया मे अनित्य नित्य-जैसा लगता है, और फिर नित्य अनित्य-सा जान पड़ता है। संसार अनित्य है-- अभी है, अभी नही, परन्तु उनकी माया से ऐसा लगता है कि यही ठीक है। उनकी माया से 'मैं करता हूँ' ऐसा बोध होता है, और ये सब स्त्री-पुत्र, भाई-बहन, माँ-बाप, घर-बार मेरे ही है ऐसा ज्ञात होता है।

"माया में विद्या और अविद्या दोनो है। अविद्या माया भुला देती है, और विद्या-माया— ज्ञान, भक्ति, साधुसग— ईश्वर की ओर ले जाती है।

"उनकी कृपा से जो माया से परे चले गये है, उनके लिए सभी एक-से है,— विद्या, अविद्या सभी एक-जैसी है।

"गृहस्थ-आश्रम भोग का आश्रम है। और फिर कामिनी-कांचन के भोग मे रखा ही क्या है? मिठाई गले के नीचे उतर जाते ही याद नहीं रहती कि खट्टी थी या मीठी।

"परन्तु सब लोग क्यों त्याग करेंगे? समय हुए बिना क्या त्याग होता है? भोग का अन्त हो जाने पर तब त्याग का समय होता है। जबरदस्ती क्या कोई त्याग कर सकता है?

"एक प्रकार का वैराग्य है, जिसे कहते है मर्कट-वैराग्य। हीन-बुद्धिवालो को वह वैराग्य होता है। जैसे विधवा का लड़का, — माँ सूत कातकर गुजर करती है— लड़के की मामूली नौकरी थी, वह भी अब नही रही। तब वैराग्य हुआ— गेरुआ वस्त्र पहना, काशी चला गया। फिर कुछ दिनों के बाद पत्र लिख

रहा है— 'मुझे एक नौकरी मिली है। दस रुपये माहवारी वेतन है।' उसी मे से सोने की अँगूठी और धोती-कमीज खरीदने की चेष्टा कर रहा है! भोग की इच्छा जायगी कहाँ?"

(२)

उपाय—अभ्यासयोग

ब्राह्म भक्तों के साथ केशव आये है। श्रीरामकृष्ण ऑगन में बैठे हैं।

केशव ने आकर अति भक्ति-भाव से प्रणाम किया। वे श्रीरामकृष्ण की बायी ओर बैठे। दाहिनी ओर राम बैठे है।

थोड़ी देर मे भागवत-पाठ होने लगा। पाठ के बाद श्रीरामकृष्ण बातचीत कर रहे है। आँगन के चारो ओर गृहस्थ भक्तगण बैठे है।

श्रीरामकृष्ण– (भक्तो के प्रति)– ससार का काम बड़ा कठिन है। खाली गोल-गोल घूमने से सिर मे चक्कर आकर मनुष्य बेहोश हो जाता है, परन्तु खम्भा पकड़कर गोल-गोल चक्कर काटने से फिर गिरने का भय नही रहता। काम करो, परन्तु ईश्वर को न भूलो।

"यदि कहो, 'यह तो बड़ा कठिन है, फिर उपाय क्या है?'— तो उपाय है अभ्यासयोग। उस देश (कामारपुकुर) मे भड़भूजो की औरतों को देखा;— वे एक ओर तो चिउड़ा कूट रही हैं, हाथ पर मूसल गिरने का भय है, फिर दूसरी ओर बच्चे को दूध पिला रही है, और फिर खरीददार के साथ बात भी कर रही हैं; कह रही हैं, 'देखो, तुम्हारे ऊपर इतने पैसे बाकी है, सो दे जाना।'

"व्यभिचारिणी औरत गृहस्थी के सभी कामो को करती है,

परन्तु मन सदा उप-पति की ओर रहता है।

"परन्तु मन की ऐसी अवस्था होने के लिए थोड़ी साधना चाहिए, बीच-बीच मे निर्जन में जाकर भगवान को पुकारना चाहिए। भक्ति प्राप्त करके फिर कर्म किया जा सकता है। ऐसे ही यदि कटहल काटने जाओ तो हाथ मे चिपक जायगा, पर हाथ मे तेल लगाकर कटहल काटने से फिर नहीं चिपकेगा।"

अब आँगन मे कीर्तन हो रहा है। श्री त्रैलोक्य गा रहे है। श्रीरामकृष्ण आनन्द से नृत्य कर रहे है। साथ-साथ केशव आदि भक्तगण भी नाच रहे है। जाड़े का समय होने पर भी श्रीरामकृष्ण के शरीर मे पसीना झलक रहा है।

कीर्तन के वाद जव सव लोग बैठ गये तो श्रीरामकृष्ण ने कुछ खाने की इच्छा प्रकट की। भीतर से एक थाली में मिठाई आयी। केशव उस थाली को पकड़े रहे और श्रीरामकृष्ण खाने लगे। खाना होने पर केशव जलपात्र से श्रीरामकृष्ण के हाथों में पानी डालने लगे और फिर अँगौछे से उनका मुँह पोंछ दिया। उसके वाद पंखा झलने लगे।

श्रीरामकृष्ण–(केशव आदि के प्रति)–जो लोग गृहस्थी में रहकर उन्हें पुकार सकते है, वे वीर भक्त है। सिर पर बीस मन का बोझा है, फिर भी ईश्वर को पाने के लिए चेष्टा कर रहा है,—इसी का नाम है वीर भक्त।

"तुम कहोगे, यह वड़ा कठिन है। पर क्या ऐसी कोई कठिन वात है, जो भगवान की कृपा से नही होती? उनकी कृपा से असम्भव भी सम्भव हो जाता है। हजार वर्ष से अंधेरे कमरे में यदि प्रकाश लाया जाय तो क्या उजाला धीरे-धीरे होगा? कमरा एकदम आलोकित हो जायगा।"

ये सब आशाजनक बातें सुनकर केशव आदि गृहस्थ भक्तगण आनन्दित हो रहे है।

केशव– (राजेन्द्र मित्र के प्रति, हंसते हुए)–यदि आपके घर पर एक दिन ऐसा उत्सव हो तो बहुत अच्छा है।

राजेन्द्र– बहुत अच्छा, यह तो उत्तम बात है। राम, तुम पर सब भार रहा।

अब श्रीरामकृष्ण को ऊपर के कमरे में ले जाया जा रहा है। वहाँ पर वे भोजन करेंगे। मनोमोहन की माँ श्रीमती श्यामसुन्दरी ने सारी तैयारी की है। श्रीरामकृष्ण आसन पर बैठे, नाना प्रकार की मिठाई तथा उत्तमोत्तम पदार्थो को देखकर वे हंसने लगे और खाते खाते कहने लगे––"मेरे लिए इतना तैयार किया है!" एक ग्लास मे बरफ डाला हुआ जल भी पास ही था।

केशव आदि भक्तगण भी आँगन मे बैठकर खा रहे है। श्रीरामकृष्ण नीचे आकर उन्हें खिलाने लगे। उनके आनन्द के लिए पूड़ी-मिठाई का गाना गा रहे है और नाच रहे है।

अब श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर को रवाना होंगे। केशव आदि भक्तों ने उन्हें गाड़ी पर बिठा दिया और पदधूलि ग्रहण की।

परिच्छेद ४

राजेन्द्र के घर पर श्रीरामकृष्ण

(१)

राम, मनोमोहन आदि के संग में

राजेन्द्र मित्र का घर ठनठनिया मे बेचु चटर्जी की गली में है। मनोमोहन के घर पर उत्सव के दिन श्री केशव ने राजेन्द्र बाबू से कहा था, 'आपके घर पर इसी प्रकार एक दिन हो तो अच्छा है।' राजेन्द्र आनन्दित होकर उसी की तैयारी कर रहे हैं।

आज शनिवार है, १० दिसम्बर १८८१ ई.। आज उत्सव होना निश्चित हुआ है। अनेक भक्त पधारेंगे— केशव आदि ब्राह्म भक्तगण भी आयेगे।

इसी समय उमानाथ ने राजेन्द्र को ब्राह्मभक्त भाई अघोरनाथ की मृत्यु का समाचार सुनाया। अघोरनाथ ने लखनऊ शहर मे रात्रि के दो बजे शरीर-त्याग किया है, उसी रात को तार द्वारा यह समाचार आया है। (८ दिसम्बर, १८८१ ई.)। उमानाथ दूसरे ही दिन यह समाचार ले आये है। केशव आदि ब्राह्मभक्तो ने अशौच ग्रहण किया है। यह सोचकर कि शनिवार को वे कैसे आयेगे, राजेन्द्र चिन्तित हो रहे है।

राम राजेन्द्र से कह रहे है, "आप क्यों सोच रहे हैं ? केशव बाबू नही आयेगे तो न आये। श्रीरामकृष्ण तो आयेगे। आप तो जानते ही है कि वे सदा समाधिमग्न रहा करते है। उनकी कृपा से दूसरे को भी ईश्वर का दर्शन हो सकता है। उनकी उपस्थिति से यह उत्सव सफल हो जायगा।"

राम, राजेन्द्र, राजमोहन व मनोमोहन केशव से मिलने गये।

केशव ने कहा "कहाँ, मैने ऐसा तो नहीं कहा कि मै नही आऊँगा। श्रीरामकृष्णदेव आयेंगे और मै न आऊँगा ?— अवश्य आऊँगा; अशौच हुआ है तो अलग स्थान पर बैठकर खा लूँगा।"

केशव राजेन्द्र आदि भक्तों के साथ वार्तालाप कर रहे है। कमरे मे श्रीरामकृष्ण का समाधि-चित्र टँगा हुआ है।

राजेन्द्र– (केशव के प्रति)– श्रीरामकृष्णदेव को अनेक लोग चैतन्य का अवतार कहते है।

केशव– (समाधि-चित्र को देखकर)– इस प्रकार की समाधि प्रायः नही देखी जाती। ईसा मसीह, मुहम्मद, चैतन्य इनको हुआ करती थी।

दिन के तीन बजे के समय मनोमोहन के घर पर श्रीरामकृष्ण पधारे। वहाँ पर विश्राम करके थोड़ा जलपान किया। फिर सुरेन्द्र उन्हे गाड़ी पर चढ़ाकर 'बंगाल फोटोग्राफर' के स्टुडिओ मे ले गये। फोटोग्राफर ने कैसे फोटो लिया जाता है दिखा दिया। काँच के पीछे सिलवर नाइट्रेट (Silver Nitrate) लगायी जाती है, उस पर फोटो उतरता है— यह सब बतला दिया।

श्रीरामकृष्ण का फोटो लिया जा रहा है, उसी समय वे समाधि-मग्न हो गये।

अब श्रीरामकृष्ण राजेन्द्र मित्र के मकान पर आये हैं। राजेन्द्र रिटायर्ड डिप्टी मैजिस्ट्रेट है।

श्री महेन्द्र गोस्वामी आँगन में भागवत का प्रवचन कर रहे है। अनेक भक्तगण उपस्थित हैं— केशव अभी तक नहीं आये। श्रीरामकृष्ण बातचीत कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण– (भक्तों के प्रति)– गृहस्थी में धर्म होगा क्यों नहीं ? परन्तु है बड़ा कठिन। आज बागबाजार के पुल पर से

होकर आया। कितने संकलों से उसे बाँधा है! एक संकल के टूटने से भी पुल का कुछ न होगा, क्योंकि वह और भी अनेक संकलों से बंधा हुआ है। वे सब उसे खींचे रहेंगे। उसी प्रकार गृहस्थों के अनेक बन्धन हैं, ईश्वर की कृपा के विना उन बन्धनों के कटने का उपाय नही है।

"उनका दर्शन होने पर फिर कोई भय नही है। उनकी माया मे विद्या और अविद्या दोनों ही है, पर दर्शन के बाद मनुष्य निर्लिप्त हो जाता है। परमहंस-स्थिति प्राप्त होने पर यह बात ठीक तरह से समझ में आती है। दूध मे जल है, हंस दूध लेकर जल को छोड़ देता है, पर केवल हंस ही ऐसा कर सकता है, बत्तख नही।"

एक भक्त– फिर गृहस्थ के लिए क्या उपाय है?

श्रीरामकृष्ण– गुरु-वाक्य मे विश्वास। उनकी वाणी का सहारा लेकर, उनका वाक्यरूपी खम्भा पकड़कर घूमो, गृहस्थी का काम करो।

"गुरु को मनुष्य नही मानना चाहिए। सच्चिदानन्द ही गुरु के रूप मे आते है। गुरु की कृपा से इष्ट का दर्शन होता है। उस समय गुरु इष्ट में लीन हो जाते है।

"सरल विश्वास से क्या नहीं हो सकता? एक समय किसी गुरु के यहाँ अन्नप्राशन हो रहा था। उस अवसर पर शिष्यगण, जिससे जैसा बना, उत्सव का आयोजन कर रहे थे। उनमें एक दीन विधवा भी शिष्या थी। उसके एक गाय थी। वह एक लोटा दूध लेकर आयी। गुरुजी ने सोचा था कि दूध-दही का भार वही लेगी, किन्तु एक लोटा दूध देखकर क्रोधित हो उन्होंने उस लोटे को फेंक दिया और कहा, 'तू जल मे डूबकर मर क्यों

नहीं गयी ?' स्त्री ने गुरु का यही आदेश समझा और नदी में डूबने के लिए गयी। उस समय नारायण ने दर्शन दिया और प्रसन्न होकर कहा, 'इस वर्तन मे दही है, जितना निकालोगी उतना ही निकलता जायगा। इससे गुरु सन्तुष्ट होंगे।' वह वर्तन जव गुरु को दिया गया तो वे दंग रह गये और सारी कहानी सुनकर नदी के किनारे पर आकर उस स्त्री से वोले— 'यदि मुझे नारायण का दर्शन न कराओगी तो मैं इसी जल में कूदकर प्राण छोड़ दूंगा।' नारायण प्रकट हुए, परन्तु गुरु उन्हें न देख सके। तब स्त्री ने कहा, 'प्रभो, गुरुदेव को यदि दर्शन न दोगे और यदि उनकी मृत्यु हो जायगी तो मैं भी शरीर छोड़ दूंगी।' फिर नारायण ने एक वार गुरु को भी दर्शन दिया।

"देखो, गुरु-भक्ति रहने से अपने को भी दर्शन हुआ, फिर गुरुदेव को भी हुआ।

"इसलिए कहता हूं— 'यदि मेरे गुरु शरावखाने मे भी जाते हों तो भी मेरे गुरु नित्यानन्द राय है।'

"सभी गुरु वनना चाहते है। चेला बनना कदाचित् ही कोई चाहता है। परन्तु देखो, ऊंची जमीन मे वर्षा का जल नहीं जमता, वह तो नीची जमीन में— गढ़े मे ही जमता है।

"गुरु जो नाम दे, विश्वास करके उस नाम को लेकर साधन-भजन करना चाहिए।

"जिस सीप मे मुक्ता तैयार होता है, वह सीप स्वाति नक्षत्र का जल लेने के लिए तैयार रहती है। उसमें वह जल गिर जाने पर फिर एकदम अथाह जल मे डूव जाती है, और वही चुपचाप पड़ी रहती है। तभी मोती वनता है।"

(२)

संसार में किस प्रकार रहना चाहिए

अनेक ब्राह्म भक्त आये है। यह देखकर श्रीरामकृष्ण कह रहे है—"ब्राह्मसभा है या शोभा? ब्राह्मसभा मे नियमित उपासना होती है, यह वहुत अच्छा है, परन्तु डुवकी लगानी पडती है। केवल उपासना या व्याख्यान से कुछ नही होने का। ईश्वर से प्रार्थना करती पड़ती है, जिससे भोग-आसक्ति दूर होकर उनके चरण-कमलों में शुद्धा भक्ति हो।

"हाथी के दिखाने के दाँत और होते है तथा खाने के दाँत और। बाहर के दाँत शोभा के लिए हैं, परन्तु भीतर के दाँतो से वह खाता है। इसी प्रकार भीतर कामिनी-कांचन का भोग करने पर भक्ति की हानि होती है।

"वाहर भाषण आदि देने से क्या होगा? गीध बहुत उँचे पर उड़ता है, परन्तु उसकी दृष्टि रहती है सड़े हुए मुर्दों की ओर। आतशबाजी 'फुॅस' करके पहले आकाश मे उठ जाती है, परन्तु दूसरे ही क्षण जमीन पर गिर पडती है।

"भोगासक्ति का त्याग हो जाने पर देह-त्याग होते समय ईश्वर की ही स्मृति आयगी। और नही तो इस ससार की ही चीजो की याद आयगी— स्त्री, पुत्र, गृह, धन, मान, इज्जत आदि। पक्षी अभ्यास करके राधा-कृष्ण रटता तो है, परन्तु जव बिल्ली पकड़ती है तो 'टे-टे' ही करता है।

"इसीलिए सदा अभ्यास करना चाहिए— उनके नाम-गुणों का कीर्तन, उनका ध्यान, चिन्तन और प्रार्थना— जिससे भोगासक्ति छूट जाय और उनके चरणकमलों मे मन लगा रहे।

"इस प्रकार के भक्त-गृहस्थ संसार मे नौकरानी की तरह

रहते हैं। वे सब कामकाज तो करते हैं, परन्तु मन देश में पड़ा रहता है। अर्थात् मन को ईश्वर पर रखकर वे सब काम करते है। गृहस्थी करने से ही देह में कीचड़ लगती है। यथार्थ भक्त-गृहस्थ 'पाँकाल' मछली की तरह होते हैं, पंक में रहकर भी देह मे कीच नहीं लगता।

"ब्रह्म और शक्ति अभिन्न है। उन्हें माँ कहकर पुकारने से शीघ्र ही भक्ति होती है, प्रेम होता है।"

यह कहकर श्रीरामकृष्ण गाने लगे—

गाना– (भावार्थ)–

"श्यामा के चरणरूपी आकाश मे मेरा मनरूपी पतंग उड रहा था। पाप की जोरदार हवा से धक्का खाकर उल्टा होकर गिर गया। . . ."

गाना– (भावार्थ)–

"ओ माँ ! तुम्हें यशोदा नीलमणि कहकर नचाती थी। ऐं करालवदनि, उस भष को तूने कहाँ छिपा दिया है ? . . ."

श्रीरामकृष्ण उठकर नृत्य कर रहे हैं और गाना गा रहे है। भक्तगण भी उठे।

श्रीरामकृष्ण बार बार समाधिमग्न हो रहे हैं। सभी उन्हें एकदृष्टि से देख रहे है और चित्रवत् खड़े है।

डाक्टर दोकौड़ी समाधि कैसी होती है इसकी परीक्षा करने के लिए उनकी आँखो में उँगली डाल रहे हैं। यह देखकर भक्तों को विशेष क्षोभ हुआ।

इस अद्भुत संकीर्तन और नृत्य के बाद सभी ने आसन ग्रहण किया। इसी समय केशव कुछ ब्राह्म भक्तों के साथ आ उपस्थित हुए। श्रीरामकृष्ण को प्रणाम कर उन्होंने आसन ग्रहण किया।

राजेन्द्र—(केशव के प्रति)—बड़ा सुन्दर नृत्य-गीत हुआ।

ऐसा कहकर उन्होंने श्री त्रैलोक्य से फिर गाना गाने के लिए अनुरोध किया।

केशव—(राजेन्द्र के प्रति)—जब श्रीरामकृष्णदेव बैठ गये हैं, तो कीर्तन किसी भी तरह नहीं जमेगा।

गाना होने लगा। त्रैलोक्य तथा ब्राह्म भक्तगण गाना गाने लगे।

गाना—(भावार्थ)—

"मन, एक बार हरि बोलो, हरि बोलो, हरि बोलो। हरि-हरि कहकर भवसागर के पार उतर चलो। जल में, थल में, चन्द्र में, सूर्य में, आग में, वायु में, सभी में हरि का वास है। यह भूमण्डल ही हरिमय है।"

श्रीरामकृष्ण तथा भक्तों के भोजन के लिए व्यवस्था हो रही है। वे अभी भी आँगन में बैठकर केशव के साथ बातचीत कर रहे हैं। राधाबाजार में फोटोग्राफरों के यहाँ गये थे—वही सब बातें।

श्रीरामकृष्ण—(केशव के प्रति हँसते हुए)—आज मशीन से फोटो खींचना देख आया। वहाँ पर देखा कि सादे काँच पर फोटो नहीं उतरता, काँच के पीछे कालौ लगा देते हैं, तब फोटो उतरता है। इसी प्रकार कोई ईश्वर की बातें तो सुनता जा रहा है, पर इससे उसका कुछ नहीं होता, फिर उसी समय भूल जाता है। यदि भीतर प्रेम-भक्तिरूपी कालौ लगी हुई हो तो उन बातों की धारणा होती है। नहीं तो सुनता है और भूल जाता है।

अब श्रीरामकृष्ण दुमंजले पर आये। सुन्दर कालीन के आसन पर उन्हें बैठाया गया।

मनोमोहन की माँ श्यामासुन्दरी देवी परोस रही है। राम

आदि खाते समय वहाँ पर हैं। जिस कमरे में श्रीरामकृष्ण भोजन कर रहे हैं, उस कमरे के सामनेवाले बरामदे में केशव आदि भक्तगण खाने बैठे है। बेचु चटर्जी स्ट्रीट के 'श्यामसुन्दर' देवमूर्ति के सेवक श्री शैलजाचरण मुखोपाध्याय भी वहाँ पर उपस्थित है।

परिच्छेद ५

सिमुलिया ब्राह्मसमाज में श्रीरामकृष्ण

(१)

राम, केशव, नरेन्द्र आदि के संग में

आज श्रीरामकृष्ण भक्तो के साथ सिमुलिया ब्राह्मसमाज के वार्पिक महोत्सव मे पधारे हैं। ज्ञान चौधरी के मकान मे महोत्सव हो रहा है। १ जनवरी १८८२ ई., रविवार, शाम के पाँच वजे का समय।

राम, मनोमोहन, वलराम, राजमोहन, ज्ञान चौधरी, केदार, कालिदास सरकार, कालिदास मुखोपाध्याय, नरेन्द्र, राखाल आदि अनेक भक्त उपस्थित हैं।

नरेन्द्र ने, केवल थोड़े ही दिन हुए, राम आदि के साथ जाकर दक्षिणेश्वर मे श्रीरामकृष्ण का दर्शन किया है। आज भी इस उत्सव मे वे सम्मिलित हुए हैं। वे वीच-वीच में सिमुलिया ब्राह्म-समाज मे आते थे और वहाँ पर भजन-गाना और उपासना करते थे।

ब्राह्मसमाज की पद्धति के अनुसार उपासना होगी।

पहले कुछ पाठ हुआ। नरेन्द्र गा सकते हैं। उनसे गाने के लिए अनुरोध करने पर उन्होंने भी गाना गाया।

सन्ध्या हुई। इंदेश के गौरी पण्डित गेरुआ वस्त्र पहने ब्रह्मचारी के भेप मे आकर उपस्थित हुए।

गौरी– कहाँ है श्रीरामकृष्णदेव ?

थोड़ी देर वाद श्री केशव सेन ब्राह्म भक्तों के साथ आ पहुंचे और उन्होंने भूमिष्ठ होकर श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया। सभी लोग वरामदे मे वैठे है; आपस मे आनन्द कर रहे है। चारों

ओर गृहस्थ भक्तों को बैठे देखकर श्रीरामकृष्ण हँसते हुए कह रहे हैं— "गृहस्थी में धर्म होगा क्यों नहीं? पर बात क्या है जानते हो? मन अपने पास नहीं है। अपने पास मन हो तब तो ईश्वर को देगा! मन को धरोहर रखा है,— कामिनी-कांचन के पास धरोहर। इसीलिए तो सदा साधु-संग आवश्यक है।

"मन अपने पास आने पर तब साधन-भजन होगा। सदा ही गुरु का संग, गुरु की सेवा, साधु-संग आवश्यक है। या तो एकान्त मे दिन-रात उनका चिन्तन किया जाय और नहीं तो साधु-संग। मन अकेला रहने से धीरे धीरे सूख जाता है। जैसे एक बर्तन में यदि अलग जल रखो तो धीरे धीरे सूख जायगा, परन्तु गंगा के भीतर यदि उस बर्तन को डुबोकर रखो तो नहीं सूखेगा।

"लुहार की दूकान में लोहा आग में रखने से अच्छा लाल हो जाता है। अलग रख दो तो फिर काले का काला। इसलिए लोहे को बीच-बीच में आग में डालना चाहिए।

" 'मैं करनेवाला हूँ, मैं कर रहा हूँ तभी गृहस्थी चल रही है, मेरा घर, मेरा कुटुम्ब'— यह सब अज्ञान है। पर 'मैं प्रभु का दास, उनका भक्त, उनकी सन्तान हूँ'— यह बहुत अच्छा है।

" 'मैं'-पन एकदम नहीं जाता। अभी विचार करके उसे भले ही उड़ा दो, पर दूसरे क्षण वह कहीं से फिर आ जाता है। जैसे कटा हुआ बकरा— सिर कटने पर भी म्याँ-म्याँ करके हाथ-पैर हिलाता रहता है।

"उनके दर्शन के बाद वे जिस 'मैं' को रख देते है, उसे कहते है 'पक्का मै'।— जिस प्रकार तलवार पारसमणि को छूकर सोना बन गयी है। उसके द्वारा अब और हिंसा का काम नहीं होता।"

श्रीरामकृष्ण उपासना-मन्दिर में बैठकर यही सब बातें कह रहे हैं, केशव आदि भक्तगण चुपचाप सुन रहे हैं। रात के ८ बजे का समय है। तीन बार घण्टी बजी, जिससे उपासना प्रारम्भ हो।

श्रीरामकृष्ण– (केशव आदि के प्रति)– यह क्या ? तुम लोगों की उपासना नही हो रही है।

केशव– और उपासना की क्या आवश्यकता ? यही तो सब हो रहा है।

श्रीरामकृष्ण– नहीं जी, जैसी पद्धति है, उसी प्रकार हो।

केशव– क्यों, यही तो अच्छा हो रहा है।

श्रीरामकृष्ण के अनेक बार कहने पर केशव ने उठकर उपासना प्रारम्भ की।

उपासना के बीच में श्रीरामकृष्ण एकाएक खड़े होकर समाधि-मग्न हो गये। ब्राह्म भक्तगण गाना गा रहे हैं।—‘मन एक बार हरि बोलो, हरि बोलो’— आदि।

श्रीरामकृष्ण अभी भी भावमग्न होकर खड़े हैं। केशव ने बड़ी सावधानी से उनका हाथ पकड़कर उन्हें मन्दिर में से आँगन पर उतारा।

गाना चल रहा है। अब श्रीरामकृष्ण गाने के साथ नृत्य कर रहे है। चारों ओर भक्तगण भी नाच रहे हैं।

ज्ञानबाबू के दुमंजले के कमरे में श्रीरामकृष्ण तथा केशव आदि के जलपान की व्यवस्था हो रही है। वे जलपान करके फिर नीचे उतरकर बैठे। श्रीरामकृष्ण बातें करते करते फिर गाना गा रहे हैं। साथ में केशव भी गा रहे हैं।

गाना– (भावार्थ)–

“मेरा मनरूपी भ्रमर श्यामा के चरणरूपी नील-कमलों में

मग्न हो गया। कामादि कुसुमों का विषयरूपी मधु उसके सामने फीका पड़ गया।..."

"श्यामा के चरणरूपी आकाश मे मेरा मनरूपी पतंग उड़ रहा था। पाप की जोरदार हवा से धक्का खाकर उल्टा होकर गिर गया।..."

श्रीरामकृष्ण और केशव दोनो ही मतवाले बन गये। फिर सब लोग मिलकर गाना और नृत्य करने लगे। आधी रात तक यह कार्यक्रम चलता रहा।

थोड़ी देर विश्राम करके श्रीरामकृष्णदेव केशव से कह रहे हैं, "अपने लड़के के विवाह की सौगात क्यों भेजी थी? वापस मंगवा लेना। उन चीजों को लेकर मै क्या करूँगा?"

केशव मुस्करा रहे है। श्रीरामकृष्ण फिर कह रहे हैं—"मेरा नाम समाचार-पत्रों मे क्यों निकालते हो? पुस्तकों या संवादपत्रों में लिखकर किसी को बड़ा नहीं बनाया जा सकता। भगवान जिसे बड़ा बनाते है, जंगल मे रहने पर भी उसे सभी लोग जान सकते है। घने जंगल मे फूल खिला है, भौरा इसका पता लगा ही लेता है, पर दूसरी मक्खियाँ पता नहीं पातीं। मनुष्य क्या कर सकता है? उसके मुँह की ओर न ताको। मनुष्य तो एक कीड़ा है। जिस मुँह से आज अच्छा कह रहा है, उसी मुँह से कल बुरा कहेगा। मै प्रसिद्धि नही चाहता। मै तो चाहता हूँ कि दीन से दीन, हीन से हीन बनकर रहूँ।"

(ख)

परिच्छेद १

श्रीरामकृष्ण तथा नरेन्द्र (स्वामी विवेकानन्द)

(अमरीका और यूरोप में विवेकानन्द)

(१)

नरेन्द्र की श्रेष्ठता

आज रथयात्रा का दूसरा दिन है, १८८५ ई., आषाढ़ संक्रान्ति। भगवान श्रीरामकृष्ण प्रातःकाल बलराम के घर में भक्तों के साथ बैठे हुए हैं। नरेन्द्र की महानता बतला रहे है—

"नरेन्द्र आध्यात्मिकता में बहुत ऊँचा है, निराकार का घर है, उसमें पुरुष की सत्ता है। इतने भक्त आ रहे है, पर उनमें उसकी तरह एक भी नहीं।

"कभी कभी मै बैठा-बैठा हिसाब करता हूं तो देखता हूं कि पद्मों में कोई दशदल है तो कोई षोड़शदल और कोई शतदल, परन्तु नरेन्द्र सहस्रदल है।

"अन्य लोग घड़ा, लोटा ये सब हो सकते है, परन्तु नरेन्द्र एक बड़ा मटका है।

"तालाबों की तुलना में नरेन्द्र सरोवर है।

"मछलियों में नरेन्द्र लाल आँखवाला रोहित मछली है, बाकी सब छोटी-मोटी मछलियाँ हैं।

"वह बड़ा पात्र है— उसमें अनेक चीजें समा जाती है। वह बड़ा सूराखवाला बाँस है।

"नरेन्द्र किसी के वशीभूत नहीं है। वह आसक्ति, इन्द्रियसुख के वश में नही है। वह नर कबूतर है। नर कबूतर की चोंच

पकड़ने पर वह चोच को खीचकर छुड़ा लेता है। पर स्त्री कबूतर चुप होकर बैठी रहती है।"

* * *

तीन वर्ष पहले (१८८२ ई. मे) नरेन्द्र अपने एक ब्राह्म मित्र के साथ दक्षिणेश्वर मे श्रीरामकृष्ण का दर्शन करने आये थे। रात को वे वही रहे थे। सबेरा होने पर श्रीरामकृष्ण ने कहा था, "जाओ, पचवटी मे ध्यान करो।" थोड़ी देर बाद श्रीरामकृष्ण ने जाकर देखा था, वे मित्रो के साथ पंचवटी के नीचे ध्यान कर रहे है। ध्यान के बाद श्रीरामकृष्ण ने उनसे कहा था, "देखो, ईश्वर का दर्शन ही जीवन का उद्देश्य है। व्याकुल होकर एकान्त मे गुप्त रूप से उनका ध्यान-चिन्तन करना चाहिए और रो-रोकर प्रार्थना करनी चाहिए, 'प्रभो, मुझे दर्शन दो।'" ब्राह्म-समाज तथा दूसरे धर्मवालों के लोकहितकर कर्म तथा स्त्री-शिक्षा, स्कूलों की स्थापना एवं भाषण आदि के सम्बन्ध में उन्होंने कहा था, "पहले ईश्वर का दर्शन करो। निराकार साकार दोनों का ही दर्शन। जो वाणी-मन से परे है, वे ही भक्त के लिए देहधारण करके दर्शन देते है और बात करते है। दर्शन के बाद, उनका निर्देश लेकर लोकहितकर कार्य करने चाहिए। एक गाने में है— 'मन्दिर में देवता की स्थापना तो हुई नहीं, और पोदो (बुद्धू) केवल शंख बजा रहा है, मानो आरती हो रही हो। इसलिए कोई कोई उसे धिक्कारते हुए कह रहे है— अरे पोदो, तेरे मन्दिर मे माधव तो है नही और तूने खाली शंख बजा-बजाकर इतना ढोंग रच रखा है! उसमे तो ग्यारह चमगीदड़ रात-दिन निवास करते हैं।'

"यदि हृदयरूपी मन्दिर मे माधव की स्थापना करना चाहते

हो, यदि भगवान को प्राप्त करना चाहते हो तो केवल भों-भों करके शंख बजाने से क्या होगा ? पहले चित्त को शुद्ध करो। मन शुद्ध होने पर भगवान पवित्र आसन पर आकर बैठेंगे। चमगीदड़ की विष्ठा रहने पर माधव को लाया नही जा सकता। ग्यारह चमगीदड़ अर्थात् ग्यारह इन्द्रियाँ।

"पहले डुवकी लगाओ। डूवकर रत्न उठाओ, उसके वाद दूसरा काम। पहले माधव की स्थापना करो, उसके वाद चाहो तो व्याख्यान देना।

"कोई डुवकी लगाना नही चाहता। साधन नहीं, भजन नहीं, विवेक-वैराग्य नही, दो-चार बातें सीख ली, बस लगे 'लेक्चर' देने !

"लोगों को सिखाना कठिन काम है। भगवान के दर्शन के वाद यदि किसी को उनका आदेश प्राप्त हो, तो वह लोक-शिक्षा दे सकता है।"

* * *

१८८४ ई. की रथयात्रा के दिन कलकत्ते मे श्रीरामकृष्णदेव के साथ पण्डित शशधर का साक्षात्कार हुआ। नरेन्द्र वहाँ पर उपस्थित थे। श्रीरामकृष्ण ने पण्डितजी से कहा, "तुम जनता के कल्याण के लिए भाषण दे रहे हो, सो भली वात है। परन्तु भाई, भगवान के निर्देश के बिना लोकशिक्षा नहीं होती। होगा यह कि लोग दो दिन तुम्हारा भापण सुनेगे, उसके वाद भूल जायेगे। हलदारपुकुर के किनारे पर लोग शौच को जाते थे। लोग गाली-गलौज करते थे, परन्तु कुछ परिणाम न हुआ। अन्त मे सरकार ने जव एक नोटिस लगा दिया, तव कही लोगों का वहाँ पर शौच जाना वन्द हुआ। इसी प्रकार ईश्वर का आदेश पाये विना लोक-शिक्षा नही होती।"

इसलिए नरेन्द्र ने गुरुदेव की बात को मानकर संसार छोड़ दिया था और एकान्त मे गुप्त रूप से बहुत तपस्या की थी। उसके बाद उन्ही की शक्ति से शक्तिशाली बनकर, इस लोक-शिक्षा के व्रत को ग्रहण कर उन्होंने कठिन प्रचार-कार्य प्रारम्भ किया था।

काशीपुर में जिस समय (१८८६ ई.) श्रीरामकृष्ण रुग्ण थे, उस समय उन्होने एक कागज पर लिखा था, "नरेन्द्र शिक्षा देगा।"

स्वामी विवेकानन्द ने अमरीका से मद्रास-निवासियों को जो पत्र लिखा था, उनमे उन्होंने लिखा था कि वे श्रीरामकृष्ण के दास है, उन्हीं के दूत बनकर वे उनकी मंगल-वार्ता समग्र जगत् को सुना रहे है—

"... जिनका सन्देश, भारत तथा समस्त संसार को पहुँचाने का सम्मान मुझ जैसे उनके अत्यन्त तुच्छ और अयोग्य सेवक को मिला है, उनके प्रति आपका आदरभाव सचमुच अपूर्व है। यह आपकी जन्मजात धार्मिक प्रवृत्ति है, जिसके कारण आप उनमें और उनके सन्देश मे आध्यात्मिकता के उस प्रबल तरंग की प्रथम हलचल का अनुभव कर रहे है, जो निकट भविष्य मे सारे भारतवर्ष पर अपनी सम्पूर्ण अबाध्य शक्ति के साथ अवश्यमेव आघात करेगा। ..."

— 'हिन्दू धर्म के पक्ष में' से उद्धृत

मद्रास मे दिये गये तीसरे व्याख्यान मे उन्होने कहा था,—

"... इस समय केवल इतना ही कहना चाहता हूँ कि यदि मैने जीवन भर में एक भी सत्य वाक्य कहा है तो वह उन्हीं का (श्रीरामकृष्ण का) वाक्य है; पर यदि मैंने ऐसे वाक्य कहे है जो

असत्य, भ्रमपूर्ण अथवा मानवजाति के लिए हितकारी न हों, तो वे सब मेरे ही वाक्य है, उनके लिए पूरा उत्तरदायी मैं ही हूँ।"

—'भारत में विवेकानन्द' से उद्धृत

कलकत्ते में स्वर्गीय राधाकान्त देव के मकान पर जब उनकी अभ्यर्थना हुई, उस समय भी उन्होंने कहा था कि 'श्रीरामकृष्णदेव की शक्ति आज पृथ्वी भर में व्याप्त है। हे भारतवासियो, तुम लोग उनका चिन्तन करो, तभी सब विषयों में उन्नति करोगे।' उन्होने कहा——

"...यदि यह जाति उठना चाहती है, तो मै निश्चयपूर्वक कहूँगा, इस नाम से सभी को प्रेमोन्मत्त हो जाना चाहिए। श्रीरामकृष्णदेव का प्रचार हम, तुम या चाहे जो कोई करे, इससे कुछ होना जाना नहीं; तुम्हारे सामने मैं इस महान् आदर्श-पुरुष को रखता हूँ, लो, अब विचार का भार तुम पर है। इस महान् आदर्श-पुरुष को लेकर क्या करोगे, इसका निश्चय तुम्हें अपनी जाति के कल्याण के लिए अभी कर डालना चाहिए।..."

* * *

"...उनके तिरोभाव के दस वर्ष के भीतर ही इस शक्ति ने सम्पूर्ण संसार घेर लिया है...। मुझे देखकर उनका विचार न करना। मै एक बहुत ही क्षुद्र यन्त्र मात्र हूँ। उनके चरित का विचार मुझे देखकर न करना। वे इतने बड़े थे कि मै, या उनके शिष्यों में से कोई दूसरा, सैकड़ों जीवनों तक चेष्टा करते रहने पर भी उनके यथार्थ स्वरूप के एक करोड़वें अंश के बराबर भी न हो सकेगा।..."

—'भारत में विवेकानन्द' से उद्धृत

गुरुदेव की बात कहते कहते स्वामी विवेकानन्द एकदम पागल-से

हो जाया करते थे। धन्य है वह गुरुभक्ति !

(२)

नरेन्द्र द्वारा श्रीरामकृष्ण का प्रचारकार्य

श्रीरामकृष्णदेव के उस सार्वभौमिक सनातन हिन्दू धर्म का स्वामीजी ने किस प्रकार प्रचार करने की चेष्टा की थी, उसकी यहाँ पर हम थोड़ीसी चर्चा करेंगे।

ईश्वर-दर्शन

श्रीरामकृष्ण की पहली बात यह है कि ईश्वर का दर्शन करना होगा। कुछ मन्त्र या श्लोकों को कण्ठस्थ कर लेने का ही नाम धर्म नही है। भक्त यदि व्याकुल होकर उन्हे पुकारे, तभी ईश्वर-दर्शन होता है। चाहे इस जन्म मे हो या अगले जन्म मे। उनके एक दिन के वार्तालाप की हमे याद आ रही है। दक्षिणेश्वर के कालीमन्दिर मे वार्तालाप हो रहा था। रविवार, २६ अक्टूबर १८८४ ई.।

श्रीरामकृष्णदेव काशीपुर के महिमाचरण चक्रवर्ती तथा अन्य भक्तो से कह रहे थे— "शास्त्र कितने पढ़ोगे ? केवल विचार करने से क्या होगा ? पहले उन्हे प्राप्त करने की चेष्टा करो। पुस्तकें पढ़कर क्या जानोगे ? जब तक बाजार मे नही पहुंचते तब तक दूर से केवल हो-हो शब्द सुनायी देता है। बाजार के पास पहुंचने पर कुछ दूसरा शब्द सुनायी पड़ेगा, और अन्त मे बाजार के भीतर पहुँचकर साफ साफ देख सकोगे, सुन सकोगे 'आलू लो, पैसा दो।'

"खाली पुस्तके पढ़कर ठीक अनुभव नहीं होता। पढ़ने तथा अनुभव करने मे बहुत अन्तर है। ईश्वर-दर्शन के बाद शास्त्र, विज्ञान आदि सब कूड़ा-कर्कट जैसे लगते है।

"वड़े वावू के साथ परिचय आवश्यक है। उनके कितने मकान, कितने वगीचे, कितने कम्पनी के कागज हैं—यह सब पहले से ही जानने के लिए इतने व्यग्र क्यों हो? चाहे धक्का खाकर या दीवाल फाँदकर ही सही, किसी न किसी तरह वड़े मालिक के साथ एक वार परिचय तो कर लो, तव यदि इच्छा होगी, तो वे ही कह देंगे कि उनके कितने मकान है, कितने वगीचे है, कम्पनी के कितने कागज है। मालिक के साथ परिचय होने पर फिर नौकर-चाकर, द्वारपाल सभी लोग सलाम करेंगे।" (सभी हँसे)

एक भक्त—वड़े मालिक के साथ परिचय कैसे होता है?

श्रीरामकृष्ण—उसके लिए कर्म चाहिए—साधना चाहिए। 'ईश्वर है' इतना कहकर वैठे रहने से काम न चलेगा। उनके पास जाना होगा। निर्जन मे उन्हें पुकारो, यह कहकर प्रार्थना करो, 'हे प्रभो! दर्शन दो।' व्याकुल होकर रोओ। कामिनी-कांचन के लिए जव पागल होकर घूम सकते हो तो उनके लिए भी जरा पागल वनो। लोगों को कहने दो कि अमुक ईश्वर के लिए पागल हो गया। कुछ दिन सव कुछ छोड़कर उन्हें अकेले मे पुकारो। केवल 'वे है' यह कहकर वैठे रहने से क्या होगा? हालदारपुकुर मे वड़ी-वड़ी मछलियाँ है। तालाव के किनारे पर केवल वैठे रहने से ही क्या मिल सकती है? खुराक डालो। धीरे धीरे गहरे जल से मछलियाँ आयेगी और जल हिलेगा। उस समय आनन्द आयगा। सम्भव है, मछली का कुछ अंश एक वार दिखायी भी दे और मछली को छलाँग मारते हुए भी देखो। जव उसको प्रत्यक्ष देखा तो और भी आनन्द!

ठीक यही वात स्वामीजी ने शिकागो-धर्मसभा के सम्मुख कही है (अर्थात् धर्म का उद्देश्य है ईश्वर को प्राप्त करना, उनका

दर्शन करना)——

"हिन्दू शब्दों और सिद्धान्तों के जाल मे समय बिताना नहीं चाहता।... वह ईश्वर का साक्षात्कार कर लेना चाहता है; कारण, ईश्वर के केवल प्रत्यक्ष दर्शन से ही समस्त शंकाएँ दूर हो सकती है। अतः हिन्दू ऋषि आत्मा के विषय मे, ईश्वर के विषय मे यही सर्वोत्तम प्रमाण देते है कि 'मैने आत्मा का दर्शन किया है, मैने ईश्वर का दर्शन किया है।'... हिन्दुओ की सारी साधना-प्रणाली का लक्ष्य केवल एक ही है और वह है सतत अध्यवसाय द्वारा पूर्ण बन जाना, देवता बन जाना, ईश्वर के निकट पहुँचकर उनका दर्शन करना। और इस प्रकार ईश्वर-सान्निध्य को प्राप्त कर उनका दर्शन कर लेना, उन्हीं 'स्वर्गस्थ पिता' के समान पूर्ण हो जाना——यही असल में हिन्दू धर्म है।"

——'हिन्दू धर्म' से उद्धृत

अमरीका के अनेक स्थानों में स्वामीजी ने भाषण दिया और सभी स्थानो में उन्होंने यही एक बात कही। हार्टफोर्ड (Hartford) नामक स्थान में उन्होंने कहा था——

"... जो दूसरी बात मैं तुम्हें बतलाना चाहता हूँ, वह यह है कि धर्म केवल सिद्धान्तों या मतवादों मे नहीं है।... सभी धर्मो का चरम लक्ष्य है——आत्मा मे परमात्मा की अनुभूति। यही एक सार्वभौमिक धर्म है। समस्त धर्मो मे यदि कोई सार्वभौमिक सत्य है तो वह है ईश्वर का प्रत्यक्ष दर्शन करना। परमात्मा और उनकी प्राप्ति के साधनों के सम्बन्ध मे विभिन्न धर्मो की धारणाएँ भिन्न भिन्न भले ही हों, पर उन सब मे वही एक केन्द्रीय भाव है। सहस्र विभिन्न त्रिज्याएँ भले ही हों, पर वे सब एक ही केन्द्र मे मिलती है, और यह केन्द्र है ईश्वर का

साक्षात्कार——इस इन्द्रियग्राह्य जगत् के पीछे, इस निरन्तर खाने-पीने और थोथी वकवास के पीछे, इन उड़ते छायास्वप्नों और स्वार्थ से भरे इस संसार के पीछे वर्तमान किसी सत्ता की अनुभूति। समस्त ग्रन्थो और धर्ममतो के अतीत, इस जगत् की असारता से परे वह विद्यमान है, जिसकी अपने भीतर ईश्वर के रूप मे प्रत्यक्ष-अनुभूति होती है। कोई व्यक्ति ससार के समस्त गिर्जाघरो में आस्था भले ही रखता हो, अपने सिर में समस्त धर्मग्रन्थों का वोझा लिये भले ही घूमता हो, इस पृथ्वी की समस्त नदियों में उसने भले ही वप्तिस्मा लिया हो, फिर भी यदि उसे ईश्वर-दर्शन न हुआ हो तो मै उसे घोर नास्तिक ही मानूंगा।..."

स्वामीजी ने अपने राजयोग नामक ग्रन्थ में लिखा है——

"...सभी धर्माचार्यों ने ईश्वर को देखा था। उन सभी ने आत्मदर्शन किया था; अपने अनन्त स्वरूप का सभी को ज्ञान हुआ था, अपनी भविष्य अवस्था देखी थी, और जो कुछ उन्होंने देखा था, उसी का वे प्रचार कर गये हैं। भेद इतना ही है कि प्रायः सभी धर्मो में, विशेपतः आजकल के, एक अद्भुत दावा हमारे सामने उपस्थित होता है; वह यह है कि इस समय ये अनुभूतियाँ असम्भव हैं; जो धर्म के प्रथम सस्थापक है, वाद को जिनके नाम से उस धर्म का प्रवर्तन और प्रचलन हुआ है, केवल उन थोड़े आदमियो को ही ऐसा प्रत्यक्षानुभव सम्भव हुआ था; अव ऐसे अनुभव के लिए रास्ता नही रहा, फलतः अव धर्मो पर केवल विश्वास भर कर लेना होगा। मै इसको पूरी शक्ति से अस्वीकृत करता हूं। यदि संसार मे किसी प्रकार के विज्ञान के किसी विपय की किसी ने कभी प्रत्यक्ष उपलब्धि की है, तो इससे इस सार्वभौमिक सिद्धान्त पर पहुंचा जा सकता

है कि पहले भी कोटि-कोटि बार उसकी उपलब्धि की सम्भावना थी, बाद को भी अनन्त काल तक उसकी उपलब्धि की सम्भावना रहेगी। समवर्तन ही प्रकृति का वली नियम है। एक बार जो घटित हुआ है, वह फिर घटित हो सकता है।..."

—'राजयोग' से उद्धृत

स्वामीजी ने न्यूयार्क में ९ जनवरी १८९६ ई. को 'सार्वभौमिक धर्म का आदर्श' (Ideal of a Universal Religion') नामक विषय पर एक भाषण दिया था— अर्थात् जिस धर्म मे ज्ञानी, भक्त, योगी या कर्मी सभी सम्मिलित हो सकते हैं। भाषण समाप्त करते समय उन्होंने कहा कि ईश्वर का दर्शन ही सब धर्मो का उद्देश्य है,— ज्ञान, कर्म भक्ति ये सब विभिन्न पथ तथा उपाय है, परन्तु गन्तव्य स्थान एक ही है और वह है ईश्वर का साक्षात्कार। स्वामीजी ने कहा—

"... इन सब विभिन्न योगों को हमे कार्य में परिणत करना ही होगा; केवल उनके सम्बन्ध मे जल्पना-कल्पना करने से कुछ न होगा। 'श्रोतव्यो मन्तव्यो निदिध्यासितव्य:।' पहले उनके सम्बन्ध मे सुनना पड़ेगा— फिर श्रुत विषयों पर चिन्ता करनी होगी...। इसके बाद उनका ध्यान और उपलब्धि करनी पड़ेगी— जब तक कि हमारा समस्त जीवन तद्भाव भावित न हो उठे। तब धर्म हमारे लिए केवल कतिपय धारणा, मतवादसमष्टि अथवा कल्पना रूप ही नहीं रहेगा। भ्रमात्मक ख्याल से आज हम अनेक मूर्खताओ को सत्य समझकर ग्रहण करके कल ही शायद सम्पूर्ण मत परिवर्तन कर सकते है, पर यथार्थ धर्म कभी परिवर्तित नही होता। धर्म अनुभूति की वस्तु है— वह मुख की बात, मतवाद अथवा युक्तिमूलक कल्पना मात्र नहीं है— चाहे

वह जितना ही सुन्दर हो; वह केवल सुनने या मान लेने की चीज नही है। आत्मा की ब्रह्मस्वरूपता को जान लेना, तद्रूप हो जाना, उसका साक्षात्कार करना—— यही धर्म है।. . .”

—‘धर्मरहस्य’ से उद्धृत

मद्रासियों के पास उन्होने जो पत्र लिखा था, उसमे भी वही बात थी,—— हिन्दू धर्म की विशेषता है ईश्वर-दर्शन,—— वेद का मुख्य उद्देश्य है ईश्वर दर्शन——

“. . . हिन्दू धर्म मे एक भाव संसार के अन्य धर्मों की अपेक्षा विशेष है। उसके प्रकट करने मे ऋषियों ने संस्कृत भाषा के प्राय: समग्र शब्द-समूह को नि:शेष कर डाला है। वह भाव यह है कि मनुष्य को इसी जीवन मे ईश्वर की प्राप्ति करनी होगी ...। इस प्रकार, द्वैतवादियों के मतानुसार ब्रह्म की उपलब्धि करना, ईश्वर का साक्षात्कार करना, या अद्वैतवादियों के कहने के अनुसार ब्रह्म हो जाना—— यही वेदो के समस्त उपदेशो का एकमात्र लक्ष्य है . . .”

—‘हिन्दू धर्म के पक्ष में’ से उद्धृत

स्वामीजी ने २९ अक्टूबर, सन् १८९६ में लन्दन में भाषण दिया था, विपय था—— ईश्वर-दर्शन (Realisation)। इस भापण मे उन्होने कठोपनिषद् का उल्लेख कर नचिकेता की कथा सुनायी थी। नचिकेता ईश्वर का दर्शन करना चाहते थे। धर्मराज यम ने कहा, “भाई, यदि ईश्वर को जानना चाहते हो, देखना चाहते हो, तो भोगासक्ति को त्यागना होगा। भोग रहते योग नही होता, अवस्तु से प्रेम करने पर वस्तु की प्राप्ति नहीं होती।” स्वामीजी ने कहा था——

“. . . हम सभी नास्तिक है, परन्तु जो व्यक्ति उसे स्पष्ट

स्वीकार करता है, उससे हम विवाद करने को प्रस्तुत होते है। हम लोग सभी अन्धकार मे पड़े हुए है। धर्म हम लोगों के समीप मानो कुछ नही है, केवल विचारलब्ध कुछ मतों का अनुमोदन मात्र है, केवल मुँह की बात है-- अमुक व्यक्ति खूब अच्छी तरह से बोल सकता है, अमुक व्यक्ति नही बोल सकता . .। आत्मा की जब यह प्रत्यक्षानुभूति आरम्भ होगी, तभी धर्म आरम्भ होगा। उसी समय तुम धार्मिक होगे . . .। उसी समय प्रकृत विश्वास का— आस्तिकता का-- उदय होगा। . . ."

— 'ज्ञानयोग' से उद्धृत

(३)

श्रीरामकृष्ण, नरेन्द्र और सर्वधर्मसमन्वय

नरेन्द्र तथा अन्य बुद्धिमान युवकगण श्रीरामकृष्णदेव की सभी धर्मो पर श्रद्धा और प्रेम को देख वड़े प्रसन्न तथा आश्चर्यचकित हुए थे। 'सभी धर्मो मे सत्य है'-- यह बात श्रीरामकृष्णदेव मुक्त कण्ठ से कहते थे, और वे यह भी कहा करते थे कि सभी धर्म सत्य है-- अर्थात् प्रत्येक धर्म के द्वारा ईश्वर के निकट पहुँचा जा सकता है। एक दिन २७ अक्टूबर १८८२ ई. को कार्तिकी पूर्णिमा की कोजागरी लक्ष्मीपूजा के दिन केशवचन्द्र सेन स्टीमर लेकर दक्षिणेश्वर में श्रीरामकृष्ण को देखने गये थे और उन्हें स्टीमर मे लेकर कलकत्ता लौटे थे। रास्ते में स्टीमर पर अनेक विषयों पर चर्चा हुई थी। ठीक ये ही बातें १३ अगस्त को (अर्थात् कुछ मास पूर्व) भी हुई थी। सर्वधर्मसमन्वय की ये बातें हम अपनी डायरी से उद्धृत करते है।--

१३ अगस्त १८८६। आज श्री केदारनाथ चटर्जी ने दक्षिणेश्वर कालीमन्दिर मे महोत्सव किया है। उत्सव के बाद, दिन के

३-४ वजे के समय दक्षिणवाले दालान में वे श्रीरामकृष्ण के साथ वार्तालाप कर रहे है ।

श्रीरामकृष्ण– (भक्तों के प्रति)– जितने मत उतने पथ । सभी धर्म सत्य है–– जिस प्रकार कालीघाट में अनेक पथों से जाया जाता है। धर्म ही ईश्वर नहीं है। भिन्न भिन्न धर्मो का सहारा लेकर ईश्वर के पास जाया जाता है ।

"नदियाँ भिन्न भिन्न दिशाओ से आती हैं, परन्तु सभी समुद्र मे जा गिरती है। वहाँ पर सभी एक है।

"छत पर अनेक उपायो से जाया जा सकता है। पक्की सीढी, लकड़ी की सीढ़ी, टेढ़ी सीढी और केवल एक रस्सी के सहारे भी जाया जा सकता है। परन्तु जाते समय एक ही उपाय का सहारा लेकर जाना पड़ता है—दो-तीन अलग अलग सीढियों पर पैर रखने से ऊपर नही जा सकते। लेकिन छत पर पहुंच जाने के बाद सभी प्रकार की सीढियो के सहारे उतर-चढ़ सकते हैं ।

"इसीलिए पहले एक धर्म का सहारा लेना पड़ता है । ईश्वर की प्राप्ति होने पर वही व्यक्ति सभी धर्म-पथों से आना-जाना कर सकता है । जब हिन्दुओ के वीच मे रहता है तव लोग उसे हिन्दू मानते है; जव मुसलमानो के साथ रहता है तो लोग मुसलमान मानते है और फिर जव ईसाइयों के साथ रहता है, तो सभी लोग समझते है कि शायद वे ईसाई है।

"सभी धर्मो के लोग एक ही को पुकार रहे हैं । कोई कहता है ईश्वर, कोई राम, कोई हरि, कोई अल्लाह, कोई ब्रह्म–– नाम अलग अलग है, परन्तु वस्तु एक ही है ।

"एक तालाव मे चार घाट है । एक घाट मे हिन्दू जल पी रहे है, वे कह रहे है 'जल'; दूसरे घाट मे मुसलमान, कह रहे है

'पानी'; तीसरे घाट में ईसाई, कह रहे है 'वाटर' (Water); चौथे घाट में कुछ आदमी कह रहे हैं 'अकुआ' (Aqua)। (सभी हँसे) अतएव वस्तु एक ही है—जल; पर नाम अलग अलग हैं। सभी एक ईश्वर को पुकार रहे हैं झगड़ा करने का क्या काम ? सभी एक ईश्वर को पुकार रहे हैं और सभी उन्हीं के पास जायेंगे।"

एक भक्त—(श्रीरामकृष्ण के प्रति)—यदि दूसरे धर्म मे गलत बातें हों तो ?

श्रीरामकृष्ण—गलत बातें भला किस धर्म में नहीं हैं ? सभी कहते है, 'मेरी घड़ी सही चल रही है,' परन्तु कोई भी घड़ी विलकुल सही नहीं चलती। सभी घड़ियों को बीच बीच में सूर्य के साथ मिलाना पड़ता है।

"गलत बातें किस धर्म में नहीं हैं ? और यदि गलत बातें रहीं भी, परन्तु यदि आन्तरिकता हो, यदि व्याकुल होकर उन्हें पुकारो तो वे अवश्य ही सुनेंगे।

"मान लो, एक बाप के कई लड़के है—कोई छोटे, कोई बड़े। सब उन्हें 'पिताजी' कहकर पुकार नहीं सकते। कोई कहता है, 'पिताजी', कोई छोटा बच्चा सिर्फ 'पि' और कोई केवल 'ता' ही कहता है। जो बच्चे 'पिताजी' नहीं कह सकते क्या पिता उन पर नाराज होगा ? (सभी हँसे) नहीं, पिता सभी को एक-जैसा प्यार करेगा।*

"लोग समझते हैं, 'मेरा ही धर्म ठीक है; ईश्वर क्या चीज है, मैंने ही समझा है, दूसरे लोग नहीं समझ सके। मैं ही उन्हें ठीक

* ठीक यही बात एक अंग्रेजी ग्रन्थ में है— Maxmuller's Hibbert Lectures. मैक्समूलर ने भी यही उपमा देकर समझाया है कि जो लोग देव-देवियों की पूजा करते हैं, उनसे घृणा करना ठीक नहीं।

पुकार रहा हूं, दूसरे लोग ठीक पुकार नहीं सकते। अतः ईश्वर मुझ पर ही कृपा करते है, उन पर नहीं करते।' ये सब लोग नहीं जानते कि ईश्वर सभी के पिता-माता हैं, आन्तरिक प्रेम होने पर वे सभी पर कृपा करते हैं।"

प्रेम का धर्म कितना अद्‌भुत है! यह बात तो उन्होंने बार बार कही, परन्तु कितने लोग समझ सके? श्री केशव सेन थोड़ासा समझ सके थे। और स्वामी विवेकानन्द ने तो दुनिया के सामने इसी प्रेम-धर्म का प्रचार अग्निमन्त्र से दीक्षित होकर किया है। श्रीरामकृष्णदेव ने तआस्सुबी बुद्धि रखने का बार बार निषेध किया था। 'मेरा धर्म सत्य है और तुम्हारा धर्म झूठा' इसी का नाम है तआस्सुबी बुद्धि—यह बड़े अनर्थ की जड़ है। स्वामीजी ने इसी अनर्थ की बात शिकागो-धर्मसभा के सामने कही थी। उन्होंने कहा—ईसाई, मुसलमान आदि अनेकों ने धर्म के नाम पर मार-काट मचायी है।

"...साम्प्रदायिकता, संकीर्णता और इनसे उत्पन्न भयंकर धर्मविषयक उन्मत्तता इस सुन्दर पृथ्वी पर बहुत समय तक राज्य कर चुके हैं। इनके घोर अत्याचार से पृथ्वी भर गयी है; इन्होंने अनेक बार मानव-रक्त से धरणी को सींचा, सभ्यता नष्ट कर डाली तथा समस्त जातियों को हताश कर डाला।..."

—'शिकागो वक्तृता' से उद्‌धृत

स्वामीजी ने एक दूसरे भाषण में विज्ञान-शास्त्र से प्रमाण देकर समझाने की चेष्टा की कि सभी धर्म सत्य हैं—

"...यदि कोई महाशय यह आशा करें कि यह एकता इन धर्मों मे से किसी एक की विजय और बाकी अन्य सब के नाश से स्थापित होगी, तो उनसे मैं कहता हूं कि 'भाई, तुम्हारी यह

आशा असम्भव है।' क्या मैं चाहता हूँ कि ईसाई लोग हिन्दू हो जायँ ?—कदापि नहीं; ईश्वर ऐसा न करे! क्या मेरी यह इच्छा है कि हिन्दू या बौद्ध लोग ईसाई हो जायँ ? ईश्वर इस इच्छा से बचावे! बीज भूमि मे बो दिया गया है और मिट्टी, वायु तथा जल उसके चारों ओर रख दिये गये है। तो क्या वह बीज मिट्टी हो जाता है अथवा वायु या जल बन जाता है ? नहीं, वह तो वृक्ष ही होता है। वह अपने नियम से ही बढ़ता है और वायु, जल तथा मिट्टी को आत्मसात् कर, इन उपादानों से शाखा-प्रशाखाओं की वृद्धि कर एक बड़ा वृक्ष हो जाता है।

"यही अवस्था धर्म के सम्बन्ध में भी है। न तो ईसाई को हिन्दू या बौद्ध होना पड़ेगा, और न हिन्दू अथवा बौद्ध को ईसाई ही। पर हाँ, प्रत्येक मत के लिए यह आवश्यक है कि वह अन्य मतो को आत्मसात् करके पुष्टि लाभ करे, और साथ ही अपने वैशिष्ट्य की रक्षा करता हुआ अपनी प्रकृति के अनुसार वृद्धि को प्राप्त हो। . . ."

—'शिकागो वक्तृता' से उद्धृत

अमरीका में स्वामीजी ने ब्रूक्लीन एथिकल सोसाइटी (Brooklyn Ethical Society) के सामने हिन्दू धर्म के सम्बन्ध मे एक भाषण दिया था। प्रोफेसर डॉ. लीवि जेन्स (Dr. Lewis Janes) ने सभापति का आसन ग्रहण किया था। वहाँ पर भी वही बात थी,—सर्वधर्मसमन्वय की। स्वामीजी ने कहा,

". . . सत्य सदा सार्वभौमिक रहा है। यदि केवल मेरे ही हाथ मे छ. उँगलियाँ हों और तुम सब के हाथ मे पाँच, तो तुम यह न सोचोगे कि मेरा हाथ प्रकृति का सच्चा अभिप्राय है, प्रत्युत यह समझोगे कि वह अस्वाभाविक और एक रोगविशेष है। उसी

प्रकार धर्म के सम्बन्ध में भी है। यदि केवल एक ही धर्म सत्य होवे और बाकी सब असत्य, तो तुम्हें यह कहने का अधिकार है कि वह एक धर्म कोई रोगविशेष है; यदि एक धर्म सत्य है तो अन्य सभी धर्म सत्य होंगे ही। अतएव हिन्दू धर्म तुम्हारा उतना ही है जितना कि मेरा।..."

स्वामीजी ने शिकागो-धर्ममहासभा के सम्मुख जिस दिन पहले-पहल भाषण दिया, उस भाषण को सुनकर लगभग छः हजार व्यक्तियों ने मुग्ध होकर अपना-अपना आसन छोड़कर मुक्त कण्ठ से उनकी अभ्यर्थना की थी। * उस भाषण में भी इसी समन्वय का सन्देश था। स्वामीजी ने कहा था—

"...मुझको ऐसे धर्म का अवलम्बी होने का गौरव है, जिसने संसार को न केवल 'सहिष्णुता' की शिक्षा दी, बल्कि 'सब धर्मों को मानने' का पाठ भी सिखाया। हम केवल 'सब के प्रति सहिष्णुता' में ही विश्वास नहीं करते, वरन् यह भी दृढ विश्वास करते है कि सब धर्म सत्य हैं। मै अभिमानपूर्वक आप लोगों से निवेदन करता हूं कि मै ऐसे धर्म का अनुयायी हूं, जिसकी पवित्र भाषा संस्कृत में अंग्रेजी शब्द Exclusion का कोई पर्यायवाची

---

* "When Vivekanand adderessed the audience as 'Sisters and Brothers of America,' there arose a peal of applause that lasted for several minutes"—Dr. Barrow's Report. "But eloquent as were many of the brief speeches, no one expressed so well the spirit of the Parliament of Religions and its limitations as the Hindu monk....He is an orator by divine right."

—*New York Critique, 1893.*

शब्द है ही नही।..."

—'शिकागो वक्तृता' से उद्धृत

(४)

श्रीरामकृष्ण, नरेन्द्र, कर्मयोग और स्वदेश-प्रेम

श्रीरामकृष्णदेव सदैव कहा करते थे, 'मैं और मेरा' यही अज्ञान है, 'तुम और तुम्हारा' यही ज्ञान है। एक दिन सुरेश मित्र के बगीचे में महोत्सव हो रहा था। रविवार, १५ जून, १८८४ ई.। श्रीरामकृष्णदेव तथा अनेक भक्त उपस्थित थे। ब्राह्मसमाज के कुछ भक्त भी आये थे। श्रीरामकृष्णदेव ने प्रताप मजूमदार तथा अन्य भक्तों से कहा, "देखो, 'मैं और मेरा'— इसी का नाम अज्ञान है। 'काली-मन्दिर का निर्माण रासमणि ने किया है'— यही बात सब लोग कहते है। कोई नही कहता कि ईश्वर ने किया है। 'अमुक व्यक्ति ब्राह्मसमाज बना गये हैं'— यही लोग कहते है। यह कोई नही कहता कि ईश्वर की इच्छा से यह हुआ है। 'मैंने किया है' इसी का नाम अज्ञान है। 'हे ईश्वर मेरा कुछ भी नहीं है, यह मन्दिर मेरा नही है, यह कालीमन्दिर मेरा नही, समाज मेरा नही, सभी चीजें तुम्हारी हैं, स्त्री, पुत्र, परिवार— कुछ भी मेरा नही है, सब तुम्हारी चीजें हैं'— ये सब ज्ञानी की बातें हैं।

"'मेरी चीज मेरी चीज' कहकर उन सब चीजों से प्यार करने का नाम है 'माया'। सभी को प्यार करने का नाम है 'दया'। मैं केवल ब्राह्मसमाज के लोगों को प्यार करता हूँ, इसका नाम है माया। केवल अपने देश के लोगों को प्यार करता हूँ, इसका नाम है माया। सभी देश के लोगों को प्यार करना, सभी धर्म के लोगों को प्यार करना— यह दया से होता

है, भक्ति से होता है। माया से मनुष्य वद्ध हो जाता है, भगवान से विमुख हो जाता है। दया से ईश्वर-प्राप्ति होती है। शुकदेव, नारद— इन सव ने दया रखी थी।"

श्रीरामकृष्णदेव का कथन है— 'केवल स्वदेश के लोगों को प्यार करना— इसका नाम माया है। सभी देशों के लोगो से, सभी धर्म के लोगों से प्रेम रखना, यह हृदय मे दया होने से होता है, भक्ति से होता है।' तो फिर स्वामी विवेकानन्द स्वदेश के लिए उतने व्यस्त क्यों हुए थे?

स्वामीजी ने शिकागो-धर्ममहासभा मे एक दिन कहा था, "...भारत मे धर्म का अभाव नही है— वहाँ तो वैसे ही आवश्यकता से अधिक धर्म है, पर हाँ, हिन्दुस्थान के लाखों अकालपीड़ित लोग सूखे गले से 'अन्न-अन्न, रोटी-रोटी' चिल्ला रहे है।...मै अपने निर्धन स्वदेशनिवासियों के लिए यहाँ पर धन की भिक्षा माँगने आया था, परन्तु आकर देखा वड़ा ही कठिन काम है,— ईसाइयों से उन लोगों के लिए, जो ईसाई नहीं हैं, धन एकत्रित करना टेढी खीर है।"

—'शिकागो वक्तृता' से उद्धृत

स्वामीजी की प्रधान शिष्या भगिनी निवेदिता (Miss Margaret Noble) कहती है कि स्वामीजी जिस समय शिकागो नगर मे निवास करते थे, उस समय किसी भारतीय के साथ साक्षात्कार होने पर, वह चाहे किसी भी जाति का क्यो न हो— हिन्दू, मुसलमान या पारसी,— उसका वहुत आदर-सत्कार करते थे। वे स्वय किसी सज्जन के घर पर अतिथि के रूप मे निवास करते थे। वही पर अपने देश के लोगो को ले जाते थे। गृहस्वामी भी उन लोगो का काफी आदर-सत्कार करते थे और वे भली-

भाँति जानते थे कि उन लोगो का आदर-सम्मान न करने पर स्वामीजी अवश्य ही उनका घर छोड़कर किसी दूसरी जगह चले जायेंगे।

अपने देश के लोगो की निर्धनता और उनका दु:ख-निवारण, उनकी सत्‌शिक्षा तथा उनके धर्मपरायण होने के सम्बन्ध मे स्वामीजी सदैव विचारशील रहते थे। परन्तु वे अपने देशवासियो के लिए जिस प्रकार दु:ख का अनुभव करते थे, आफ्रिकानिवासी निग्रो के लिए भी उसी प्रकार दु:खी रहते थे। भगिनी निवेदिता ने कहा है कि स्वामीजी जिस समय दक्षिणी संयुक्त राष्ट्रो मे भ्रमण कर रहे थे, उस समय किसी किसी ने उन्हें आफ्रिका-निवासी (Coloured man) समझकर घर से लौटा दिया था; परन्तु जब उन्होने सुना कि वे आफ्रिकानिवासी नही है, वे हिन्दू संन्यासी प्रसिद्ध स्वामी विवेकानन्द है, तब उन्होने परम आदर के साथ उन्हें ले जाकर उनकी सेवा की। उन्होने कहा, "स्वामी, जब हमने आपसे पूछा, 'क्या आप आफ्रिकानिवासी है?' उस समय आप कुछ भी न कहकर चले क्यों गये थे?"

स्वामीजी बोले, "क्यों, आफ्रिकानिवासी निग्रो क्या मेरे भाई नहीं है?" निग्रो तथा स्वदेशवासियों की सेवा एक जैसी होनी चाहिए और चूँकि स्वदेशवासियों के बीच हमें रहना है इसलिए उनकी सेवा पहले। इसी का नाम अनासक्त सेवा है। इसी का नाम कर्मयोग है। सभी लोग कर्म करते है, परन्तु कर्मयोग है बड़ा कठिन। सब छोड़कर बहुत दिनों तक एकान्त मे ईश्वर का ध्यान-चिन्तन किये बिना स्वदेश का ऐसा उपकार नही किया जा सकता। 'मेरा देश' कहकर नहीं, क्योकि तब तो माया में फँसना हुआ; पर 'ये लोग तुम्हारे (ईश्वर के) हैं'

इसलिए इनकी सेवा करूँगा। तुम्हारा निर्देश है, इसीलिए देश की सेवा करूँगा; तुम्हारा ही यह काम है— मैं तुम्हारा दास हूँ इसीलिए इस व्रत का पालन कर रहा हूँ, सफलता मिले या असफलता हो, यह तुम जानो; यह सब मेरे नाम के लिए नहीं, इससे तुम्हारी ही महिमा प्रकट होगी— इसलिए।

वास्तविक स्वदेश-प्रेम (Ideal patriotism) इसे ही कहते हैं,— इसीलिए लोक-शिक्षा के उद्देश्य से स्वामीजी ने इतने कठिन व्रत का अवलम्बन किया था। जिनके घर-वार और परिवार है, कभी ईश्वर के लिए जो व्याकुल नही हुए, जो 'त्याग' शब्द को सुनकर मुस्कराते है, जिनका मन सदा कामिनी-कांचन और ऐहिक मान-सम्मान की ओर लगा रहता है, जो लोग 'ईश्वर-दर्शन ही जीवन का उद्देश्य है' इस वात को सुनकर विस्मित हो उठते हैं, वे स्वदेश-प्रेम के इस महान् आदर्श को क्या जानें ? स्वामीजी स्वदेश के लिए आँसू वहाते थे अवश्य, परन्तु साथ ही यह भी भूलते न थे कि इस अनित्य संसार में ईश्वर ही वस्तु है, शेष सभी अवस्तु। स्वामीजी विलायत से लौटने के वाद हिमालय के दर्शन के लिए अलमोड़ा पधारे थे। अलमोड़ानिवासी उन्हें साक्षात् नारायण मानकर उनकी पूजा करने लगे। स्वामीजी नगाधिराज देवात्मा हिमालय पर्वत के अत्युच्च शृंगों को देखकर भावमग्न हो गये। उन्होने कहा,—

"... मेरी अव यही इच्छा है कि मैं अपने जीवन के शेष दिन इसी गिरिराज में कहीं पर व्यतीत कर दूँ, जहाँ अनेकों ऋषि रह चुके हैं, जहाँ दर्शनशास्त्र का जन्म हुआ था...। यहाँ आते समय जैसे जैसे गिरिराज की एक चोटी के वाद दूसरी चोटी मेरी दृष्टि के सामने आती गयी वैसे वैसे मेरी कार्य करने की समस्त इच्छाएँ

तथा भाव, जो मेरे मस्तिष्क मे वर्षो से भरे हुए थे, धीरे धीरे शान्त-से होने लगे . . . और मेरा मन एकदम उसी अनन्त भाव की ओर खिच गया जिसकी शिक्षा हमे गिरिराज हिमालय सदैव से देते रहे है, जो इस स्थान की वायु तक मे भरा हुआ है तथा जिसका निनाद म आज भी यहाँ के कलकल बहनेवाले झरनों में सुनता हूँ, और वह भाव है— त्याग।

" 'सर्व वस्तु भयान्वितं भुवि नृणां वैराग्यमेवाभयम्।'

" अर्थात् इस ससार मे प्रत्येक वस्तु में भय भरा है, यह भय केवल वैराग्य से ही दूर हो सकता है, इसी से मनुष्य निर्भय हो सकता है। . . .

"भविष्य मे शक्तिशाली आत्माएँ इस गिरिराज की ओर आकर्षित होकर चली आयेगी। यह उस समय होगा जब कि भिन्न भिन्न सम्प्रदायो के आपस के झगडे नष्ट हो जायेगे, जब रूढियो के सम्बन्ध का वैमनस्य नष्ट हो जायगा, जब हमारे और तुम्हारे धर्म सम्बन्धी झगडे बिलकुल दूर हो जायेगे तथा जब मनुष्यमात्र यह समझ लेगा कि केवल एक ही चिन्तन धर्म है और वह है स्वय मे परमेश्वर की अनुभूति, और शेप जो कुछ है वह सब व्यर्थ है। यह जानकर कि यह संसार एक धोखे की टट्टी है, यहाँ सब कुछ मिथ्या है और यदि कुछ सत्य है तो वह है ईश्वर की उपासना— केवल ईश्वर की उपासना— तीव्र विरागी यहाँ आयेगे। . . ."

—**'भारत में विवेकानन्द'** से अद्धृत

श्रीरामकृष्णदेव कहा करते थे, 'अद्वैत ज्ञान को आँचल मे बॉधकर जो इच्छा हो, करो।' स्वामी विवेकानन्द अद्वैत ज्ञान को ऑचल मे बाँधकर कर्म-क्षेत्र मे उतर पड़े थे। सन्यासी को फिर घर धन,

परिवार, आत्मीय, स्वजन, स्वदेश, विदेश से क्या प्रयोजन ? याज्ञवल्क्य ने मैत्रेयी से कहा था, 'ईश्वर को न जानने पर इन सब धन-विद्याओं से क्या होगा? हे मैत्रेयी, पहले उन्हे जानो, बाद में दूसरी बात।' स्वामीजी ने दुनिया को यही सिखाया। उन्होने कहा, हे पृथ्वी भर के निवासियो ! पहले विषय का त्याग कर निर्जन मे भगवान की आराधना करो, उसके बाद जो चाहो, करो, किसी में दोष नही। चाहे स्वदेश की सेवा करो या परिवार का पालन करो, किसी से दोष न होगा; क्योकि तुम उस समय समझोगे कि सर्वभूतों में वे ही विद्यमान हैं, उनको छोड़ और कुछ भी नही है— परिवार, स्वदेश उनसे अलग नही है। भगवान के साक्षात्कार करने के बाद देखोगे, वे ही सर्वत्र विद्यमान है। वशिष्ठ ने श्रीरामचन्द्रजी से कहा था, 'राम, तुम संसार को छोड़ना चाहते हो, आओ, मेरे साथ विचार करो; यदि ईश्वर इस संसार से अलग हों तो इसे त्याग देना।'* श्रीरामचन्द्र ने आत्मा का साक्षात्कार किया था; इसीलिए चुप रह गये। श्रीरामकृष्णदेव कहा करते थे, 'छुरे को चलाना सीखकर हाथ में छुरा लो।' स्वामी विवेकानन्द ने दिखा दिया कि वास्तविक कर्मयोगी किसे कहते है। स्वामीजी जानते थे कि देश के दुःखियों की धन द्वारा सहायता करने से बढ़कर अनेक अन्य महान् कार्य है। ईश्वर का ज्ञान प्राप्त करा देना मुख्य कार्य है। उसके बाद विद्यादान, उसके बाद जीवनदान, उसके बाद अन्नवस्त्र-दान। संसार दुःखपूर्ण है। इस दुःख को तुम कितने दिनों के लिए मिटाओगे ? श्रीरामकृष्णदेव ने कृष्णदास पाल ‡ से पूछा था, "अच्छा, जीवन का उद्देश्य

---

* योगवाशिष्ठ

‡ श्रीकृष्णदास पाल ने दक्षिणेश्वर मे श्रीरामकृष्णदेव का दर्शन किया था।

क्या है ?"

कृष्णदास ने कहा था, "मेरी राय में दुनिया का उपकार करना, जगत् के दु:ख को दूर करना।" श्रीरामकृष्ण खेद के साथ बोले थे, "तुम्हारी ऐसी विधवा-पुत्र* जैसी बुद्धि क्यों?—जगत् के दु:खों का नाश तुम करोगे? क्या जगत् इतना-सा ही है? बरसात में गंगाजी मे केंकड़े होते है, जानते हो? इसी प्रकार असंख्य जगत् है। इस विश्वजगत् के जो अधिपति हैं, वे सभी की खबर ले रहे है। उन्हें पहले जानना—यही जीवन का उद्देश्य है। उसके बाद चाहे जो करना।" स्वामीजी ने भी एक स्थान मे कहा है,—

"...केवल आध्यात्मिक ज्ञान ही ऐसा है जो हमारे दु:खों को सदा के लिए नष्ट कर सकता है; अन्य किसी प्रकार के ज्ञान से तो हमारी आवश्यकताओं की पूर्ति केवल अल्प समय के लिए ही होती है।...जो मनुष्य आध्यात्मिक ज्ञान देता है, वही मानव समाज का सब से बड़ा हितैषी है।.....आध्यात्मिक सहायता के बाद मानसिक सहायता का स्थान आता है। ज्ञान का दान देना, भोजन तथा वस्त्र के दान से कही श्रेष्ठ है। इसके बाद है जीवन-दान और चौथा है अन्न-दान।....."

—'कर्मयोग' से उद्धृत

ईश्वर का दर्शन ही जीवन का उद्देश्य है, और इस देश की यही एक विशेषता है। पहले यह और उसके बाद दूसरी बातें। पहले से ही राजनीति की बातें करने से न चलेगा, पहले एकचित्त होकर भगवान का ध्यान-चिन्तन करो, हृदय के बीच मे उनके

* विधवा-पुत्र जैसी बुद्धि अर्थात् हीन बुद्धि; क्योकि एसे लडके अनेक प्रकार के नीच उपाय से मनुष्य बनते हैं; दूसरो की खुशामद आदि करके।

अनुपम रूप का दर्शन करो। उन्हे प्राप्त करने के वाद तव स्वदेश का कल्याण कर सकोगे; क्योंकि उस समय तुम्हारा मन अनासक्त होगा। 'मेरा देश' कहकर सेवा नही—— 'सर्वभूतों मे ईश्वर है' यह कहकर उनकी सेवा कर सकोगे। उस समय स्वदेश-विदेश की भेद-वुद्धि नही रहेगी। उस समय ठीक समझा जा सकेगा कि जीव का कल्याण किससे होता है। श्रीरामकृष्णदेव कहा करते थे, "जो लोग दाँव खेलते है, वे खेल की चाल ठीक ठीक समझ नही सकते। जो लोग खेल से अलग रहकर पास बैठे-बैठे खेल देखते रहते हैं, वे दूर से अच्छी चाल दे सकते है।" कारण देखनेवाला खेल मे आसक्त नही है। एकान्त मे बहुत दिनों तक साधना करके राग-द्वेष से मुक्त उदासीन अनासक्त जीवन्मुक्त महापुरुष ने जो कुछ उपलब्धि की है उसके सामने उन्हें और कुछ भी अच्छा नही लगता——

यं लव्ध्वा चापरं लाभं मन्यते नाधिकं ततः।
यस्मिन् स्थितो न दु.खेन गुरुणापि विचाल्यते॥– गीता।

हिन्दुओ की राजनीति, समाजनीति, ये सभी धर्मशास्त्र है। मनु, याज्ञवल्क्य, पराशर आदि महापुरुप इन सब धर्मशास्त्रों के प्रणेता है। उन्हें किसी भी चीज की आवश्यकता नही थी। फिर भी, भगवान का निर्देश पाकर, गृहस्थो के लिए, उन्होने शास्त्रों की रचना की है। वे उदासीन रहकर दाँव-खेल की चाल वता दे रहे है, इसीलिए देश-काल-पात्र की दृष्टि से उनकी वातों मे एक भी भूल होने की सम्भावना नही है।

स्वामी विवेकानन्द भी कर्मयोगी है। उन्होने अनासक्त होकर परोपकार-व्रतरूपी, जीव-सेवारूपी कर्म किया है; इसीलिए कर्मियों के सम्वन्ध मे उनका इतना मूल्य है। उन्होने अनासक्त होकर

इस देश का कल्याण किया है, जिस प्रकार प्राचीनकाल के महा-पुरुषगण जीव के मंगल के लिए सदैव प्रयत्नशील रहे है। इस निष्काम धर्म के पालन के लिए हम भी उनके चरण-चिह्नो का अनुसरण कर सकें तो कितना अच्छा हो! परन्तु यह बात है बहुत कठिन। पहले भगवान को प्राप्त करना होगा। इसके लिए स्वामी विवेकानन्दजी की तरह त्याग और तपस्या करनी होगी। तब यह अधिकार प्राप्त हो सकता है।

धन्य हो तुम त्यागी वीर महापुरुष! तुमने वास्तव मे गुरुदेव के चरण-चिह्नो का अनुसरण किया है। गुरुदेव का महामन्त्र— पहले ईश्वर-प्राप्ति, उसके बाद दूसरी बात— तुम्ही ने साधित किया है। तुम्ही ने समझा था, ईश्वर छोड़ने पर यह ससार यथार्थ मे स्वप्न की तरह है, गोरख-धन्धा है। इसीलिए सब कुछ छोडकर तुमने पहले ईश्वर-प्राप्ति की साधना की थी। जब तुमने देखा, सर्व वस्तुओ के प्राण वे ही है, जब तुमने देखा उनके अतिरिक्त और कुछ भी नही है, तब फिर इस संसार में तुमने मन लगाया। तव हे महायोगिन्! सर्वभूतो मे स्थित उसी हरि की सेवा के लिए तुम फिर कर्मक्षेत्र मे उतर आये। उस समय सभी तुम्हारे गम्भीर असीम प्रेम के अधिकारी बने— हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, विदेशी, स्वदेशवासी, धनी, निर्धन, नर, नारी सभी को तुमने प्रेमालिगन-दान किया है। तुमने नारद, जनक आदि की तरह लोक-शिक्षा के लिए कर्म किया है।

(५)

ईश्वर साकार हैं या निराकार

एक दिन स्वर्गीय केशवचन्द्र सेन शिष्यों को साथ लेकर दक्षिणेश्वर के काली-मन्दिर में श्रीरामकृष्णदेव का दर्शन करने

गये। केशव के साथ निराकार के सम्बन्ध में अनेक बातें होती थीं। श्रीरामकृष्णदेव उनसे कहा करते थे, "मैं प्रतिमा में मिट्टी या पत्थर की काली नहीं देखता, मैं तो उसमें चिन्मयी काली देखता हूँ। जो ब्रह्म हैं, वे ही काली हैं। वे जिस समय क्रियारहित हैं, उस समय ब्रह्म; जब सृष्टि-स्थिति-प्रलय करती है, उस समय काली, अर्थात् जो काल के साथ रमण करती है। काल अर्थात् ब्रह्म।" उन दोनों में एक दिन निम्नलिखित वार्तालाप हो रहा था:—

श्रीरामकृष्ण—(केशव के प्रति)— किस प्रकार, जानते हो! मानो सच्चिदानन्दरूपी समुद्र है, कहीं किनारा नहीं है। भक्तिरूपी हिम के कारण इस समुद्र मे स्थान-स्थान पर जल बरफ के आकार मे जम जाता है। अर्थात् भक्त के पास वे प्रत्यक्ष होकर कभी कभी साकार रूप मे दर्शन देते है। फिर ब्रह्मज्ञानरूपी सूर्य के उदय होने पर वह बरफ गल जाती है— अर्थात् 'ब्रह्म सत्य जगत् मिथ्या' इस विचार के बाद समाधि होने पर रूप आदि सब अदृश्य हो जाते है। उस समय वे क्या है, मुख से कहा नही जा सकता—मन, बुद्धि, अहं के द्वारा उन्हें पकड़ा नहीं जा सकता।

"जो व्यक्ति एक सत्य को जानता है, वह दूसरे को भी जान सकता है। जो निराकार को जान सकता है, वह साकार को भी जान सकता है। जब तुम उस मुहल्ले में गये ही नही तो कहाँ श्यामपुकुर है, और कहाँ तेलीपाड़ा, कैसे जानोगे?"

श्रीरामकृष्णदेव यह भी समझा रहे है कि सभी निराकार के अधिकारी नही हैं, इसीलिए साकार पूजा की विशेष आवश्यकता है। उन्होंने कहा,—

"एक माँ के पाँच लड़के हैं। माँ ने कई प्रकार की तरकारियाँ बनायी है, जिसके पेट में जो सहन होता हो।"

इस देश में साकार पूजा होती है। ईसाई मिशनरीगण अमरीका व यूरोप में इस देश के निवासियों को असभ्य जाति कहकर वर्णन करते है। वे कहते है कि भारतीयगण मूर्ति की पूजा करते हैं, और उनकी बड़ी दयनीय स्थिति है।

स्वामी विवेकानन्द ने इस साकार पूजा का अर्थ अमरीका में पहले-पहल समझाया। उन्होंने कहा कि भारतवर्ष मे 'मूर्ति' की पूजा नही होती।—

"...मैं पहले ही तुम्हें बता देना चाहता हूँ कि भारतवर्ष में अनेकेश्वरवाद नही है। प्रत्येक मन्दिर मे यदि कोई खड़ा होकर सुने, तो वह यही पायगा कि भक्तगण सर्वव्यापित्व से लेकर ईश्वर के सभी गुणों का आरोप उन मूर्तियो मे करते हैं।..."

—'हिन्दू धर्म' से उद्धृत

स्वामीजी मनोविज्ञान (Psychology) की सहायता से समझाने लगे कि ईश्वर का चिन्तन करने में साकार चिन्तन को छोड़ अन्य कुछ भी नही आ सकता। उन्होंने कहा—

"...ईश्वर यदि सर्वव्यापी है तो फिर ईसाई लोग गिरजाघर मे क्यों उसकी आराधना के लिए जाते है? क्यों वे क्रास को इतना पवित्र मानते हैं? प्रार्थना के समय आकाश की ओर मुँह क्यो करते है? कैथलिक ईसाइयों के गिरजाघरो मे इतनी बहुतसी मूर्तियाँ क्यों रहा करती है? और प्रोटेस्टेन्ट ईसाइयों के हृदय मे प्रार्थना के समय इतनी बहुतसी भावमयी मूर्तियाँ क्यो रहा करती है? मेरे भाइयो! मन में किसी मूर्ति के बिना

आये कुछ सोच सकना उतना ही असम्भव है, जितना कि श्वास लिए विना जीवित रहना। ... सच पूछिये तो दुनिया के प्रायः सभी मनुष्य सर्वव्यापित्व का क्या अर्थ समझते है ?— कुछ नहीं !... क्या परमेश्वर का भी कोई क्षेत्रफल है ? अगर नहीं, तो जिस समय हम सर्वव्यापी शब्द का उच्चारण करते हैं, उस समय विस्तृत आकाश या विशाल भूमिखण्ड की कल्पना हम अपने मन मे लाते है। इससे अधिक और कुछ नहीं। ..."

—'हिन्दू धर्म' से उद्धृत

स्वामीजी ने और भी कहा, "अधिकारियों की भिन्नता के अनुसार साकार पूजा और निराकार पूजा होती है। साकार पूजा कुसस्कार नही है— मिथ्या नही है, वह एक निम्न श्रेणी का सत्य है।"—

"...अगर कोई मनुष्य अपने ब्रह्मभाव को मूर्ति के सहारे अधिक सरलता से अनुभव कर सकता है, तो क्या उसे पाप कहना ठीक होगा ? और जब वह उस अवस्था से परे पहुंच गया है, तब भी उसके लिए मूर्तिपूजा को भ्रमात्मक कहना उचित नही है। हिन्दू की दृष्टि मे मनुष्य असत्य से सत्य की ओर नहीं जा रहा है, वह तो सत्य से सत्य की ओर, निम्म श्रेणी के सत्य से उच्च श्रेणी के सत्य की ओर अग्रसर हो रहा है। ..."

—'हिन्दू धर्म' से उद्धृत

स्वामीजी ने कहा, सभी के लिए एक नियम नही हो सकता। ईश्वर एक है, परन्तु वे भक्तों के पास अनेक रूपो मे प्रकट हो रहे है। हिन्दू इस बात को समझते है।—

"...विभिन्नता मे एकता यही प्रकृति की रचना है और हिन्दुओं ने इसे भलीभाँति पहचाना है। अन्य धर्मो मे कुछ निर्दिष्ट

मतवाद विधिबद्ध कर दिये गये हैं और सारे समाज को उन्हें मानना अनिवार्य कर दिया जाता है। वे तो समाज के सामने केवल एक ही नाप की कमीज रख देते हैं, जो राम, श्याम, हरि सब के शरीर मे जबरदस्ती ठीक होनी चाहिए। और यदि वह कमीज राम या श्याम के शरीर में ठीक नहीं बैठती, तो उसे नंगे बदन-- बिना कमीज के ही रहना होगा। हिन्दुओं ने यह जान लिया है कि निरपेक्ष ब्रह्म-तत्त्व की उपलब्धि, धारणा या प्रकाश केवल सापेक्ष के सहारे से ही हो सकता है। . . ."

— 'हिन्दू धर्म' से उद्धृत

(६)

श्रीरामकृष्ण और पापवाद

स्वामीजी के गुरुदेव भगवान श्रीरामकृष्ण कहा करने थे, "ईश्वर का नाम लेने से तथा आन्तरिकता के साथ उनका चिन्तन करने से पाप भाग जाता है-- जिस प्रकार रूई का पहाड़ आग लगते ही क्षण भर मे जल जाता है, अथवा वृक्ष पर बैठे हुए पक्षी ताली बजाते ही उड़ जाते हैं।" एक दिन केशवबाबू के साथ वार्तालाप हो रहा था—

श्रीरामकृष्ण– (केशव के प्रति)– मन से ही बद्ध और मन से ही मुक्त है। मै मुक्त पुरुष हूँ,-- संसार में रहूँ या जंगल में--- मुझे कैसा बन्धन? मैं ईश्वर की सन्तान हूँ, राजाधिराज का पुत्र हूँ, मुझे भला कौन बाँधकर रखेगा? यदि साँप काटे, तो 'विष नहीं है, विष नहीं है' ऐसा जोर देकर कहने से विष उतर जाता है। उसी प्रकार 'मैं बद्ध नहीं हूँ,' 'मैं बद्ध नहीं हूँ,' 'मैं मुक्त हूँ' इस बात को जोर देकर कहते कहते वैसा ही बन जाता है— मुक्त ही हो जाता है।

"किसी ने ईसाइयों की एक पुस्तक (Bible) दी थी। मैंने उसे पढ़कर सुनाने के लिए कहा, उसमें केवल 'पाप' और 'पाप' था !

"तुम्हारे ब्राह्मसमाज में भी केवल 'पाप' और 'पाप' है ! जो बार बार कहता है 'मैं बद्ध हूँ' 'मै बद्ध हूँ' वह अन्त मे बद्ध ही हो जाता है। जो दिन-रात 'मै पापी हूँ' 'मै पापी हूँ' ऐसा कहता रहता है वह वैसा ही बन जाता है !

"ईश्वर के नाम पर ऐसा विश्वास होना चाहिए— 'क्या ! मैने ईश्वर का नाम लिया, अब भी मेरा पाप रहेगा ? मेरा अब बन्धन क्या है, पाप क्या है ?' कृष्णकिशोर परम हिन्दू सदाचारी ब्राह्मण है। वह वृन्दावन गया था। एक दिन घूमते-घूमते उसे प्यास लगी। एक कुएँ के पास जाकर देखा— एक आदमी खड़ा है। उससे कहा, 'अरे, तू मुझे एक लोटा जल दे सकेगा ? तेरी क्या जात है ?' उसने कहा, 'पण्डितजी, मैं नीच जाति का हूँ— मोची हूँ।' कृष्णकिशोर ने कहा, 'तू 'शिव' कह और जल खीच दे।'

"भगवान का नाम लेने से देह-मन शुद्ध हो जाते है। केवल 'पाप' और 'नरक' की ये सब बातें क्यों ? एक बार कहो कि मैंने जो कुछ अनुचित काम किया है वह अब और नही करूंगा। साथ ही ईश्वर के नाम पर विश्वास करो।"

स्वामीजी ने भी ईसाइयों के इस पापवाद के सम्बन्ध मे कहा है, "पापी क्यों ? तुम लोग अमृत के अधिकारी हो (Sons of Immortal Bliss) ! तुम्हारे धर्माचार्य जो दिनरात नरकाग्नि की बातें बताया करते है, उसे मत सुनो !"—

"...तो तुम तो ईश्वर की सन्तान हो, अमर आनन्द के अधिकारी हो, पवित्र और पूर्ण आत्मा हो। तुम इस मर्त्यभूमि पर देवता हो, तुम पापी? मनुष्य को पापी कहना ही महा पाप है। विशुद्ध मानव आत्मा को तो यह मिथ्या कलंक लगाना है। उठो! आओ! ऐ सिंहो! तुम भेड़ हो इस मिथ्या भ्रम को झटककर दूर फेक दो। तुम तो जरा-मरण-रहित एवं नित्यानन्दस्वरूप आत्मा हो। तुम जड़ पदार्थ नहीं हो। तुम शरीर नहीं हो। जड़ पदार्थ तो तुम्हारा गुलाम है, तुम उसके गुलाम नही।..."

— 'हिन्दू धर्म' से उद्धृत

अमरीका मे हार्टफोर्ड नामक स्थान पर स्वामीजी भाषण देने के लिए आमन्त्रित हुए थे। यहाँ के अमरीकन कॉनसल (Consul) पैटर्सन उस समय वहाँ पर उपस्थित थे तथा सभापति थे। स्वामीजी ने ईसाइयों के पापवाद के सम्बन्ध में कहा था—

"...वह क्या लोग को घुटने टेककर यह चिल्लाने की सलाह दे कि 'ओह, हम कितने पापी है!' नहीं, प्रत्युत आओ, हम उन्हें उनके दैवी स्वरूप का ख्याल करा दें।... यदि कमरा अंधेरा हो तो क्या तुम अपनी छाती पीटते हुए यह चिल्लाते जाते हो कि 'कमरा अंधेरा है!' 'कमरा अंधेरा है!' नहीं, उजाला करने का एक मात्र उपाय है रोशनी जलाना, और तब अंधेरा भाग जाता है। उसी प्रकार आत्मज्योति के दर्शन का एकमात्र उपाय है अन्दर मे आध्यात्मिक ज्योति जलाना, और तब पाप और अपवित्रता-रूपी अन्धकार दूर भाग जायगा। अपने उच्चतर स्वरूप का चिन्तन करो, क्षुद्र स्वरूप का नहीं।"

फिर स्वामीजी ने एक कहानी* सुनायी, जो उन्होंने श्रीराम-

* यह कहानी साख्यदर्शन मे है—आख्यायिका-प्रकरण।

कृष्णदेव से सुनी थी— "एक वाघिनी ने वकरों के एक झुण्ड पर आक्रमण किया। वह पूर्ण गर्भवती थी, इसलिए कूदते समय उसे वच्चा पैदा हो गया। वाघिनी वही मर गयी। वच्चा वकरों के साथ पलने लगा और उनके साथ घास खाने लगा तथा 'मे' 'मे' भी कहने लगा। कुछ दिनो वाद वह वच्चा वड़ा हुआ। एक दिन उस बकरो के झुण्ड पर एक वाघ ने आक्रमण किया। वह वाघ यह देखकर हैरान रह गया कि एक वाघ घास खा रहा है तथा 'मे' 'मे' कर रहा है और उसे देखकर वकरों की तरह भाग रहा है। तव वह उसे पकड़कर जल के पास ले गया और कहा, 'देख, तू भी वाघ है, तू घास क्यों खा रहा है और 'मे' 'में' क्यों कर रहा है ?— देख, मै कैसा माँस खाता हूँ। ले तू भी खा। और जल मे देख, तेरा चेहरा भी कैसा विलकुल मेरे ही जैसा है !' उस छोटे वाघ ने वह सव देखा, माँस का आस्वादन किया और अपना असली रूप पहचान गया।"

(७)

कामिनीकांचन-त्याग—संन्यास

एक दिन श्रीरामकृष्ण और विजयकृष्ण गोस्वामी दक्षिणेश्वर के कालीमन्दिर मे वार्तालाप कर रहे थे।

श्रीरामकृष्ण– (विजय के प्रति)– कामिनी-कांचन का त्याग किये विना लोक-शिक्षा नही दी जा सकती। देखो न, यही न कर सकने के कारण केशव सेन का अन्त में क्या हुआ ! तुम स्वयं ऐश्वर्य मे, कामिनी-कांचन के भीतर रहकर यदि कहो 'संसार अनित्य है, ईश्वर ही नित्य है,' तो कौन तुम्हारी बात सुनेगा ? तुम अपने पास तो गुड़ का घड़ा रखे हुए हो, और दूसरों से कह रहे हो— 'गुड़ न खाना !' इसीलिए सोच समझकर

चैतन्यदेव ने संसार छोड़ा था। नही तो जीव का उद्धार नही होता।

विजय– जी हाँ, चैतन्यदेव ने कहा था, 'कफ हटाने के लिए पिप्पल-खण्ड * तैयार किया, परन्तु परिणाम उल्टा हुआ, कफ बढ गया।' नवद्वीप के अनेक लोग हँसी उड़ाने लगे और कहने लगे, 'निमाई पण्डित मजे मे है जी, सुन्दर स्त्री, मान-सम्मान, धन की भी कमी नही है, बड़े मजे मे है।'

श्रीरामकृष्ण– केशव यदि त्यागी होता, तो अनेक काम होते। बकरे के बदन पर घाव रहने से वह देव-सेवा के काम में नहीं आता, उसकी बलि नहीं दी जाती। त्यागी हुए बिना व्यक्ति लोक-शिक्षा का अधिकारी नहीं बनता। गृहस्थ होने पर कितने लोग उसकी बात सुनेंगे ?

स्वामी विवेकानन्द कामिनी-कांचनत्यागी है, इसीलिए उनका ईश्वर के विषय मे लोक-शिक्षा देने का अधिकार है। विवेकानन्दजी वेदान्त तथा अंग्रेजी भाषा व दर्शन आदि के अग्रगण्य पण्डित है; वे असाधारण भाषणपटु है; क्या उनका माहात्म्य इतना ही है ? इसका उत्तर श्रीरामकृष्ण ने दिया था। दक्षिणेश्वर के कालीमन्दिर मे भक्तों को सम्बोधित कर श्रीरामकृष्णदेव ने १८८२ ई. मे स्वामी विवेकानन्द के सम्बन्ध मे कहा था––

"इस लड़के को देख रहे हो, यहाँ पर एक तरह का है। उत्पाती लड़के जब बाप के पास बैठते है तो मानो भीगी बिल्ली बन जाते है। फिर चाँदनी मे जब खेलते है, उस समय उनका रूप दूसरा ही होता है। ये लोग नित्यसिद्ध के स्तर के है। ये लोग कभी संसार में आबद्ध नहीं होते। थोड़ी उम्र मे ही इन्हें

* पिप्पल-खण्ड का मतलब है नवद्वीप में हरिनाम का प्रचार।

चैतन्य होता है और भगवान की ओर चले जाते है। ये लोग लोक-शिक्षा के लिए संसार मे आते है, इन्हें ससार की कोई भी चीज अच्छी नही लगती— ये कभी भी कामिनी-कांचन में आसक्त नही होते।

"वेद मे 'होमा' पक्षी का उल्लेख है। आकाश मे खूब ऊँचाई पर वह चिड़िया रहती है। वही आकाश मे ही वह अण्डा देती है। अण्डा देते ही अण्डा नीचे गिरने लगता है। अण्डा गिरते गिरते फूट जाता है। तब बच्चा गिरने लगता है। गिरते गिरते उसकी आँखें खुल जाती है और पंख निकल आते है। आँखे खुलते ही वह देखता है कि वह गिर रहा है और जमीन पर गिरते ही उसकी देह चकनाचूर हो जायगी। तब वह पक्षी अपनी माँ की ओर देखता है, और ऊपर की ओर उड़ान लेता है और ऊपर उठ जाता है।"

विवेकानन्द वही 'होमा पक्षी' है— उनके जीवन का एकमात्र लक्ष्य है उड़कर माँ के पास ऊपर उठ जाना— देह के जमीन से टकराने के पहले ही अर्थात् संसार से सम्बन्ध होने से पहले ही, ईश्वरलाभ के पथ पर अग्रसर हो जाना।

श्रीरामकृष्ण ने ईश्वरचन्द्र विद्यासागर से कहा था,— "पाण्डित्य! केवल पाण्डित्य से ही क्या होगा? गिद्ध भी काफी ऊँचा उडता है, परन्तु उसकी दृष्टि रहती है जमीन पर मुर्दों की ओर— कहाँ सडा मुर्दा पड़ा है। पण्डित अनेक श्लोक झाड़ सकते हैं, परन्तु मन कहाँ है? यदि ईश्वर के चरणकमलों मे हो, तो मै उसे सम्मान देता हूँ, यदि कामिनी-कांचन की ओर हो, तो वह मुझे कूड़ा-कर्कट जैसा लगता है।"

स्वामी विवेकानन्द केवल पण्डित ही नही, वे साधु महापुरुष

थे। केवल पाण्डित्य के लिए ही अंग्रेजों तथा अमरीकानिवासियों ने भृत्यों की तरह उनकी सेवा नही की थी। उन्होने जान लिया था कि ये एक दूसरे ही प्रकार के व्यक्ति है। अन्य सब लोग सम्मान, धन, इन्द्रियसुख, पण्डिताई आदि लेकर रहते है, पर इनका लक्ष्य है ईश्वरप्राप्ति।

'संन्यासी के गीत' मे स्वामीजी ने कहा है कि संन्यासी कामिनी-कांचन का त्याग करेगा—

"...करते निवास जिस उर मे मद काम लोभ औ' मत्सर,
उसमे न कभी हो सकता आलोकित सत्य-प्रभाकर;
भार्यत्व कामिनी मे जो देखा करता कामुक बन,
वह पूर्ण नहीं हो सकता, उसका न छूटता बन्धन;
लोलुपता है जिस नर की स्वल्पातिस्वल्प भी धन मे,
वह मुक्त नही हो सकता, रहता अपार बन्धन मे;
जंजीर क्रोध की जिसको रखती है सदा जकड़कर,
वह पार नहीं कर सकता दुस्तर माया का सागर।
इन सभी वासनाओ का अतएव त्याग तुम कर दो,
सानन्द वायुमण्डल को बस एक गूँज से भर दो—
'ॐ तत् सत् ॐ!'..."

—'कवितावली' से उद्धृत

अमरीका मे उन्हे प्रलोभन कम नही मिला था। इधर विश्वव्यापी यश, उस पर सदा ही परम सुन्दरी उच्चवशीय सुशिक्षित महिलाएँ उनसे वार्तालाप तथा उनकी सेवा-टहल किया करती थीं। स्वामीजी मे इतनी मोहिनी शक्ति थी कि उनमे से कई उनसे विवाह करना चाहती थीं। एक अत्यन्त धनी व्यक्ति की लड़की ने तो एक दिन आकर उनसे यहाँ तक कह दिया, "स्वामी!

मेरा सब कुछ एवं स्वयं को भी मै आपको सौपती हूँ।" स्वामीजी ने उसके उत्तर में कहा, "भद्रे, मै संन्यासी हूँ, मुझे विवाह नहीं करना है। सभी स्त्रियाँ मेरी माँ-जैसी है।"

धन्य हो वीर! तुम गुरुदेव के योग्य ही शिष्य हो! तुम्हारी देह मे वास्तव मे पृथ्वी की मिट्टी नही लगी है, तुम्हारी देह में कामिनी-कांचन का दाग तक नही लगा है। तुम प्रलोभन के देश से दूर न भागकर, उसी मे रहकर, श्री की नगरी मे रहकर ईश्वर के पथ मे अग्रसर हुए हो! तुमने साधारण जीव की तरह दिन बिताना नही चाहा। तुम देवभाव का जीता-जागता उदाहरण छोड़कर इस मर्त्यलोक को छोड़ गये हो!

(८)

कर्मयोग और दरिद्रनारायण-सेवा

श्रीरामकृष्णदेव कहा करते थे, कर्म सभी को करना पड़ता है। ज्ञान, भक्ति और कर्म——ये तीन ईश्वर के पास पहुँचने के पथ है। गीता मे है,——साधु-गृहस्थ पहले-पहल चित्तशुद्धि के लिए गुरु के उपदेशानुसार अनासक्त होकर कर्म करे। 'मैं करनेवाला हूँ' यह अज्ञान है, 'धन-जन, काम-काज मेरे हैं'——यह भी अज्ञान है। गीता मे है, अपने को अकर्ता मानकर, ईश्वर को फल सौपकर काम करना चाहिए। गीता मे यह भी है कि सिद्धि प्राप्त करने के वाद भी प्रत्यादिष्ट होकर कोई कोई, जैसे जनक आदि, कर्म करते है। गीता मे जो कर्मयोग है, वह यही है। श्रीरामकृष्णदेव भी यही कहते थे।

इसीलिए कर्मयोग वहुत कठिन है। वहुत दिन निर्जन मे ईश्वर की साधना किये विना, अनासक्त होकर कर्म नहीं किया जा सकता। साधना की अवस्था में श्रीगुरु के उपदेश की सदा ही

आवश्यकता है। उस समय कच्ची स्थिति रहती है इसलिए किस ओर से आसक्ति आ पड़ेगी, जाना नही जाता। मन मे सोच रहा हूं, 'मै अनासक्त होकर, ईश्वर को फल समर्पण कर, जीव-सेवा, दान आदि कर्म कर रहा हूं।' परन्तु वास्तव मे, सम्भव है, मै यश के लिए ही यह सब कर रहा हूं, और खुद नही समझ पा रहा हूं। जो आदमी गृहस्थ है, जिसके घर, परिवार, आत्मीय, स्वजन और अपना कहने की चीजे है, उसे देखकर निष्काम कर्म, अनासक्ति और दूसरे के लिए स्वार्थ का त्याग, ये सब बातें सीखना बहुत कठिन है।

परन्तु सर्वत्यागी, कामिनी-कांचन-त्यागी सिद्ध महापुरुष यदि निष्काम कर्म करके दिखाये तो लोग आसानी से उसे समझ सकते है और उनके चरण-चिह्नो का अनुसरण कर सकते है।

स्वामी विवेकानन्द कामिनी-कांचन त्यागी थे। उन्होने एकान्त में श्रीगुरु के उपदेश से बहुत दिनों तक साधना करके सिद्धि प्राप्त की थी। वे वास्तव मे कर्मयोग के अधिकारी थे। वे सन्यासी थे; वे चाहते तो ऋषियो की तरह अथवा अपने गुरुदेव श्रीराम-कृष्णदेव की तरह केवल ज्ञान-भक्ति लेकर रह सकते थे। परन्तु उनका जीवन केवल त्याग का उदाहरण दिखाने के लिए नहीं हुआ था। सांसारिक लोग जिन सब वस्तुओ को ग्रहण करते है, उनसे अनासक्त होकर किस प्रकार व्यवहार करना चाहिए, यह भी नारद, शुकदेव तथा जनक आदि की तरह स्वामीजी लोकसग्रह के लिए दिखा गये है। वे धन-सम्पत्ति आदि को काक-विष्ठा की तरह समझते अवश्य थे और स्वय उनका उपयोग नही करते थे, परन्तु फिर भी जीवसेवा के लिए उनका किस प्रकार व्यवहार करना चाहिए इसके बारे में उपदेश देकर वे स्वयं भी करके दिखा

गये है। उन्होंने विलायत व अमरीका के मित्रों से जो धन एकत्रित किया था, वह सारा धन जीवों के कल्याण के लिए व्यय किया। उन्होंने स्थान स्थान पर—जैसे कलकत्ते के पास वेलुड़ में, अलमोड़ा के पास मायावती मे, काशीधाम में तथा मद्रास आदि स्थानों मे—मठों की स्थापना की। अनेक स्थानों में—दिनाजपुर, वैद्यनाथ, किशनगढ़, दक्षिणेश्वर आदि स्थानों मे—दुर्भिक्ष-पीड़ितो की सेवा की। दुर्भिक्ष के समय अनाथाश्रम बनाकर मातृ-पितृहीन अनाथ बालक-बालिकाओं की रक्षा की। राजपुताना के अन्तर्गत किशनगढ़ नामक स्थान मे अनाथाश्रम की स्थापना की। मुरशिदाबाद के निकट (भीवदा) सारगाछी गाँव में तो अभी तक उसी समय का अनाथाश्रम चल रहा है। हरिद्वार के निकट कनखल में रोगपीड़ित साधुओं के लिए स्वामीजी ने सेवाश्रम की स्थापना की। प्लेग के समय रोगियों की विपुल धन व्यय करके सेवा करायी। वे दीन, दुःखी तथा असहायों के लिए अकेले बैठकर रोते थे और मित्रों से कहते थे, "हाय! इन लोगों को इतना कष्ट है कि इन्हें ईश्वर-चिन्तन का अवसर तक नहीं है!"

गुरु से उपदिष्ट कर्मो और नित्य-कर्मो को छोड़, दूसरे कर्म तो बन्धन के कारण हैं। वे संन्यासी थे, उन्हें कर्म की क्या आवश्यकता?

"...'अपने अपने कर्मो का फल-भोग जगत् मे निश्चित'
कहते है सब, 'कारण पर हैं सभी कार्य अवलम्बित;
फल अशुभ, अशुभ कर्मो के; शुभ कर्मो के है शुभ फल,
किसकी सामर्थ्य बदल दे, यह नियम अटल औ' अविचल?
इस मृत्युलोक मे जो भी करता है तनु को धारण,

बन्धन उसके अंगों का होता नैसर्गिक भूषण।'
यह सच है, किन्तु परे जो गुण नाम-रूप से रहता,
वह नित्य मुक्त आत्मा है, स्वच्छन्द सदैव विचरता।
'तत् त्वमसि'—वही तो तुम हो, यह ज्ञान करो हृदयांकित
फिर क्या चिन्ता संन्यासी, सानन्द करो उद्घोषित—
'ॐ तत् सत् ॐ!'..."

—'कवितावली' से उद्धृत

केवल लोक-शिक्षा के लिए ईश्वर ने उनसे ये सब कर्म करा लिये। अब साधु या संसारी सभी सीखेंगे कि यदि वे भी कुछ दिन एकान्त मे गुरु के उपदेशानुसार साधना करके ईश्वर की भक्ति प्राप्त करें, तो वे भी स्वामीजी की तरह निष्काम कर्म कर सकेंगे; सचमुच में अनासक्त होकर दानादि सत्कर्म कर सकेंगे। स्वामीजी के गुरुदेव श्रीरामकृष्ण कहा करते थे, "हाथ में तेल मलकर कटहल काटने से हाथ न चिपकेगा।" अर्थात् एकान्त मे साधना के बाद भक्ति प्राप्त करके, ईश्वर का निर्देश पाकर लोक-शिक्षा के लिए यदि संसार के काम मे हाथ डाला जाय, तो ईश्वर की कृपा से यथार्थ मे निर्लिप्त भाव से काम किया जा सकता है। स्वामी विवेकानन्द के जीवन को ध्यानपूर्वक देखने से 'एकान्त मे साधना' तथा 'लोक-शिक्षा के लिए कर्म' किसे कहते है इसका पता लग सकता है।

स्वामी विवेकानन्द के ये सब कर्म लोक-शिक्षा के लिए थे।

कर्मणैव हि संसिद्धिमास्थिता जनकादयः।
लोकसंग्रहमेवापि सपश्यन् कर्तुमर्हसि॥

यह गीतोक्त कर्मयोग बहुत ही कठिन है। जनक आदि ने कर्म के द्वारा सिद्धि प्राप्त की थी। श्रीरामकृष्णदेव कहा

करते थे कि जनक ने अपने सांसारिक जीवन के पूर्व, जंगल में एकान्त मे बैठकर बहुत कठोर तपस्या की थी। इसलिए साधुगण ज्ञान और भक्ति का पथ अवलम्बन करके, ससार का कोलाहल छोड़कर एकान्त में ईश्वर-साधन करते है। स्वामी विवेकानन्द की तरह उत्तम अधिकारी वीर-पुरुप इस कर्मयोग के अधिकारी है। वे भगवान को अनुभव करते है, और साथ ही लोकशिक्षा के लिए, ईश्वर का आदेश पाकर संसार में कर्म करते हैं। इस प्रकार के महापुरुष संसार मे कितने है? ईश्वर के प्रेम मे मतवाले, कामिनी-कांचन का दाग एक भी न लगा हो, परन्तु जीवसेवा के लिए व्यस्त होकर घूम रहे है, ऐसे आचार्य कितने देखने मे आते हैं? स्वामीजी ने लन्दन मे १० नवम्बर १८९६ को वेदान्त के कर्मयोग की व्याख्या करते हुए गीता का विवरण देते हुए कहा था—

"...और यह आश्चर्य की वात है कि इस उपदेश का केन्द्र है संग्राम-स्थल। यही श्रीकृष्ण अर्जुन को इस दर्शन का उपदेश दे रहे है और गीता के प्रत्येक पृष्ठ पर यही मत उज्ज्वल रूप से प्रकाशित है— तीव्र कर्मण्यता, किन्तु उसी के वीच अनन्त शान्त-भाव। इसी तत्त्व को कर्मरहस्य कहा गया है और इस अवस्था को पाना ही वेदान्त का लक्ष्य है।..."

— **'व्यावहारिक जीवन में वेदान्त'** से उद्धृत

भाषण में स्वामीजी ने कर्म के वीच शान्त भाव की बात कही है। स्वामीजी रागद्वेष से मुक्त होकर कर्म कर सकते थे, यह केवल उनकी तपस्या के गुण तथा उनकी ईश्वरानुभूति के बल पर ही सम्भव था। सिद्धपुरुष अथवा श्रीकृष्ण की तरह अवतारीपुरुष हुए बिना यह स्थिरता तथा शान्ति प्राप्त नही होती।

(९)

स्त्रियो को लेकर साधना (वामाचार) के सम्बन्ध में श्रीरामकृष्ण और स्वामीजी के उपदेश

स्वामी विवेकानन्द एक दिन दक्षिणेश्वर मन्दिर मे श्रीरामकृष्णदेव का दर्शन करने गये थे। भवनाथ व बाबूराम आदि उपस्थित थे। २९ सितम्बर १८८४। घोषपाड़ा तथा पंचनामी के सम्बन्ध में नरेन्द्र ने बात चलायी और पूछा, "स्त्रियों को लेकर वे लोग कैसी साधना करते है?"

श्रीरामकृष्णदेव ने कहा, "ये सब बातें तुझे सुननी न चाहिए। घोषपाड़ा, पंचनामी और भैरव-भैरवी ये लोग ठीक-ठीक साधना नही कर सकते, पतन होता है। ये सब पथ मैले है, अच्छे पथ नही है। शुद्ध पथ पर चलना ही ठीक है। वाराणसी मे एक व्यक्ति मुझे भैरवी-चक्र मे ले गया था। एक-एक भैरव, और एक-एक भैरवी। वे मुझे शराब पीने के लिए कहने लगे। मैंने कहा, 'माँ, मैं शराब छू नही सकता।' वे सब शराब पीने लगे। मैने सोचा, अब शायद जप-ध्यान करेंगे। लेकिन नही, मदिरा पीकर नाचना शुरू कर दिया।"

नरेन्द्र से उन्होने फिर कहा, "बात यह है, मेरा भाव है मातृभाव—सन्तानभाव। मातृभाव अत्यन्त विशुद्ध भाव है, इसमे कोई डर नही है। स्त्री-भाव, वीरभाव बहुत कठिन है, ठीक-ठीक रखा नही जा सकता, पतन होता है। तुम लोग अपने लोग हो, तुम लोगों से कहता हूँ—मैने अन्त मे यही समझा है—वे पूर्ण है, मै उनका अश हूँ। वे प्रभु है, मै उनका दास हूँ। फिर कभी कभी सोचता हूँ, वह ही मैं, मैं ही वह। और भक्ति ही सार है।"

एक दूसरे दिन (९ सितम्बर १८८३ ई.) दक्षिणेश्वर में श्रीरामकृष्ण भक्तो से कह रहे हैं, "मेरा है सन्तान-भाव। अचलानन्द वीच-वीच में यहाँ पर आकर ठहरता था, खूव मदिरा पीता था। स्त्री लेकर साधन को मै अच्छा नही कहता था, इसलिए उसने मुझसे कहा था, 'भला तुम वीर-भाव का साधन क्यों नही मानोगे? तन्त्र मे जो है।— शिवजी का लिखा नहीं मानोगे? उन्होंने (शिवजी ने) सन्तान-भाव कहा है, फिर वीर-भाव भी वताया है।'

"मैंने कहा, 'कौन जाने भाई, मुझे वह सव अच्छा नहीं लगता— मेरा सन्तान-भाव ही रहने दो।'

"उस देश मे भगी तेली को इस दल में देखा था— वही औरत लेकर साधन। फिर एक पुरुप के हुए विना औरत का साधन-भजन न होगा। उस पुरुष को कहते है 'रागकृष्ण'। तीन वार पूछता है, 'कृष्ण तूने पा लिया?' वह औरत भी तीन वार कहती है, 'मैंने कृष्ण पा लिया।'"

एक दूसरे दिन २३ मार्च १८८४ ई. को श्रीरामकृष्ण राखाल, राम आदि भक्तों से कह रहे है— "वैष्णवचरण का वामाचारी मत था। मै जव उधर श्यामवाजार मे गया था तो उनसे कहा, 'मेरा मत ऐसा नही है।' मेरा मातृभाव है। देखा कि लम्वी लम्वी वातें वनाता है और फिर साथ ही व्यभिचार भी करता है। वे लोग देवपूजा, मूर्तिपूजा, पसन्द नही करते। जीवित मनुष्य चाहते है। उनमें से कई राधातन्त्र का मत मानते है; पृथ्वीतत्त्व, अग्नितत्त्व, जलतत्त्व, वायुतत्त्व, आकाशतत्त्व— विष्ठा, मूत्र, रज, वीर्य, ये ही सव तत्त्व, यह साधन वहुत मैला साधन है; जैसे पैखाने के रास्ते से मकान में प्रवेश करना।"

श्रीरामकृष्ण के उपदेशानुसार स्वामी विवेकानन्द ने भी वामाचार की खूब निन्दा की है। उन्होंने कहा है, "भारतवर्ष के प्राय: सभी स्थानों में विशेष रूप से बंगाल प्रान्त में, गुप्त रूप से अनेक व्यक्ति ऐसी साधना करते है। वे वामाचार तन्त्र का प्रमाण दिखाते है। उन सब तन्त्रों का त्याग कर लड़कों को उपनिपद्, गीता आदि शास्त्र पढ़ने को देना चाहिए।"

स्वामी विवेकानन्द ने विलायत से लौटने के बाद शोभाबाजार के स्व. राधाकान्त देव के देव-मन्दिर में वेदान्त के सम्बन्ध में एक सारगर्भित भाषण दिया था, उसमे औरतों को लेकर साधना करने की निन्दा करके निम्नलिखित बातें कही थीं—

"...यह घृण्य वामाचार छोड़ो, जो देश का नाश कर रहा है। तुमने भारत के अन्यान्य भाग नहीं देखे। जब मैं देखता हूँ कि हमारे समाज मे कितना वामाचार फैला हुआ है, तब उन्नति का इसे बड़ा गर्व रहने पर भी मेरी नजरों में यह अत्यन्त गिरा हुआ मालूम होता है। इन वामाचार सम्प्रदायों ने मधुमक्खियों की तरह हमारे बंगाल के समाज को छा लिया है। वे ही, जो दिन को गरजते हुए आचार के सम्बन्ध मे प्रचार करते है, रात को घोर पैशाचिक कृत्य करने से बाज नही आते, और अति भयानक ग्रन्थसमूह उनके कर्म के समर्थक है। इन्ही शास्त्रों की आज्ञा मानकर वे उन घोर दुष्कर्मो मे हाथ देते है। तुम बंगालियों को यह विदित है। बंगालियों के शास्त्र वामाचार-तन्त्र है। ये ग्रन्थ ढेरों प्रकाशित होते है, जिन्हें लेकर तुम अपनी सन्तानों के मन को विषाक्त करते हो, किन्तु उन्हें श्रुतियों की शिक्षा नहीं देते। ऐ कलकत्तावासियो, क्या तुम्हें लज्जा नही आती कि अनुवादसहित वामाचार-तन्त्रों का यह बीभत्स संग्रह तुम्हारे बालकों

और वालिकाओं के हाथ रखा जाय, उनका चित्त विषविह्वल हो और वे जन्म से यही धारणा लेकर पलें कि हिन्दुओं के शास्त्र ये वामाचार ग्रन्थ है? यदि तुम लज्जित हो तो अपने बच्चों से उन्हे अलग करो, और उन्हें यथार्थ शास्त्र——वेद, गीता, उपविषद्—— पढ़ने दो। . . ."

——'भारत में विवेकानन्द' से उद्धृत

काशीपुर बगीचे मे श्रीरामकृष्ण जव (१८८६ ई.) वीमार थे, तो एक दिन नरेन्द्र को बुलाकर वोले, 'भैया, यहाँ पर कोई शराव न पीये। धर्म के नाम पर मदिरा पीना ठीक नही; मैंने देखा है, जहाँ ऐसा किया गया है, वहाँ भला नहीं हुआ।'

(१०)

श्रीरामकृष्ण, स्वामी विवेकानन्द व अवतारवाद

दक्षिणेश्वर मन्दिर मे भगवान श्रीरामकृष्ण वलराम आदि भक्तों के साथ वैठे है। १८८५ ई., ७ मार्च, दिन के ३-४ वजे का समय होगा।

भक्तगण श्रीरामकृष्ण की चरणसेवा कर रहे हैं,——श्रीरामकृष्ण थोड़ा हंसकर भक्तों से कह रहे हैं—— "इसका (अर्थात् चरणसेवा का) विशेष तात्पर्य है।" फिर अपने हृदय पर हाथ रखकर कह रहे हैं, "इसके भीतर यदि कुछ है, (चरणसेवा करने पर) अज्ञान-अविद्या एकदम दूर हो जायगी।"

एकाएक श्रीरामकृष्ण गम्भीर हुए, मानो कुछ गुप्त वात कहेंगे। भक्तों से कह रहे हैं, "यहाँ पर वाहर का कोई नहीं है। तुम लोगों से एक गुप्त वात कहता हूं। उस दिन देखा, मेरे भीतर से सच्चिदानन्द वाहर आकर प्रकट होकर वोले, 'मै ही युग-युग में अवतार लेता हूं।' देखा, पूर्ण आविर्भाव; सत्त्वगुण का

ऐश्वर्य है।"

भक्तगण ये सब बातें विस्मित होकर सुन रहे हैं; कोई कोई गीता में कहे हुए भगवान श्रीकृष्ण के महावाक्य की याद करा रहे हैं--

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम् ॥
परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे ॥

दूसरे एक दिन, १ सितम्बर १८८५, जन्माष्टमी के दिन नरेन्द्र आदि भक्त आये है। श्री गिरीश घोष दो-एक मित्रों को साथ लेकर गाड़ी करके दक्षिणेश्वर में उपस्थित हुए। वे रोते रोते आ रहे है। श्रीरामकृष्ण स्नेह के साथ उनकी देह थप-थपाने लगे।

गिरीश सिर उठाकर हाथ जोड़कर कह रहे है, "आप ही पूर्ण ब्रह्म हैं। यदि ऐसा न हो तो सभी झूठा है। बड़ा खेद रहा कि आपकी सेवा न कर सका। वरदान दीजिये न भगवन्, कि एक वर्ष आपकी सेवाटहल करूँ।" बार बार उन्हें ईश्वर कहकर स्तुति करने से श्रीरामकृष्ण कह रहे है, "ऐसी बात नहीं कहनी चाहिए। भक्तवत्, न च कृष्णवत्; तुम जो कुछ सोचते हो, सोच सकते हो। अपने गुरु भगवान तो है, तो भी ऐसी बात कहने से अपराध होता है।"

गिरीश फिर श्रीरामकृष्ण की स्तुति कर रहे है, "भगवन्, मुझे पवित्रता दो, जिससे कभी रत्तीभर भी पाप-चिन्तन न हो।"

श्रीरामकृष्ण कह रहे है--"तुम तो पवित्र हो,--तुम्हारी

विश्वास-भक्ति जो है ।"

१ मार्च १८८५ ई. होली के दिन नरेन्द्र आदि भक्तगण आये हैं। उस दिन श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र को संन्यास का उपदेश दे रहे है और कह रहे हैं, "भैया, कामिनी-कांचन न छोड़ने से नहीं होगा। ईश्वर ही एकमात्र सत्य है और सब अनित्य।" कहते कहते वे भावपूर्ण हो उठे। वही दयापूर्ण सस्नेह दृष्टि। भाव में उन्मत्त होकर गाना गाने लगे—

संगीत–(भावार्थ)–"बात करने मे डरता हूं," आदि।

मानो श्रीरामकृष्ण को भय है कि कहीं नरेन्द्र किसी दूसरे का न हो जाय, कही ऐसा न हो कि मेरा न रहे—भय है, कही नरेन्द्र घर-गृहस्थी का न बन जाय। 'हम जो मन्त्र जानते हैं, वही तुम्हे दिया,' अर्थात् जीवन का सर्वश्रेष्ठ आदर्श— सब कुछ त्याग-कर ईश्वर के शरणागत बन जाना--यह मन्त्र तुझे दिया। नरेन्द्र आँसूभरी आँखों से देख रहे है।

श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र से कह रहे हैं, "क्या गिरीश घोष ने जो कुछ कहा, वह तेरे साथ मिलता है ?"

नरेन्द्र–मैंने कुछ नहीं कहा, उन्होंने ही कहा कि उनका विश्वास है कि आप अवतार हैं। मैने और कुछ भी नहीं कहा।

श्रीरामकृष्ण– परन्तु उसमें कैसा गम्भीर विश्वास है ! देखा ?

कुछ दिनों के बाद अवतार के विषय में नरेन्द्र के साथ श्रीरामकृष्ण का वार्तालाप हुआ। श्रीरामकृष्ण कह रहे है,— "अच्छा, कोई-कोई जो मुझे ईश्वर का अवतार कहते हैं—तू क्या समझता है ?"

नरेन्द्र ने कहा, "दूसरों की राय सुनकर मैं कुछ भी नहीं

कहूँगा; मैं स्वयं जब समझूँगा तब मेरा विश्वास होगा, तभी कहूँगा।"

काशीपुर बगीचे मे श्रीरामकृष्ण जिस समय कैनसर रोग की यन्त्रणा से वेचैन हो रहे है, भात का तरल माँड़ तक गले के नीचे नही उतर रहा है, उस समय एक दिन नरेन्द्र श्रीरामकृष्ण के पास बैठकर सोच रहे है, 'इस यन्त्रणा मे यदि कहे कि मै ईश्वर का अवतार हूँ तो विश्वास होगा।' उसी समय श्रीरामकृष्ण कहने लगे, "जो राम, जो कृष्ण, इस समय वे ही रामकृष्ण के रूप में भक्तो के लिए अवतीर्ण हुए है।" नरेन्द्र यह बात सुनकर दंग रह गये। श्रीरामकृष्ण के स्वधाम में सिधार जाने के बाद नरेन्द्र ने संन्यासी होकर बहुत साधन-भजन तथा तपस्या की। उस समय उनके हृदय मे अवतार के सम्बन्ध में श्रीरामकृष्ण के सभी महावाक्य मानो और भी स्पष्ट हो उठे। वे स्वदेश और विदेशों में इस तत्त्व को और भी स्पष्ट रूप से समझाने लगे।

स्वामीजी जब अमरीका मे थे, उस समय नारदीय भक्तिसूत्र आदि ग्रन्थों के अवलम्बन से उन्होंने भक्तियोग नामक ग्रन्थ अंग्रेजी मे लिखा। उसमे भी वे कह रहे है कि अवतारगण छूकर लोगो में चैतन्य उत्पन्न करते है। जो लोग दुराचारी हैं, वे भी उनके स्पर्श से सदाचारी बन जाते है। 'अपि चेत् सुदुराचारो भजते मामनन्यभाक्, साधुरेव स मन्तव्यः सम्यक् व्यवसितो हि सः।' ईश्वर ही अवतार के रूप मे हमारे पास आते है। यदि हम ईश्वर-दर्शन करना चाहें तो अवतारी पुरुषों मे ही उनका दर्शन करना होगा। उनका पूजन किये विना हम रह नही सकते।

"...साधारण गुरुओ से श्रेष्ठ एक और श्रेणी के गुरु होते है, जो इस संसार में ईश्वर के अवतार होते हैं। केवल स्पर्श से ही वे

आध्यात्मिकता प्रदान कर सकते हैं, यहाँ तक कि इच्छा मात्र से ही। उनकी इच्छा से महान् दुराचारी तथा पतित व्यक्ति भी क्षण भर मे ही साधु हो जाता है। वे गुरुओ के भी गुरु है तथा मनुष्य रूप में भगवान के अवतार है। उनके माध्यम विना हम ईश्वर-दर्शन नहीं कर सकते। उनकी उपासना किये विना हम रह ही नही सकते और वास्तव मे केवल वे ही ऐसे हैं जिनकी हमें उपासना करनी चाहिए।...जब तक हमारा यह मनुष्यशरीर है तब तक हमें ईश्वर की उपासना मनुष्य के रूप मे और मनुष्य के सदृश ही करनी पड़ती है। तुम चाहे जितनी बातें करो, चाहे जितना यत्न करो, परन्तु भगवान को मनुष्य-रूप के अतिरिक्त तुम किसी अन्य रूप मे सोच ही नहीं सकते। ईश्वर तथा संसार की सारी वस्तुओ पर चाहे तुम सुन्दर तर्कयुक्त भाषण दे सकते हो, चाहे बड़े युक्तिवादी वन सकते हो और मन को समझा सकते हो कि इन सारे ईश्वरावतारों की कथा भ्रमात्मक है। पर थोड़ी देर के लिए सहज बुद्धि से सोचो। हमें इस विचित्र विचार-बुद्धि से क्या प्राप्त होता है?—— शून्य, कुछ नहीं, केवल शब्दाडम्बर। भविष्य में जब कभी तुम किसी मनुष्य को अवतार-पूजा के विरुद्ध एक बड़ा तर्कपूर्ण भाषण देते हुए सुनो तो उससे यह प्रश्न करो कि उसकी ईश्वरसम्बधी धारणा क्या है। सर्वशक्तिशाली, सर्वव्यापी तथा इस प्रकार के अन्य शब्दों का अर्थ वह केवल अक्षरों के जानने की अपेक्षा और क्या समझता है? वास्तव मे वह कुछ नहीं समझता। वह उनका कोई ऐसा अर्थ नहीं लगा सकता जो उसकी स्वयं की मानवी प्रकृति से प्रभावित न हो। इस सम्बन्ध में वह बिलकुल उसी सामान्य

मनुष्य के सदृश है, जिसने एक पुस्तक भी नही पढ़ी।" . . .

—'भक्तियोग' से उद्धृत

स्वामीजी १८९९ ईसवी मे दूसरी बार अमरीका गये थे। उस समय १९०० ईसवी मे उन्होने कैलिफोर्निया (California) प्रान्त मे लास इंजिलस (Los Angeles) नामक नगर मे 'ईशदूत ईसा' (Christ the Messenger) विषय पर एक भाषण दिया था। इस भाषण मे उन्होने फिर से अवतार-तत्त्व को भलीभाँति समझाने की चेष्टा की थी। स्वामीजी ने कहा—

"...इसी महापुरुष (ईसा मसीह) ने कहा है, 'किसी भी व्यक्ति ने ईश्वर-पुत्र के माध्यम बिना ईश्वर का साक्षात्कार नहीं किया है।' और यह कथन अक्षरशः सत्य है। ईश्वर-तनय के अतिरिक्त हम ईश्वर को और कहाँ देखेंगे? यह सच है कि मुझमें और तुममें, हममे से निर्धन से भी निर्धन और हीन से भी हीन व्यक्ति मे भी परमेश्वर विद्यमान है, उनका प्रतिबिम्ब मौजूद है। प्रकाश की गति सर्वत्र है, उसका स्पन्दन सर्वव्यापी है, किन्तु हमे उसे देखने के लिए दीप जलाने की आवश्यकता होती है। जगत् का सर्वव्यापी ईश भी तब तक दृष्टिगोचर नहीं होता, जब तक ये महान् शक्तिशाली दीपक, ये ईशदूत, ये उसके सन्देशवाहक और अवतार, ये नर-नारायण उसे अपने मे प्रतिबिम्बित नही करते।...ईश्वर के इन सब महान् ज्ञानज्योतिसम्पन्न अग्रदूतों मे से आप किसी एक की ही जीवन-कथा लीजिये और ईश्वर की जो उच्चतम भावना आपने हृदय मे धारण की है, उससे उसके चरित्र की तुलना कीजिये। आपको प्रतीत होगा कि इन जीवित और जाज्वल्यमान आदर्श महापुरुषों के चरित्र की अपेक्षा आपकी भावनाओं का ईश्वर अनेकांश मे हीन है,

ईश्वर के अवतार का चरित्र आपके कल्पित ईश्वर की अपेक्षा कही अधिक उच्च है। आदर्श के विग्रह-स्वरूप इन महापुरुषों ने ईश्वर की साक्षात् उपलब्धि कर, अपने महान् जीवन का जो आदर्श, जो दृष्टान्त हमारे सम्मुख रखा है, ईश्वरत्व की उससे उच्च भावना धारण करना असम्भव है। इसलिए यदि कोई इनकी ईश्वर के समान अर्चना करने लगे, तो इसमे क्या अनौचित्य है? इन नरनारायणों के चरणाम्बुजों में लुण्ठित हो यदि कोई उनकी भूमि पर अवतीर्ण ईश्वर के समान पूजा करने लगे तो क्या पाप है? यदि उनका जीवन हमारे ईश्वरत्व के उच्चतम आदर्श से भी उच्च है तो उनकी पूजा करने मे क्या दोप? दोष की वात तो दूर रही, ईश्वरोपासना की केवल यही एक विधि सम्भव है।..."

—'महापुरुषों की जीवनगाथाएँ' से उद्धृत

अवतार के लक्षण। ईसा मसीह

अवतार-पुरुष क्या कहने के लिए आते है? श्रीरामकृष्ण ने नरेन्द्र से कहा था, "भैया, कामिनी-कांचन का त्याग किये विना न होगा। ईश्वर ही वस्तु है, बाकी सभी अवस्तु हैं।" स्वामीजी ने भी अमरीकनों से कहा—

"...हम अपने आलोच्य महापुरुप, जीवन के इस दिव्य-संदेशवाहक (ईसा) के जीवन का मूलमन्त्र यही पाते है कि 'यह जीवन कुछ नहीं है, इससे भी उच्च कुछ और है'...। उन्हे इस नश्वर जगत् व उसके क्षणभंगुर ऐश्वर्य मे विश्वास नहीं था।...ईसा स्वयं त्यागी व वैराग्यवान् थे, इसलिए उनकी शिक्षा भी यही है कि वैराग्य या त्याग ही मुक्ति का एकमेव मार्ग है, इसके अतिरिक्त मुक्ति का और कोई पथ नही है। यदि

हममें इस मार्ग पर अग्रसर होने की क्षमता नही है, तो हमें मुख मे तृण धारण कर विनीत भाव से अपनी यह दुर्बलता स्वीकार कर लेनी चाहिए कि हममें अब भी 'मै' और 'मेरे' के प्रति ममत्व है, हममे धन और ऐश्वर्य के प्रति आसक्ति है। हमे धिक्कार है कि हम यह सव स्वीकार न कर, मानवता के उन महान् आचार्य का अन्य रूप से वर्णन कर उन्हे निम्न स्तर पर खीच लाने की चेष्टा करते हैं। उन्हे पारिवारिक बन्धन नही जकड़ सके। क्या आप सोचते है कि ईसा के मन मे कोई सांसारिक भाव था? क्या आप सोचते है कि यह ज्ञानज्योतिस्वरूप अमानवी मानव, यह प्रत्यक्ष ईश्वर पृथ्वी पर पशुओं का समधर्मी बनने के लिए अवतीर्ण हुआ? किन्तु फिर भी लोग उनके उपदेशो का अपनी इच्छानुसार अर्थ लगाकर प्रचार करते है। उन्हें देह-ज्ञान नही था, उनमें स्त्री-पुरुष भेदबुद्धि नही थी—वे अपने को लिंगोपाधिरहित आत्मास्वरूप जानते थे। वे जानते थे कि वे शुद्ध आत्मास्वरूप है—देह में अवस्थित हो मानवजाति के कल्याण के लिए देह का परिचालन मात्र कर रहे है। देह के साथ उनका केवल इतना ही सम्पर्क था। आत्मा लिंगविहीन है। विदेह आत्मा का देह व पाशवभाव से कोई सम्वन्ध नही होता। अवश्यमेव त्याग व वैराग्य का यह आदर्श साधारण जनों की पहुँच के बाहर है। कोई हर्ज नहीं, हमे अपना आदर्श विस्मृत नही कर देना चाहिए—उनकी प्राप्ति के लिए सतत यत्नशील रहना चाहिए। हमे यह स्वीकार कर लेना चाहिए कि त्याग हमारे जीवन का आदर्श है, किन्तु अभी तक हम उस तक पहुंचने मे असमर्थ है।..."

—'**महापुरुषों की जीवनगाथाएँ**' से उद्धृत

फिर अमरीकनो से कह रहे है—"...अपनी महान् वाणी

से ईसा ने जगत् में घोषणा की, 'दुनिया के लोगो, इस बात को भलीभाँति जान लो कि स्वर्ग का राज्य तुम्हारे अभ्यन्तर में अवस्थित है।'—'मै और मेरे पिता अभिन्न हैं।' साहस कर खड़े हो जाओ और घोषणा करो कि मैं केवल ईश्वर-तनय ही नही हूँ, पर अपने हृदय मे मुझे यह भी प्रतीति हो रही है कि मैं और मेरे पिता एक और अभिन्न है। नाजरथवासी ईसा मसीह ने यही कहा।...

"...इसलिए हमे केवल नाजरथवासी ईसा मे ही ईश्वर का दर्शन न कर विश्व के उन सभी महान् आचार्यो व पैगम्बरों में भी उसका दर्शना करना चाहिए, जो ईसा के पहले जन्म ले चुके थे, जो ईसा के पश्चात् आविर्भूत हुए है और जो भविष्य में अवतार ग्रहण करेंगे। हमारा सम्मान और हमारी पूजा सीमावद्ध न हों। ये सब महापुरुष उसी एक अनन्त ईश्वर की विभिन्न अभिव्यक्ति है। वे सब शुद्ध और स्वार्थगन्ध-शून्य है, सभी ने इस दुर्बल मानवजाति के उद्धार के लिए प्राणपण से प्रयत्न किया है, इसी के लिए अपना जीवन निछावर कर दिया है। वे हमारे और हमारी आनेवाली सन्तान के सब पापों को ग्रहण कर उनका प्रायश्चित्त कर गये है।..."

—'महापुरुषों की जीवनगाथाएँ' से उद्धृत

स्वामीजी वेदान्त की चर्चा करने के लिए कहा करते थे, परन्तु साथ ही उस चर्चा मे जो विपत्ति है, वह भी बता देते थे। श्रीरामकृष्ण जिस दिन ठनठनिया मे श्री शशधर पण्डित के साथ वार्तालाप कर रहे थे, उस दिन नरेन्द्र आदि अनेक भक्त वहाँ पर उपस्थित थे, १८८४ ईसवी।

ज्ञानयोग व स्वामी विवेकानन्द

श्रीरामकृष्ण ने कहा है, 'ज्ञानयोग इस युग में बहुत कठिन है। जीव का एक तो अन्न मे प्राण है, उस पर आयु कम है। फिर देह-बुद्धि किसी भी तरह नही जाती। इधर देह-बुद्धि न जाने से ब्रह्मज्ञान नही होता। ज्ञानी कहते है, 'मै वही ब्रह्म हूं।' मै शरीर नही हूं, मै भूख-प्यास, रोग-शोक, जन्म-मृत्य, सुख-दु:ख इन सभी से परे हूं। यदि रोग-शोक सुख-दु.ख इन सब का बोध रहे तो तुम ज्ञानी क्योकर होगे? इधर काँटे से हाथ चुभ रहा है, खून की धारा बह रही है, बहुत दर्द हो रहा है, परन्तु कहता है, 'कहाँ, हाथ तो नही कटा! मेरा क्या हुआ?'

"इसलिए इस युग के लिए भक्तियोग है। इसके द्वारा दूसरे पथो की तुलना मे आसानी से ईश्वर के पास जाया जाता है। ज्ञानयोग या कर्मयोग तथा दूसरे पथो से भी ईश्वर के पास जाया जा सकता है, परन्तु ये सब कठिन पथ है।"

श्रीरामकृष्ण ने और भी कहा है, "कर्मियो का जितना कर्म बाकी है, उतना निष्काम भावना से करें। निष्काम कर्म द्वारा चित्तशुद्धि होने पर भक्ति आयगी। भक्ति द्वारा भगवान की प्राप्ति होती है।"

स्वामीजी ने भी कहा, "देह-बुद्धि रहते 'सोऽहम्' नहीं होता—अर्थात् सभी वासनाएं मिट जाने पर, सर्वत्याग होने पर तब कहीं समाधि होती है। समाधि होने पर तब ब्रह्मज्ञान होता है। भक्तियोग सरल व मधुर (natural and sweet) है।"

"...ज्ञानयोग अवश्य ही अति श्रेष्ठ मार्ग है। उच्च तत्त्वज्ञान इसका प्राण है, और आश्चर्य की बात तो यह है कि

प्रत्येक मनुष्य यह सोचता है कि वह ज्ञानयोग के आदर्शानुसार चलने मे समर्थ है। परन्तु वास्तव में ज्ञानयोग-साधना बड़ी कठिन है। ज्ञानयोग के पथ पर चलने मे हमारे गड्ढे में गिर जाने की बड़ी आशंका रहती है। कहा जा सकता है कि इस संसार मे दो प्रकार के मनुष्य होते हैं। एक तो आसुरी प्रकृतिवाले जिनकी दृष्टि मे अपने शरीर का पालन-पोषण ही सर्वस्व है और दूसरे दैवी प्रकृतिवाले, जिनकी यह धारणा रहती है कि शरीर किसी एक विशेष उद्देश्य की पूर्ति के लिए केवल एक साधन तथा आत्मोन्नति के लिए एक यन्त्रविशेष है। शैतान भी अपनी कार्य-सिद्धि के लिए झट से शास्त्रों को उद्धृत कर देता है, और इस प्रकार प्रतीत होता है कि बुरे मनुष्य के कृत्यों के लिए भी शास्त्र उसी प्रकार साक्षी हैं जैसे कि एक सत्पुरुष के शुभ कार्य के लिए। ज्ञानयोग मे यही एक बड़े डर की बात है। परन्तु भक्तियोग स्वाभाविक तथा मधुर है। भक्त उतनी ऊंची उड़ान नहीं उड़ता जितनी कि एक ज्ञानयोगी, और इसीलिए उसके उतने बड़े खड्डों में गिरने की आशंका भी नही रहती।..."

—'भक्तियोग' से उद्धृत

क्या श्रीरामकृष्ण अवतार हैं? स्वामीजी का विश्वास

भारत के महापुरुषों (The Sages of India) के सम्बन्ध में स्वामीजी ने जो भाषण दिया था, उसमें अवतार-पुरुषों की अनेक बाते कही है। श्रीरामचन्द्र, श्रीकृष्ण, बुद्धदेव, रामानुज, शंकरा-चार्य, चैतन्यदेव आदि सभी की बाते कही। भगवान श्रीकृष्ण के इस कथन का उद्धरण देकर समझाने लगे, 'जब धर्म की ग्लानि होकर अधर्म का अभ्युत्थान होता है, तो साधुओं के परित्राण के लिए, पापाचार को विनष्ट करने के लिए मै युग युग मे अवतीर्ण

होता हूं।'

उन्होने फिर कहा, 'गीता में श्रीकृष्ण ने धर्मसमन्वय किया है,'—

"...हम गीता मे भिन्न भिन्न सम्प्रदायों के विरोध के कोलाहल की दूर से आती हुई आवाज सुन पाते हैं, और देखते हैं कि समन्वय के वे अद्‌भुत प्रचारक भगवान श्रीकृष्ण बीच में पड़कर विरोध को हटा रहे है।..."

—'भारत में विवेकानन्द' से उद्‌धृत

"श्रीकृष्ण ने फिर कहा है,—स्त्री, वैश्य, शूद्र सभी परम गति को प्राप्त करेंगे, ब्राह्मण क्षत्रियों की तो बात ही क्या है!

"बुद्धदेव दरिद्र के देव हैं। सर्वभूतस्थमात्मानम्—भगवान सर्वभूतों में है—यह उन्होंने प्रत्यक्ष दिखा दिया। बुद्धदेव के शिष्यगण आत्मा, जीवात्मा आदि नहीं मानते हैं—इसीलिए शंकराचार्य ने फिर से वैदिक धर्म का उपदेश दिया। वे वेदान्त का अद्वैत मत, रामानुज का विशिष्टाद्वैत मत समझाने लगे। उसके बाद चैतन्यदेव प्रेमभक्ति सिखाने के लिए अवतीर्ण हुए। शंकर और रामानुज ने जाति का विचार किया था, परन्तु चैतन्यदेव ने ऐसा न किया। चैतन्यदेव ने कहा, 'भक्त की फिर जाति क्या?'"

अब स्वामीजी श्रीरामकृष्णदेव की बात कह रहे है,—

"...एक (शंकराचार्य) का था अद्‌भुत मस्तिष्क, और दूसरे (चैतन्य) का था विशाल हृदय। अब एक ऐसे अद्‌भुत पुरुष के जन्म लेने का समय आ गया था, जिनमें ऐसा ही हृदय और मस्तिष्क दोनों एक साथ विराजमान हो, जो शंकर के अद्‌भुत मस्तिष्क एवं चैतन्य के अद्‌भुत, विशाल, अनन्त हृदय

के एक ही साथ अधिकारी हों, जो देखें कि सब सम्प्रदाय एक ही आत्मा, एक ही ईश्वर की शक्ति से चालित हो रहे हैं और प्रत्येक प्राणी मे वही ईश्वर विद्यमान है, जिनका हृदय भारत में अथवा भारत के बाहर दरिद्र, दुर्बल, पतित सब के लिए पानी-पानी हो जाय, लेकिन साथ ही जिनकी विशाल बुद्धि ऐसे महान् तत्त्वों को पैदा करे, जिनसे भारत मे अथवा भारत के बाहर सब विरोधी सम्प्रदायो मे समन्वय साधित हो और इस अद्‌भुत समन्वय द्वारा एक ऐसे सार्वभौमिक धर्म को प्रकट करे, जिससे हृदय और मस्तिष्क दोनों की बराबर उन्नति होती रहे। एक ऐसे ही पुरुष ने जन्म ग्रहण किया और मैंने वर्षो तक उनके चरण तले बैठकर शिक्षा-लाभ का सौभाग्य प्राप्त किया। ऐसे एक पुरुष के जन्म लेने का समय आ गया था, इसकी आवश्यकता पड़ी थी, और वे आविर्भूत हुए। सब से अधिक आश्चर्य की बात यह थी कि उनका समग्र जीवन एक ऐसे शहर के पास व्यतीत हुआ जो पाश्चात्य भावो से उन्मत्त हो रहा था, भारत के सब शहरो की अपेक्षा जो विदेशी भावों से अधिक भरा हुआ था। उनमे पोथियो की विद्या कुछ भी न थी, ऐसे महाप्रतिभासम्पन्न होते हुए भी वे अपना नाम तक नहीं लिख सकते थे, किन्तु हमारे विश्वविद्यालय के बड़े बड़े उपाधिधारियो ने उन्हे देखकर एक महाप्रतिभाशाली व्यक्ति मान लिया था। वे एक अद्‌भुत महापुरुष थे। यह तो एक बड़ी लम्बी कहानी है, आज रात को आपके निकट उनके विषय में कुछ भी कहने का समय नही है। इसलिए मुझे भारतीय सब महापुरुषों के पूर्णप्रकाश-स्वरूप युगाचार्य भगवान श्रीरामकृष्ण का उल्लेख भर करके आज समाप्त करना होगा। उनके उपदेश आजकल

हमारे लिए विशेष कल्याणकारी है। उनके भीतर जो ऐश्वरिक शक्ति थी, उस पर विशेष ध्यान दीजिये। वे एक दरिद्र ब्राह्मण के लड़के थे। उनका जन्म बंगाल के सुदूर, अज्ञात, अपरिचित किसी एक गाँव में हुआ था। आज यूरोप, अमरीका के सहस्रों व्यक्ति वास्तव मे उनकी पूजा कर रहे हैं, भविष्य में और सहस्रों मनुष्य उनकी पूजा करेंगे। ईश्वर की लीला कौन समझ सकता है! हे भाइयो, आप यदि इसमे विधाता का हाथ नहीं देखते तो आप अन्धे है, सचमुच जन्मान्ध है। यदि समय मिला, यदि आप लोगों से आलोचना करने का और कभी अवकाश मिला तो आपसे इनके सम्बन्ध मे विस्तारपूर्वक कहूँगा; इस समय केवल इतना ही कहना चाहता हूँ कि यदि मैंने जीवन भर मे एक भी सत्य वाक्य कहा है तो वह उन्ही का वाक्य है; पर यदि मैंने ऐसे वाक्य कहे है जो असत्य, भ्रमपूर्ण अथवा मानवजाति के लिए हितकारी न हों, तो वे सब मेरे ही वाक्य है, उनके लिए पूरा उत्तरदायी मै ही हूँ।"

—'भारत में विवेकानन्द' से उद्धृत

स्वामीजी ने और भी कहा है,—

"...फिर से कालचक्र घूमकर आ रहा है, एक बार फिर भारत से वही शक्तिप्रवाह निःसृत हो रहा है, जो शीघ्र ही समस्त जगत् को प्लावित कर देगा। एक वाणी मुखरित हुई है, जिसकी प्रतिध्वनि चारों ओर व्याप्त हो रही है एव जो प्रतिदिन अधिकाधिक शक्ति सग्रह कर रही है, और यह वाणी इसके पहले की सभी वाणियो की अपेक्षा अधिक शक्तिशाली है, क्योंकि यह अपने पूर्ववर्ती उन सभी वाणियों का समष्टिस्वरूप है। जो वाणी

एक समय कलकल-निनादिनी सरस्वती के तीर पर ऋषियों के अन्तस्तल में प्रस्फुटित हुई थी, जिस वाणी ने रजतशुभ्रहिमाच्छादित गिरिराज हिमालय के शिखर-शिखर पर प्रतिध्वनित हो कृष्ण, बुद्ध और चैतन्यदेव में से होते हुए समतल प्रदेशों में अवरोहण कर समस्त देश को प्लावित कर दिया था, वही वाणी एक बार पुनः मुखरित हुई है। एक वार फिर से द्वार खुल गये है। आइये, हम सब आलोक-राज्य मे प्रवेश करें——द्वार एक बार पुनः उन्मुक्त हो गये हैं।. ."

——'हमारा भारत' से उद्धृत

इसी प्रकार स्वामी विवेकानन्द ने भारतवर्ष के अनेक स्थानों मे अवतार-पुरुष श्रीरामकृष्ण के आगमन की वार्ता घोषित की। जहाँ जहाँ मठ स्थापित हुए हैं, वहाँ उनकी प्रतिदिन सेवा-पूजा आदि हो रही है। आरती के समय सभी स्थानो मे स्वामीजी द्वारा रचित स्तव वाद्य तथा स्वर-संयोग के साथ गाया जाता है। इस स्तव में स्वामीजी ने भगवान् श्रीरामकृष्ण को सगुण निर्गुण निरजन जगदीश्वर कहकर सम्बोधित किया है—और कहा है, "हे भवसागर के पार उतारनेवाले! तुम नररूप धारण करके हमारे भवबन्धन को छिन्न करने के लिए योग के सहायक बनकर आये हो। तुम्हारी कृपा से मेरी समाधि हो रही है। तुमने कामिनी-कांचन छुड़वाया है। हे भक्तों को शरणदेनेवाले, अपने चरण-कमलों में मुझे प्रेम दो। तुम्हारे चरणकमल मेरी परम सम्पद् है। उसे प्राप्त करने पर भवसागर गोष्पद जैसा लगता है।"

स्वामीजी-रचित श्रीरामकृष्ण-आरती।

(मिश्र-चौताल)

खण्डन भव-बन्धन, जग-वन्दन, वन्दि तोमाय।
निरंजन, नररूपधर, निर्गुण, गुणमय ॥
मोचन-अघदूषण, जगभूषण, चिद्घनकाय।
ज्ञानांजन-विमल-नयन, वीक्षणे मोह जाय ॥
भास्वर भाव-सागर, चिर-उन्मद प्रेम-पाथार।
भक्तार्जन-युगलचरण, तारण भव-पार ॥
जृम्भित-युग-ईश्वर, जगदीश्वर, योगसहाय।
निरोधन, समाहित मन, निरखि तव कृपाय ॥
भंजन-दुखगंजन, करुणाघन, कर्म-कठोर।
प्राणार्पण-जगत-तारण, कृन्तन-कलिडोर ॥
वंचन-कामकांचन, अतिनिन्दित-इन्द्रिय-राग।
त्यागीश्वर, हे नरवर, देह पदे अनुराग ॥
निर्भय, गतसंशय, दृढ़निश्चयमानसवान्।
निष्कारण-भकत-शरण त्यजि जातिकुलमान ॥
सम्पद तव श्रीपद, भव गोष्पद-वारि यथाय।
प्रेमार्पण, समदर्शन, जगजन-दुख जाय ॥

जो राम, जो कृष्ण, इस समय वही रामकृष्ण

काशीपुर वगीचे में स्वामीजी ने यह महावाक्य भगवान श्रीरामकृष्ण के श्रीमुख से सुना था। इस महावाक्य का स्मरण कर स्वामीजी ने विलायत से कलकत्ते में लौटने के बाद वेलुड़

मठ में एक स्तोत्र की रचना की थी। स्तोत्र मे उन्होने कहा है—जो आचण्डाल दीन-दरिद्रों के मित्र, जानकीवल्लभ, ज्ञान-भक्ति के अवतार श्रीरामचन्द्र हुए, जिन्होने फिर श्रीकृष्ण के रूप में कुरुक्षेत्र में गीतारूपी गम्भीर मधुर सिंहनाद किया था, वे ही इस समय विख्यात पुरुप श्रीरामकृष्ण के रूप में अवतीर्ण हुए हैं।

ॐ नमो भगवते रामकृष्णाय

(१)

आचण्डालाप्रतिहतरयो यस्य प्रेमप्रवाहः
लोकातीतोऽप्यहह न जहौ लोककल्याणमार्गम्।
त्रैलोक्येऽप्यप्रतिममहिमा जानकीप्राणवन्धः
भक्त्या ज्ञानं वृतवरवपुः सीतया यो हि रामः॥

(२)

स्तब्धीकृत्य प्रलयकलितम्वाहवोत्थं महान्तम्
हित्वा रात्रिं प्रकृतिसहजामन्धतामिस्रमिश्राम्।
गीतं शान्तं मधुरमपि यः सिंहनादं जगर्ज।
सोऽयं जातः प्रथितपुरुपो रामकृष्णस्त्विदानीम्॥

और एक स्तोत्र बेलुड़ मठ में तथा वाराणसी, मद्रास, ढाका आदि सभी मठों मे आरती के समय गाया जाता है।

इस स्तोत्र मे स्वामीजी कह रहे है— "हे दीनवन्धो, तुम सगुण हो, फिर त्रिगुणो के परे हो, रातदिन तुम्हारे चरणकमलों की आराधना नही कर रहा हूं इसीलिए मै तुम्हारी शरण मे आया हूं। मैं मुख से आराधना कर रहा हूं, ज्ञान का अनुशीलन कर रहा हूं, परन्तु कुछ भी धारणा करने मे असमर्थ हूं इसीलिए तुम्हारी शरण मे आया हूं। तुम्हारे चरणकमलो का चिन्तन करने से मृत्यु पर विजय प्राप्त होती है, इसीलिए मै तुम्हारी शरण मे

आया हूँ। हे दीनबन्धो, तुम ही जगत् की एकमात्र प्राप्त करने योग्य वस्तु हो, मैं तुम्हारी शरण में आया हूँ। 'त्वमेव शरणं मम दीनबन्धो!'"

ॐ ह्रीं ऋतं त्वमचलो गुणजित् गुणेड्यः
नक्तन्दिवं सकरुणं तव पादपद्मम्।
मोहंकषं बहुकृतं न भजे यतोऽहम्
तस्मात्त्वमेव शरणं मम दीनबन्धो ॥१॥
भक्तिर्भगश्च भजनं भवभेदकारि
गच्छन्त्यलं सुविपुलं गमनाय तत्त्वम्।
वक्त्रोद्धृतन्तु हृदि मे न च भाति किंचित्
तस्मात्त्वमेव शरणं मम दीनबन्धो ॥२॥
तेजस्तरन्ति तरसा त्वयि तृप्तृष्णाः
रागे कृते ऋतपथे त्वयि रामकृष्णे।
मर्त्यामृतं तव पदं मरणोर्मिनाशम्
तस्मात्त्वमेव शरणं मम दीनबन्धो ॥३॥
कृत्यं करोति कलुषं कुहकान्तकारि
ष्णान्तं शिवं सुविमलं तव नाम नाथ।
यस्मादहं त्वशरणो जगदेकगम्य
तस्मात्त्वमेव शरणं मम दीनबन्धो ॥४॥

स्वामीजी ने आरती के बाद श्रीरामकृष्ण-प्रणाम सिखाया है। उसमें श्रीरामकृष्णदेव को अवतारों में श्रेष्ठ कहा गया है।

"स्थापकाय च धर्मस्य सर्वधर्मस्वरूपिणे।
अवतारवरिष्ठाय रामकृष्णाय ते नमः॥"

(ग)

परिच्छेद १

श्रीरामकृष्ण की महासमाधि के पश्चात्

(१)

पहला श्रीरामकृष्ण मठ

रविवार, १५ अगस्त १८८६ ई. को श्रीरामकृष्ण, भक्तो को दुःख के असीम समुद्र मे वहाकर स्वधाम को चले गये। अविवाहित और विवाहित भक्तगण श्रीरामकृष्ण की सेवा करते समय आपस में जिस स्नेह-सूत्र मे वँध गये थे, वह कभी छिन्न होने का न था। एकाएक कर्णधार को न देखकर आरोहियों को भय हो गया है। वे एक दूसरे का मुँह ताक रहे है। इस समय उनकी ऐसी अवस्था है कि विना एक दूसरे को देखे उन्हें चैन नहीं—मानो उनके प्राण निकल रहे हो। दूसरों से वार्तालाप करने को जी नही चाहता। सब के सब सोचते है—'क्या अव उनके दर्शन न होंगे? वे तो कह गये हैं कि व्याकुल होकर पुकारने पर, हृदय की पुकार सुनकर ईश्वर अवश्य दर्शन देंगे! वे कह गये हैं—आन्तरिकता होने पर ईश्वर अवश्य सुनेंगे।' जव वे लोग एकान्त में रहते हैं, तव उसी आनन्दमयी मूर्ति की याद आती है। रास्ता चलते हुए भी उन्ही की स्मृति वनी रहती है; अकेले रोते फिरते है। श्रीरामकृष्ण ने शायद इसीलिए मास्टर से कहा था, 'तुम लोग रास्ते मे रोते फिरोगे। इसीलिए मुझे शरीर-त्याग करते हुए कष्ट हो रहा है।' कोई सोचते है, 'वे तो चले गये और मैं अभी भी वचा हुआ हूं! इस अनित्य संसार मे अव भी रहने की इच्छा! मैं अगर चाहूं तो शरीर का त्याग कर सकता

हूँ, परन्तु करता कहाँ हूँ !'

किशोर भक्तों ने काशीपुर के बगीचे में रहकर दिनरात उनकी सेवा की थी। उनकी महासमाधि के पश्चात्, इच्छा न होते हुए भी, लगभग सब के सब अपने अपने घर चले गये। उनमें से किसी ने भी अभी सन्यासी का बाहरी चिह्न (गेरुआ वस्त्र आदि) धारण नही किया है। वे लोग श्रीरामकृष्ण के तिरोभाव के बाद कुछ दिनों तक दत्त, घोष, चक्रवर्ती, गांगुली आदि उपाधियो द्वारा लोगों को अपना परिचय देते रहे; परन्तु उन्हें श्रीरामकृष्ण हृदय से त्यागी कर गये थे।

लाटू, तारक और बूढ़े गोपाल के लिए कोई स्थान न था जहाँ वे वापस जाते। उनसे सुरेन्द्र ने कहा, "भाइयो, तुम लोग अब कहाँ जाओगे? आओ, एक मकान लिया जाय। वहाँ तुम लोग श्रीरामकृष्ण की गद्दी लेकर रहोगे तो हम लोग भी कभी-कभी हृदय की दाह मिटाने के लिए वहाँ आ जाया करेंगे, अन्यथा संसार मे इस तरह दिन-रात कैसे रहा जायगा? तुम लोग वहीं जाकर रहो। मै काशीपुर के बगीचे मे श्रीरामकृष्ण की सेवा के लिए जो कुछ दिया करता था, वह अभी भी दूँगा। इस समय उतने से ही रहने और भोजन आदि का खर्च चलाया जायगा।" पहले-पहले दो-एक महीने तक सुरेन्द्र तीस रुपये महीना देते गये। क्रमशः मठ मे दूसरे दूसरे भाई ज्यों ज्यो आकर रहने लगे, त्यों त्यों पचास-साठ रुपये का माहवार खर्च हो गया—सुरेन्द्र देते भी गये। अन्त मे सौ रुपये तक का खर्च हो गया। वराहनगर मे जो मकान लिया गया था, उसका किराया और टैक्स दोनों मिलाकर ग्यारह रुपये पड़ते थे। रसोइये को छः रुपये महीना और बाकी खर्च भोजन आदि का था। बूढ़े गोपाल, लाटू और

तारक के घर था ही नहीं। छोटे गोपाल काशीपुर के वगीचे से श्रीरामकृष्ण की गद्दी और कुल सामान लेकर उसी किराये के मकान मे चले आये। काशीपुर में जो रसोइया था, उसे यहाँ भी लगाया गया। शरद रात को आकर रहते थे। तारक वृन्दावन गये हुये थे, कुछ दिनो में वे भी आ गये। नरेन्द्र, शरद, शशी, बाबूराम, निरंजन, काली ये लोग पहले-पहल घर से कभी कभी आया करते थे। राखाल, लाटू, योगीन और काली ठीक उसी समय वृन्दावन गये हुये थे। काली एक महीने के अन्दर, राखाल कई महीने के वाद और योगीन पूरे साल भर वाद लौटे।

कुछ दिनों के पश्चात् नरेन्द्र, राखाल, निरंजन, शरद, शशी, बाबूराम, योगीन, काली और लाटू वही रह गये,— वे फिर घर नहीं लौटे। क्रमशः प्रसन्न और सुवोध भी आकर रह गये। गंगाधर सदा मठ में आया-जाया करते थे। नरेन्द्र को विना देखे वे रह न सकते थे। बनारस के शिवमन्दिर मे गाया जानेवाला 'जय शिव ओंकार' स्तोत्र उन्होने मठ के भाइयों को सिखलाया था। मठ के भाई 'वाह गुरु की फतह' कहकर वीच-वीच मे जो जयध्वनि करते थे, यह भी उन्हीं की सिखलायी हुई थी। तिब्बत से लौटने के पश्चात् वे मठ में ही रह गये। श्रीरामकृष्ण के और दो भक्त हरि तथा तुलसी सदा नरेन्द्र तथा मठ के दूसरे भाइयों को देखने के लिए आया करते थे। कुछ दिन वाद ये भी मठ में रह गये।

सुरेन्द्र ! तुम धन्य हो ! यह पहला मठ तुम्हारे ही हाथों से तैयार हुआ ! तुम्हारी ही पवित्र इच्छा से इस आश्रम का संगठन हुआ ! तुम्हे यन्त्रस्वरूप करके भगवान श्रीरामकृष्ण ने अपने मूलमन्त्र कामिनीकांचन-त्याग को मूर्तिमान कर लिया। कौमार-

काल से ही वैराग्यव्रती शुद्धात्मा नरेन्द्रादि भक्तों द्वारा तुमने फिर से हिन्दू धर्म का प्रकाश मनुष्यों के सामने रखा ! भाई, तुम्हारा ऋण कौन भूल सकता है ? मठ के भाई मातृहीन बच्चों की तरह रहते थे—तुम्हारी प्रतीक्षा किया करते थे कि तुम कब आओगे। आज मकान का किराया चुकाने मे सब रुपये खर्च हो गये है—आज भोजन के लिए कुछ भी नहीं बचा—कब तुम आओगे—कब तुम आओगे और आकर अपने भाइयों के भोजन का बन्दोबस्त कर दोगे ! तुम्हारे अकृत्रिम स्नेह की याद करके ऐसा कौन है जिसकी आँखों में आँसू न आ जाये !

यह मठ श्रीरामकृष्ण के भक्तों मे वराहनगर मठ के नाम से परिचित हुआ। वहीं श्रीठाकुर-मन्दिर में श्रीगुरुमहाराज भगवान श्रीरामकृष्ण की नित्यसेवा होने लगी। नरेन्द्र आदि सब भक्तों ने कहा, "अब हम लोग संसार-धर्म का पालन न करेंगे। श्रीगुरु-महाराज ने कामिनी और कांचन त्याग करने की आज्ञा दी थी, अतएव हम लोग अब किस तरह घर लौट सकते हैं ?"

नित्यपूजन का भार शशी ने लिया। नरेन्द्र गुरु-भाइयों की देख-भाल किया करते थे। सब भाई भी उन्ही का मुँह जोहते थे। नरेन्द्र उनसे कहते थे, "साधना करनी होगी, नहीं तो ईश्वर नही मिल सकते।" वे और दूसरे गुरुभाई अनेक प्रकार की साधनाएँ करने लगे। वेद, पुराण, तन्त्र इत्यादि मतों के अनुसार अनेक प्रकार की साधनाओं में वे प्राणपण से लग गये। कभी कभी एकान्त में वृक्ष के नीचे, कभी अकेले श्मशान मे, कभी गंगा-तट पर साधना करते थे। मठ मे कभी ध्यान करनेवाले कमरे के भीतर अकेले जप और ध्यान करते हुए दिन बिताने लगे। कभी कभी भाइयों के साथ एकत्र कीर्तन करते हुए नृत्य

करते रहते। ईश्वर-प्राप्ति के लिए सब लोग, विशेषकर नरेन्द्र, बहुत ही व्याकुल हो गये। वे कभी कभी कहते थे, "उनकी प्राप्ति के लिए क्या मैं प्रायोपवेशन कर डालूँ?"

(२)

नरेन्द्रादि भक्तो का शिवरात्रि-व्रत

आज सोमवार है, २१ फरवरी १८८७। नरेन्द्र और राखाल आदि ने आज शिवरात्रि का उपवास किया है। आज से दो दिन बाद श्रीरामकृष्ण की जन्मतिथि-पूजा होगी।

नरेन्द्र और राखाल आदि भक्तों मे इस समय तीव्र वैराग्य है। एक दिन राखाल के पिता राखाल को घर ले जाने के लिए आये थे। राखाल ने कहा, "आप लोग कष्ट करके क्यों आते है? मै यहाँ बहुत अच्छी तरह हूँ। अब आशीर्वाद दीजिये कि आप लोग मुझे भूल जायँ और मैं भी आप लोगों को भूल जाऊँ।" इस समय सब लोगों में तीव्र वैराग्य है। सारा समय साधन-भजन मे ही जाता है। सब का एक ही उद्देश्य है कि किस तरह ईश्वर के दर्शन हों।

नरेन्द्र आदि भक्तगण कभी जप और ध्यान करते हैं, कभी शास्त्रपाठ। नरेन्द्र कहते है, "गीता मे भगवान श्रीकृष्ण ने जिस निष्काम कर्म का उल्लेख किया है, वह पूजा, जप, ध्यान—यही सब है, सांसारिक कर्म नहीं।"

आज सवेरे नरेन्द्र कलकत्ता गये हुए हैं। घर के मुकदमे की पैरवी करनी पड़ती है। अदालत मे गवाह पेश करने पड़ते हैं।

* * *

मास्टर सवेरे नौ बजे के लगभग मठ में आये। कमरे में प्रवेश करने पर उन्हें देखकर श्रीयुत तारक मारे आनन्द के शिव के

सम्बन्ध मे रचित एक गाना गाने लगे--"ता थैया ता थैया नाचे भोला।"

उनके साथ राखाल भी गाने लगे और गाते हुए दोनों नाचने लगे।

यह गाना नरेन्द्र को लिखे अभी कुछ ही समय हुआ है।

मठ के सब भाइयों ने व्रत किया है। कमरे मे इस समय नरेन्द्र, राखाल, निरंजन, शरद, शशी, काली, बाबूराम, तारक, हरीश, सींती के गोपाल, सारदा और मास्टर है। योगीन और लाटू वृन्दावन मे है। उन लोगों ने अभी मठ नहीं देखा।

आगामी शनिवार को शरद, काली, निरंजन और सारदा पुरी जानेवाले है—श्रीजगन्नाथजी के दर्शन करने के लिए।

श्रीयुत शशी दिनरात श्रीरामकृष्ण की सेवा में रहते हैं।

पूजा हो गयी। शरद तानपूरा लेकर गा रहे है—"शंकर शिव वम् बम् भोला, कैलासपति महाराज राज।"

नरेन्द्र कलकत्ते से अभी ही लौटे है। अभी उन्होंने स्नान भी नहीं किया। काली नरेन्द्र से मुकदमे की बातें पूछने लगे।

नरेन्द्र– (विरक्तिपूर्वक)–इन सब बातों से तुम्हें क्या काम ?

नरेन्द्र मास्टर आदि से बातें कर रहे है। नरेन्द्र कह रहे है— "कामिनी और कांचन का त्याग जब तक न होगा, तब तक कुछ न होगा। कामिनी नरकस्य द्वारम्। जितने आदमी है, सब स्त्रियों के वश मे हैं। शिव और कृष्ण की बात और है। शक्ति को शिव ने दासी बनाकर रखा था। श्रीकृष्ण ने संसार-धर्म का पालन तो किया था, परन्तु वे कैसे निर्लिप्त थे ! उन्होंने वृन्दावन कैसे एकदम छोड़ दिया !"

राखाल–और द्वारका का भी उन्होंने कैसा त्याग किया !

गंगा-स्नान करके नरेन्द्र मठ लौटे। हाथ में भीगी धोती है और अंगौछा। सारदा ने आकर नरेन्द्र को साष्टांग प्रणाम किया। उन्होंने भी शिवरात्रि के उपलक्ष्य मे उपवास किया है। अव वे गंगा-स्नान के लिए जानेवाले हैं। नरेन्द्र ने पूजा-घर में जाकर श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया और फिर आसन लगाकर कुछ समय तक ध्यान करते रहे।

भवनाथ की वातें हो रही हैं। भवनाथ ने विवाह किया है। इसलिए उन्हें नौकरी करनी पड़ती है।

नरेन्द्र कह रहे है, 'वे तो सव संसारी कीट हैं।'

दिन ढलने लगा। शिवरात्रि की पूजा के लिए व्यवस्था हो रही है। वेल की लकड़ी और विल्वदल इकट्ठे किये गये। पूजा के वाद होम होगा।

शाम हो गयी। श्रीठाकुरघर मे धूना देकर शशी दूसरे कमरों में भी धूना ले गये। हरएक देव-देवी के चित्र के पास प्रणाम करके बड़ी भक्ति के साथ उनका नाम ले रहे है। "श्रीश्रीगुरुदेवाय नमः। श्रीश्रीकालिकायै नमः। श्रीश्रीजगन्नाथ-सुभद्रा-वलरामेभ्यो नमः। श्रीश्रीषड्भुजाय नमः। श्रीश्रीराधावल्लभाय नमः। श्रीनित्यानन्दाय, श्रीअद्वैताय, श्रीभक्तेभ्यो नमः। श्रीगोपालाय, श्रीश्रीयशोदायै नमः। श्रीरामाय, श्रीलक्ष्मणाय, श्रीविश्वामित्राय नमः।"

मठ के विल्ववृक्ष के नीचे पूजा का आयोजन हो रहा है। रात के नौ वजे का समय होगा। अभी पहली पूजा होगी, साढ़े ग्यारह वजे दूसरी। चारो पहर चार पूजाएं होंगी। नरेन्द्र, राखाल, शरद, काली, सींती के गोपाल आदि मठ के सव भाई वेल के नीचे उपस्थित हो गये। भूपति और मास्टर भी आये हुए हैं। मठ के भाइयों में से एक व्यक्ति पूजा कर रहा है।

काली गीता-पाठ कर रहे है——सैन्यदर्शन,——सांख्ययोग,——कर्मयोग। पाठ के साथ ही बीच बीच मे नरेन्द्र के साथ विचार चल रहा है।

काली–मै ही सब कुछ हूँ। सृष्टि, स्थिति और प्रलय मैं कर रहा हूँ।

नरेन्द्र–मैं सृष्टि कहाँ कर रहा हूं? एक दूसरी ही शक्ति मुझसे करा रही है। ये अनेक प्रकार के कार्य——यहाँ तक कि चिन्ता भी वही करा रही है।

मास्टर–(स्वगत)–श्रीरामकृष्ण कहते थे, 'जब तक कोई यह सोचता है कि मै ध्यान कर रहा हूँ, तब तक वह आदिशक्ति के ही राज्य मे है। शक्ति को मानना ही होगा।'

काली चुपचाप थोड़ी देर तक चिन्तन करते रहे। फिर कहने लगे, "जिन कार्यो की तुम चर्चा कर रहे हो, वे सब मिथ्या है——और इतना ही नहीं, स्वयं 'चिन्तन' तक मिथ्या है। मुझे तो इन चीजों के विचार मात्र पर हंसी आती है।"

नरेन्द्र–'सोऽहम्' के कहने पर जिस 'मैं' का ज्ञान होता है, वह यह 'मै' नही है। मन, देह, यह सब छोड़ देने पर जो कुछ रहता है, वही वह 'मै' है।

गीता-पाठ हो जाने पर काली शान्ति-पाठ कर रहे है——'ॐ शान्तिः! शान्तिः! शान्तिः!'

अब नरेन्द्र आदि सब भक्त खड़े होकर नृत्य-गीत करते हुए बिल्ववृक्ष की बार बार परिक्रमा करने लगे। बीच बीच मे एक स्वर से 'शिव गुरु! शिव गुरु!' इस मन्त्र का उच्चारण कर रहे है।

कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी, रात्रि गम्भीर हो रही है। चारो

और अन्धकार छाया हुआ है, जीव-जन्तु सब मौन हैं। गेरुआ वस्त्र पहने हुए इन आकौमारविरागी भक्तों के कण्ठ से उच्चारित 'शिव गुरु ! शिव गुरु !' की महामन्त्रध्वनि मेघ की तरह गम्भीर रव से अनन्त आकाश में गूंजकर अखण्ड सच्चिदानन्द में लीन होने लगी।

पूजा समाप्त हो गयी। उपा की लाली फैलने ही वाली है। नरेन्द्र आदि भक्तो ने इस ब्राह्म मुहूर्त मे गंगास्नान किया।

सवेरा हो गया। स्नान करके भक्तगण मठ मे श्रीठाकुरमन्दिर में जाकर श्रीरामकृष्ण को प्रणाम करके 'दानवों के कमरे' में आकर एकत्र होने लगे। नरेन्द्र ने सुन्दर नया गेरुआ वस्त्र धारण किया है। वस्त्र के सौन्दर्य के साथ उनके श्रीमुख और देह से तपस्यासम्भूत अपूर्व स्वर्गीय पवित्र ज्योति एक हो रही है। वदन-मण्डल तेजपूर्ण और साथ ही प्रेमरंजित हो रहा है। मानो अखण्ड सच्चिदानन्द सागर के एक स्फुट अंश ने ज्ञान और भक्ति की शिक्षा देने के लिए शरीर-धारण किया हो— अवतार-लीला की सहायता के लिए। जो देख रहा है, वह फिर आँखें नहीं फेर सकता। नरेन्द्र की आयु ठीक चौवीस वर्ष की है। ठीक इसी आयु मे श्रीचैतन्य ने संसार छोड़ा था।

भक्तों के व्रत के पारण के लिए श्रीयुत वलराम ने कल ही फल और मिष्टान्न आदि भेज दिये थे। राखाल आदि दो-एक भक्तो के साथ नरेन्द्र कमरे में खड़े हुए कुछ जलपान कर रहे हैं। दो-एक फल खाते ही आनन्दपूर्वक कह रहे हैं—"धन्य हो वलराम—तुम धन्य हो !" (सब हंसते है)

अब नरेन्द्र वालक की तरह हंसी कर रहे है। रसगुल्ला मुख मे डालकर विलकुल नि:स्पन्द हो गये। नेत्र निर्निमेप है। एक

भक्त नरेन्द्र की अवस्था देखकर हंसी में उन्हें पकड़ने चले कि कहीं वे गिर न जायँ।

कुछ देर बाद—तब भी रसगुल्ले को मुख में ही रखे हुए—नरेन्द्र पलकें खोलकर कह रहे हैं—"मेरी–अवस्था–अच्छी–है–!"

(सब लोग ठहाका मारकर हंसने लगे)

सब लोगों को अब मिठाई दी गयी। मास्टर यह आनन्द की हाट देख रहे हैं। भक्तगण हर्षपूर्वक जयध्वनि कर रहे है—

"जय श्रीगुरुमहाराज! जय श्रीगुरुमहाराज!"

परिच्छेद २

वराहनगर मठ

(१)

नरेन्द्रादि भक्तों की साधना। नरेन्द्र की पूर्वकथा

आज शुक्रवार है, २५ मार्च, १८८७ ई.। मास्टर मठ के भाइयों को देखने के लिए आये है। साथ देवेन्द्र भी हैं। मास्टर प्रायः आया करते हैं और कभी कभी रह भी जाते हैं। गत शनिवार को वे आये थे, शनि, रवि और सोम, तीन दिन रहे थे। मठ के भाइयों में, खासकर नरेन्द्र मे, इस समय तीव्र वैराग्य है। इसीलिए मास्टर उत्सुकतापूर्वक उन्हे देखने के लिए आते है।

रात हो गयी है। आज रात को मास्टर मठ में ही रहेंगे।

सन्ध्या हो जाने पर शशी ने ईश्वर के मधुर नाम का उच्चारण करते हुए ठाकुरघर में दीपक जलाया और धूप-धूना सुलगाने लगे। धूपदान लेकर कमरे मे जितने चित्र हैं, सब के पास गये और प्रणाम किया।

फिर आरती होने लगी। आरती वे ही कर रहे है। मठ के सब भाई, मास्टर तथा देवेन्द्र, सब लोग हाथ जोड़कर आरती देख रहे हैं, साथ ही साथ आरती गा रहे हैं— "जय शिव ओंकार, भज शिव ओंकार! ब्रह्मा विष्णु सदाशिव! हर हर हर महादेव!"

नरेन्द्र और मास्टर बातचीत कर रहे है। नरेन्द्र श्रीरामकृष्ण के पास जाने के समय की बहुतसी बातें कह रहे हैं। नरेन्द्र की उम्र इस समय २४ साल २ महीने की होगी।

नरेन्द्र– पहले-पहल जब मैं गया, तब एक दिन भावावेश में उन्होंने कहा, 'तू आया है!'

"मैंने सोचा, यह कैसा आश्चर्य है ! ये मानो मुझे बहुत दिनो से पहचानते है। फिर उन्होने कहा, 'क्या तू कोई ज्योति देखता है ?'

"मैंने कहा, 'जी हाँ। सोने से पहले, दोनों भौहो के बीच की जगह के ठीक सामने एक ज्योति घूमती रहती है।'"

मास्टर– क्या अब भी देखते हो ?

नरेन्द्र– पहले बहुत देखा करता था। यदु मल्लिक के भोजनागार मे मुझे छूकर न जाने उन्होने मन ही मन क्या कहा, मैं अचेत हो गया था। उसी नशे मे मै एक महीने तक रहा था।

"मेरे विवाह की बात सुनकर माँ काली के पैर पकड़कर वे रोये थे। रोते हुए कहा था, 'माँ, वह सब फेर दे— माँ, नरेन्द्र कही डूब न जाय !'

"जब पिताजी का देहान्त हो गया, और माँ और भाइयों को भोजन तक की कठिनाई हो गयी तब मै एक दिन अन्नदा गुहा के साथ उनके पास गया था।

"उन्होने अन्नदा गुहा से कहा, 'नरेन्द्र के पिताजी का देहान्त हो गया है, घरवालो को बड़ा कष्ट हो रहा है, इस समय अगर इष्टमित्र उसकी सहायता करें तो बड़ा अच्छा हो।'

"अन्नदा गुहा के चले जाने पर मै उनसे कुछ रुष्टता से कहने लगा, 'क्यो आपने उनसे ये सब बातें कही ?' यह सुनकर वे रोने लगे थे। कहा, 'अरे ! तेरे लिए मैं द्वार-द्वार भीख भी माँग सकता हूं !'

"उन्होने प्यार करके हम लोगो को वशीभूत कर लिया था। आप क्या कहते हैं ?"

मास्टर– इसमे तनिक भी सन्देह नही है। उनके स्नेह का

कोई कारण नहीं था।

नरेन्द्र– मुझसे एक दिन अकेले मे उन्होने एक बात कही। उस समय और कोई न था। यह बात आप और किसी से न कहियेगा।

मास्टर– नहीं। हाँ, क्या कहा था ?

नरेन्द्र– उन्होने कहा, 'सिद्धियों के प्रयोग करने का अधिकार मैने तो छोड़ दिया है, परन्तु तेरे भीतर से उनका प्रयोग करूंगा–– क्यों, तेरा क्या कहना है ?' मैने कहा, 'नहीं, ऐसा तो न होगा।'

"उनकी बात मैं उड़ा देता था। आपने उनसे सुना होगा। वे ईश्वर के रूपों के दर्शन करते थे, इस बात पर मैने कहा था, 'यह सब मन की भूल है।'

"उन्होंने कहा, 'अरे मै कोठी पर चढ़कर जोर जोर से पुकार-कर कहा करता था–– अरे, कहाँ है कौन भक्त, चले आओ, तुम्हें न देखकर मेरे प्राण निकल रहे है। माँ ने कहा था,––'अब भक्त आयेंगे,' अब देख, सब बातें मिल रही हैं।'

"तब मै और क्या कहता, चुप हो रहा।

नरेन्द्र की उच्च अवस्था

"एक दिन कमरे के दरवाजे बन्द करके उन्होने देवेन्द्रबाबू और गिरीशबाबू से मेरे सम्बन्ध में कहा था, 'उसके घर का पता अगर उसे बता दिया जायगा, तो फिर वह देह नही रख सकता।' "

मास्टर– हाँ, यह तो हमने सुना है। हम लोगों से भी यह बात उन्होने कई बार कही है। काशीपुर मे रहते हुए एक बार तुम्हारी वही अवस्था हुई थी, क्यो ?

नरेन्द्र– उस अवस्था मे मुझे ऐसा जान पड़ा कि मेरे शरीर है ही नहीं; केवल मुँह देख रहा हूं। श्रीरामकृष्ण ऊपर के कमरे

में थे। मुझे नीचे यह अवस्था हुई। उस अवस्था के होते ही मैं रोने लगा— यह मुझे क्या हो गया ? बूढ़े गोपाल ने ऊपर आकर उनसे कहा, 'नरेन्द्र रो रहा है।'

"जब उनसे मेरी मुलाकात हुई तब उन्होंने कहा, 'अब तेरी समझ मे आया। पर कुंजी मेरे पास रहेगी।' मैंने कहा, 'मुझे यह क्या हुआ ?'

"दूसरे भक्तों की ओर देखकर उन्होंने कहा, 'जब वह अपने को जान लेगा, तब देह नहीं रखेगा। मैने उसे भुला रखा है।' एक दिन उन्होंने कहा था, 'तू अगर चाहे तो हृदय में तुझे कृष्ण दिखायी दें।' मैंने कहा, 'मै कृष्ण-विष्ण नहीं मानता।'

(नरेन्द्र और मास्टर हँसते है)

"एक अनुभव मुझे और हुआ है। किसी किसी स्थान पर वस्तु या मनुष्य को देखने पर ऐसा जान पड़ता है जैसे पहले मैंने उन्हें कभी देखा हो, पहचाने हुए-से दीख पड़ते है। अमहर्स्ट स्ट्रीट मे जब मैं शरद के घर गया, शरद से मैंने कहा, उस घर का सर्वांश जैसे मै पहचानता हूँ, ऐसा भाव पैदा हो रहा है। घर के भीतर के रास्ते, कमरे, जैसे बहुत दिनों के पहचाने हुए है।

"मै अपनी इच्छानुसार काम करता था, वे कुछ कहते न थे। मै साधारण ब्राह्मसमाज का मेम्बर बना था, आप जानते है न ?"

मास्टर– हाँ, मैं जानता हूँ।

नरेन्द्र– वे जानते थे कि वहाँ स्त्रियाँ भी जाया करती है। स्त्रियो को सामने रखकर ध्यान हो नही सकता। इसलिए इस प्रथा की वे निन्दा किया करते थे। परन्तु मुझे वे कुछ न कहते थे। एक दिन सिर्फ इतना ही कहा कि राखाल से ये सब बाते न कहना कि तू मेम्बर बन गया है, नही तो फिर उसे भी जाने की

इच्छा होगी।

मास्टर– तुम्हारा मन ज्यादा जोरदार है, इसीलिए उन्होने तुम्हें मना नही किया।

नरेन्द्र– बड़े दु:ख और कष्टो के झेलने के बाद यह अवस्था हुई है। मास्टर महाशय, आपको दु:ख-कष्ट नहीं मिला—मैं मानता हूं कि बिना दु:ख-कष्ट के हुए कोई ईश्वर को आत्म-समर्पण नही करता—

"अच्छा, अमुक व्यक्ति कितना नम्र और निरहंकार है! उसमे कितनी विनय है! क्या आप मुझे बता सकते है कि मुझमें किस तरह विनय आये ?"

मास्टर– उन्होने तुम्हारे अहंकार के सम्बन्ध मे बतलाया था कि यह किसका अहंकार है।

नरेन्द्र– इसका क्या अर्थ है ?

मास्टर– राधिका से एक सखी कह रही थी, 'तुझे अहंकार हो गया है, इसीलिए तूने कृष्ण का अपमान किया है।' इसका उत्तर एक दूसरी सखी ने दिया। उसने कहा, 'हाँ, राधिका को अहंकार तो हुआ है परन्तु यह अहंकार है किसका ?'—अर्थात्, श्रीकृष्ण मेरे पति है-- यह अहंकार है,—इस 'अहं' भाव को श्रीकृष्ण ने ही उसमे रखा है। श्रीरामकृष्ण के कहने का अर्थ यह है कि ईश्वर ने ही तुम्हारे भीतर यह अहंकार भर रखा है, अपना बहुतसा कार्य करायेंगे, इसलिए।

नरेन्द्र– परन्तु मेरा 'अह' पुकारकर कहता है कि मुझे कोई क्लेश नही है।

मास्टर– (सहास्य)– हाँ, तुम्हारी इच्छा की बात है।

(दोनों हंसते है)

अव दूसरे दूसरे भक्तों की बात होने लगी--- विजय गोस्वामी आदि की ।

नरेन्द्र– विजय गोस्वामी की बात पर उन्होंने कहा था, 'यह दरवाजा ठेल रहा है।'

मास्टर– अर्थात् अभी तक घर के भीतर घुस नही सके ।

"परन्तु श्यामपुकुरवाले घर में विजय गोस्वामी ने श्रीरामकृष्ण से कहा था, 'मैंने आपको ढाके में इसी तरह देखा था, इसी शरीर में।' उस समय तुम भी वहाँ थे।

नरेन्द्र– देवेन्द्रबाबू, रामबाबू ये लोग भी संसार छोड़ेंगे। बड़ी चेष्टा कर रहे हैं। रामबाबू ने छिपे तौर पर कहा है, दो साल बाद संसार छोड़ेंगे।

मास्टर– दो साल बाद ? शायद लड़के-बच्चों का बन्दोबस्त हो जाने पर ?

नरेन्द्र– और यह भी है कि घर भाड़े से उठा देंगे और एक छोटासा मकान खरीद लेंगे। उनकी लड़की के विवाह की व्यवस्था अन्य सम्बन्धी कर लेंगे ।

मास्टर– नित्यगोपाल की अच्छी अवस्था है--- क्यों ?

नरेन्द्र– क्या अवस्था है ?

मास्टर– कितना भाव होता है ! --- ईश्वर का नाम लेते ही आँसू बह चलते है--- रोमांच होने लगता है !

नरेन्द्र– क्या भाव होने से ही बड़ा आदमी हो गया ?

"काली, शरद, शशी, सारदा--- ये सब नित्यगोपाल से बहुत बड़े आदमी है। इनमें कितना त्याग है ! नित्यगोपाल उनको (श्रीरामकृष्ण को) मानता कहाँ है ?"

मास्टर– उन्होंने कहा भी है कि वह यहाँ का आदमी नहीं है।

परन्तु श्रीरामकृष्ण पर भक्ति तो वह खूब करता था, मैंने अपनी आँखों से देखा है।

नरेन्द्र–क्या देखा है आपने ?

मास्टर–जब मैं पहले-पहल दक्षिणेश्वर जाने लगा था, तब श्रीरामकृष्ण के कमरे से भक्तों का दरबार उठ जाने पर, एक दिन बाहर आकर मैंने देखा—नित्यगोपाल घुटने टेककर बगीचे की लाल सुरखीवाली राह पर श्रीरामकृष्ण के सामने हाथ जोड़े हुए था, श्रीरामकृष्ण खड़े थे। चाँदनी बड़ी साफ थी। श्रीरामकृष्ण के कमरे के ठीक उत्तर तरफ जो बरामदा है उसी के उत्तर ओर लाल सुरखीवाला रास्ता है। उस समय वहाँ और कोई न था। जान पड़ा, नित्यगोपाल शरणागत हुआ है, और श्रीरामकृष्ण उसे आश्वासन दे रहे हैं।

नरेन्द्र–मैंने नहीं देखा।

मास्टर–और बीच बीच में श्रीरामकृष्ण कहते थे, उसकी परमहंस अवस्था है। परन्तु यह भी मुझे खूब याद है, श्रीरामकृष्ण ने उसे स्त्रीभक्तों के पास जाने की मनाही की थी। बहुत बार उसे सावधान कर दिया था।

नरेन्द्र–और उन्होंने मुझसे कहा था, 'उसकी अगर परमहंस अवस्था है तो धन के पीछे क्यों भटकता है ?' और उन्होंने यह भी कहा था, 'वह यहाँ का आदमी नहीं है। जो हमारे अपने आदमी हैं, वे यहाँ सदा आते रहेंगे।'

"इसीलिए तो वे × बाबू पर नाराज होते थे। इसलिए कि वह सदा नित्यगोपाल के साथ रहता था, और उनके पास ज्यादा आता न था।

"मुझसे उन्होंने कहा था, 'नित्यगोपाल सिद्ध है—वह एकाएक

सिद्ध हो गया है—आवश्यक तैयारी के बिना। वह यहाँ का आदमी नहीं है; अगर अपना होता तो उसे देखने के लिए मैं कुछ भी तो रोता, परन्तु उसके लिए मै नही रोया।'

"कोई-कोई उसे नित्यानन्द कहकर प्रचार कर रहे है। परन्तु उन्होंने (श्रीरामकृष्ण ने) कितनी ही बार कहा है, 'मै ही अद्वैत, चैतन्य और नित्यानन्द हूँ। एक ही आधार मे मैं उन तीनों का समष्टि-रूप हूँ।'"

(२)

नरेन्द्र की पूर्वकथा

मठ मे काली तपस्वी के कमरे मे दो भक्त बैठे है। उनमे एक त्यागी है, एक गृही। दोनों २४-२४, २५-२५ साल की उम्र के है। दोनो मे बातचीत हो रही है, इसी समय मास्टर भी आ गये। वे मठ मे तीन दिन रहेंगे।

आज 'गुड फ्रायडे' है, ८ अप्रैल १८८७, शुक्रवार। इस समय दिन के आठ बजे होंगे। मास्टर ने आते ही ठाकुर-घर में जाकर श्रीरामकृष्ण के चित्र को प्रणाम किया। फिर नरेन्द्र और राखाल आदि भक्तों से मिलकर उसी कमरे में आकर बैठे, और उन दोनो भक्तो से प्रीति-सम्भाषण के अनन्तर उनकी बातचीत सुनने लगे। गृही भक्त की इच्छा संसार त्याग करने की है। मठ के भाई उन्हे समझा रहे है कि वे संसार न छोड़ें।

त्यागी भक्त—कर्म जो कुछ हैं, कर डालो। करने से फिर सब समाप्त हो जायेंगे।

"एक ने सुना था कि उसे नरक जाना होगा। उसने एक मित्र से पूछा कि नरक कैसा है। मित्र एक मिट्टी का ढेला लेकर नरक का नक्शा खीचने लगा। नरक का नक्शा उसने खींचा

नही कि वह आदमी तुरन्त उस पर लोटने लगा, और बोला, 'चलो, मेरा नरक का भोग हो गया।'"

गृही भक्त– मुझे संसार अच्छा नहीं लगता। अहा! तुम लोगों की कैसी सुन्दर अवस्था है!

त्यागी भक्त– तू इतना वकता क्यों है? अगर निकलना है तो निकल आ; नही तो मजे से एक वार भोग कर ले।

नौ वजने के वाद शशी ने श्रीठाकुरघर मे पूजा की।

ग्यारह का समय हुआ। मठ के भाई क्रमशः गंगा-स्नान करके आ गये। स्नान के पश्चात् दूसरा शुद्ध वस्त्र धारण कर, हरएक संन्यासी श्रीठाकुरघर मे श्रीरामकृष्ण के चित्र को प्रणाम करके ध्यान करने लगा।

भोग के पश्चात् मठ के भाइयों ने प्रसाद पाया। साथ में मास्टर ने भी प्रसाद पाया।

सन्ध्या हो गयी। धूनी देने के पश्चात् आरती हुई। 'दानवों के कमरे' मे राखाल, शशी, बूढ़े गोपाल और हरीश बैठे हुए है। मास्टर भी है। राखाल श्रीरामकृष्ण का भोग सावधानी से रखने के लिए कह रहे हैं।

राखाल– (शशी आदि से)–एक दिन मैंने उनके जलपान करने से पहले कुछ खा लिया था। उन्होंने मेरी ओर देखकर कहा—'तेरी ओर मुझसे देखा नहीं जाता। क्यों तूने ऐसा काम किया?'—मैं रोने लगा।

बूढ़े गोपाल– मैने काशीपुर मे उनके भोजन पर जोर से साँस छोड़ी थी, तव उन्होंने कहा, 'यह भोजन रहने दो।'

वरामदे मे मास्टर नरेन्द्र के साथ टहल रहे हैं। दोनों मे तरह तरह की वातचीत हो रही है। नरेन्द्र ने कहा, 'मैं तो कुछ भी

न मानता था ।'

मास्टर– क्या ? ईश्वर के रूप ?

नरेन्द्र– वे जो कुछ कहते थे, पहले-पहल मै बहुतसी बातें न मानता था। एक दिन उन्होने कहा था, 'तो फिर तू आता क्यों है ।'

"मैने कहा, 'आपको देखने लिए, आपकी बातें सुनने के लिए नही ।'"

मास्टर– उन्होने क्या कहा था ?

नरेन्द्र– वे बहुत प्रसन्न हुए थे ।

दूसरे दिन शनिवार था, ९ अप्रैल १८८७। श्रीरामकृष्ण के भोग के पश्चात् मठ के भाइयों ने भोजन किया, फिर वे जरा विश्राम करने लगे। नरेन्द्र और मास्टर, मठ से सटा हुआ पश्चिम ओर जो वगीचा है, वही एक पेड़ के नीचे एकान्त मे बैठे हुए बातचीत कर रहे है। नरेन्द्र श्रीरामकृष्ण के सम्बन्ध मे अपने अनुभव वता रहे है। नरेन्द्र की आयु २४ वर्ष की है और मास्टर की ३२ वर्ष की ।

मास्टर– पहले-पहल जिस दिन उनसे तुम्हारी मुलाकात हुई थी, वह दिन तुम्हें अच्छी तरह याद है ?

नरेन्द्र– मुलाकात दक्षिणेश्वर के कालीमन्दिर मे हुई थी, उन्हीं के कमरे मे। उस दिन मैने दो गाने गाये थे ।

गाना– (भावार्थ)– ऐ मन, अपने स्थान मे लौट चलो। संसार मे विदेशी की तरह अकारण क्यों घूम रहे हो ? . . .

गाना– (भावार्थ)– क्या मेरे दिन व्यर्थ ही बीत जायेंगे ? हे नाथ, मै दिन-रात आशा-पथ पर आँख गड़ाये हुए हूँ। . . .

मास्टर– गाना सुनकर उन्होने क्या कहा ?

नरेन्द्र– उन्हे भावावेश हो गया था। रामवाबू आदि और और लोगो से उन्होने पूछा, 'यह लड़का कौन है? अहा, कितना सुन्दर गाता है।' मुझसे उन्होने फिर आने के लिए कहा।

मास्टर– फिर कहाँ मुलाकात हुई ?

नरेन्द्र– फिर राजमोहन के यहाँ मुलाकात हुई थी। इसके वाद दक्षिणेश्वर मे; उस समय मुझे देखकर भावावेश मे मेरी स्तुति करने लगे थे। स्तुति करते हुए कहने लगे, 'नारायण! तुम मेरे लिए शरीर धारण करके आये हो।'

"परन्तु ये वाते किसी से कहियेगा नही।"

मास्टर– और उन्होने क्या कहा ?

नरेन्द्र– उन्होने कहा, "तुम मेरे लिए ही शरीर धारण करके आये हो। मैंने माँ से कहा था, 'माँ, काम-कांचन का त्याग करनेवाले शुद्धात्मा भक्तों के विना संसार में कैसे रहूंगा!'" उन्होने फिर मुझसे कहा, "तूने रात को मुझे आकर उठाया, और कहा, 'मै आ गया।'" परन्तु मै यह सव कुछ नहीं जानता था, मै तो कलकत्ते के मकान मे खूव खर्राटे ले रहा था।

मास्टर– अर्थात्, तुम एक ही समय Present (हाजिर) भी हो और absent (गैरहाजिर) भी हो, जैसे ईश्वर साकार भी हैं और निराकार भी।

नरेन्द्र के प्रति लोक-शिक्षा का आदेश

नरेन्द्र– परन्तु यह वात किसी दूसरे से न कहियेगा।

"काशीपुर में उन्होने मेरे भीतर शक्ति का संचार किया।"

मास्टर– जिस समय तुम काशीपुर मे पेड़ के नीचे धूनी जलाकर वैठते थे, क्यों ?

नरेन्द्र– हाँ। काली से मैने कहा, 'जरा मेरा हाथ पकड़ तो

सही।' काली ने कहा 'न जाने तुम्हारी देह छूते ही कैसा एक धक्का मुझे लगा।'

"यह बात हम लोगों में किसी से आप न कहेंगे— प्रतिज्ञा कीजिये।"

मास्टर— तुम्हारे भीतर शक्ति-संचार करने का उनका खास मतलब है। तुम्हारे द्वारा उनके बहुतसे कार्य होंगे। एक दिन एक कागज में लिखकर उन्होंने कहा था, 'नरेन्द्र शिक्षा देगा।'

नरेन्द्र— परन्तु मैंने कहा था, 'यह सब मुझसे न होगा।'

"इस पर उन्होंने कहा, 'तेरे हाड़ करेंगे।' शरद का भार उन्होंने मुझे सौंपा है। वह व्याकुल है। उसकी कुण्डलिनी जाग्रत हो गयी है।"

मास्टर— इस समय चाहिए कि सड़े पत्ते न जमने पाये। श्रीरामकृष्ण कहते थे, शायद तुम्हें याद हो, कि तालाब में मछ-लियों के बिल रहते है, वहाँ मछलियाँ आकर विश्राम करती है। जिस बिल मे सड़े पत्ते आकर जम जाते है, उसमे फिर मछली नही आती।

नरेन्द्र— मुझे नारायण कहते थे।

मास्टर— तुम्हें नारायण कहते थे, यह मै जानता हूँ।

नरेन्द्र— जब वे बीमार थे, तब शौच का पानी मुझसे नहीं लेते थे।

"काशीपुर में उन्होंने कहा था, 'अब कुंजी मेरे हाथों मे है। वह अपने को जान लेगा तो छोड़ देगा।'"

मास्टर— जिस दिन तुम्हारी निर्विकल्प समाधि की अवस्था हुई थी— क्यों?

नरेन्द्र— हाँ। उस समय मुझे जान पड़ा था कि मेरे शरीर

नही है, केवल मुँह भर है। घर मे मैं कानून पढ़ रहा था, परीक्षा देने के लिए। तब एकाएक याद आया कि यह मै क्या कर रहा हूँ !

मास्टर– जब श्रीरामकृष्ण काशीपुर मे थे ?

नरेन्द्र– हाँ। पागल की तरह मै घर से निकल आया। उन्होंने पूछा, 'तू क्या चाहता है ?' मैने कहा, 'मै समाधिमग्न होकर रहूँगा।' उन्होने कहा, 'तेरी बुद्धि तो बड़ी हीन है। समाधि के पार जा, समाधि तो तुच्छ चीज है।'

मास्टर– हाँ, वे कहते थे, ज्ञान के बाद विज्ञान है। छत पर चढ़कर सीढ़ियों से फिर आना-जाना।

नरेन्द्र– काली ज्ञान-ज्ञान चिल्लाता है। मै उसे डाँटता हूँ। ज्ञान क्या इतना सहज है ? पहले भक्ति तो पके।

"उन्होंने (श्रीरामकृष्ण ने) तारकबाबू से दक्षिणेश्वर में कहा था, 'भाव और भक्ति को ही इति न समझ लेना।' "

मास्टर– तुम्हारे सम्बन्ध में उन्होने और क्या क्या कहा था, बताओ तो।

नरेन्द्र– मेरी बात पर वे इतना विश्वास करते थे कि जब मैने कहा, 'आप रूप आदि जो कुछ देखते है, यह सब मन की भूल है,' तब माँ (जगन्माता काली) के पास जाकर उन्होने पूछा, है, 'माँ, नरेन्द्र इस तरह कह रहा है, तो क्या यह सब भूल है ?' फिर उन्होंने मुझसे कहा, 'माँ ने कहा है, यह सब सत्य है।'

"वे कहते थे, शायद आपको याद हो, 'तेरा गाना सुनने पर (छाती पर हाथ रखकर) इसके भीतर जो है, वे साँप की तरह फन खोलकर स्थिर भाव से सुनते रहते है।'

"परन्तु मास्टर महाशय, उन्होंने इतना तो कहा, परन्तु मेरा

बतलाइये क्या हुआ ?"

मास्टर– इस समय तुम शिव बने हुए हो, पैसे लेने का अधिकार तो है ही नही। श्रीरामकृष्ण की कहानी याद है न ?

नरेन्द्र– कौनसी कहानी ? जरा कहिये।

मास्टर– कोई बहुरूपिया शिव बना था। जिनके यहाँ वह गया था, वे एक रुपया देने लगे। उसने रुपया नही लिया, घर लौटकर हाथ-पैर धोकर उसने बाबू के यहाँ आकर रुपया माँगा। बाबू के घरवालों ने कहा, 'उस समय तुमने रुपया क्यों नहीं लिया ?' उसने कहा, 'तब तो मै शिव बना था—संन्यासी था—रुपया कैसे छूता ?'

यह बात सुनकर नरेन्द्र खूब हँसे।

मास्टर– इस समय तुम मानो एक वैद्य हो। सब भार तुम्हीं पर है। मठ के भाइयों को तुम मनुष्य बनाओगे।

नरेन्द्र– हम लोग जो साधन-भजन कर रहे हैं, यह उन्हीं की आज्ञा से। परन्तु आश्चर्य है, रामबाबू साधना की बात पर हम लोगो को ताना मारते है। वे कहते है, 'जब उनके प्रत्यक्ष दर्शन कर लिए तब साधना कैसी ?'

मास्टर– जिसका जैसा विश्वास, वह वैसा ही करे।

नरेन्द्र– हम लोगो को तो उन्होने साधना करने की आज्ञा दी है।

नरेन्द्र श्रीरामकृष्ण के प्यार की बाते करने लगे।

नरेन्द्र– मेरे लिए माँ काली से उन्होने न जाने कितनी बाते कही। जब मुझे खाने को नही मिल रहा था, पिताजी का देहान्त हो गया था—घरवाले बड़े कष्ट मे थे, तब मेरे लिए माँ काली से उन्होने रुपयो की प्रार्थना की थी।

मास्टर– यह मुझे मालूम है।

नरेन्द्र– रुपये नही मिले। उन्होने कहा, 'माँ ने कहा है, मोटा कपड़ा और रूखा-सूखा भोजन मिल सकता है–– रोटी-दाल मिल सकती है।'

"मुझे इतना प्यार तो करते थे, परन्तु जव कोई अपवित्र भाव मुझमे आता था तव उसे वे तुरन्त ताड़ जाते थे। जव मैं अन्नदा के साथ घूमता था–– कभी कभी वुरे आदमियों के साथ पड़ जाता था––और तव यदि उनके पास मैं आता था तो मेरे हाथ का वे कुछ न खाते थे। मुझे स्मरण है, एक वार उनका हाथ कुछ उठा था, परन्तु फिर आगे न वढ़ा। उनकी वीमारी के समय एक दिन ऐसा होने पर उनका हाथ मुंह तक गया और फिर रुक गया। उन्होने कहा, 'अव भी तेरा समय नहीं आया।'

"कभी-कभी मुझे वड़ा अविश्वास होता है। रामवावू के यहाँ मुझे जान पड़ा कि कही कुछ नही है। मानो ईश्वर-फीश्वर कहीं कुछ नही।"

मास्टर– वे कहते थे कि कभी कभी उन्हें भी ऐसा ही होता था।

दोनो चुप है। मास्टर कहने लगे–– "तुम लोग धन्य हो! दिन-रात उनके चिन्तन मे रहते हो।" नरेन्द्र ने कहा–– "कहाँ? हममे इतनी व्याकुलता कहाँ कि ईश्वरदर्शन न होने के दुःख से शरीर-त्याग कर सकें?"

रात हो गयी है। निरंजन को पुरीधाम से लौटे कुछ ही समय हुआ है। उन्हे देखकर मठ के भाई और मास्टर प्रसन्न हो रहे हैं। वे पुरीयात्रा का हाल कहने लगे। निरंजन की उम्र इस समय २५-२६ साल की होगी। सन्ध्या-आरती के हो जाने पर

कोई ध्यान करने लगे। निरंजन के लौटने पर बहुतसे भाई बड़े घर में आकर बैठे। सत्प्रसंग होने लगा। रात के नौ बजे के बाद शशी ने श्रीरामकृष्ण को भोगार्पण करके उन्हें शयन कराया।

मठ के भाई निरंजन को साथ लेकर भोजन करने बैठे। उस दिन भोजन में रोटियाँ थी, एक तरकारी, जरासा गुड़ और श्रीरामकृष्ण के नैवेद्य की थोड़ीसी खीर।

परिच्छेद ३

भक्तों के हृदय में श्रीरामकृष्ण

(१)

नरेन्द्रादि का तीव्र वैराग्य

आज वैशाखी पूर्णिमा है। शनिवार, ७ मई १८८७।

गुरुप्रसाद चौधरी लेन, कलकत्ता के एक मकान में नरेन्द्र और मास्टर वैठे हुए वार्तालाप कर रहे हैं। यह मास्टर के पढ़ने का कमरा है। नरेन्द्र के आने के पहले वे Merchant of Venice, Comus, Blackie's Self-culture, यही सव पुस्तके पढ़ रहे थे। स्कूल मे विद्यार्थियो को पढ़ाने के लिए पाठ तैयार कर रहे थे।

नरेन्द्र और मठ के सव गुरुभाइयों के हृदय मे तीव्र वैराग्य झलक रहा है। ईश्वर-दर्शन के लिए सव के सव व्याकुल हो रहे है।

नरेन्द्र– (मास्टर से)– मुझे कुछ अच्छा नही लगता। आपके साथ वातचीत तो कर रहा हूं, परन्तु जी चाहता है कि उठकर अभी चला जाऊं।

नरेन्द्र कुछ देर तक चुप रहे। कुछ समय वाद कहने लगे, "ईश्वर-दर्शन के लिए मे अनशन कर डालूंगा––प्राण तक दे दूंगा।"

मास्टर– अच्छा तो है, ईश्वर के लिए सव कुछ किया जा सकता है।

नरेन्द्र– अगर भूख न सम्हाल सका तो ?

मास्टर– तो कुछ खा लेना, और फिर से शुरू करना।

नरेन्द्र कुछ देर तक चुप रहे।

नरेन्द्र– जान पड़ता है, ईश्वर नहीं है। इतनी प्रार्थनाएँ मैंने की, उत्तर एक बार भी नही मिला।

"सोने के अक्षरों मे लिखे हुए न जाने कितने मन्त्र चमकते हुए मैंने देखे !

"न जाने कितने काली रूप, और दूसरे दूसरे रूप देखे, फिर भी शान्ति नही मिल रही है !

"छः पैसे दीजियेगा ?"

नरेन्द्र शोभाबाजार से गाडी मे वराहनगर मठ जानेवाले है, इसीलिए किराये के छः पैसे चाहिए थे।

देखते ही देखते सातू (सातकौड़ी) गाड़ी से आ पहुँचे। सातू नरेन्द्र के ही उम्र के है, मठ के किशोर भक्तों को बड़ा प्यार करते हैं, मठ मे सदा आते-जाते भी है। उनका घर वराहनगर मठ के पास ही है, कलकत्ते के किसी आफिस मे काम करते है। उनके घर की गाड़ी है। उसी गाड़ी से आफिस होकर आ रहे है।

नरेन्द्र ने मास्टर को पैसे वापस कर दिये, कहा, 'अब क्या है, अब सातू के साथ चला जाऊंगा। आप कुछ खिलाइये।' मास्टर ने कुछ जलपान कराया।

उसी गाडी पर मास्टर भी बैठे। उनके साथ वे भी मठ जायेंगे। सब लोग शाम को मठ पहुँचे। मठ के भाई किस तरह दिन बिताते और साधना करते है, यह देखने की उनकी इच्छा है। श्रीरामकृष्ण किस तरह अपने पार्षदो के हृदय मे प्रतिबिम्बित हो रहे है यह देखने के लिए कभी कभी मास्टर मठ हो आया करते है। निरंजन मठ मे नही है। घर मे एकमात्र उनकी माँ बच रही है, उन्हें देखने के लिए वे घर चले गये हैं। बाबूराम,

तृ. ४३

शरद और काली पुरी गये हुए है--कुछ दिन वहाँ रहेंगे,--उत्सव देखेंगे ।

मठ के भाइयों की देख-रेख नरेन्द्र ही कर रहे है। प्रसन्न कुछ दिनों से कठोर साधना कर रहे थे। उनसे भी नरेन्द्र ने प्रायोपवेशन की वात कही थी। नरेन्द्र को कलकत्ता जाते हुए देख, वे भी कही अज्ञात स्थान के लिए चले गये। कलकत्ते से लौटकर नरेन्द्र ने सव कुछ सुना। उन्होंने दूसरे गुरुभाइयों से कहा, 'राजा (राखाल) ने क्यो उसे जाने दिया ?' परन्तु राखाल उस समय मठ मे नही थे, वे मठ से दक्षिणेश्वर के वगीचे मे टहलने चले गये थे। राखाल को सव भाई राजा कहकर पुकारते थे। 'राखालराज' श्रीकृष्ण का एक दूसरा नाम था ।

नरेन्द्र– राजा को आने दो, मै उसे एक वार फटकारूंगा कि क्यों उसे जाने दिया। (हरीश से) तुम तो पैर फैलाये लेक्चर दे रहे थे, उसे मना क्यों नहीं कर सके ?

हरीश– (मधुर स्वर से)– तारकदादा ने कहा तो, पर वह चला ही गया ।

नरेन्द्र– (मास्टर से)– देखिये, मेरे लिए वड़ी मुश्किल है। यहाँ भी मै एक माया के संसार मे आ फंसा हूं ! न मालूम वह लड़का कहाँ चला गया !

राखाल दक्षिणेश्वर के कालीमन्दिर से लौट आये हैं। भवनाथ भी उनके साथ गये थे ।

राखाल से नरेन्द्र ने प्रसन्न की वात कही। प्रसन्न ने नरेन्द्र को एक पत्र लिखा है, वह पत्र पढ़ा जा रहा है। पत्र इस आशय का है-- "मै पदल ही वृन्दावन चला। मेरे लिए यहाँ रहना अच्छा नही है। यहाँ भाव का परिवर्तन हो रहा है। पहले तो

में माता-पिता और घर के दूसरे मनुष्यों का स्वप्न देखा करता था, इसके पश्चात् मैंने माया की मूर्ति देखी। दो वार मुझे वड़ा कष्ट मिला, घर लौट जाना पड़ा था। इसीलिए अब की वार दूर जा रहा हूँ। श्रीरामकृष्णदेव ने मुझसे कहा था—'तेरे वे घरवाले सव कुछ कर सकते है, उनका विश्वास न करना।' "

राखाल कह रहे है, "वह इन्हीं अनेक कारणों से चला गया है। और उसने यह भी कहा है, 'नरेन्द्र अपनी माँ और भाइयों की खबर लेने और मुकदमा आदि करने के लिए घर चला जाया करता है। मुझे भय है कि उसकी देखा-देखी कहीं मुझे भी घर जाने की इच्छा न हो।' "

यह सुनकर नरेन्द्र चुप हो रहे।

राखाल तीर्थ जाने की बातचीत कर रहे है। कह रहे है, 'यहाँ रहकर तो कहीं कुछ न हुआ। उन्होंने (श्रीरामकृष्ण ने) जो कहा है—ईश्वरदर्शन, वह कहाँ हुआ ?' राखाल लेटे हुए हैं। पास ही भक्तों मे कोई लेटे हुए है, कोई बैठे।

राखाल– चलो, नर्मदा की ओर निकल चलें।

नरेन्द्र– निकलकर क्या होगा ? ज्ञान इससे थोड़े ही होता है, जिसके सम्बन्ध में तूने इतनी रट लगा दी है।

एक भक्त– तो फिर संसार का त्याग तुमने क्यों किया ?

नरेन्द्र– राम को नही पाया, इसलिए क्या श्याम के साथ रहना चाहिए ? ईश्वर-लाभ नही हुआ, इसलिए क्या बच्चे पैदा करते रहना चाहिए ? यह कैसी वात है ?

यह कहकर नरेन्द्र जरा उठ गये। राखाल लेटे हुए है।

कुछ देर बाद नरेन्द्र फिर लौटे और आसन ग्रहण किया।

मठ के एक भाई लेटे ही लेटे हास्य में कह रहे है मानो

ईश्वर-दर्शन के विना उन्हें बड़ा कष्ट हो रहा हो—"अरे, कोई है?—मुझे एक छुरी तो दो, प्राणान्त कर लूं—बस अब तो कष्ट सहा नही जाता!"

नरेन्द्र– (मानो गम्भीर होकर)–वही है, हाथ बढ़ाकर उठा लो! (सब हँसते है)

फिर प्रसन्न की वात होने लगी।

नरेन्द्र– यहाँ भी माया! फिर हम लोगों ने संन्यास क्यो लिया?

राखाल– 'मुक्ति और उसकी साधना' नामक पुस्तक में है कि संन्यासियों को एक जगह नही रहना चाहिए। 'संन्यासीनगर' की कथा उसमे है।

शशी– मै संन्यास-फन्यास नही मानता। मेरे लिए ऐसा कोई स्थान नही है, जो अगम्य हो। ऐसी कोई जगह नहीं है, जहाँ मै न रह सकूँ।

भवनाथ की वात चलने लगी। भवनाथ की स्त्री को कठिन पीड़ा हुई थी।

नरेन्द्र– (राखाल से)–जान पडता है, भवनाथ की वीवी वच गयी; इसीलिए मारे खुशी के दक्षिणेश्वर घूमने गया था।

कॉकुड़गाछी के वगीचे की वातचीत होने लगी। रामवावू वहाँ मन्दिर वनवाने का विचार कर रहे है।

नरेन्द्र– (राखाल से)–रामवावू ने मास्टर महाशय को एक 'ट्रस्टी' (trustee) वनाया है।

मास्टर– (राखाल से)–परन्तु मुझे तो इसकी कोई खवर नही।

शाम हो गयी। शशी श्रीरामकृष्ण के कमरे मे धूप देने लगे। दूसरे कमरों मे श्रीरामकृष्ण के जितने चित्र थे, वहाँ भी धूप-धूना

दिया गया। फिर मधुर कण्ठ से उनका नामोच्चारण करते हुए उन्हें प्रणाम किया।

अब आरती हो रही है। मठ के गुरु-भाई और दूसरे भक्त हाथ जोड़कर खड़े हुए आरती देख रहे है। झाँझ और घण्टे वज रहे हैं। भक्तवृन्द एकस्वर से आरती गा रहे है—

"जय शिव ओंकार, भज शिव ओंकार।
ब्रह्मा विष्णु सदाशिव, हर हर हर महादेव।"

नरेन्द्र पहले गाते है, पीछे से उनके दूसरे गुरु-भाई। यही गायन श्रीकाशीधाम मे विश्वेश्वर-मन्दिर मे हुआ करता है।

भोजन आदि समाप्त करते हुए रात के ग्यारह वज गये। भक्तों ने मास्टर के लिए एक बिछौना बिछा दिया और वे स्वयं भी सो गये।

आधी रात का समय है। मास्टर की आँख नही लगी। वे सोच रहे है—'सव तो है,— अयोध्या तो वही है, परन्तु बस राम नही है।' मास्टर चुपचाप उठ गये। आज वैशाख की पूर्णिमा है। मास्टर अकेले गंगाजी के तट पर टहल रहे है। श्रीरामकृष्ण की वातें सोच रहे है।

योगवासिष्ठ-पाठ। संकीर्तनानन्द तथा नृत्य

आज रविवार है। मास्टर शनिवार को आये है। वुध तक अर्थात् पाँच दिन मठ मे रहेंगे। गृही भक्त प्रायः रविवार को ही मठ मे दर्शन करने के लिए आया करते हैं। आजकल वहुधा योगवासिष्ठ का पाठ हुआ करता है। मास्टर ने श्रीरामकृष्ण से योगवासिष्ठ की कुछ वातें सुनी थीं। देह-वुद्धि के रहते योग-वासिष्ठ के 'सोऽहम्' भाव के अनुसार साधना करने की श्रीराम-कृष्ण ने मनाही की थी और कहा था, 'सेव्यसेवक-भाव ही

अच्छा है।'

मास्टर– अच्छा, योगवासिष्ठ में ब्रह्मज्ञान की कैसी बातें है ?

राखाल– भूख-प्यास, सुख-दुःख, यह सब माया है, मन का नाश ही एकमात्र उपाय है।

मास्टर– मन के नाश के पश्चात् जो कुछ बच रहता है, वही ब्रह्म है, क्यों ?

राखाल– हाँ।

मास्टर– श्रीरामकृष्ण भी ऐसा ही कहते थे। न्यांगटा ने उनसे यही बात कही थी। अच्छा, राम को वशिष्ठजी ने संसार में रहने के लिए कहा है, क्या ऐसी कोई बात तुम्हें उस ग्रन्थ में मिली ?

राखाल– नही, अभी तक तो नही मिली। इसमें तो राम को कही अवतार ही नहीं लिखा है।

यही बातचीत चल रही है, इसी समय नरेन्द्र, तारक तथा एक और भक्त गंगातट से टहलकर आ गये। उनकी इच्छा सैर करते हुए कोन्नगर तक जाने की थी, परन्तु नाव नहीं मिली। सब के सब आकर बैठे। योगवासिष्ठ का प्रसंग फिर चलने लगा।

नरेन्द्र– (मास्टर से)– बड़ी अच्छी कहानियाँ है। लीला की कथा आप जानते है ?

मास्टर– हाँ, योगवासिष्ठ में है, मैंने कुछ पढ़ा है। लीला को ब्रह्मज्ञान हुआ था न ?

नरेन्द्र– हाँ, और इन्द्र-अहल्या-संवाद, तथा विदूरथ राजा चाण्डाल हुए—वह कथा ?

मास्टर– हाँ, याद आ रही है।

नरेन्द्र– वन का वर्णन भी कितना मनोहर है !

नरेन्द्र आदि भक्तगण गंगा-स्नान को जा रहे है। मास्टर भी जायेंगे। धूप देखकर मास्टर ने छाता ले लिया। वराहनगर के श्रीयुत शरच्चन्द्र भी साथ ही गंगा नहाने जा रहे है। ये सदाचारी ब्राह्मण युवक है। मठ मे सदा आते रहते है। कुछ दिन पहले वैराग्य धारण करके ये तीर्थाटन भी कर चुके है।

मास्टर– (शरद से)–धूप बड़ी तेज है।

नरेन्द्र–तो यह कहो कि छाता ले लूँ।

(मास्टर हँसते है)

भक्तगण कन्धे पर अंगौछा डाले हुए मठ का रास्ता पार कर परामाणिक घाट के उत्तर तरफवाले घाट मे नहा रहे है। सब के सब गेरुआ वस्त्र धारण किये हुए है। आज ८ मई, १८८७ है। धूप वड़ी तेज है।

मास्टर–(नरेन्द्र से)–कही लू न लग जाय।

नरेन्द्र–आप लोगों का शरीर भी तो वैराग्य में बाधक है––है न? मेरा मतलव है आपका, देवेन्द्रबाबू का––

मास्टर हँसने लगे और सोचने लगे––'क्या केवल शरीर ही बाधक है?'

स्नान करके भक्तगण मठ लौटे और हाथ-पैर धोकर श्रीरामकृष्ण के कमरे मे (जहाँ श्रीरामकृष्ण की पूजा होती थी) गये। प्रणाम करके श्रीरामकृष्ण के पादपद्मो में प्रत्येक भक्त ने पुष्पांजलि चढ़ायी।

पूजा-घर मे नरेन्द्र को जाने में कुछ देर हो गयी। श्रीगुरु महाराज को प्रणाम करके नरेन्द्र फूल लेने को बढ़े तो देखा, पुष्प-पात्र मे फूल एक भी नहीं था। उन्होंने पूछा––'फूल नहीं है?' पुष्प-पात्र मे दो-एक विल्वदल वच रहे थे, चन्दन में उन्हे ही

डुबाकर अर्पण किया। फिर एक वार घण्टाध्वनि की। अन्त में प्रणाम करके 'दानवो के कमरे' मे जाकर बैठे।

मठ के गुरुभाई अपने आपको भूत तथा दानव कहते थे, क्योकि भूत दानव शिवजी के अनुयायी हैं। और जिस कमरे में सव एक साथ बैठते थे, उसे 'दानवो का कमरा' कहते थे। जो लोग एकान्त मे ध्यान-धारणा और पाठ आदि करते थे, वे लोग दक्षिण ओर के कमरे मे रहते थे। काली द्वार वन्द करके अधिकतर उसी कमरे मे रहते थे, इसलिए मठ के गुरुभाई उस कमरे को काली तपस्वी का कमरा कहते थे। काली तपस्वी के कमरे के उत्तर तरफ पूजा-घर था। उसके उत्तर ओर जो कमरा था, उसमें नैवेद्य रखा जाता था। उसी कमरे मे खड़े होकर लोग आरती देखते और वहीं से भगवान श्रीरामकृष्ण को प्रणाम करते थे। नैवेद्यवाले कमरे के उत्तर में 'दानवों का कमरा' था। यह कमरा खूव लम्वा था। वाहर के भक्तों के आने पर इसी कमरे मे उनका स्वागत किया जाता था। 'दानवों के कमरे' के उत्तर तरफ एक और छोटासा कमरा था। यह 'पान-घर' के नाम से पुकारा जाता था। यहाँ भक्तगण भोजन करते थे।

'दानवों के कमरे' के पूर्व कोने मे दालान थी। उत्सव होने पर भोजन आदि की व्यवस्था इसी कमरे मे की जाती थी। दालान के ठीक उत्तर तरफ रसोईघर था।

पूजा-घर और काली तपस्वी के कमरे के पूर्व ओर वरामदा था। वरामदे के दक्षिण-पश्चिम कोने में वराहनगर की एक समिति का पुस्तकालय था। ये सव कमरे दुमंजले पर थे। जीने दो थे। एक तो पुस्तकालय और काली तपस्वी के कमरे के वीच से, और दूसरा, भक्तो के भोजन करनेवाले कमरे के उत्तर तरफ।

नरेन्द्र आदि भक्तगण इसी जीने से शाम को कभी कभी छत पर जाते थे। वहाँ बैठकर वे लोग ईश्वर-सम्बन्धी अनेक विषयों की चर्चा किया करते थे। कभी भगवान श्रीरामकृष्ण की बातें, कभी शंकराचार्य की, कभी रामानुज की और कभी ईसा मसीह की बातें होती थी। कभी हिन्दू-दर्शन की बातें होती थी तो कभी यूरोपीय दर्शन का प्रसंग चलता था, कभी वेदों, कभी पुराणों और कभी तन्त्रों की कथाएँ हुआ करती थीं।

'दानवों के कमरे' मे बैठकर नरेन्द्र अपने दैवी कण्ठ से परमात्मा के नामों और उनके गुणों का कीर्तन किया करते थे। शरद अपने दूसरे भाइयों को गाना सिखलाते थे। काली वाद्य सीखते थे। इस कमरे मे नरेन्द्र कितनी ही बार कीर्तन करते हुए आनन्द करते और आनन्दपूर्वक नृत्य किया करते थे।

नरेन्द्र तथा धर्मप्रचार। ध्यानयोग और कर्मयोग

नरेन्द्र 'दानवों के कमरे' मे बैठे हुए है। चुन्नीलाल, मास्टर तथा मठ के और भाई भी बैठे हुए है। धर्म-प्रचार की बातें होने लगीं।

मास्टर– (नरेन्द्र से)– विद्यासागर कहते है, 'मै तो बेतों की मार खाने के डर से ईश्वर की बात किसी दूसरे से नहीं कहता।'

नरेन्द्र– बेंतों की मार खाने का क्या मतलब ?

मास्टर– विद्यासागर कहते है, 'सोचो मरने के बाद हम सब ईश्वर के पास गये। सोचो कि केशव सेन को यमदूत ईश्वर के पास ले गये। केशव ने संसार मे पाप भी किया है। जब यह सप्रमाण सिद्ध हुआ, तब बहुत सम्भव है, ईश्वर कहे कि इसे पच्चीस बेत लगाओ। इसके बाद, सोचो, मुझे ले गये। मै भी अगर केशव सेन के समाज मे जाता हूँ, अन्याय करता हूँ, तो

इसके लिए सम्भव है, आदेश हो कि इसको वेत लगाओ। तव, अगर में कहूं कि केशव सेन ने ही मुझे इस तरह समझाया था, तो सम्भव है कि ईश्वर दूत से कहे, "केशव सेन को फिर ले आओ।" केशव के आने पर सम्भव है, उससे वे पूछें-- "क्या तूने इसे उपदेश दिया था ? खुद तो तू ईश्वर के सम्वन्ध में कुछ जानता नही और दूसरे को उपदेश दे रहा था ? है कोई-- इसको पच्चीस वेत और लगाओ।"' (सव हंसते हैं)

"इसीलिए विद्यासागर कहते है, 'मैं खुद तो सम्हल सकता ही नहीं, फिर दूसरो के लिए वेत क्यो सहूं ? (सव हंसते हैं) मै खुद तो ईश्वर के सम्बन्ध मे कुछ जानता नहीं, फिर दूसरे को क्या लेक्चर देकर समझाऊं ?'"

नरेन्द्र– जिसने इस विपय को (ईश्वर को) नही समझा, उसने और दस-पॉच विषयो को कैसे समझ लिया ?

मास्टर--दस-पाँच विषय कैसे ?

नरेन्द्र– जिसने इस विषय को नही समझा, उसने दया और उपकार कैसे समझ लिया ?-- स्कूल कैसे समझ लिया ? स्कूल खोलकर वच्चों को विद्या पढ़ानी चाहिए और संसार में प्रवेश करके, विवाह करके, लड़को और लड़कियों का वाप वनना ही ठीक है, यही कैसे समझ लिया ?

"जो एक वात को अच्छी तरह समझता है, वह सब बातों की समझ रखता है।"

मास्टर– (स्वगत)– सच है, श्रीरामकृष्ण भी तो कहते थे-- "जिसने ईश्वर को समझा है, वह सब कुछ समझता है।" और संसार में रहना, स्कूल करना, इन सव वातों के सम्वन्ध में उन्होंने कहा था, "ये सव रजोगुण से होते है।" विद्यासागर में दया

है, इस प्रसंग मे उन्होने कहा था, "यह रजोगुणी सत्त्व है, इसमे दोष नही।"

भोजन आदि के पश्चात् मठ के सब गुरुभाई विश्राम कर रहे है। मास्टर और चुन्नीलाल नैवेद्यवाले कमरे के पूर्व ओर अन्दर से महल की जो सीढी है, उसके पटाव पर बैठे हुए वार्तालाप कर रहे है। चुन्नीलाल बतला रहे है किस तरह उन्होंने दक्षिणेश्वर में पहले-पहले श्रीरामकृष्ण के दर्शन किये। संसार में जी नहीं लग रहा था, इसलिए एक बार वे पहले संसार छोड़कर चले गये थे और तीर्थो मे भ्रमण किया करते थे। वही सब बातें हो रही हैं। कुछ देर मे नरेन्द्र भी पास आकर बैठे। फिर योग-वासिष्ठ की बातें होने लगीं।

नरेन्द्र– (मास्टर से)– और विदूरथ का चाण्डाल होना ?

मास्टर–क्या तुम लवण की बात कह रहे हो !

नरेन्द्र– अच्छा, क्या आपने योगवासिष्ठ पढा है !

मास्टर– हाँ, कुछ पढ़ा है।

नरेन्द्र– क्या यही की पुस्तक पढ़ी है ?

मास्टर– नहीं, मैने घर मे कुछ पढा था।

* * *

मठ की इमारत से मिली हुई पीछे कुछ जमीन है। वहाँ बहुतसे पेड़-पौधे है। मास्टर पेड़ के नीचे अकेले बैठे हुए है, इसी समय प्रसन्न आ पहुंचे। दिन के तीन बजे का समय होगा।

मास्टर– इधर कुछ दिनों से कहाँ थे तुम ! तुम्हारे लिए सब के सब बड़े सोच मे पड़े हुए है। उनसे मुलाकात हुई ? तुम कब आये ?

प्रसन्न– मै अभी आया, आकर मिल चुका हूं।

मास्टर– तुमने चिट्ठी लिखी थी कि मै वृन्दावन चला। हम लोग वड़ी चिन्ता मे पड़े थे। तुम कितनी दूर गये थे ?

प्रसन्न– कोन्नगर तक गया था।

(दोनों हंसते है)

मास्टर– बैठो, जरा कुछ कहो, सुनूं। पहले तुम कहाँ गये थे ?

प्रसन्न– दक्षिणेश्वर कालीमन्दिर— एक रात वहीं रहा।

मास्टर – (सहास्य)– हाजरा महाशय अव किस भाव मे है ?

प्रसन्न– हाजरा ने कहा, 'मुझे भला क्या समझते हो ?'

(दोनों हँसते है)

मास्टर– (सहास्य)– तुमने क्या कहा ?

प्रसन्न– मै चुप हो रहा।

मास्टर– फिर ?

प्रसन्न– फिर उसने कहा, 'मेरे लिए तम्बाकू ले आये हो ?' (दोनो हँसते है) मेहनत पूरी करा लेना चाहता है। (हास्य)

मास्टर– फिर तुम कहाँ गये ?

प्रसन्न– फिर कोन्नगर गया। रात को एक जगह पड़ा रहा। और भी आगे चले जाने के लिए सोचा। पश्चिम जाने के लिए किराये के लिए भलेमानसों से पूछा कि यहाँ किराया मिल सकता है या नही।

मास्टर– उन लोगों ने क्या कहा ?

प्रसन्न–कहा, 'धेली-रुपया कोई चाहे दे दे, पर इतना किराया अकेला कौन देगा ?' (दोनों हंसे)

मास्टर– तुम्हारे साथ क्या था ?

प्रसन्न– दो-एक कपड़े और श्रीरामकृष्णदेव की तस्वीर। तस्वीर मैने किसी को नही दिखलायी ।

पिता-पुत्र संवाद । पहले माँ-बाप या पहले ईश्वर ?

श्रीयुत शशी के पिता आये हुए है। उनके पिता अपने लडके को मठ से ले जाना चाहते हैं। श्रीरामकृष्ण की बीमारी के समय प्राय: नौ महीने तक लगातार शशी ने उनकी सेवा की थी। उन्होने कालेज मे बी ए. तक अध्ययन किया था। प्रवेशिका मे इन्हे छात्रवृत्ति मिली थी। इनके पिता गरीब होने पर भी निष्ठावान् ब्राह्मण है और साधना भी करते है। शशी अपने माता-पिता के सब से बड़े लड़के है। उनके माता-पिता को बड़ी आशा थी कि ये लिख-पढकर रोजगार करके उनका दु:ख दूर करेगे; परन्तु इन्होने ईश्वर-प्राप्ति के लिए सब को छोड़ दिया था। अपने मित्रो से ये रो-रोकर कहा करते थे, 'क्या करूँ, मेरी समझ मे कुछ नही आता ! हाय ! माता-पिता की मै कुछ भी सेवा न कर सका ! उन्होने न जाने कितनी आशाएँ की थी ! मेरी माता को अलकार-आभूषण पहनने को नही मिले। मेरी कितनी साध थी कि उन्हें गहने पहनाऊँगा ! कहीं कुछ भी न हुआ। घर लौट जाना मुझे भार-सा जान पडता है। उधर श्रीगुरुमहाराज ने कामिनी-कांचन का त्याग करने के लिए कहा है। अब तो जाने की जगह रही ही नही !'

श्रीरामकृष्ण की महासमाधि के पश्चात् शशी के पिता ने सोचा, वहुत सम्भव है, अब वह घर लौटे; परन्तु कुछ दिन घर रहने के पश्चात् जब मठ स्थापित हुआ तब मठ मे आते-जाते ही शशी सदा के लिए मठ मे रह गये। जब से यह परिस्थिति हुई तब से उनके पिता उन्हें ले जाने के लिए प्राय: आया करते है।

परन्तु शशी घर जाने का नाम भी नहीं लेते। आज जव उन्होंने यह सुना कि पिताजी आये हुए है, वे एक दूसरे रास्ते से नौ दो ग्यारह हो गये ताकि उनसे भेंट न हो।

उनके पिता मास्टर को पहचानते थे। वे मास्टर के साथ ऊपरवाले बरामदे मे टहलते हुए उनसे वातचीत करने लगे।

पिता– यहाँ कर्ता कौन है ? यही नरेन्द्र सारे अनर्थों का कारण जान पड़ता है। सब लड़के राजी-खुशी घर लौट गये थे। फिर से स्कूल-कालेज जाने लगे थे।

मास्टर– यहाँ कर्ता (मालिक) कोई नही है। सव बरावर हैं। नरेन्द्र क्या करें ? बिना अपनी इच्छा के क्या कोई आ सकता है ? क्या हम लोग सदा के लिए घर छोड़कर आ सके हैं ?

पिता–अजी, तुम लोगो ने तो अच्छा किया, क्योंकि दोनों तरफ की रक्षा कर रहे हो, तुम लोग जो कुछ कर रहे हो, इसमें धर्म नहीं है क्या ? हम लोगों की भी तो यही इच्छा है कि शशी यहाँ भी रहे और वहाँ भी रहे। देखो तो जरा, उसकी माँ कितना रो रही है !

मास्टर दुःखित होकर चुप हो गये।

पिता– और साधुओं की तलाश में इतना क्यों मारा-मारा फिरता है ? वह कहे तो मैं उसे एक अच्छे महात्मा के पास ले जाऊँ। इन्द्रनारायण के पास एक महात्मा आये हुए है, वहुत सुन्दर स्वभाव है। चले, देखे न ऐसे महात्मा को !

राखाल और मास्टर काली तपस्वी के घर के पूर्व ओर के वरामदे मे टहल रहे है। श्रीरामकृष्ण और उनके भक्तो के सम्बन्ध मे वार्तालाप हो रहा है।

राखाल– (व्यस्त भाव से)–मास्टर महाशय, आइये, सव

एक साथ साधना करें।

"देखिये न, अब घर भी सदा के लिए छोड़ दिया है। अगर कोई कहता है, 'ईश्वर तो मिले ही नहीं, फिर क्यों अब यह सब हो रहा है?'—तो इसका उत्तर नरेन्द्र बड़ा सुन्दर देता है। कहता है, 'राम नहीं मिले तो क्या इसलिए हमे श्याम (अमुक किसी भी) के साथ रहकर लड़के-बच्चों का बाप बनना ही होगा?' अहा! एक एक बात नरेन्द्र बड़े मार्के की कह देता है। जरा आप भी पूछियेगा।"

मास्टर—ठीक तो है। राखाल भाई, देखता हूँ, तुम्हारा मन भी खूब व्याकुल हो रहा है।

राखाल—मास्टर महाशय, क्या कहूँ, दोपहर को नर्मदा जाने के लिए जी में कैसी विकलता थी। मास्टर महाशय, साधना कीजिये, नही तो कही कुछ न होगा। देखिये न, शुकदेव भी डरते थे। जन्मग्रहण करते ही भगे। व्यासदेव ने खड़े होने के लिए कहा, परन्तु वे खड़े भी नहीं होते थे।

मास्टर—योगोपनिषद् की कथा है। माया के राज्य से शुकदेव भाग रहे थे। हाँ, व्यास और शुकदेव की कथा बड़ी ही रोचक है। व्यास संसार मे रहकर धर्म करने के लिए कह रहे थे। शुकदेव ने कहा, 'ईश्वर के पादपद्मों मे ही सार है।' और संसारियो के विवाह तथा स्त्री के साथ रहने पर उन्होने घृणा प्रकट की।

राखाल—वहुतेरे सोचते है, स्त्री को न देखा तो बस फतह है। स्त्री को देखकर सिर झुका लेने से क्या होगा? कल रात को नरेन्द्र ने खूव कहा, 'जव तक अपने भीतर काम है, तभी तक स्त्री की सत्ता है; अन्यथा स्त्री और पुरुष में कोई भेद नहीं

रह जाता ।'

मास्टर—ठीक है । बालक और बालिकाओं मे यह भेद-वुद्धि नहीं रहती ।

राखाल—इसलिए तो कहता हूँ, हम लोगो को चाहिए कि साधना करें। माया के पार गये विना ज्ञान कैसे होगा ? चलियें, वड़े कमरे मे चले । वराहनगर से कुछ शिक्षित मनुष्य आये हुए है । नरेन्द्र से उनकी क्या वातचीत हो रही है, चलिये सुनें ।

नरेन्द्र तथा शरणागति

नरेन्द्र वार्तालाप कर रहे है । मास्टर भीतर नहीं गये । वड़े घर के पूर्व ओरवाले दालान मे टहलते रहे, कुछ अंश सुनायी पड़ रहा था ।

नरेन्द्र कह रहे है, 'सन्ध्यादि कर्मों के लिए न तो अव स्थान ही है, न समय ही ।'

एक सज्जन—क्यों महाशय, साधना करने से क्या वे मिलेंगे ?

नरेन्द्र—उनकी कृपा । गीता मे कहा है—

"ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति ।
भ्रामयन् सर्वभूतानि यन्त्रारूढ़ानि मायया ।।
तमेव शरणं गच्छ सर्वभावेन भारत ।
तत्प्रसादात् परां शान्ति स्थानं प्राप्स्यसि शाश्वतम् ।।"

"उनकी कृपा के विना हुए साधन-भजन कही कुछ नही होता । इसलिए उनकी शरण मे जाना चाहिए ।"

सज्जन—हम लोग यदा-कदा यहाँ आकर आपको कष्ट देगे ।

नरेन्द्र—जरूर, जव जी चाहे, आया कीजिये ।

"आप लोगों के वहाँ, गंगा-घाट मे हम लोग नहाने के लिए जाया करते हैं ।"

सज्जन– इसके लिए हमारी ओर से कोई रोक-टोक नहीं। हाँ, कोई और न जाया करे।

नरेन्द्र– नहीं. अगर आप कहे तो हम भी न जाया करें।

सज्जन– नही, नहीं, ऐसी बात नही; परन्तु हाँ, अगर आप देखें कि कुछ और लोग भी जा रहे है तो आप न जाइयेगा।

सन्ध्या के बाद फिर आरती हुई। भक्तगण फिर हाथ जोड़कर एकस्वर से 'जय शिव ओंकार' गाते हुए श्रीरामकृष्ण की स्तुति करने लगे। आरती हो जाने पर भक्तगण दानवों के कमरे में जाकर बैठे। मास्टर बैठे हुए है। प्रसन्न गुरुगीता का पाठ करके सुनाने लगे। नरेन्द्र स्वयं आकर सस्वर पाठ करने लगे। नरेन्द्र गा रहे हैं—

"ब्रह्मानन्दं परमसुखदं केवलं ज्ञानमूर्तिम्
द्वन्द्वातीतं गगनसदृशं तत्त्वमस्यादिलक्ष्यम्।
एकं नित्य विमलमचलं सर्वदा साक्षिभूतम्
भावातीतं त्रिगुणरहितं सद्‌गुरुं तं नमामि।"

फिर गाते हैं—

"न गुरोरधिकं न गुरोरधिकम्। शिवशासनतः शिवशासनतः॥
श्रीमत् परं ब्रह्म गुरुं वदामि। श्रीमत् परं ब्रह्म गुरुं भजामि॥
श्रीमत् परं ब्रह्म गुरुं स्मरामि। श्रीमत् परं ब्रह्म गुरुं नमामि॥"

नरेन्द्र सस्वर गीता का पाठ कर रहे है और भक्तो का मन उसे सुनते हुए निर्वात निष्कम्प दीप-शिखा की भाँति स्थिर हो गया। श्रीरामकृष्ण सत्य कहते थे कि 'बंसी की मधुर ध्वनि सुनकर सर्प जिस तरह फन खोलकर स्थिर भाव से खड़ा रहता है, उसी प्रकार नरेन्द्र का गाना सुनकर हृदय के भीतर जो हैं, वे भी चुपचाप सुनते रहते है।' अहा! मठ के भाइयों की गुरु के

प्रति कैसी तीव्र भक्ति है !

श्रीरामकृष्ण का प्रेम तथा राखाल

राखाल काली तपस्वी के कमरे में वैठे हुए है। पास ही प्रसन्न हैं। उसी कमरे मे मास्टर भी हैं।

राखाल अपनी स्त्री और लड़के को छोड़कर आये है। उनके हृदय मे वैराग्य की गति तीव्र हो रही है। उन्हें एक यही इच्छा है कि अकेले नर्मदा के तट पर या कहीं अन्यत्र चले जायं। फिर भी वे प्रसन्न को वाहर भागने से समझा रहे हैं।

राखाल– (प्रसन्न से)– कहाँ तू वाहर भागता फिरता है? यहाँ साधुओं का संग— क्या इसे छोड़कर कहीं जाना होता है?— तिसपर नरेन्द्र जैसे व्यक्ति का साथ छोड़कर? यह सव छोड़कर तू कहाँ जायगा !

प्रसन्न– कलकत्ते में माँ-वाप है। मुझे भय होता है कि कहीं उनका स्नेह मुझे खीच न ले। इसीलिए कही दूर भग जाना चाहता हूँ।

राखाल– श्रीगुरु महाराज जितना प्यार कहते थे, क्या माँ-वाप उतना प्यार कर सकते है? हम लोगों ने उनके लिए क्या किया है, जो वे हमे उतना चाहते थे? क्यो वे हमारे शरीर, मन और आत्मा के कल्याण के लिए इतने तत्पर रहा करते थे? हम लोगों ने उनके लिए क्या किया है?

मास्टर– (स्वगत)– अहा ! राखाल ठीक ही तो कह रहे है, इसीलिए उन्हें (श्रीरामकृष्ण को) अहेतुक कृपासिन्धु कहते हैं।

प्रसन्न– क्या वाहर चले जाने के लिए तुम्हारी इच्छा नही होती?

राखाल– जी तो चाहता है कि नर्मदा के तट पर जाकर

रहूँ। कभी कभी सोचता हूँ कि वहीं किसी बगीचे में जाकर रहूँ और कुछ साधना करूँ। कभी यह तरंग उठती है कि तीन दिन के लिए पंचतप करूँ; परन्तु संसारी मनुष्यों के बगीचे में जाने से हृदय इनकार भी करता है।

क्या ईश्वर हैं ?

'दानवों के कमरे' मे तारक और प्रसन्न दोनों वार्तालाप कर रहे हैं। तारक की माँ नही है। उनके पिता ने राखाल के पिता की तरह दूसरा विवाह कर लिया है। तारक ने भी विवाह किया था, परन्तु पत्नी-वियोग हो गया है। मठ ही तारक का घर हो रहा है। प्रसन्न को वे भी समझा रहे हैं।

प्रसन्न– न तो ज्ञान ही हुआ और न प्रेम ही, बताओ क्या लेकर रहा जाय ?

तारक– ज्ञान होना अवश्य कठिन है परन्तु यह कैसे कहते हो कि प्रेम नही हुआ ?

प्रसन्न– रोना तो आया ही नही, फिर कैसे कहूँ कि प्रेम हुआ ? और इतने दिनों मे हुआ भी क्या ?

तारक– क्यों ? तुमने श्रीरामकृष्णदेव को देखा है या नही ? फिर यह क्यों कहें कि तुम्हें ज्ञान नही हुआ ?

प्रसन्न– क्या खाक होगा ज्ञान ? ज्ञान का अर्थ है जानना। क्या जाना ? ईश्वर है या नही इसी का पता नही चलता––

तारक– हाँ, ठीक है, ज्ञानियों के मत से ईश्वर है ही नही।

मास्टर– (स्वगत)– अहा ! प्रसन्न की कैसी अवस्था है ! श्रीरामकृष्ण कहते थे, 'जो लोग ईश्वर को चाहते है, उनकी ऐसी अवस्था हुआ करती है। कभी कभी ईश्वर के अस्तित्व में सन्देह होता है।' जान पड़ता है, तारक इस समय बौद्ध मत का

विवेचन कर रहे है, इसीलिए शायद उन्होंने कहा— 'ज्ञानियों के मत से ईश्वर है ही नहीं।' परन्तु श्रीरामकृष्ण कहते थे— 'ज्ञानी और भक्त, दोनों एक ही जगह पहुंचेंगे।'

गुरुभाइयों के साथ नरेन्द्र

ध्यानवाले कमरे में अर्थात् काली तपस्वीवाले कमरे में नरेन्द्र और प्रसन्न आपस मे बातचीत कर रहे हैं। कमरे में एक दूसरी तरफ राखाल, हरीश और छोटे गोपाल हैं। बाद में बूढ़े गोपाल भी आ गये।

नरेन्द्र गीतापाठ करके प्रसन्न को सुना रहे हैं:—

"ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति।
भ्रामयन् सर्वभूतानि यन्त्रारूढानि मायया॥
तमेव शरणं गच्छ सर्वभावेन भारत।
तत् प्रसादात् परां शान्ति स्थानं प्राप्स्यसि शाश्वतम्॥
सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहं त्वां सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः॥

नरेन्द्र– देखा?— 'यन्त्रारूढ़'! 'भ्रामयन् सर्वभूतानि यन्त्रारूढानि मायया।' इस पर भी ईश्वर को जानने की चेष्टा! तू कीट से भी गया-बीता है, तू उन्हें जान सकता है? जरा सोच तो सही आदमी क्या है। ये जो अगणित नक्षत्र देख रहा है, इनके सम्बन्ध मे सुना है, ये एक एक Solar system (सौरजगत्) है। हम लोगो के लिए जो यह एक ही Solar system है, इसी मे आफत है। जिस पृथ्वी की सूर्य के साथ तुलना करने पर वह एक भटे की तरह जान पडती है, उस उतनी ही पृथ्वी में मनुष्य चल-फिर रहा है।

नरेन्द्र गा रहे है।

गाने का भाव :—

"तुम पिता हो, हम तुम्हारे नन्हे-से बच्चे है। पृथ्वी की धूलि से हमारा जन्म हुआ है और पृथ्वी की धूलि से हमारी आँखे भी ढंकी हुई हैं। हम शिशु होकर पैदा हुए हैं और धूलि में ही हमारी क्रीड़ाएं हो रही हैं, दुर्बलों को अपनी शरण में ग्रहण करनेवाले, हमें अभय प्रदान करो। एक बार हमें भ्रम हो गया है, क्या इसीलिए तुम हमे गोद में न लोगे?—क्या इसीलिए एकाएक तुम हमसे दूर चले जाओगे? अगर ऐसा करोगे तो, हे प्रभु, हम फिर कभी उठ न सकेंगे, चिरकाल तक भूमि में ही अचेत होकर पड़े रहेंगे। हम बिलकुल शिशु हैं, हमारा मन बहुत ही क्षुद्र है। हे पिता, पग-पग पर हमारे पैर फिसल जाते हैं। इसलिए तुम हमे अपना रुद्रमुख क्यों दिखलाते हो?—क्यों हम कभी कभी तुम्हारी भौहों को कुटिल देखते हैं? हम क्षुद्र जीवों पर क्रोध न करो। हे पिता, स्नेह-शब्दों मे हमें समझाओ—हमसे कौनसा दोष हो गया है? यदि हमसे सैकड़ों बार भी भूल हो जाय, तो सैकड़ों ही बार हमें गोद में उठा लो। जो दुर्बल हैं, वे भला कर क्या सकते है?"

"तू पड़ा रह। उनकी शरण में पड़ा रह।"

नरेन्द्र भावावेश मे आये हुए-से फिर गा रहे है—(भावार्थ)—

"हे प्रभु, मै तुम्हारा गुलाम हूं। मेरे स्वामी तुम्हीं हो। तुम्हीं से मुझे दो रोटियाँ और एक लगोटी मिल रही हैं।"

"उनकी (श्रीरामकृष्णदेव की) वात क्या याद नही है? ईश्वर शक्कर के पहाड़ हैं, और तू चींटी, बस एक ही दाने से तो तेरा पेट भरता है, और तू सोच रहा है कि मैं यह पहाड़ का पहाड़ उठा ले जाऊंगा। उन्होंने कहा है, याद नहीं?— 'शुक-

देव अधिक से अधिक एक बड़ी चींटी समझे जा सकते हैं।' इसीलिए तो मैं काली से कहा करता था, 'क्यों रे, तू गज और फीता लेकर ईश्वर को नापना चाहता है ?'

"ईश्वर दया के सागर हैं। उनकी शरण में तू पड़ा रह। वे कृपा अवश्य करेंगे। उनसे प्रार्थना कर-- 'यत्ते दक्षिणं मुखं तेन मां पाहि नित्यम् ।'--

" असतो मा सद् गमय ।
तमसो मा ज्योतिर्गमय ॥
मृत्योर्माऽमृतं गमय ।
आविराविर्म एधि ॥
रुद्र यत्ते दक्षिणं मुखम् ।
तेन मां पाहि नित्यम् ॥"

प्रसन्न-- कौनसी साधना की जाय ?

नरेन्द्र-- सिर्फ उनका नाम लो। श्रीरामकृष्ण का गाना याद है या नहीं ?

नरेन्द्र श्रीरामकृष्णदेव का वह गाना गा रहे हैं, जिसका भाव है--

"ऐ श्यामा, मुझे तुम्हारे नाम का ही भरोसा है। पूजन-सामग्री, लोकाचार और दाँत निकालकर हँसने से मुझे क्या काम ? तुम्हारे नाम के प्रताप से काल के कुल पाश छिन्न-भिन्न हो जाते हैं, शिव ने इसका प्रचार भी खूब कर दिया है, मैंने तो अब इसे ही अपना आधार समझ लिया है। नाम लेता जा रहा हूँ; जो कुछ होने का है, होता रहेगा। क्यों मैं अकारण सोचकर जीवन नष्ट करूँ ? ऐ शिवे, मैने शिव के वाक्य को सर्वसार समझ लिया है।"

प्रसन्न-- तुम अभी तो कह रहे हो, ईश्वर हैं। फिर तुम्हीं

बदलकर कहते हो, 'चार्वाक और अन्य दूसरे दर्शनाचार्य कह गये हैं, यह संसार आप ही आप हुआ है।'

नरेन्द्र– तूने Chemistry (रसायन-शास्त्र) नही पढ़ा? अरे यह तो बता, Combination (समवाय— संयोग) कौन करता है? पानी तैयार करने लिए आक्सीजन, हाइड्रोजन और इलेक्ट्रिसिटी, इन सब चीजों को मनुष्य का हाथ इकट्ठा करता है।

"Intelligent Force (ज्ञानपूर्वक शक्तिचालना) तो सब लोग मानते हैं। ज्ञानस्वरूप एक ही है, जो इन सब पदार्थो को चला रहा है।"

प्रसन्न– दया उनमे है, यह हम कैसे जानें?

नरेन्द्र– 'यत्ते दक्षिणं मुखं' वेदों में कहा है।

"जॉन स्टुअर्ट मिल भी यही कहते है। जिन्होंने मनुष्य के भीतर दया दी, उनमे न जाने कितनी दया है! वे (श्रीरामकृष्ण) भी तो कहते थे—'विश्वास ही सार है।' वे तो पास ही हैं। विश्वास करने से ही सिद्धि होती है।"

इतना कहकर नरेन्द्र मधुर कण्ठ से गाने लगे:–

"मोको कहाँ ढूँढ़ो बन्दे मै तो तेरे पास मे।
ना रहता मैं झगड़ि बिगड़ि मे, ना छुरी गढ़ास में।
ना रहता मै खाल रोम मे, ना हड्डी ना माँस में॥
ना देवल मे ना मसजिद में, ना काशी-कैलास मे।
ना रहता मै अवध-द्वारका, मेरी भेट विश्वास मे॥
ना रहता मै क्रिया करम में, ना योग संन्यास मे।
खोजोगे तो आन मिलूँगा, पल भर की तलाश में॥
शहर से बाहर डेरा मेरा, कुटिया मेरी मवास मे।
कहत कबीर सुनो भइ साधो, सब सन्तन के साथ में॥"

वासना के रहते ईश्वर में अविश्वास होता है

प्रसन्न–कभी तो तुम कहते हो, भगवान है ही नहीं और अब ये सब बातें सुना रहे हो। तुम्हारी बातों का कुछ ठीक ही नही। तुम प्रायः मत बदलते रहते हो। (सब हंसते हैं)

नरेन्द्र–यह बात अब कभी न बदलूंगा —– जब तक वासनाएं रहती हैं तब तक ईश्वर पर अविश्वास रहता है। कोई न कोई कामना रहती ही है। कुछ नही तो भीतर ही भीतर पढ़ने की इच्छा रह गयी। पास करूंगा, पण्डित होऊंगा, इस तरह की वासना।

नरेन्द्र भक्ति से गद्‌गद होकर गाने लगे।

'वे शरणागतवत्सल है, पिता और माता हैं।...'

'जय देव, जय देव, जय मंगलदाता, जय जय मंगलदाता।
संकटभयदुःखत्राता, विश्वभुवनपाता, जय देव, जय देव॥'

नरेन्द्र फिर गा रहे है। भाइयों से हरिरस का प्याला पीने के लिए कह रहे है। कहते है, ईश्वर पास ही हैं, जैसे मृग के पास कस्तूरी।

"पीले अवधूत, हो मतवाला, प्याला प्रेम हरिरस का रे।
बाल अवस्था खेलि गंवायो, तरुण भयो नारीवस का रे।
वृद्ध भयो कफ वायु ने घेरा, खाट पड़ो रह्यो शाम-सकारे।
नाभि-कमल में है कस्तूरी, कैसे भरम मिटै पशु का रे।
बिन सद्‌गुरु नर ऐसहि ढूंढ़ै, जैसे मिरिग फिरै वन का रे॥"

मास्टर बरामदे से ये सब बातें और संगीत सुन रहे हैं।

नरेन्द्र उठे। कमरे में आते समय कह रहे है—–'इन युवकों से बातचीत करते करते मेरा सिर गरम हो गया।' बरामदे मे मास्टर को देखकर उन्होने कहा, 'मास्टर महाशय, आइये

पानी पिये।'

मठ के एक भाई नरेन्द्र से कह रहे हैं, 'इतने पर भी तुम क्यों कहते हो कि ईश्वर नहीं है ?' नरेन्द्र हँसने लगे।

नरेन्द्र का तीव्र वैराग्य। गृहस्थाश्रम

दूसरे दिन सोमवार है। ९ मई १८८७। सबेरे मास्टर मठ के बगीचे मे एक पेड़ के नीचे बैठे हुए है। मास्टर सोच रहे हैं—"श्रीरामकृष्ण ने मठ के भाइयो का काम-कांचन छुड़ा दिया। अहा ! ईश्वर के लिए ये लोग व्याकुल हो रहे है ! यह स्थान मानो साक्षात् वैकुण्ठ है ! मठ के भाई मानो साक्षात् नारायण है ! श्रीरामकृष्ण को गये अभी अधिक दिन नही हुए। इसलिए वे सब भाव अब भी ज्यों के त्यो बने है।

" 'अयोध्या तो वही है, परन्तु राम नही है।'

"इनसे तो उन्होने (श्रीरामकृष्ण ने) गृहत्याग करा लिया, फिर कुछ और जो है, उन्हें ही क्यों घर मे रखा है, उनके लिए क्या कोई उपाय नही है ?"

नरेन्द्र ऊपर के कमरे से देख रहे हैं। मास्टर अकेले पेड़ के नीचे बैठे है। उतरकर हंसते हुए वे कह रहे है—'क्यों मास्टर महाशय, क्या हो रहा है ?' कुछ बातें हो जाने पर मास्टर ने कहा—'अहा ! तुम्हारा स्वर बड़ा मधुर है ! कोई श्लोक कहो।'

नरेन्द्र स्वर से अपराध-भंजन स्तव कहने लगे। गृहस्थगण ईश्वर को भूले हुए है,—बाल्य, प्रौढ़ और वार्धक्य तक वे न जाने कितने अपराध करते है ! क्यों वे मनसा, वाचा और कर्मणा ईश्वर की सेवा नही करते ?—

"बाल्ये दु:खातिरेको मललुलितवपु: स्तन्यपाने पिपासा,
नो शक्तश्चेन्द्रियेभ्यो भवगुणजनिता: जन्तवो मां तुदन्ति ।
नानारोगादिदु:खाद्रुदनपरवश: शंकरं न स्मरामि,
क्षन्तव्यो मेऽपराध: शिव शिव शिव भो श्रीमहादेव शम्भो ॥
प्रौढ़ोऽहं यौवनस्थो विषयविषधरैर्पंचभिर्मर्मसन्धौ,
दष्टो नष्टो विवेक: सुतधनयुवतिस्वादुसौख्ये निषण्ण: ।
शैवीचिन्ताविहीनं मम हृदयमहो मानगर्वाधिरूढ़म्,
क्षन्तव्यो मेऽपराध: शिव शिव शिव भो श्रीमहादेव शम्भो ॥
वार्धक्ये चेन्द्रियाणां विगतगतिमतिश्चाधिदैवादितापै:,
पापै: रोगैर्वियोगैस्त्वनवसितवपु: प्रौढ़िहीनं च दीनम् ।
मिथ्यामोहाभिलाषैर्भ्रमति मम मनो धूर्जटेर्ध्यानशून्यम्,
क्षन्तव्यो मेऽपराध: शिव शिव शिव भो श्रीमहादेव शम्भो ॥
स्नात्वा प्रत्यूषकाले स्नपनविधिविधौ नाहृतं गांगतोयं,
पूजार्थं वा कदाचित् बहुतरगहनात् खण्डबिल्वीदलानि ।
नानीता पद्ममाला सरसि विकसिता गन्धधूपौ त्वदर्थं,
क्षन्तव्यो मेऽपराध: शिव शिव शिव भो श्रीमहादेव शम्भो ॥
गात्रं भस्मसितं सितं च हसितं हस्ते कपालं सितं,
खट्वांगं च सितं सितश्च वृषभ: कर्णे सिते कुण्डले ।
गंगाफेनसिता जटा पशुपतेश्चन्द्र: सितो मूर्धनि,
सोऽयं सर्वसितो ददातु विभवं पापक्षय सर्वदा ॥ . . ."

स्तवपाठ हो गया । फिर बातचीत होने लगी ।

नरेन्द्र—निर्लिप्त संसार कहिये या चाहे जो कहिये, काम-कांचन का त्याग बिना किये न होगा । स्त्री के साथ सहवास करते हुए घृणा नहीं होती ? जहाँ कृमि, कफ, मेध, दुर्गन्ध—

"अमेध्यपूर्णे कृमिजालसंकुले स्वभावदुर्गन्धिविनिन्दितान्तरे ।
कलेवरे मूत्रपुरीषभाविते रमन्ति मूढ़ा विरमन्ति पण्डिता: ।।

"वेदान्त-वाक्यों में जो रमण नहीं करता, हरिरस का जो पान नहीं करता, उसका जीवन ही वृथा है ।

"ओंकारमूलं परमं पदान्तरं गायत्रीसावित्रीसुभाषितान्तरम् ।
वेदान्तरं य: पुरुषो न सेवते वृथान्तरं तस्य नरस्य जीवनम् ।।

"एक गाना सुनिये—(भावार्थ)—

"मोह और कुमन्त्रणा को छोड़ो, उन्हें जानो, तव सम्पूर्ण कष्ट छूट जायेंगे । चार दिन के सुख के लिए अपने जीवन-सखा को भूल गये, यह कैसा ?

"कौपीन धारण बिना किये दूसरा उपाय नही—संसार-त्याग !" यह कहकर नरेन्द्र सस्वर गाने लगे—

"वेदान्तवाक्येषु सदा रमन्तो भिक्षान्नमात्रेण च तुष्टिमन्त: ।
अशोकमन्त:करणे चरन्त: कौपीनवन्त: खलु भाग्यवन्त: ।।"

नरेन्द्र फिर कह रहे हैं—"मनुष्य संसार में बंधा क्यों रहेगा ? क्यों वह माया मे पड़े ? मनुष्य का स्वरूप क्या है ? 'चिदानन्दरूप: शिवोऽहं शिवोऽहं ।' मै ही वह सच्चिदानन्द हूँ ।"

फिर स्वरसहित नरेन्द्र शंकराचार्य-कृत स्तव पढ़ने लगे—

ॐ मनो बुद्ध्यहंकारचित्तानि नाहं, न च श्रोत्रजिह्वे न च घ्राणनेत्रे ।
न च व्योमभूमिर्न तेजो न वायुश्चिदानन्दरूप: शिवोऽहं शिवोऽहम् ।।

एक दूसरा स्तव वासुदेवाष्टक भी नरेन्द्र सस्वर पढ़ रहे है । "हे मधुसूदन ! मै तुम्हारे शरणागत हूँ, मुझ पर कृपा करके काम, निद्रा, पाप, मोह, स्त्री-पुत्र का मोहजाल, विषय-तृष्णा, इन सब से मेरा परित्राण करो और अपने पाद-पद्मों में भक्ति दो ।"

"ॐ इति ज्ञानरूपेण रागाजीर्णेन जीर्यतः ।
कामनिद्रां प्रपन्नोऽस्मि त्राहि मां मधुसूदन ।।
न गतिर्विद्यते नाथ त्वमेकः शरणं प्रभो ।
पापपंके निमग्नोऽस्मि त्राहि मां मधुसूदन ।।
मोहितो मोहजालेन पुत्रदारगृहादिषु ।
तृष्णया पीडचमानोऽहं त्राहि मां मधुसूदन ।।
भक्तिहीनं च दीनं च दुःखशोकातुरं प्रभो ।
अनाश्रयमनाथं च त्राहि मां मधुसूदन ।।
गतागतेन श्रान्तोऽहं दीर्घससारवर्त्मसु ।
येन भूयो न गच्छामि त्राहि मां मधुसूदन ।।
वहुधाऽपि मया दृष्टं योनिद्वारं पृथक् पृथक् ।
गर्भवासे महद्दुःखं त्राहि मां मधुसूदन ।।
तेन देव प्रपन्नोऽस्मि नारायणपरायणः ।
जगत्संसारमोक्षार्थं त्राहि मां मधुसूदन ।।
वाचयामि यथोत्पन्नं प्रणमामि तवाग्रतः ।
जरामरणभीतोऽस्मि त्राहि मां मधुसूदन ।।
सुकृतं न कृतं किंचित् दुष्कृतं च कृतं मया ।
संसारे पापपंकेऽस्मिन् त्राहि मां मधुसूदन ।।
देहान्तरसहस्राणामन्योन्यं च कृतं मया ।
कर्तृत्वं च मनुष्याणां त्राहि मां मधुसूदन ।।
वाक्येन यत्प्रतिज्ञातं कर्मणा नोपपादितम् ।
सोऽहं देव दुराचारस्त्राहि मां मधुसूदन ।।
यत्र यत्र हि जातोऽस्मि स्त्रीषु वा पुरुषेषु वा ।
तत्र तत्राचला भक्तिस्त्राहि मां मधुसूदन ।।"

मास्टर–(स्वगत)–नरेन्द्र को तीव्र वैराग्य है। इसलिए मठ

के अन्य भाइयों की भी यही अवस्था है। इन लोगों को देखते ही श्रीरामकृष्ण के उन भक्तों मे, जो संसार मे अब भी हैं, कामिनीकांचन-त्याग की इच्छा प्रबल हो जाती है। अहा! इनकी यह कैसी अवस्था है! दूसरे कुछ भक्तों को उन्होंने (श्रीरामकृष्ण ने) अब भी ससार मे क्यों रखा है? क्या वे कोई उपाय करेंगे? क्या वे तीव्र वैराग्य देगे या संसार मे ही भुलाकर रख छोड़ेगे?

नरेन्द्र तथा और दो-एक अन्य भाई भोजन करके कलकत्ता गये। नरेन्द्र रात को फिर लौटेगे। नरेन्द्र के घरसम्बन्धी मुकदमे का अब भी फैसला नही हुआ। मठ के भाइयों को नरेन्द्र की अनुपस्थिति सह्य नहीं होती। सब सोच रहे है कि नरेन्द्र कब लौटें।

परिच्छेद ४

वराहनगर मठ

(१)

रवीन्द्र का पूर्वजीवन

आज सोमवार है, ९ मई, १८८७, ज्येष्ठ कृष्ण की द्वितीया। नरेन्द्र आदि भक्तगण मठ में हैं। शरद, वाबूराम और काली पुरी गये हुए हैं और निरंजन माता को देखने के लिए। मास्टर आये हैं।

भोजन आदि के पश्चात् मठ के भाई जरा देर विश्राम कर रहे है। गोपाल (वूढे गोपाल) गाने की कापी में गाना उतार रहे है।

दिन ढल रहा है। रवीन्द्र पागल की तरह आकर उपस्थित हुए। नंगे पैर, काली धारी की सिर्फ आधी धोती पहने हुए हैं, पागल की तरह आँखों की पुतलियाँ घूम रही हैं। लोगों ने पूछा, 'क्या हुआ ?' रवीन्द्र ने कहा, 'जरा देर वाद वतलाता हूं, मैं अव और घर न लौटूंगा, यही आप लोगों के साथ रहूंगा। उसने विश्वासघात किया, जरा देखिये तो साहव, पूरे पाँच साल की आदत,— सो शराव पीना तक मैंने उसके लिए छोड़ दिया— आज आठ महीने हुए मुझे शराव छोड़े, इसका फल यह कि वह पूरी धोखेवाज निकली।' मठ के भाइयो ने कहा— 'तुम जरा ठण्डे हो लो, तुम आये किस सवारी से ?'

रवीन्द्र— मैं कलकत्ते से वरावर नंगे पैर पैदल चला आ रहा हूं।

भक्तों ने पूछा, 'तुम्हारी आधी धोती क्या हो गयी ?' रवीन्द्र ने कहा, 'आते समय उसने धर-पकड़ की, इसी मे आधी धोती

फट गयी।' भक्तों ने कहा, 'तुम गंगा-स्नान करके आओ, आकर ठण्डे होओ, फिर बातचीत होगी।'

रवीन्द्र का जन्म कलकत्ते के एक बहुत ही प्रतिष्ठित कायस्थ वंश में हुआ है। उम्र २०-२२ साल की होगी। श्रीरामकृष्ण को उन्होंने दक्षिणेश्वर कालीमन्दिर में देखा था और उनकी कृपा प्राप्त की थी। एक बार तीन रात लगातार वहाँ रह भी चुके थे। स्वभाव के बड़े मधुर और कोमल हैं। श्रीरामकृष्ण इन पर बड़ा स्नेह करते थे। परन्तु उन्होने कहा था, "तेरे लिए अभी देर है अभी तेरे लिए कुछ भोग बाकी है। अभी कुछ न होगा। जब डाकू छापा मारते हैं, तब ठीक उसी समय पुलिस कुछ कर नहीं सकती। जब हलचल कुछ शान्त हो जाती है तब पुलिस आकर गिरफ्तार करती है।" आज रवीन्द्र वारांगना के जाल में पड़ गये है; परन्तु और सब गुण उनमे है। गरीबों के प्रति दया, ईश्वर-चिन्तन, यह सब उनमे है। वेश्या को विश्वासघातक जानकर आधी धोती पहने हुए मठ में आये हैं। संसार में अब नहीं लौटेंगे, इसका उन्होने दृढ़ संकल्प कर लिया है।

रवीन्द्र गंगा-स्नान के लिए जा रहे है। परामाणिक घाट पर जायेंगे। एक भक्त भी साथ जा रहे हैं।

उनकी हार्दिक इच्छा है कि साधुओं के साथ इस युवक में चेतना का संचार हो। गंगा-स्नान के पश्चात् रवीन्द्र को वे घाट ही के पासवाले एक श्मशान में ले गये। वहाँ उसे लाशे दिखलाने लगे। कहा— "यहाँ कभी कभी रात को मठ के भाई आकर ध्यान् करते है। यहाँ हम लोगों के लिए ध्यान करना अच्छा है। संसार की अनित्यता खूब समझ मे आती है।" उनकी यह बात सुनकर रवीन्द्र ध्यान करने के लिए बैठे, परन्तु ज्यादा

देर तक ध्यान नहीं कर सके। मन चंचल हो रहा था।

दोनों मठ लौटे। पूजा-घर मे आकर दोनों ने श्रीरामकृष्ण के चित्र को प्रणाम किया। भक्त ने कहा, मठ के भाई इसी कमरे मे ध्यान करते है। रवीन्द्र जरा देर के लिए ध्यान करने वैठे। परन्तु ध्यान अधिक देर तक न हो सका।

मास्टर– क्या मन बहुत चंचल हो रहा है? शायद इसलिए तुम इतनी जल्दी उठ पड़े? शायद ध्यान अच्छी तरह जमा नहीं?

रवीन्द्र– यह निश्चय है कि अब घर न लौटूँगा; परन्तु मन चंचल जरूर है।

मास्टर और रवीन्द्र मठ मे एकान्त स्थान पर खड़े हैं। मास्टर बुद्ध की बातें कर रहे है। देवकन्याओं का एक गाना सुनकर बुद्ध को पहले-पहल चैतन्य हुआ था। आजकल मठ मे बुद्धचरित्र और चैतन्यचरित्र की चर्चा प्रायः हुआ करती है। मास्टर वही गाना गा रहे है।

रात को नरेन्द्र, तारक और हरीश कलकत्ते से लौटे। आते ही उन्होंने कहा– 'ओह, खूब खाया!' कलकत्ते में किसी भक्त के यहाँ उनकी दावत थी।

नरेन्द्र और मठ के दूसरे भाई, मास्टर तथा रवीन्द्र आदि भी, 'दानवो के कमरे' में वैठे हुए है। मठ मे नरेन्द्र को रवीन्द्र का सब हाल मिल चुका है।

दुःखी जीव तथा नरेन्द्र का उपदेश

नरेन्द्र गा रहे है। गाते हुए रवीन्द्र को मानो उपदेश दे रहे है।

गाने का भाव––"तुम मोह और कुमन्त्रणाएँ छोड़ उन्हें समझो, तुम्हारी सम्पूर्ण व्यथा इस तरह दूर हो जायेगी।" नरेन्द्र फिर गा रहे है––

"पी ले अवधूत, हो मतवाला, प्याला प्रेम हरिरस का रे।
बाल अवस्था खेलि गँवायो, तरुण भयो नारीबस का रे;
वृद्ध भयो कफ वायु ने घेरा, खाट पड़ो रह्यो शाम-सकारे॥
नाभि-कमल में है कस्तूरी, कैसे भरम मिटै पशु का रे;
बिन सद्गुरु नर ऐसहि ढूँढ़ै, जैसे मिरिग फिरै वन का रे॥"

कुछ देर बाद सब गुरुभाई काली तपस्वी के कमरे में आकर बैठे। गिरीश का बुद्धचरित्र और चैतन्यचरित्र, ये दो नयी पुस्तकें आयी है। नरेन्द्र, शशी, राखाल, प्रसन्न, मास्टर आदि बैठे है। नये मठ मे जब से आना हुआ है, तब से शशी श्रीरामकृष्ण की पूजा और उन्हीं की सेवा मे दिनरात ल े रहते है। उनकी सेवा देखकर दूसरों को आश्चर्य हो रहा है। श्रीरामकृष्ण की बीमारी के समय वे दिनरात जिस तरह उनकी सेवा किया करते थे, आज भी उसी तरह अन्यन्यचित्त होकर भक्तिपूर्वक उनकी सेवा किया करते हैं।

मठ के एक भाई बुद्धचरित्र और चैतन्यचरित्र पढ रहे हैं। स्वरसहित जरा व्यंग के भाव से चैतन्यचरित्र पढ़ रहे है। नरेन्द्र ने उनसे पुस्तक छीन ली और कहा—'इस तरह कोई अच्छी चीज को भी मिट्टी में मिलाता है?' नरेन्द्र स्वयं चैतन्यदेव के 'प्रेम-वितरण' की कथा पढ रहे है।

मठ के एक भाई—में कहता हूं, कोई किसी को प्रेम दे नहीं सकता।

नरेन्द्र—मुझे तो श्रीरामकृष्णदेव ने प्रेम दिया है।

मठ के भाई—अच्छा, क्या सचमुच ही तुम्हे प्रेम दिया है?

नरेन्द्र—तू क्या समझेगा! तू (ईश्वर के) नौकरों के दर्जे का है। 'मेरे सब पैर दाबेंगे,—शरता मित्तर और देसो भी।

(सब हंसते हैं) तू शायद यह सोच रहा है कि तूने सब कुछ समझ लिया ? (हास्य)

मास्टर– (स्वगत)– श्रीरामकृष्ण ने मठ के सभी भाइयों के भीतर शक्ति का संचार किया है, केवल नरेन्द्र के भीतर ही नहीं। विना इस शक्ति के क्या कभी कामिनी और कांचन का त्याग हो सकता है ?

दूसरे दिन मंगल है, १० मई। आज महामाया की पूजन-तिथि है। नरेन्द्र तथा मठ के सब भाई आज विशेष रूप से जगन्माता की पूजा कर रहे हैं। पूजा-घर के सामने त्रिकोण यन्त्र की रचना की गयी; होम होगा। नरेन्द्र गीता-पाठ कर रहे हैं।

मणि गंगा-स्नान को गये। रवीन्द्र छत पर अकेले टहल रहे हैं। स्वरसमेत नरेन्द्र स्तवन पढ़ रहे है, रवीन्द्र वहीं से सुन रहे हैं :—

ॐ मनोबुद्धयहंकारचित्तानि नाहं, न च श्रोत्रजिह्वे न च घ्राणनेत्रे।
न च व्योम भूमिर्न तेजो न वायुश्चिदानन्दरूपः शिवोऽहं शिवोऽहम्॥
न च प्राणसंज्ञो न वै पंचवायुर्न वा सप्तधातुर्न वा पचकोशः।
न वाक्पाणिपादं न चोपस्थपायुश्चिदानन्दरूपः शिवोऽहं शिवोऽहम्॥
न मे द्वेषरागौ न मे लोभमोहौ मदो नैव मे नैव मात्सर्यभावः।
न धर्मो न चार्थो न कामो न मोक्षश्चिदानन्दरूपः शिवोऽहं शिवोऽहम्।
न पुण्यं न पापं न सौख्यं न दुःखं, न मन्त्रो न तीर्थो न वेदा न यज्ञाः।
अहं भोजनं नैव भोज्यं न भोक्ता, चिन्दानन्दरूपः शिवोऽहं शिवोऽहम्॥

रवीन्द्र गंगा-स्नान करके आ गये, धोती भीगी हुई है।

नरेन्द्र– (मणि के प्रति, एकान्त में)– यह देखो, नहाकर आ गया, अव इसे संन्यास दे दिया जाय तो वहुत अच्छा हो !

(नरेन्द्र और मणि हंसते हैं)

प्रसन्न ने रवीन्द्र से भीगी धोती उतारने के लिए कहा, साथ ही उन्होंने एक गेरुआ वस्त्र भी दिया।

नरेन्द्र–(मणि से)– अब वह त्यागियों का वस्त्र पहनेगा।

मणि–(हंसकर)– किस चीज का त्याग ?

नरेन्द्र– काम-कांचन का त्याग।

गेरुआ वस्त्र पहनकर रवीन्द्र एकान्त में काली तपस्वी के कमरे मे जाकर बैठे। जान पड़ता है कि कुछ ध्यान करेंगे।

(घ)

परिच्छेद १

भक्तों के संग में श्रीरामकृष्ण

एक पत्र

(श्री अश्विनी दत्त द्वारा श्री 'म' को लिखित)

प्रिय प्राणों के भाई श्री 'म', तुम्हारा भेजा हुआ श्रीरामकृष्ण वचनामृत, चतुर्थ खण्ड, शरद-पूर्णिमा के दिन मिला। आज द्वितीया को मैंने उसे पढ़कर समाप्त किया। तुम धन्य हो, इतना अमृत तुमने देश भर मे सीचा!... खैर, वहुत दिन हुए, तुमने यह जानना चाहा था कि श्रीरामकृष्ण के साथ मेरी क्या वात-चीत हुई थी। इसलिए तुम्हे उस सम्वन्ध में कुछ लिखने की चेष्टा कर रहा हूँ। मुझे कुछ श्री 'म' की तरह भाग्य तो मिला नही कि उन श्रीचरणो के दर्शन का दिन, तारीख, मुहूर्त, और उनके श्रीमुख से निकली हुई सव वातें विलकुल ठीक ठीक लिख रखता; जहाँ तक मुझे याद है, लिख रहा हूँ; सम्भव है एक दिन की वात को दूसरे दिन की कहकर लिख डालूँ। और वहुत-सी वातें तो भूल ही गया हूँ।

शायद सन् १८८१ की पूजा की छुट्टियों के समय पहले-पहल मुझे उनके दर्शन हुए थे। उस दिन केशववाबू के आने की वात थी। नाव से दक्षिणेश्वर पहुंच, घाट से चढ़कर मैंने एक आदमी से पूछा--"परमहंस कहाँ है?" उस मनुष्य ने उत्तर की ओर के वरा-मदे में तकिये के सहारे वैठे हुए एक व्यक्ति की ओर इशारा करके

बतलाया--"ये ही परमहंस है।" परन्तु मैंने देखा, दोनों पैर ऊपर उठाये और उन्हें अपने हाथों से घेरकर बाँधे हुए अर्ध-चित होकर वे तकिये का सहारा लिए बैठे है। मेरे मन में आया, इन्हे कभी बाबुओं की तरह तकिये के सहारे बैठने या लेटने की आदत नहीं है; सम्भव है, ये ही परमहंस हों। तकिये के बिलकुल पास ही उनके दाहिनी ओर एक बाबू बैठे थे। मैंने सुना, वे राजेन्द्र मित्र है। बंगाल सरकार के सहायक सेक्रेटरी रह चुके है। उनके दाहिनी ओर कुछ और सज्जन बैठे हुए थे। परमहंस-देव ने कुछ देर बाद राजेन्द्रबाबू से कहा--'जरा देखो तो सही, केशव आया है या नहीं।' एक ने जरा बढ़कर देखा, लौटकर उसने कहा--"नहीं आये।" थोड़ी देर में कुछ शब्द हुआ तब उन्होंने फिर कहा--'देखो, जरा फिर तो देखो।' इस बार भी एक ने देखकर कहा--'नही आये।' साथ ही परमहंसदेव ने हंसते हुए कहा--"पत्तों के झड़ने का शब्द हो रहा था, राधा सोचती थी--मेरे प्राणनाथ तो नही आ रहे हैं! क्यों जी, क्या केशव की सदा की यही रीति है? आते ही आते रुक जाता है।" कुछ देर बाद, सन्ध्या हो ही रही थी कि दलबलसमेत केशव आ गये।

आते ही जब केशव ने भूमिष्ठ होकर उन्हे प्रणाम किया, तब उन्होंने भी ठीक वैसे ही भूमिष्ठ होकर प्रणाम किया और कुछ देर बाद सिर उठाया। उस समय वे समाधिमग्न थे--कह रहे थे--

"कलकत्ते भर के आदमी इकट्ठे कर लाये हैं। इसलिए कि मै व्याख्यान दूंगा! व्याख्यान-आख्यान मैं कुछ न दे सकूंगा। देना हो तो तुम दो। यह सब मुझसे न होगा।"

उसी अवस्था में दिव्य भाव से जरा मुस्कराकर कह रहे हैं—"मैं बस भोजन-पान करूंगा और पड़ा रहूंगा। मैं भोजन करूंगा और सोऊंगा— बस। यह सब मैं न कर सकूंगा। करना हो तो तुम करो। मुझसे यह सब न होगा।"

केशवबाबू देख रहे हैं और श्रीरामकृष्ण भाव से भरपूर हो रहे है। एक-एक बार भावावेश में 'अः अः' कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण की उस अवस्था को देखकर मैं सोच रहा था—'यह ढोंग तो नहीं है? ऐसा तो मैंने और कभी देखा ही नहीं।' और मैं जैसा विश्वासी हूं, यह तो तुम जानते ही हो!

समाधि-भंग के पश्चात् केशवबाबू से उन्होने कहा—"केशव, एक दिन मैं तुम्हारे यहाँ गया था, मैंने सुना, तुम कह रहे हो, 'भक्ति की नदी में गोता लगाकर हम लोग सच्चिदानन्द-सागर में जाकर गिरेंगे।' तब मैंने ऊपर देखा, (जहाँ केशवबाबू और ब्राह्मसमाज की स्त्रियाँ बैठी थीं) और सोचा, तो फिर इनकी क्या दशा होगी? तुम लोग गृहस्थ हो, एकदम किस तरह सच्चिदानन्द-सागर में जाकर गिरोगे? तुम लोग तो उस नेवले की तरह हो जिसकी दुम में कंकड़ बाँध दिया गया हो; कुछ हुआ नहीं कि झट वह ताक पर जा बैठता है; परन्तु वहाँ रहे किस तरह? कंकड़ नीचे की ओर खींचता है और उसे कूदकर नीचे आना पड़ता है। तुम लोग इसी तरह कुछ काल के लिए जप-ध्यान कर सकते हो, परन्तु दारा और सुतरूपी कंकड़ जो पीछे लटका हुआ नीचे की ओर खींच रहा है, वह नीचे उतारकर ही छोड़ता है। तुम लोगों को तो चाहिए भक्ति की नदी में एक बार डुबकी लगाकर निकलो, फिर डुबकी लगाओ और फिर निकलो। इसी तरह करते रहो। एकदम तुम लोग कैसे डूब

सकते हो ?"

केशवबाबू ने कहा-- "क्या गृहस्थों के लिए यह बात असम्भव है ? महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर ?"

परमहंसदेव ने दो-तीन बार 'देवेन्द्रनाथ ठाकुर, देवेन्द्र, देवेन्द्र' कहकर उन्हें लक्ष्य करके कई बार प्रणाम किया, फिर कहा--

"सुनो, एक के यहाँ देवी-पूजा के समय उत्सव मनाया जाता था, सूर्योदय के समय भी बलि चढ़ती थी और अस्त के समय भी। कई साल बाद फिर वह धूम न रह गयी। एक दूसरे ने पूछा-- 'क्यों महाशय, आजकल आपके यहाँ वैसी बलि क्यों नहीं चढ़ायी जाती ?' उसने कहा, 'अजी, अब तो दाँत ही गिर गये !' देवेन्द्र भी अब ध्यान-धारणा करता है-- करेगा ही ! परन्तु बड़ी शान का आदमी है-- खूब मनुष्यता है उसमें।

"देखो, जितने दिन माया रहती है, उतने दिन आदमी कच्चे नारियल की तरह रहता है। नारियल जब तक कच्चा रहता है, तब तक यदि उसका गूदा निकालना चाहो तो गूदे के साथ खोपड़े का कुछ अंश छिलकर जरूर निकल आयगा। और जब माया निकल जाती है तब वह सूख जाता है,-- नारियल का गोला खोपड़े से छूट जाता है, तब वह भीतर खड़खड़ाता रहता है, आत्मा अलग और शरीर अलग हो जाता है, फिर शरीर के साथ उसका कोई सम्बन्ध नही रह जाता।

"यह जो 'मैं' है, यह बड़ी बड़ी कठिनाइयाँ लाकर खड़ी कर देता है। क्या यह 'मैं' दूर होगा ही नहीं ? देखा कि उस टूटे हुए मकान पर पीपल का पेड़ पनप रहा है, उसे काट दो, फिर दूसरे दिन देखो, उसमें कोंपल निकल रही है,-- यह 'मैं' भी इसी

तरह का है। प्याज का कटोरा सात वार धोओ, परन्तु उसकी बू जाती ही नहीं !"

न जाने क्या कहते हुए उन्होंने केशववावू से कहा—"क्यों केशव, तुम्हारे कलकत्ते में, सुना, बाबू लोग कहते है, 'ईश्वर नहीं है।' क्या यह सच है? बाबूसाहब जीने पर चढ़ रहे हैं, एक सीढ़ी पर पैर रखा नहीं कि 'इधर क्या हुआ' कहकर गिरे अचेत, फिर पड़ी डाक्टर की पुकार, जब तक डाक्टर आवे-आवे तब तक बन्दे कूच कर गये ! और ये ही लोग कहते हैं कि ईश्वर नही है !"

घण्टे-डेढ़-घण्टे बाद कीर्तन शुरू हुआ। उस समय मैंने जो कुछ देखा, वह शायद जन्म-जन्मान्तर में भी न भूलूंगा। सब के सब नाचने लगे। केशव को भी मैंने नाचते हुए देखा, बीच में थे श्रीरामकृष्ण, और बाकी सब लोग उन्हें घेरकर नाच रहे थे। नाचते ही नाचते बिलकुल स्थिर हो गये— समाधिमग्न। बड़ी देर तक उनकी यह अवस्था रही। इस तरह देखते और सुनते हुए मै समझा, ये यथार्थ ही परमहंस हैं।

एक दिन और, शायद १८८३ ई. मे, श्रीरामपुर के कुछ युवकों को मैं साथ लेकर गया था। उस दिन उन युवकों को देखकर परमहंसदेव ने कहा था, 'ये लोग क्यों आये है?'

मैंने कहा, 'आपको देखने के लिए।'

श्रीरामकृष्ण— मुझे ये क्या देखेगे? ये सब लोग बिल्डिग (इमारत) क्यों नहीं देखते जाकर?

मैं— ये लोग यह सब देखने नहीं आये। ये आपको देखने के लिए आये है।

श्रीरामकृष्ण— तो शायद ये चकमक पत्थर हैं। आग भीतर

है। हजार साल तक चाहे उसे पानी मे डाल रखो, परन्तु घिसने के साथ ही उससे आग निकलेगी। ये लोग शायद उसी जाति के कोई जीव है? हम लोगों को घिसने पर आग कहाँ निकलती है?

यह अन्त की बात सुनकर हम लोग हंसे। उसके बाद और भी कौन-कौनसी बातें हुई, मुझे याद नहीं। परन्तु जहाॅ तक स्मरण है, शायद 'कामिनीकांचन-त्याग' और 'मै की बू नहीं जाती' इन पर भी बातचीत हुई थी।

मै एक दिन और गया, प्रणाम करके बैठा कि उन्होंने कहा--"वही जिसकी डाट खोलने पर जोर से 'फस्-फस्' करने लगता है, कुछ खट्टा कुछ मीठा होता है-- एक वही ले आओगे?" मैंने पूछा-- 'लेमोनेड?' श्रीरामकृष्ण ने कहा-- "ले न आओ।" जहाँ तक मुझे याद है शायद मै एक लेमोनेड ले आया। इस दिन शायद और कोई न था। मैंने कई प्रश्न किये थे-- "आपमे क्या जाति-भेद है?"

श्रीरामकृष्ण– कहाँ है अब? केशव सेन के यहाँ की तरकारी खायी। अच्छा, एक दिन की बात कहता हूं। एक आदमी बर्फ ले आया, उसकी दाढ़ी खूब लम्बी थी, पहले तो खाने की इच्छा न जाने क्यो नही हुई, फिर कुछ देर बाद एक दूसरा आदमी उसी के पास से बर्फ ले आया तो मै दाॅतों से चबाकर सब बर्फ खा गया। यह समझो कि जाति-भेद आप ही छूट जाता है। जैसे, नारियल और ताड़ के पेड़ जब बड़े होते हैं तब उनके बड़े बड़े डण्ठलदार पत्ते पेड़ से आप ही टूटकर गिर जाते है। इसी तरह जाति-भेद आप ही छूट जाता है। झटका मारकर न छुड़ाना, उन सालो की तरह!

मैंने पूछा—केशवबाबू कैसे आदमी हैं ?

श्रीरामकृष्ण—अजी, वह दैवी आदमी है ।

मैं—और त्रैलोक्यबाबू ?

श्रीरामकृष्ण—अच्छा आदमी है, बहुत सुन्दर गाता है ।

मैं—और शिवनाथबाबू ?

श्रीरामकृष्ण—आदमी अच्छा है, परन्तु तर्क जो करता है—?

मैं—हिन्दू और ब्राह्म में अन्तर क्या है ?

श्रीरामकृष्ण—अन्तर और क्या है ? यहाँ शहनाई बजती है । एक आदमी स्वर साधे रहता है, और दूसरा तरह तरह की रागिनियों की करामात दिखाता है । ब्राह्मसमाजवाले ब्रह्म का स्वर साधे हुए हैं और हिन्दू उसी स्वर के अन्दर तरह तरह की रागिनियों की करामात दिखाते हैं ।

"पानी और बर्फ । निराकार और साकार । जो चीज पानी है, वही जमकर बर्फ बनती है । भक्ति की शीतलता से पानी बर्फ बन जाता है !

"वस्तु एक ही है, अनेक मनुष्य उसे अनेक नाम देते है । जैसे तालाब के चारों ओर चार घाट हों । इस घाट मे जो लोग पानी भर रहे है, उनसे पूछो तो कहेंगे, जल है । उधर के घाट में जो लोग है वे पानी कहेगे । तीसरे घाटवाले कहेगे, वाटर और चौथे घाट के लोग कहेगे, एकुआ । परन्तु पानी एक ही है ।"

मेरे यह कहने पर कि बरीशाल मे अचलानन्द अवधूत के साथ मेरी मुलाकात हुई थी, उन्होंने कहा— "वही कोतरंग का रामकुमार न ?" मैंने कहा, 'जी हाँ ।'

श्रीरामकृष्ण—उसे तुम क्या समझे ?

मै– जी, वे बहुत अच्छे हैं।

श्रीरामकृष्ण– अच्छा, वह अच्छा है या मै ?

मै– आपकी तुलना उनके साथ ? वे पण्डित है, विद्वान् है, आप पण्डित और ज्ञानी थोड़े ही है ?

उत्तर सुनकर कुछ आश्चर्य में आकर वे चुप हो गये। एक मिनट बाद मैंने कहा–– "हाँ, वे पण्डित हो सकते है, परन्तु आप बड़े मजेदार आदमी है। आपके पास मौज खूब है।"

अब हँसकर उन्होने कहा––– "खूब कहा, अच्छा कहा।"

मुझसे उन्होंने पूछा––– "क्या मेरी पंचवटी तुमने देखी है ?"

मैंने कहा, "जी हाँ।" वहाँ वे क्या करते थे, यह भी कहा––– अनेक तरह की साधनाओ की बातें। मैंने पूछा–– "उन्हें किस तरह हम पायें ?"

श्रीरामकृष्ण– अजी, चुम्बक जिस तरह लोहे को खीचता है, उसी तरह वे हम लोगों को खीच ही रहे है। लोहे में कीच लगा रहने से चुम्बक से वह चिपक नही सकता। रोते रोते जब कीच धुल जाता है, तब लोहा आप ही चुम्बक के साथ जुड़ जाता है।

मैं श्रीरामकृष्ण की उक्तियों को सुनकर लिख रहा था, उन्होंने कहा––– "हाँ देखो, भंग-भंग रट लगाने से कुछ न होगा। भंग ले आओ, उसे घोटो और पीओ।" इसके बाद उन्होने मुझसे कहा––– "तुम्हें तो संसार मे रहना है, अतएव ऐसा करो कि नशे का गुलाबी रंग रहा करे। काम-काज भी करते रहो और इधर जरा सुखी भी रहो। तुम लोग शुकदेव की तरह तो कुछ हो नहीं सकोगे कि नशा पीते ही पीते अन्त में अपने तन की खबर भी न रहे–– जहाँ-तहाँ बेहोश पड़े रहो।

"संसार में रहोगे तो एक आम-मुखतारनामा लिख दो।

उनकी जो इच्छा, करें। तुम बस बड़े आदमियों के घर की नौकरानी की तरह रहो। बाबू के लड़के-बच्चों का वह आदर तो खूब करती है, नहलाती-धुलाती है, खिलाती-पिलाती है, मानो वह उसी का लड़का हो; परन्तु मन ही मन खूब समझती है कि यह मेरा नही है। वहाँ से उसकी नौकरी छूटी नही कि बस फिर कोई सम्बन्ध नहीं।

"जैसे कटहल काटते समय हाथ में तेल लगा लिया जाता है, उसी तरह (भक्तिरूपी) तेल लगा लेने से संसार में फिर न फंसोगे, लिप्त न होओगे।"

अब तक जमीन पर बैठे हुए बातें हो रही थीं। अब उन्होंने खाट पर चढ़कर लेटे लेटे मुझसे कहा— "पंखा झलो।" मैं पंखा झलने लगा। वे चुपचाप लेटे रहे। कुछ देर बाद कहा, "अजी, बड़ी गरमी है, पंखा जरा पानी मे भिगा लो।" मैंने कहा, "इधर शौक भी देखता हूँ कम नहीं है!" हँसकर उन्होंने कहा, "क्यों शौक नहीं रहेगा?— शौक रहेगा क्यों नहीं?" मैंने कहा— "अच्छा, तो रहे, रहे, खूब रहे।" उस दिन पास बैठकर मुझे जो सुख मिला वह अकथनीय है।

अन्तिम बार— जिस समय की बात तुमने तीसरे खण्ड में लिखी है *— मैं अपने स्कूल के हेडमास्टर को ले गया था, उनके बी. ए. पास करने के कुछ ही समय बाद। अभी थोड़े ही दिन हुए उनसे तुम्हारी मुलाकात हुई थी।

उन्हें देखते ही श्रीरामकृष्णदेव ने मुझसे कहा— "क्यों जी, तुम इन्हें कहाँ पा गये? ये तो बड़े सुन्दर व्यक्ति है।

"क्यों जी, तुम तो वकील हो। बड़ी तेज बुद्धि है! मुझे

* ता. २३ मई १८८५ देखिये।

कुछ बुद्धि दे सकते हो ? तुम्हारे पिताजी अभी उस दिन यहाँ आये थे, आकर तीन दिन रह भी गये है।"

मैने पूछा— "उन्हें आपने कैसा देखा ?"

उन्होंने कहा—"बहुत अच्छा आदमी है, परन्तु बीच बीच मे बहुत ऊल-जलूल भी बकता है।"

मैंने कहा— "अब की बार मुलाकात हो तो ऊल-जलूल बकना छुड़ा दीजियेगा।"

वे इस पर जरा मुस्कराये। मैने कहा— "मुझे कुछ बातें सुनाइये।"

उन्होने कहा— "हृदय को पहचानते हो ?"

मैने कहा— "आपका भाँजा न ? मुझसे उनका परिचय नही है।"

श्रीरामकृष्ण– हृदय कहता था, 'मामा, तुम अपनी बातें सब एक साथ न कह डाला करो। हर बार उन्ही उन्हीं बातों को क्यों कहते हो ?' इस पर मै कहता था, 'तो तेरा क्या, बोल मेरा है, मै लाख बार अपना एक ही बोल सुनाऊंगा।'

मैने हंसते हुए कहा, 'बेशक, आपने ठीक ही तो कहा है।'

कुछ देर बाद बैठे ही बैठे ॐ ॐ कहकर वे गाने लगे— 'ऐ मन, तू रूप के समुद्र में डूब जा।...'

दो-एक पद गाते ही गाते सचमुच वे डूब गये। —समाधि के सागर में निमग्न हो गये।

समाधि छूटी। वे टहलने लगे। जो धोती पहने हुए थे, उसे दोनों हाथों से समेटते समेटते बिलकुल कमर के ऊपर चढ़ा ले गये। एक तरफ से लटकती हुई धोती जमीन को बुहारती जा रही थी। मै और मेरे मित्र, दोनों एक दूसरे को टोंच रहे थे

और धीरे धीरे कह रहे थे, 'देखो, धोती सुन्दर ढंग से पहनी गयी है।' कुछ देर वाद ही 'हत्तेरे की धोती' कहकर, उसे उन्होंने फेंक दिया। फिर दिगम्वर होकर टहलने लगे। उत्तर तरफ से न जाने किसका छाता और छड़ी हमारे सामने लाकर उन्होंने पूछा, 'क्या यह छाता और छड़ी तुम्हारी है?' मैंने कहा, 'नहीं।' साथ ही उन्होंने कहा, "मैं पहले ही समझ गया था कि यह छाता और छड़ी तुम्हारी नही है। मैं छाता और छड़ी देखकर ही आदमी को पहचान लेता हूँ। अभी जो एक आदमी आया था, ऊल-जलूल बहुत-कुछ वक गया, ये चीजें निस्सन्देह उसी की हैं।"

कुछ देर बाद उसी हालत में चारपाई पर वायव्य की तरफ मुंह करके बैठ गये। वैठे ही वैठे उन्होंने पूछा, "क्यों जी, क्या तुम मुझे असभ्य समझ रहे हो?"

मैंने कहा, "नहीं, आप वड़े सभ्य हैं। इस विषय का प्रश्न आप करते ही क्यों हैं?"

श्रीरामकृष्ण—अजी, शिवनाथ आदि मुझे असभ्य समझते हैं। उनके आने पर धोती किसी न किसी तरह लपेटकर बैठना ही पड़ता है। क्या गिरीश घोष से तुम्हारी पहचान है?

मैं—कौन गिरीश घोष? वही जो थियेटर करता है?

श्रीरामकृष्ण—हाँ।

मैं—कभी देखा तो नहीं, पर नाम सुना है।

श्रीरामकृष्ण—वह अच्छा आदमी है।

मैं—सुना है, वह शराव भी पीता है!

श्रीरामकृष्ण—पिये, पिये न, कितने दिन पियेगा?

फिर उन्होंने कहा, 'क्या तुम नरेन्द्र को पहचानते हो?'

मैं–जी नहीं।

श्रीरामकृष्ण– मेरी बड़ी इच्छा है कि उसके साथ तुम्हारी जान-पहचान हो जाय। वह बी. ए. पास कर चुका है, विवाह नहीं किया।

मैं– जी, तो उनसे परिचय अवश्य करूंगा।

श्रीरामकृष्ण– आज राम दत्त के यहाँ कीर्तन होगा। वहाँ मुलाकत हो जायगी। शाम को वहाँ जाना।

मैं– जी हाँ, जाऊंगा।

श्रीरामकृष्ण– हाँ, जाना, जरूर जाना।

मैं– आपका आदेश मिला और मैं न जाऊं!—अवश्य जाऊंगा।

फिर वे कमरे की तस्वीरें दिखाते रहे। पूछा—"क्या बुद्धदेव की तस्वीर बाजार में मिलती है?"

मैं– सुना है कि मिलती है।

श्रीरामकृष्ण– एक तस्वीर मेरे लिए ले आना।

मैं– जी हाँ, अब की बार जब आऊंगा, साथ लेता आऊंगा।

फिर दक्षिणेश्वर में उन श्रीचरणों के समीप बैठने का सौभाग्य मुझे कभी नहीं मिला।

उस दिन शाम को रामबाबू के यहाँ गया। नरेन्द्र को देखा। श्रीरामकृष्ण एक कमरे में तकिये के सहारे बैठे हुए थे, उनके दाहिनी ओर नरेन्द्र थे। मैं सामने था। उन्होंने नरेन्द्र से मेरे साथ बातचीत करने के लिए कहा।

नरेन्द्र ने कहा, 'आज मेरे सिर मे बड़ा दर्द हो रहा है। बोलने की इच्छा ही नही होती।'

मैं– रहने दीजिये, किसी दूसरे दिन बातचीत होगी।

उसके बाद उनसे बातचीत हुई थी, अलमोड़े में, शायद १८९१ की मई या जून के महीने मे।

श्रीरामकृष्ण की इच्छा पूरी तो होने की ही थी, इसीलिए बारह साल बाद वह इच्छा पूरी हुई। अहा! स्वामी विवेकानन्दजी के साथ अलमोड़े मे वे उतने दिन कैसे आनन्द मे कटे थे! कभी उनके यहाँ, कभी मेरे यहाँ, और कभी निर्जन में पहाड़ की चोटी पर! उसके बाद फिर उनसे मुलाकात नहीं हुई। श्रीरामकृष्ण की इच्छा-पूर्ति के लिए ही उस बार उनसे मुलाकात हुई थी।

श्रीरामकृष्ण के साथ भी सिर्फ चार-पाँच दिन की मुलाकात है, परन्तु उतने ही समय में ऐसा हो गया था कि उन्हें देखकर जी में आता था जैसे हम दोनों एक ही दर्जे के पढ़े हुए विद्यार्थी हों। उनके पास हो आने पर जब दिमाग ठिकाने आता था, तब जान पड़ता था कि बाप रे! किसके सामने गये थे! उतने ही दिनों मे जो कुछ मैंने देखा है—जो कुछ मुझ मिला है, उसी से जी मधुमय हो रहा है। उस दिव्यामृतवर्षी हास्य को यत्नपूर्वक मैंने हृदय मे बन्द कर रखा है। अजी, वह आश्रयहीनो का आश्रय है। और उसी हास्य से बिखरे हुए अमृत-कणों के द्वारा अमरीका तक में संजीवनी का संचार हो रहा है और यही सोचकर 'हृष्यामि च मुहुर्मुहुः, हृष्यामि च पुनः पुनः'—मुझे रह-रहकर आनन्द हो रहा है।

श्रीरामकृष्ण-शिवानन्द--स्मृतिग्रन्थमाला--

श्रीरामकृष्ण-विवेकानन्द-साहित्य

श्रीरामकृष्णलीलाप्रसंग (भगवान् श्रीरामकृष्णदेव का सुविस्तृत जीवनचरित)--तीन खण्डो मे; भगवान् श्रीरामकृष्णदेव के अन्तरंग शिष्य स्वामी सारदानन्दजी द्वारा मूल बँगला मे लिखित प्रामाणिक, सुविस्तृत जीवनी का हिन्दी अनुवाद। डवल डिमाई आकार; आर्टपेपर के नयनाभिराम जैकेटसहित।

प्रथम खण्ड--('पूर्ववृत्तान्त तथा वाल्यजीवन' एवं 'साधकभाव')--१४ चित्रो से सुशोभित, द्वि. स., पृष्ठसख्या ४७६; मूल्य रु. १०।

द्वितीय खण्ड--('गुरुभाव' – पूर्वार्ध' एव 'गुरुभाव---उत्तरार्ध')--चित्रसंख्या ७; द्वि. सं., पृष्ठसख्या ५१०; मूल्य रु. ११।

तृतीय खण्ड-- ('श्रीरामकृष्णदेव का दिव्यभाव और नरेन्द्रनाथ')--चित्रसंख्या ७; द्वि. सं., पृष्ठसख्या २९६; मूल्य रु. ९।

"ईश्वरावतार एक दैवी विभूति की जीवनी, जो लाखो करोडो लोगो का उपास्य हो, स्वय उन्ही के किसी शिष्य द्वारा इस ढंग से शायद कही भी लिखी नही गयी है। पाठको को इस ग्रन्थ मे एक विशेषता यह भी प्रतीत होगी कि ओजपूर्ण तथा हृदयग्राही होने के साथ ही इसकी शैली आधुनिक तथा इसका सम्पूर्ण कलेवर वैज्ञानिक रूप से संजोया हुआ है।

"प्रस्तुत पुस्तक विश्व के नवीनतम ईश्वरावतार भगवान् श्रीरामकृष्णदेव की केवल जीवन-आख्यायिका ही नही वरन् इस दिव्य जीवन के आलोक मे किया हुआ संसार के विभिन्न धर्मसम्प्रदायो तथा मतमतान्तरों का एक अध्ययन भी है।"

श्रीरामकृष्णलीलामृत---(भगवान् श्रीरामकृष्णदेव का जीवनचरित)--दो भागो मे; पंचम सस्करण, प. द्वारकानाथ तिवारीकृत, महात्मा गाँधी

द्वारा लिखी हुई भूमिकासहित, आकर्षक जैकेटसहित; प्रथम भाग, पृष्ठसंख्या ४००+१५, मूल्य रु. ५·५०; द्वितीय भाग, पृष्ठसंख्या, ४५४, मूल्य रु. ६।

श्रीरामकृष्णवचनामृत—तीन भागो मे; 'म' कृत; संसार की प्रायः सभी प्रमुख भाषाओ में प्रकाशित; अनुवादक—पं. सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'; सचित्र, सजिल्द, नयनाभिराम जैकेटसहित, प्रथम भाग (पंचम संस्करण) पृ. सं. ५८३+१२, मूल्य रु. ७·००; द्वितीय भाग (चतुर्थ संस्करण) पृ. सं. ६३२, मूल्य रु. ८·००; तृतीय भाग (चतुर्थ संस्करण) पृ. सं. ७२०, मूल्य रु. १०·००।

माँ सारदा–(भगवान् श्रीरामकृष्णदेव की लीलासहधर्मिणी का विस्तृत जीवन-चरित)–स्वामी अपूर्वानन्दकृत, सजिल्द, आर्ट पेपर के आकर्षक जैकेट-सहित, ८ चित्रो से सुशोभित, पृष्ठसंख्या ४५१+७, मूल्य रु. ६·००।

श्रीरामकृष्ण और श्रीमाँ— (भगवान् श्रीरामकृष्णदेव एवं श्रीमाँ सारदादेवी की एकत्र रूप में अत्यन्त आकर्षक ढंग से लिखी हुई जीवनी) स्वामी अपूर्वानन्दकृत; द्वि. सं., सचित्र, आकर्षक जैकेटसहित, पृष्ठसंख्या २७७ मूल्य रु. ३·६०।

विवेकानन्द-चरित—(हिन्दी में स्वामी विवेकानन्दजी की एकमात्र प्रामाणिक विस्तृत जीवनी)—सुविख्यात लेखक श्री सत्येन्द्रनाथ मजूमदार-कृत, षष्ठ संस्करण, सजिल्द, सचित्र, आर्ट पेपर के आकर्षक जैकेटसहित, पृष्ठसंख्या ५४५, मूल्य रु. ७·५०।

धर्म-प्रसंग में स्वामी शिवानन्द—स्वामी अपूर्वानन्द द्वारा संकलित, (द्वितीय संस्करण) मूल्य रु. ५·००

शिवानन्द-स्मृतिसंग्रह—सकलक स्वामी अपूर्वानन्द (प्रथम भाग) रु. ७ ५०
(द्वितीय भाग) रु. ८.५०
(तृतीय भाग) रु. १०.००

श्रीरामकृष्ण–भक्तमालिका (प्रथम भाग) .. रु. ८.५०

परमार्थ प्रसंग—स्वामी विरजानन्दकृत (द्वि. स.) .. रु. ३.५०

आचार्य शंकर—स्वामी अपूर्वानन्द .. रु. ४.५०

स्वामी विवेकानन्दकृत पुस्तकें

विवेकानन्द संचयन		रु. ७.५०
भारत में विवेकानन्द—(भारतीय व्याख्यान)	(च. सं.)	रु. ५.२५
विवेकानन्द–राष्ट्र को आह्वान (द्वितीय सस्करण)		रु. ०.५०
विवेकानन्दजी के संग में	(च. सं.)	रु. ६.५०

राजयोग–(पातंजल योगसूत्र और व्याख्यासहित) (पं. सं)	४.००
ज्ञानयोग (पं. सं.)	३.७५
भक्तियोग (स. सं.)	१.५०
कर्मयोग (अष्टम सं.)	२.२५
प्रेमयोग (स. सं.)	२.००
सरल राजयोग (च. सं.)	०.६०
पत्रावली (प्र. भा., द्वि. सं.)	५.२५
पत्रावली (द्वि. भा., द्वि. सं.)	४.२५
देववाणी (तृ. सं.)	३.००
भगवान बुद्ध का संसार को सन्देश एवं अन्य व्याख्यान	२.२५
धर्मतत्त्व (द्वि. सं.)	२.००
स्वामी विवेकानन्दजी से वार्तालाप (च. सं.)	२.२५
महापुरुषो की जीवनगाथाएँ (चतुर्दश सं.)	१.७५
धर्मविज्ञान (च. सं.)	२.००
वेदान्त (द्वि. सं.)	२.००
धर्मरहस्य (पं. सं.)	१.३०
आत्मतत्त्व (द्वि. सं.)	१.३०
विवेकानन्दजी की कथाएँ (पं. सं.)	१.८०
आत्मानुभूति तथा उसके मार्ग (स. सं.)	२.७५
हिन्दू धर्म (ष. सं.)	२.२५
कवितावली (च. सं.)	२.२०
व्यावहारिक जीवन में वेदान्त (च. सं.)	१.६५
परिव्राजक (मेरी भ्रमण कहानी) (ष. सं.)	१.७५
स्वाधीन भारत जय हो (पं. सं)	२.००
प्राच्य और पाश्चात्य (स. सं.)	१.८०
सार्वलौकिक नीति तथा सदाचार	१.६५
भगवान रामकृष्ण–धर्म तथा संघ (च. सं.)	१.७५
विवेकानन्दजी के सान्निध्य मे (तृ. सं.)	१.८०
भारत का ऐतिहासिक क्रमविकास एवं अन्य प्रबन्ध	१.३०
भारतीय नारी (स. सं.)	१.५०
चिन्तनीय बातें (तृ. सं.)	१.४०
जाति, सस्कृति और समाजवाद (च. सं.)	१.८०
विविध प्रसंग (तृ. स.)	२.३०
मेरे गुरुदेव (अष्टम सं.)	१.००
नारद-भक्तिसूत्र एव भक्तिविषयक प्रवचन और आख्यान (द्वि. स.)	१.२०